स्वर्ण जयन्ती प्रकाशन 2013

BIHAR YOGA

# ध्यान तंत्र के आलोक में

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती



योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

# ध्यान : तन्त्र के आलोक में




WORLD YOGA CONVENTION 2013
GANGA DARSHAN, MUNGER, BIHAR, INDIA
23rd–27th October 2013

# ध्यान
# तन्त्र के आलोक में

## स्वामी सत्यानन्द सरस्वती




योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

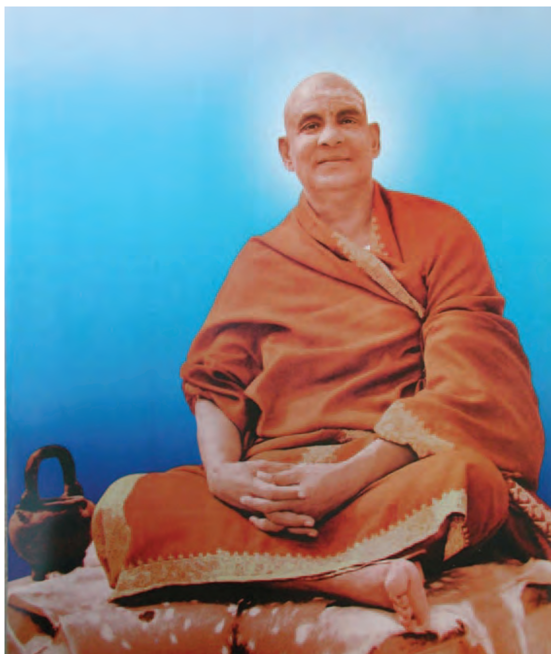
*बिहार योग विद्यालय द्वारा* — *प्रथम प्रकाशन 1975*
*द्वितीय संस्करण 1984*
*पुनर्मुद्रण 1992*
*योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट द्वारा* — *पुनर्मुद्रण 2002, 2005*
*तृतीय संस्करण 2013*

**ISBN**: 978-81-85787-63-3



*प्रकाशक एवं वितरक—योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट,*
*मुंगेर, बिहार, भारत*
*मुद्रक—थॉमसन प्रेस (इंडिया) लिमिटेड,*
*नई दिल्ली*

वेबसाइट: www.biharyoga.net
www.rikhiapeeth.net



# सविनय समर्पण

*स्वामी शिवानन्द सरस्वती के चरणों में*
*जिन्होंने स्वामी सत्यानन्द सरस्वती को योग के रहस्यों की शिक्षा दी*



## नमो नारायण

*योगविद्या भारतवर्ष की सबसे प्राचीन संस्कृति और जीवन-पद्धति है तथा इसी विद्या के बल पर भारतवासी प्राचीनकाल में सुखी, समृद्ध और स्वस्थ जीवन बिताते थे। जब से भारत में योग विद्या का ह्रास हुआ, तभी से भारतवासी गरीब, दुःखी और अस्वस्थ हैं। पूजा-पाठ, धर्म-कर्म से शान्ति मिलती है और योगाभ्यास से धन-धान्य, समृद्धि और स्वास्थ्य। भारत में सुख, समृद्धि, शक्ति और स्वास्थ्य के लिए हर व्यक्ति को योगाभ्यास करना चाहिए।*

*स्वामी सत्यानन्द सरस्वती*
*रिखियापीठ, 2005*

# समर्पण

*उन सब ज्ञात-अज्ञात महान् आत्माओं को*
*जो इस धरती पर आयीं और चली गयीं;*
*जिन्होंने तन्त्र विद्या को जन्म देकर*
*उसे विकसित किया।*
*और इस प्रकार*
*उन्होंने मानव को वह सब कुछ दिया*
*जो उसके क्रमविकास के लिए आवश्यक है।*
*हम अति विनम्रतापूर्वक साभार*
*उन कुछ नामों का स्मरण करते हैं।*
*उन्हीं की शिक्षाओं के कारण*
*आज इस पुस्तक में वर्णित साधना-विधियाँ*
*जन-साधारण के लिए सुलभ बन सकी हैं।*
*और वे महान् आत्मायें हैं–*
*अपने अनेक रूपों में ब्रह्मा, विष्णु और शिव;*
*युग-युगों तक मानव का मार्गनिर्देशन करने वाले गुरु–*
*वशिष्ठ, व्यास और शंकराचार्य;*
*नौ नाथ; चौरासी सिद्ध और चौसठ योगिनियाँ;*
*ईसा; एसेनेस तथा ईसाई सन्त; मोहम्मद तथा सूफी सन्तगण;*
*रहस्यवादी मायन; जरतुश्त; महावीर; भगवान बुद्ध;*
*पद्मसम्भव; गुरुनानक; बाबा जी; कबीर; तुलसीदास; चैतन्य महाप्रभु;*
*पतंजलि; भैरव-भैरवियाँ; कौल; अघोरी तथा अवधूत साधकगण;*
*ग्रेट ह्वाइट ब्रदरहुड; रामप्रसाद; सर्वानन्द; वामक्षेप;*
*रामकृष्ण परमहंस; तैलंग स्वामी; साईं बाबा (शिरडी); लाहिड़ी महाशय;*
*श्रीयुक्तेश्वर; स्वामी योगानन्द; जॉन वुडरॉफ; स्वामी विवेकानन्द;*
*श्री अरविन्द; स्वामी नित्यानन्द; मेहरबाबा; रमण महर्षि*
*तथा परमगुरु स्वामी शिवानन्द (ऋषिकेश)।*

# प्रस्तावना

तन्त्र अत्यन्त प्राचीन विज्ञान है। मानव के क्रमविकास को द्रुतगति प्रदान करने के लिए इसमें अनेक प्रणालियों पर विचार किया गया है। यह संसार के सभी वर्तमान धर्मों से अधिक पुराना है। तन्त्र ने ही कुछ ऐसे गुह्य आधार प्रस्तुत किये हैं जिन पर बाद में अनेक धर्म स्थापित हुए हैं। हर प्रकार की प्रकृति वाले एवं प्रत्येक आध्यात्मिक स्तर के व्यक्ति के लिए व्यावहारिक पद्धतियाँ तन्त्र में मिलती हैं। यह विज्ञान जीवन की प्रत्येक क्रिया को आध्यात्मिक साधना में रूपान्तरित कर देता है। सृष्टि के कुछ हजार वर्ष पश्चात् आर्यों ने मानो तंत्र विज्ञान तथा वेदान्त दर्शन को परिणय सूत्र में बाँध दिया, जिससे उनका मिला-जुला स्वरूप 'योग' उभर कर आया, जो वर्तमान में बहुत प्रचलित है। इस पुस्तक का उद्देश्य ध्यान की उन विधियों की व्यावहारिक जानकारी देना है जो तन्त्र पर आधारित हैं, जिससे उनका अभ्यास उनके मूल तथा सही रूपों में किया जा सकेगा।

इस पुस्तक की सभी क्रियाएँ तंत्र पर आधारित हैं। यद्यपि उनमें से अनेक हजारों वर्षों तक विस्मृति के गर्त में पड़ी रहीं। स्वामी सत्यानन्द सरस्वती ने उन्हें ढूँढ़ कर और सरल रूप में प्रस्तुत करके एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। जीवन की गहराइयों को समझने के लिए उत्सुक वर्तमान सभ्यता को उनकी यह एक बहुमूल्य देन है। हम आशा करते हैं कि अब तक सर्वथा अप्रकाशित इन पद्धतियों की अत्यन्त व्यावहारिक रूप में प्रस्तुति से संसार कुछ-न-कुछ लाभ अवश्य उठायेगा और मानवता उन्नयन के मार्ग में कुछ कदम आगे बढ़ेगी।

# विषय-सूची

## ध्यान के अभ्यास



## परिशिष्ट

# आमुख

यह पुस्तक इसलिए लिखी गयी है कि लेखक यह अनुभव करता है कि अधिकतर मनुष्य सुख की खोज में हैं, परन्तु बहुत कम लोग ऐसे उपाय ढूँढ़ पाते हैं जो उन्हें सन्तोष प्रदान कर सकें। लोग सुख प्राप्त करने के लिए टेलीविज़न, सिनेमा, खेलकूद आदि की ओर झुकते हैं। इनसे शायद उन्हें क्षणिक सुख मिल जाता हो, परन्तु चिरस्थायी सुख से वे वंचित रह जाते हैं। लोग शक्ति, पद और भौतिक आधिपत्य चाहते हैं, बदले में उन्हें मिलती हैं अनिश्चितता, असुरक्षा और शारीरिक-मानसिक व्याधियाँ।

हममें जीवन के प्रति उल्लास से भरी रचनात्मक अभिवृत्ति हो, हम सन्तुष्ट हों, इसका उपाय अत्यन्त सरल है। सचमुच यह इतना सरल है कि लोग इसे करने की बात ही नहीं सोचते। इसका समाधान यह है कि हम अपनी चेतना को उच्च स्तर पर ले जायें, अपनी चेतना का विस्तार एवं विकास करें और मन की अनन्त गहराइयों में पैठें। तब आपको अब तक प्राप्त समस्त सुखानुभवों का अतिक्रमण करने वाले आनन्द तथा शान्ति की अनुभूति होगी। जब आप अपने सूक्ष्म मन को जानेंगे, तब जीवन के सारे छोटे-बड़े संघर्ष महत्त्वहीन हो जायेंगे। आप तब भी पूर्ववत् संसार में रहते हुए अपने सहकर्मियों के साथ कर्त्तव्यों का निर्वाह करेंगे। उस स्थिति में आपको पूर्ण सन्तोष की प्राप्ति होगी। तब आपका जीवन सार्थक हो जाएगा और उन सतही, उथले विचारों से मुक्त हो जायेगा जिनमें अधिकतर लोग अपने को उलझाये रखते हैं।

मन किस प्रकार कार्य करता है, किस तरह वह बाह्य दृश्यप्रपंचों और पूर्वसंचित ज्ञान का विश्लेषण करता है, यह बात मुख्य है। हम देखते हैं

कि कुत्सित स्थिति में रह कर भी कुछ लोग प्रसन्न रहते हैं। क्यों? इस प्रश्न का उत्तर है, उनका मन और बाह्य परिस्थितियों के प्रति उनकी प्रतिक्रियायें। इसीलिए हम कहते हैं, अपने मन को बदलें, अपनी सजगता का विकास तथा विस्तार करें, अपने मन की गूढ़तर प्रक्रियाओं के प्रति सजग बने, आनन्द स्वत: ही आपके पास दौड़ा आएगा। प्रसन्नता और सन्तोष प्राप्त करने का उपाय है, ध्यान।

# भूमिका

गत हजार वर्षों में मानव का बहुत अधिक विकास हुआ है। क्रम-विकास की प्रारम्भिक स्थिति वह थी जब वह घुमक्कड़ी जीवन व्यतीत कर रहा था तथा प्रकृति का दास था। अपनी विकास-यात्रा तय करते-करते अब वह इस स्थिति तक विकसित हो गया कि प्राय: प्रकृति ही मानव की दासी प्रतीत होती है। अब जीविकोपार्जन के अतिरिक्त भी उसके पास अन्य कार्य हैं। मानव का क्रमविकास अव्यवस्था से व्यवस्था की ओर, अपरिष्कृत से परिष्कृत की ओर तथा स्थूल से सूक्ष्म की ओर एक निरन्तर प्रवाह है। अधिकतर लोगों के साथ यह शारीरिक एवं मानसिक स्तर पर घटित हुआ है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी की प्रगति के साथ-साथ इस दिशा में भी प्रगति होती जा रही है। परन्तु परिवर्तन और विकास का यही एक पथ नहीं है। आज लोग यह अनुभव कर रहे हैं कि उनका विकास और उनके जीवन-मूल्य असन्तुलित हैं। किसी महत्त्वपूर्ण पक्ष का अभाव उनके जीवन में बना हुआ है।

हम सब किसी-न-किसी रूप में यह समझते हैं कि आध्यात्मिक विकास का मार्ग कहीं है और इस मार्ग की यात्रा हमें किसी-न-किसी मंजिल पर पहुँचाती है। यह मात्र कोरी कल्पना या आधारहीन चिन्तन नहीं है। युगों-युगों से महान् सन्त अध्यात्म मार्ग से यात्रा करके जीवन्त उदाहरण प्रस्तुत करते आए हैं। उन्होंने अपने उपदेशों में यह बतलाया है कि कैसे हम भी उस मार्ग की यात्रा कर सकते हैं। यह अलग बात है कि अनजाने में या अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए हमने उनके उपदेशों को गलत समझा है। इन महात्माओं ने अपने-अपने शब्दों में एक ही बात कही है – अपने अन्दर देखो, अपने को पहचानो।

उदाहरणार्थ ईसा ने कहा, 'भगवान का राज्य तुम्हारे अन्दर है।'

ग्रीक दार्शनिकों ने कहा, 'अपने को पहचानो, सारे विश्व का परिचय पा जाओगे।'

रामकृष्ण परमहंस ने इस बात को यों कहा, 'कस्तूरी मृग कस्तूरी की सुगन्ध का स्रोत जानने के लिये सारी दुनिया छान मारता है, यद्यपि वह उसके अन्दर ही रहती है।' गीता में भी कहा गया है, 'ध्यान बौद्धिक ज्ञान से उत्तम है।'

इसलिए दूसरों के अनुभवों से हम सीखें। सत्यदर्शन, आत्मविकास या आत्म-साक्षात्कार का मार्ग बाह्य जगत् में नहीं है। यह हमारे अन्दर ही है। हमें इस मार्ग का पता लगाना है। अपने अन्दर की गहराइयों में जाकर हमें वह ढूँढ़ना है जो सदैव से, इस जन्म से पूर्व भी हमारे अन्दर है। हमें सोचना होगा, 'हम बाह्य जगत् के असंतोष-संताप के अंधकार में ठोकर खाते रहें, जैसा कि अधिकतर लोग करते हैं, या अन्तर्जगत् के पथिकों की बात मानकर आन्तरिक यात्रा की तैयारी करें।' आपको अपने वर्तमान जीवन को त्यागना नहीं है। आपको अपनी आध्यात्मिक आकांक्षाओं और योगाभ्यास से इसका सम्पूरण करना है, जो आपको धीरे-धीरे ध्यान के पथ पर अग्रसर करेगा।

आप कह सकते हैं, ठीक है, मैं अध्यात्म मार्ग पर चलूँगा, लेकिन मैं अपनी यात्रा का प्रारम्भ कैसे करूँ? एक तरीका यह है कि आप योग की सरल से कठिन अवस्थाओं की ओर बढ़ें। पहले आसन आदि करें, फिर धीरे-धीरे धारणा और ध्यान की अवस्थाओं पर पहुँचें। ध्यान का अभ्यास करने से उच्चतर चेतना तथा सत्ता के उच्चतर क्षेत्रों तक ले जाने वाले मार्ग स्पष्ट दिखने लगते हैं। अपनी सत्ता के भीतर-बाहर अनुभवों का जो असीमित दायरा है, उसमें आप प्रवेश करने लगते हैं।

अपने आंतरिक अस्तित्व के प्रति अपने दृष्टिकोण को हमें बदलना होगा। वैज्ञानिकों के अनुसार हमारी मानसिक क्षमता के अधिकांश भाग का इस्तेमाल ही नहीं हो पाता। कुछ अन्य लोगों का कहना है कि 95 से 99% प्रतिशत तक हमारी शक्तियाँ प्रसुप्त ही रह जाती हैं। तात्पर्य यह है कि हमारी क्षमताओं का बहुत बड़ा भाग सुषुप्त तथा अप्रयुक्त रहता है। यह निश्चित है कि संसार की महत्त्वपूर्ण घटनाएँ मन के इन अनजाने क्षेत्रों की गवेषणा करने से ही घटित हो सकेंगी और यह तभी सम्भव है जब हम बाह्य जगत् की ओर

उन्मुख होने की बजाय अन्तर्जगत् की गहराइयों में गोते लगाएँ। अब हमारा नारा होना चाहिये, 'मन को जगाओ।'

सब लोग सहज ढंग से यह सोच लेते हैं कि हमारा मन केवल उसका चिन्तन करता है जिसकी हमें चेतना होती है। यह सच नहीं है। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि मन प्रतिक्षण लाखों शारीरिक, चाक्षुष तथा ध्वनिक अनुभूतियाँ प्राप्त करता है, उनको अस्वीकारता है, उनका विश्लेषण तथा उनकी छँटाई करता रहता है। हम केवल उन्हीं अनुभूतियों के बारे में जान पाते हैं जिनकी हमें चेतना रहती है। शेष हमारी चेतना के स्तर के नीचे रह जाती हैं।

पाश्चात्य मनोविज्ञान में मन का यह अज्ञात भाग अवचेतन या अचेतन मन कहलाता है। जिस हिस्से के बारे में हम जानते हैं, उसे चेतन मन कहते हैं। चेतन मन एक हिमशैल की ऊपरी परत की तरह है, जो पानी के ऊपर रहती है तथा अधिकांश भाग पानी में डूबा रहता है। अचेतन मन को हिमशैल का पानी में डूबा हुआ भाग कहा जा सकता है। योग में मन को अनेक सूक्ष्म से सूक्ष्मतर स्तरों का समग्र स्वरूप माना जाता है। मन के सूक्ष्म स्तर मन के वे भाग हैं जिसमें हमारी मूल प्रवृत्तियों, आवेगों तथा बौद्धिकता का निवास होता है। अधिकतर लोगों की चेतना मुख्यत: इसी भाग में रहती है। इसमें हमारे अन्तर्ज्ञान से प्राप्त, प्रेरणात्मक, सृजनात्मक तथा आध्यात्मिक पक्ष रहते हैं। आध्यात्मिक पथ पर चलकर साधक इन अज्ञात क्षेत्रों में अपनी चेतना को अवस्थित करने में समर्थ हो जाता है। आधुनिक मनोविज्ञान और योग का मन के बारे में एक-सा मत है।

सूक्ष्म से सूक्ष्मतर होते जाते मन के स्तरों की गवेषणा ही चेतना का विस्तार है। मन के सभी क्षेत्रों का और अपनी आत्मा का ज्ञान ही, जो आपके पूर्ण अस्तित्व को प्रदीप्त करता है, आत्म-साक्षात्कार, निर्वाण या ईश्वर के साथ ऐक्य-भाव कहलाता है।

बाह्य जगत् को एक अनन्त क्षैतिज वृत्त की उपमा दी जा सकती है। हमारी मानसिक जागृति की तुलना उन विभिन्न रेखाओं से की जा सकती है जो वृत्त से समकोण बनाते हुए केन्द्र से मिलती हैं। केन्द्र कालातीत अवस्था तथा शाश्वतत्व का बोधक है, जबकि वृत्त देश और काल का प्रतिनिधित्व करता है। यह केन्द्र हमारे आन्तरिक अस्तित्व का सार है। यदि हम बाह्य जगत् पर अपना ध्यान रखेंगे तो वृत्त की परिधि पर ही रह जाएँगे, केन्द्र तक नहीं पहुँच

पाएँगे। लेकिन बाह्य जगत् में रहते हुए भी मन को जाग्रत किया जाए, तो जीवन की गति केन्द्र की ओर जाती हुई लम्ब रेखाओं के समान हो जाएगी। जितना ही हम मन को जाग्रत करते हैं, उतना ही हम केन्द्र, अर्थात् अस्तित्व के सार भाग के निकट होते जाते हैं। इसलिए हमें अविलम्ब इस केन्द्रोन्मुखी यात्रा पर चल पड़ना चाहिए।

लेकिन कैसे? यदि यात्रा बाह्य जगत् की हो, तब तो उपाय मालूम है। वाहन पर सवार होना है या पैदल चल देना है। निकट के उद्यान में या देहात में अथवा ट्रेन या बस से पास के कस्बे में जा सकते हैं या विमान व पोत से यात्रा कर सकते हैं। यदि दूसरे ग्रह पर जाना हो तो अन्तरिक्ष यान का प्रयोग किया जा सकता है। लेकिन आन्तरिक यात्रा कैसे प्रारम्भ की जाए? उत्तर है, ध्यान के माध्यम से। इस यात्रा के लिए टिकट खरीदने की जरूरत नहीं है। मन ही तो टिकट है। बस, ध्यान करना शुरू कर दीजिये।

इस पुस्तक में ध्यान के अव्यावहारिक और सैद्धांतिक पक्षों को स्थान नहीं दिया गया है। हमारा उद्देश्य है, साधक के लिए संभावना के मार्ग खोलना, ध्यान के लिए आवश्यक तैयारियाँ कराना, विभिन्न योग पद्धतियों के साथ ध्यान का सम्बन्ध स्थापित करना तथा ध्यान की व्यावहारिक विधियाँ बतलाना। हमारा मत है कि व्यक्तिगत साधना का अनुभव कोरे शब्दों की अपेक्षा अधिक उपयोगी है। शब्दों से यह आशा नहीं की जा सकती है कि वे ध्यान के व्यक्तिगत अनुभवों को ठीक-ठीक व्यक्त कर सकेंगे। साधक को बौद्धिक मन, शब्दों और घिसी-पिटी बातों से परे ले जाना ही ध्यान का उद्देश्य है। शब्दों में अनुभव का वर्णन व्यक्ति पर गहरी छाप नहीं छोड़ता, जबकि एक छोटा-सा व्यक्तिगत अनुभव एक ऐसा महान् परिवर्तन ला सकता है जो जीवन की दिशा ही बदल दे। इसलिए हमने इस पुस्तक में ध्यान की अनेक व्यावहारिक विधियाँ प्रस्तुत की हैं। हम आग्रह करते हैं कि आप इनमें से कुछ को ही आजमायें और स्वयं देखें कि ध्यान क्या है? यदि आप स्वानुभव की अपेक्षा दूसरों के ध्यान के अनुभवों में अधिक रुचि रखते हैं तब हम आपको यह सलाह देंगे कि आप कोई अन्य पुस्तक पढ़ें।

मन को रूपान्तरित करने के लिए हमने व्यक्तिगत प्रयास पर बल दिया है। हमें अपनी रुचि-अरुचि और अहं के अनुरूप जीवन की परिस्थितियों के प्रति एक निश्चित ढंग से प्रतिक्रिया व्यक्त करने की आदत पड़ गई है। अगर

बाह्य जगत् की परिस्थितियाँ हमारे विचारों के अनुरूप नहीं हुईं तो हम दु:खी हो जाते हैं। सफल ध्यान के लिए यह बात बाधक है। इसलिए यह आवश्यक है कि हम अपने मन की क्रिया-पद्धति बदलें।

ध्यान की क्रियाओं द्वारा अचेतन मन में दबी पड़ी ग्रंथियों, भयों और द्वन्द्वों से मुक्ति पाई जा सकती है। इस तरह मनुष्य स्वयं अपना मनोविश्लेषक बन सकता है। एक बार समस्याएँ समझ में आ जाएँ तो उन्हें आत्मसुझाव (चतुर्थ अध्याय देखें) तथा अतीन्द्रिय असंवेदना द्वारा ठीक किया जा सकता है। जैसे-जैसे ये समस्याएँ दूर होंगी, जीवन संघटित और आनन्दित होता जाएगा। इस प्रकार जीवन रूपान्तरित हो जाएगा।

योग और ध्यान किसी धर्म, दर्शन, आस्था या अनास्था का विरोध नहीं करते। वस्तुत: योग और ध्यान का अभ्यास करने से मनुष्य अपने निजी जीवन को सुधार लेता है, और उसे भली प्रकार जीने लगता है। साथ ही, यह दूसरों की आस्थाओं के प्रति अधिक सहिष्णु हो जाता है। दैनिक जीवन में दूसरों के साथ उसके सम्बन्ध अधिक सद्भावपूर्ण हो जाते हैं।

लेकिन प्रारम्भिक प्रयासों से ही ध्यान की उच्च अवस्थाओं में पहुँचने की आशा मत रखिये। वस्तुत: ध्यान, वास्तविक ध्यान, आध्यात्मिकता की परिपक्व स्थिति है। इसके लिए नियमित अभ्यास की आवश्यकता है, परन्तु पूरा प्रयास इसके लिए मूल्यवान् है, क्योंकि इससे जीवन में प्रकाश आता है। व्यक्तिगत तौर पर मैं यह स्वीकार करता हूँ कि प्रथम बार जब मेरा ध्यान से परिचय हुआ तो मुझे इसमें बहुत संदेह था। मैं इस बात को नहीं समझ सका कि मात्र आँखें बन्द करने से मुझ पर कैसे प्रभाव पड़ सकता है। नींद के अतिरिक्त कई बार आँखें बन्द कीं, परन्तु कुछ नहीं हुआ; लेकिन कुछ अभ्यास के पश्चात् धीरे-धीरे, पर निश्चित रूप से मेरा संदेह और भोलापन समाप्त हो गया। एक बात और कहना चाहूँगा कि इस विषय पर कितनी भी पुस्तकें पढ़ने से न तो मेरे संदेह दूर होते और न ही यह समझ में आता कि ध्यान जीवन का कितना अनिवार्य अंग है। ध्यान के नियमित अभ्यास की ओर मेरा रुझान, मेरे व्यक्तिगत अभ्यास और अनुभव के कारण ही हुआ।

याद रखें, नियमित किये जाने वाले ध्यान के अभ्यास कुछ समय के लिए ही क्यों न किए जाएँ (उन संतों की तो बात ही अलग है जो निरन्तर ध्यान की अवस्था में रहते हैं), निश्चित रूप से दैनिक जीवन पर प्रभाव डालते हैं।

ध्यान के समय प्राप्त अन्तर्दृष्टि और आनन्द शारीरिक और मानसिक स्थिति को दिनभर प्रभावित करते रहते हैं। ध्यान के निरन्तर अभ्यास से व्यक्तित्व और व्यवहार में एक रचनात्मक परिवर्तन आता है। और तब व्यक्ति के समूचे अस्तित्व का एक नया ही अध्याय प्रारम्भ होता है।

# 1

# ध्यान क्या है?

ध्यान के सम्बन्ध में अधिकतर लोगों ने सुना है, कुछ लोगों की इस बारे में थोड़ी सही अवधारणा है और किंचित् लोग हैं जिन्हें इसका वास्तविक अनुभव होगा। अन्य व्यक्तिगत अनुभवों की तरह इसे भी शब्दों में वर्णित नहीं किया जा सकता। पाठकों को स्वयं इसके बारे में जानने का प्रयास करना चाहिए कि यथार्थ क्या है। अनुभव वास्तविक है, तथा वर्णन से परे है। फिर भी हम इस विषय पर प्रकाश डालने की चेष्टा करेंगे। सर्वप्रथम हम इसे आधुनिक मनोविज्ञान में मन के विभिन्न कारकों के वर्गीकरण के आधार पर समझने की चेष्टा करेंगे। स्थूल रूप से अवचेतन या अचेतन मन को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है – निम्नतर मन, मध्यम मन एवं उच्चतर मन।

- निम्नतर मन – इसका सम्बन्ध शरीर की विभिन्न आन्तरिक क्रियाओं, जैसे, श्वसन, रक्त संचार, पाचन, आदि के संचालन एवं संयोजन से होता है। यही सहज प्रवृत्तियों का उद्‌गम है और मन के इसी भाग से संकुचित विचार, कुण्ठायें, भय, मनोग्रन्थियाँ आदि प्रकट होते हैं।
- मध्यम मन – इसका सम्बन्ध चेतन अवस्था में प्रयुक्त होने वाली जानकारियों से होता है। बाहर से प्राप्त सूचनाओं पर सोच-विचार, क्रिया-प्रक्रिया आदि का निर्धारण यहीं होता है। यह बौद्धिक शंका समाधान का कार्यालय है, यहीं से हमें समस्याओं के उत्तर प्राप्त होते हैं। उदाहरण के लिए, बहुत से लोग किसी समस्या का हल तत्क्षण नहीं ढूँढ़ पाते, किन्तु कुछ समय पश्चात् उत्तर उनके चेतन मन की सतह पर आ जाता है। बिना हमारी सजगता के अवचेतन मध्यम मन ही समस्या का उत्तर ढूँढ़ता है। यह तर्क अथवा बौद्धिक चिन्तन का क्षेत्र है।

- उच्चतर मन – यह ऊर्ध्व चेतना की क्रियाओं का क्षेत्र है। यह सूक्ष्म दृष्टि, प्रेरणा, आनन्द और इन्द्रियातीत अनुभवों का उद्‌गम स्थान है। विशेष बुद्धि सम्पन्न लोग इसी क्षेत्र से अपनी रचनात्मकता के लिए प्रकाश ग्रहण करते हैं। यही गूढ़तर ज्ञान का पीठ है।

जाग्रत अवस्था में हम कतिपय दृश्य-वस्तुओं या घटनाओं के बारे में सोचते रहते हैं। प्राय: हम मध्यम मन के क्षेत्र में ही मन के क्रियाकलापों के केवल एक छोटे से अंश के प्रति जागरूक रहते हैं। इसी चेतना के द्वारा आप इन शब्दों को पढ़ रहे हैं और इनके अर्थ को समझ रहे हैं।

मन का दूसरा भाग एक सामूहिक अचेतन का क्षेत्र है, जिसे मान्यता दिलाने में कार्ल युंग ने बड़ी चेष्टा की है। मन के इसी हिस्से में हमारे क्रम-विकास के अभिलेख एकत्र हैं। यहीं हमारे पूर्वजों के क्रियाकलाप और संस्कार संग्रहीत हैं। मन के इसी अंश के द्वारा मनुष्य एक-दूसरे से जुड़ा हुआ है, क्योंकि यही हम सबके सामूहिक विगत का ब्लू-प्रिन्ट है।

मन के इन विभिन्न भागों के पीछे हमारी आत्मा, हमारी सत्ता का बीज छुपा है। यही आत्मा हमारी प्रत्येक क्रिया को प्रकाशित करती है, यद्यपि हम इसके प्रति सजग नहीं रहते। कुछ लोग मानते हैं कि अहं हमारी सत्ता के मूल में है, लेकिन अहं भी मन का ही एक भाग है और आत्मा ही इस अहं को प्रकाश देती है।

ध्यान में क्या होता है? ध्यान में यही तो होता है कि हम चेतना को मन के विभिन्न भागों में ले जाते हैं। सामान्यत:, जैसा कि हमने ऊपर वर्णित किया है, हमारी चेतना का दायरा अचेतन मध्यम मन के थोड़े से क्षेत्र की ऊपरी गतिविधियों तक ही सीमित रहता है। ध्यान हमें बुद्धिवादिता के दायरे से निकलने की क्षमता देता है।

यह सामान्य अनुभव है कि ध्यान के प्रारम्भिक अभ्यास में लोग ऊटपटांग चीजें देखने लगते हैं या अपने अन्दर की ऐसी कुण्ठाओं का सामना करते हैं जिनका पता सामान्यत: जीवनपर्यन्त उन्हें नहीं लग पाता। वे ऐसे भयों का सामना करते हैं, जिनके बारे में उन्हें पहले जानकारी नहीं थी। इसका कारण है कि चेतना अब निम्न मन के क्षेत्र में कार्य कर रही है। चेतना अब उन भयों और कुण्ठाओं को उजागर कर रही है जिनके बारे में वह पहले सजग नहीं थी। पहले वह क्रोध, ईर्ष्या और अवसाद, आदि के रूप में भय के प्रकटीकरण के प्रति ही सजग थी। इन मानसिक व्याधियों का पता

लगने पर इन्हें दूर करना संभव हो जाता है (सन्दर्भ – पंचम अध्याय, 'मन का पुनर्संयोजन') और जीवन आनन्द से भर उठता है। बहुत से लोग शरीर की अन्तरंग क्रिया के प्रति अत्यन्त सजग हो उठते हैं। ऐसा इसलिए होता है कि चेतना इन शारीरिक क्रियाकलापों को नियन्त्रित करने वाली क्रियाओं के प्रति सजग हो जाती है।

ध्यान की उच्चतर स्थिति प्राप्त करना तब तक कठिन है जब तक हम निम्नतर मन में रहने वाले बाध्यकर भयों को दूर नहीं कर देते। ये मनोग्रन्थियाँ इतनी बाध्यकर होती हैं कि चेतना स्वत: इनकी ओर आकृष्ट हो जाती है, जिसके कारण ध्यान की गहन अवस्था में जाना सम्भव नहीं होता। यद्यपि चेतना बहुत से दूसरे स्थानों पर भी जा सकती है, फिर भी ऐसा प्रतीत होता है कि यह निम्नतर मन की गतिविधियों की ओर उसी प्रकार आकृष्ट हो जाती है, जिस प्रकार लोहा चुम्बक की ओर। इसे हमारे भयों और चिन्ताओं के बीच रहने में असीम आनन्द आता है।

ध्यान की उच्चतर स्थिति में चेतना उच्चतर मन की ओर बढ़ती है। यह पराचेतना का क्षेत्र है। बुद्धि के क्षेत्र से ऊपर जाकर चेतना सत्य के निकटस्थ होती है। साधक प्रेरणा और प्रकाश के आयामों में प्रवेश करता है। अस्तित्व के गहनतम सत्य और पक्ष प्रकट होने लगते हैं। वह अपने अस्तित्व के ऐसे नये आयामों एवं क्षेत्रों में प्रवेश करता है जो अब तक असम्भव और काल्पनिक प्रतीत होते थे।

ध्यान की परिणति है आत्म-साक्षात्कार। यह उच्चतर मन के भी परे है। चेतना मन के क्षेत्र को छोड़ कर अपने अस्तित्व के केन्द्र; अपनी आत्मा के साथ एकाकार हो जाती है। यही शुद्ध चेतना की स्थिति है। जब कोई व्यक्ति आत्म-साक्षात्कार प्राप्त कर लेता है तो उसका तात्पर्य यह होता है कि उसने अपने अस्तित्व के केन्द्र से सम्पर्क स्थापित कर लिया है, और अपने अस्तित्व, अपने जीवन को आत्मा के नजरिए से देखता है, न कि अहं के। जब वह अपने अस्तित्व के केन्द्र, अपनी आत्मा के स्तर से कार्य करता है तब मन और शरीर भिन्न वस्तु लगने लगते हैं।

इस अवस्था में मन और शरीर वास्तविक न लगकर, उसकी वास्तविक पहचान, आत्मा की अभिव्यक्तियाँ लगते हैं। इस तरह हम देखते हैं कि ध्यान का उद्देश्य है मन के विभिन्न क्षेत्रों का अवगाहन करना तथा उससे भी परे जाकर अवस्थित होना।

## सक्रिय एवं निष्क्रिय ध्यान

ध्यान दो प्रकार के हैं – सक्रिय एवं निष्क्रिय। सक्रिय ध्यान तब होता है जब व्यक्ति अपने दैनिक कर्तव्यों का पालन करता है, चलता है, बोलता है, खाता है, इत्यादि। वास्तव में योग का उद्देश्य यह है कि सामान्य जीवन के कर्म-सम्पादन में भी मनुष्य ध्यान की अवस्था में रह सके। यही सक्रिय ध्यान है। इसका यह अर्थ नहीं कि वह दैनिक कार्यों के प्रति अन्यमनस्क हो जाय, बल्कि यह कि वह अधिक तत्परता एवं दक्षता से कार्य सम्पन्न करे। निष्क्रिय ध्यान के माध्यम से भी सक्रिय ध्यान का अभ्यास किया जा सकता है। (संदर्भ – अष्टम् अध्याय, 'कर्म और भक्ति योग')।

निष्क्रिय ध्यान में एक आसन में बैठकर ध्यान का अभ्यास किया जाता है, ऐसे कुछ अभ्यास इस पुस्तक में दिये गये हैं। सतत् चंचल मन को एक बिन्दु पर केन्द्रित करना ही इसका उद्देश्य है ताकि ध्यान के अनुभव स्वत: होने लगें। इसे दक्षता के निम्नलिखित चार स्तरों में बाँटा जा सकता है –

1. किसी वस्तु, ध्वनि, श्वास, तस्वीर इत्यादि पर ध्यान केन्द्रित करना। इससे मन शान्त होता है और अन्तर्मुखता आती है।
2. प्रथम स्तर में सफलता के पश्चात् स्वत: ही मन के अवचेतन क्षेत्र से विचारों, ग्रन्थियों, दृश्यों, स्मृतियों आदि की बाढ़ सी आ जाती है। यही समय है जब हम अपने व्यक्तित्व तथा निम्न मन का परीक्षण करें और दुर्गुणों को निकाल फेंके।
3. निम्न मन में पूर्ण रूप से विचरण करने के पश्चात् पराचेतन के क्षेत्र में अवगाहन प्रारम्भ होता है। यहीं से वास्तविक ध्यान की शुरुआत होती है। ज्ञान तथा शक्ति के अनन्त कोष अनायास दिखने लगते हैं। फलस्वरूप हमारी व्यक्तिगत चेतना, ब्रह्माण्डीय चेतना से एकाकार होने लगती है।
4. अन्तत: मन का भी अतिक्रमण हो जाता है और साधक सर्वोच्च चेतना के साथ ऐक्य स्थापित कर आत्म-साक्षात्कार के लक्ष्य पर पहुँचता है।

सफल निष्क्रिय ध्यान के फलस्वरूप सक्रिय ध्यान स्वत: सफल हो जाता है। जितना ही व्यक्ति अन्तर्लोक में गोते लगाएगा, बाह्य जगत् में कर्मशील रहते हुए भी उतनी ही अधिक उसमें सतत् ध्यानावस्थित रहने की क्षमता बढ़ेगी। वास्तव में निष्क्रिय ध्यान के समय व्यक्ति जितना मन की गहराई में गोते लगाएगा, कर्मसम्पादन में भी उतना ही अधिक कुशल बनता जायेगा। मन का अन्वेषण करने से यह और शक्तिशाली बन जाता है, जिससे व्यक्ति

का जीवन, कार्य, खेल, इत्यादि अधिक प्रभावशाली हो जाते हैं और पूर्व में असम्भव लगने वाले कार्य भी सम्भव हो जाते हैं।

आत्म-साक्षात्कार के पश्चात् निष्क्रिय ध्यान एक निरर्थक क्रिया बन जाता है। यद्यपि व्यक्ति इस अवस्था में आध्यात्मिक और आंतरिक मूल्यों के अनुसार जीवनयापन करता है, तथापि वह बाह्य जगत् के प्रति भी सचेत रहता है। बिना किसी द्वन्द्व के वह आध्यात्मिक और भौतिक जीवन का निर्वाह एक साथ करते हुए सक्रिय ध्यान के अनुभव अनवरत प्राप्त करता रहता है।

साधारणत: लोगों में दृश्य वस्तु के साथ एकात्म हो जाने की प्रवृत्ति रहती है। उदाहरण के लिए, जब कभी हम सूर्यास्त का मनोरम दृश्य देखते हैं तो हमारी पूरी चेतना उसी में विलीन हो जाती है, कभी-कभी हम अपने आपको भी भूल जाते हैं। हम यह भूल जाते हैं कि हम एक प्राकृतिक दृश्य देख रहे हैं। इस स्थिति में सूर्यास्त के दृश्य का आनन्द कैसे उठाया जा सकता है? जब अनुभवकर्त्ता अनुभव करते-करते अपने आपको बिल्कुल खो देता है तो अनुभव की जाने वाली वस्तु की छाप उसके व्यक्तित्व पर पड़ जाती है। इस तरह जब हमारी चेतना विषय वस्तु के साथ एकत्व की स्थिति प्राप्त कर लेती है तो विषय वस्तु का प्रभाव हमारे पूरे व्यक्तित्व पर छा जाता है। हम अपना अस्तित्व बिलकुल खो देते हैं। पाठक इस बात को ध्यान में रखें कि जब वे यह पुस्तक पढ़ रहे हैं उस समय उनका ख्याल कहाँ है। क्या वे इस पुस्तक के शब्दों द्वारा उनके अर्थों को अलग से अनुभव कर रहे हैं या उन्होंने उन अर्थों के अनुभवों में अपने आपको बिल्कुल खो दिया है?

आदर्श स्थिति यह है कि जहाँ वस्तु हो वहाँ स्व का ज्ञान भी बना रहे। अनुभवकर्त्ता के तटस्थ अनुभव की उपस्थिति भी आवश्यक है। इस विधि से अनुभव का आध्यात्मिक बोध बढ़ेगा। बाह्य वस्तु के अनुभव में आत्मा का आनन्द प्रकट हो सकेगा। पहले वस्तु के अनुभव से आत्मा की प्रकृति ढक गई थी, अब वह अपने असली रूप में चमक सकेगी।

हमारी समस्त भौतिक सत्ता पर भी यह बात लागू होनी चाहिए। हम बाह्य जगत् का अनुभव प्राप्त करेंगे ही, क्योंकि यह जीवन का एक अंग है, परन्तु आन्तरिक जीवन को उसका पूरक बनकर रहना चाहिए। इस तरह हम भौतिक जीवन का भरपूर आनन्द उठा पाएँगे। अपने आंतरिक आनन्द सागर की सत्ता से अनभिज्ञ हममें से अधिकतर लोग पूर्णत: बहिर्मुख जीवन जीते जा रहे हैं। ध्यान का एक उद्देश्य यह भी है कि वह हमें बाह्य उलझनों से, किंचित् काल

के लिए ही सही, मुक्त करके अंतर्जगत की झाँकी दिखा दे, परन्तु वह बाह्य जगत् से भी हमारा सम्बन्ध बनाये रखे। बाह्य और आंतरिक जगत् के बीच इस सम्बन्ध के प्रति सजगता प्रदान करके ध्यान आध्यात्मिक आनन्द और शांति प्रदान करता है। यही हमें अनिवार्य स्वानुभूतिमूलक अंत:प्रकृति के प्रति जागरूक करता है।

ध्यान हमारी पूर्वार्जित सम्पत्ति है। इसका अनुभव हम सहज ही कर सकते हैं; पर वर्तमान जीवन-पद्धति इसमें बाधक बन जाती है। अपने आन्तरिक स्वभाव को न जानने के कारण हम सदा तनावपूर्ण स्थिति में रहा करते हैं। हम निरन्तर अपनी अन्त: प्रकृति के प्रतिकूल कार्य करने का प्रयास करते रहते हैं, क्योंकि हमें ऐसा लगता है कि हमें यह कार्य करना चाहिए। इसी कारण हम जो चाहते हैं और जो यथार्थ में है, उसके बीच निरन्तर एक विरोध बना रहता है। हम जैसे हैं वैसे रहने की अपेक्षा हमेशा कुछ और बनने के लिए प्रयास करते रहते हैं। इस दूरी को, इस विरोध को अगर हम दूर कर दें तो ध्यान की अवस्था को सहज रूप से प्राप्त करने में सफल हो सकते हैं।

जिस ज्ञान का अनुभव हमें होता है, वह वस्तुत: बौद्धिक ज्ञान है। वह ज्ञान हमें मन के तार्किक भाग से प्राप्त होता है। वह वास्तव में सापेक्ष ज्ञान है, न कि वास्तविक ज्ञान। इसमें जो सीमित तथ्य हुआ करते हैं, उनसे हम सिद्धान्तों, धारणाओं और वातावरण के साथ अपने सम्बन्धों की स्थापना करते हैं। वैज्ञानिक, शिल्पी, दार्शनिक आदि के तर्क इसी प्रकार बौद्धिक मन से नि:सृत होते हैं। सबसे भ्रामक बात यह है कि हमारी मूल मान्यताएँ ही अपूर्ण हैं। फलत: इस तरह के ज्ञान सदा ही खण्डित होते रहे हैं। उदाहरणार्थ – न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त को आइन्स्टीन ने तोड़ा। यही दशा बुद्धि से उपजे ज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र की है। बौद्धिक मन द्वारा निकाले गए प्रत्येक निष्कर्ष का स्थान नया ज्ञान ले सकता है।

हम भावना तथा संवेदना द्वारा भी ज्ञान प्राप्त करते हैं। मानसिक स्तर पर किसी विचार की सत्यता का आभास हो सकता है, और साथ ही भावनात्मक स्तर पर भी उसकी सत्यता का अनुभव हो सकता है। कुछ लोग इसको अन्तर्ज्ञान समझने की भूल करते हैं।

बुद्धि तथा भावनाओं से प्राप्त इस ज्ञान से परे एक और ज्ञान है। यह ज्ञान ध्यान द्वारा प्राप्त होता है और सत्य के अधिक निकट है। यह सूक्ष्म ज्ञान है, जो स्थिति की सम्पूर्णता को देख सकता है। बौद्धिक ज्ञान छोटे-छोटे टुकड़ों

को जोड़कर एक चित्र बनाने का प्रयास करता है, जबकि सूक्ष्म अतीन्द्रिय ज्ञान सीधे सम्पूर्ण स्थिति का अवलोकन कर सकता है। यह मन के उस पराचेतन भाग से आता है, जो सामान्यत: हमारे लिए अज्ञात बना रहता है। यह ज्ञान न तो बुद्धि पर आधारित है, न भावनाओं के रंग से रंगा हुआ है। ध्यान में व्यक्तिगत प्रक्षेप नहीं होता। यदि ऐसा होता है तो यह ध्यान नहीं है।

ध्यान की अवस्था में मन के उच्चतर क्षेत्रों, विकसित या पराचेतना तथा जाग्रत मन के सचेतन भागों के साथ सम्पर्क स्थापित होता है। इस सम्पर्क के फलस्वरूप साधक को उच्चतर मानसिक कम्पनों का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त होता है। ये सूक्ष्म उच्चतर कम्पन सदा ही बने रहते हैं, पर सामान्यत: इनका अनुभव नहीं हो पाता। कभी-कभी इनकी झलक अन्तर्ज्ञान, प्रेरणा, सृजनात्मक प्रबोध आदि के रूप में यदा-कदा दिख जाती है। अपने ग्रन्थि-आक्रान्त, अशुद्ध मन के कारण हम सामान्यत: इन स्पन्दनों से अनभिज्ञ रहते हैं। ज्ञान के ये उच्चतर रूप, उच्चतर स्पन्दन हमें दैनिक जीवन की अभिव्यक्तियों में निहित सत्य का दर्शन कराते हैं, जीवन के गूढ़तर तत्त्व ध्यान में हमारे सम्मुख आ जाते हैं।

# 2

# विज्ञान, आत्मा और ध्यान

यह हर्ष का विषय है कि विज्ञान और धर्म, जो विपरीतधर्मी समझे जाते थे, अब समीप आते जा रहे हैं। विज्ञान में योग की प्रणालियों से लाभ उठाने के लिए अध्ययन हो रहे हैं और योग ने वैज्ञानिक रीति से अपनी बातें कहनी शुरू कर दी हैं। वैज्ञानिक ज्ञान का उपयोग भी योग के क्षेत्र में किया जाने लगा है। विज्ञान अब केवल भौतिक सत्ता से सम्बद्ध न रहकर सत्ता के आध्यात्मिक पहलुओं को खोजने में अधिकाधिक सक्रिय हो गया है। आध्यात्मिक प्रगति के फलस्वरूप प्राप्त हुए शारीरिक उपफलों को बुद्धिवादी वर्ग के समक्ष प्रस्तुत कर विज्ञान अब अवश्य ही योग, धर्म तथा आध्यात्मिक मार्गों की सम्भावनाओं तथा सत्य को उद्‌घाटित करेगा।

गत शताब्दी के अनेक प्रसिद्ध तथा श्रेष्ठ वैज्ञानिक इस निष्कर्ष पर पहुँच गए थे कि वे इतना अधिक जान गये हैं कि अनुसंधान के क्षेत्र में अब कुछ करने को शेष नहीं रहा। लेकिन तभी आइन्सटीन और फ्रायड आदि उदारमना वैज्ञानिक आए, जिन्होंने अन्वेषण तथा अनुसंधान की और नई दिशाएँ दिखाईं। इसी कारण अब वैज्ञानिक अनुसन्धान के क्षेत्र में नवीन संभावनाओं के प्रति बहुत सजग हैं और इस बात के प्रति भी सतर्क हैं कि कहीं वे आत्मतुष्ट होकर न बैठ जाएँ। यही कारण है कि आध्यात्मिक अनुभवों के तथ्य को जाँचने के लिए अब विभिन्न शोध किए जा रहे हैं। आश्चर्य है कि अभी तक विज्ञान ने इस क्षेत्र में शोध नहीं किया है, जबकि फ्रायड ने निम्नतर मन के सम्बन्ध में अपनी खोज पचास वर्ष पूर्व ही प्रकाशित कर दी थी, और संत-ऋषि-मुनि, उच्चतर मन तथा उच्च स्तरीय चेतना एवं सजगता की चर्चा न जाने कब से करते आए हैं।

शरीर पर पड़ने वाले ध्यान के प्रभावों पर शोध करना आधुनिक विज्ञान का एक अत्यन्त रुचिकर विषय माना जाता है। यद्यपि ये शोध अभी प्रारम्भिक अवस्था में ही हैं, तथापि ये ध्यान से प्राप्त अनेक शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक लाभों को प्रकाशित कर रहे हैं। ऐसी सम्भावना प्रतीत होती है कि निकट भविष्य में विज्ञान लोगों को आध्यात्मिक पथगामी बनाने में बहुत अधिक सहायक होगा। अभी पुनर्निवेषण (बायोफीड बैक); जिसके बारे में इस अध्याय में आगे चर्चा की गई है, जैसे यंत्र का उपयोग ध्यान की उच्चतर अवस्था प्राप्त करने के लिए किया जा रहा है। आधुनिक मनोविज्ञान कई अर्थों में व्यक्ति के आध्यात्मिक विकास एवं मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य से एक साथ सम्बन्ध रखता है। योग और मनोसंश्लेषण, दोनों का उद्‌देश्य एक ही है – सम्पूर्ण सत्ता का एकीकरण, तदनन्तर आत्म-दर्शन या आत्म-साक्षात्कार।

अब हम उन क्षेत्रों की चर्चा करेंगे जहाँ योग और विज्ञान समान धरातल पर कदम रख रहे हैं, हजारों वर्ष पूर्व के सांख्य-दर्शन तथा आधुनिक मनोविज्ञान में आश्चर्यजनक साम्य है। योग में मनुष्य की सम्पूर्ण प्रकृति का महत्त्व है, जिसमें शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक, आत्मिक एवं आध्यात्मिक, सभी पहलू शामिल हैं। योगाभ्यास से इन सभी पक्षों का विकास होता है अथवा यह कहें कि इससे प्रत्येक व्यक्ति की सुषुप्त क्षमताएँ विकसित होती हैं। यथार्थ रूप में यही आध्यात्मिक पथ है जहाँ व्यक्तित्व के सभी पक्षों का समग्र विकास हो और मनुष्य को पूर्णता प्राप्त हो।

सामान्यत: मनोविज्ञान (अपवादस्वरूप 1910 में रौबर्टो असागिओली द्वारा प्रतिपादित मनोसंश्लेषण को छोड़कर) हाल के कुछ वर्षों के अलावा व्यक्ति के जीवन को प्रभावित करने वाले कई पक्षों की अवहेलना करते हुए मात्र एक सीमित दायरे में ही कार्य करता रहा है। उदाहरणार्थ, पाश्चात्य मनोविज्ञान के जन्मदाता फ्रायड की मान्यता थी कि मनुष्य की सर्वप्रमुख मनोवृत्ति है मैथुन तथा आत्मसुरक्षा। देखा जाए तो यह मनुष्य की मानसिकता तथा आकांक्षाओं का बहुत ही संकीर्ण अवलोकन तथा आकलन है। फिर भी आज भी अनेक मनोवैज्ञानिक इसी तथ्य को मानते आ रहे हैं। युंग निश्चय ही अपने विचारों में बहुत प्रगतिशील थे और उन्होंने माना कि मनुष्य की क्रियाएँ ऐसे गूढ़तर तथ्यों से प्रभावित होती हैं, जिनके विषय में अधिकांशत: वह अनभिज्ञ ही रहता है।

सभी मनोवैज्ञानिक विचारधाराओं ने मनुष्य को उसके अस्तित्व को प्रभावित करने वाले वातावरण तथा दूसरी चीजों, जैसे, आध्यात्मिक पहलुओं से अलग रख कर समझा है। इसीलिए मनोविज्ञान वस्तुत: कभी ऐसा कुछ नहीं दे सका जिससे मनुष्य की थोड़ी-सी भी सही व्याख्या हो। इसके फलस्वरूप मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित मनोवैज्ञानिक चिकित्सा बहुत सफल नहीं हो सकी। कुछ हद तक वे व्यक्ति की सहायता कर सकीं, परन्तु उनसे व्यक्ति को प्रसन्नता अथवा विकास की प्राप्ति नहीं हुई।

सम्भवत: युंग ही ऐसे मनोवैज्ञानिक हैं जिन्होंने मनोविज्ञान को मनुष्य के अस्तित्व के समग्र स्वरूप को देखने के लिए प्रेरित किया। हालाँकि उनके विचारों को बृहद् स्तर पर अन्य मनोवैज्ञानिकों ने हाल ही में गंभीरता से लेना आरंभ किया है। प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में उन्हीं के सिद्धान्तों के आधार पर अनेक आधुनिक विचारधाराएँ विकसित हुई हैं, जैसे – विकास मनोविज्ञान, जेस्टाल्ट मनोविज्ञान, जीव मनोविज्ञान, आदि। ये सभी यौगिक विचारधारा के बहुत समीप हैं तथा मनुष्य के अस्तित्व को बहु-आयामी मानते हैं। इन सबका मानना है कि मनुष्य के अस्तित्व को सही ढंग से समझने के लिए हमें वस्तुपरक तथा विषयपरक सभी पक्षों पर ध्यान देना होगा। यदि उसका कोई भी पक्ष छूट जाए, जैसे, आध्यात्मिक पक्ष, तो अधूरा चित्र ही सामने आएगा।

आधुनिक मनोविज्ञान प्रत्येक मनुष्य के भीतर सुप्त सम्भावनाओं को विकसित करने की बात पर बहुत बल देता है। इसे 'आत्म-कार्यान्वयन' कहा जाता है। यह मनुष्य की आन्तरिक शक्तियों के क्रमिक उद्घाटन एवं विकास की प्रक्रिया है। योग का भी यही उद्देश्य है, अन्तर केवल इतना है कि योग इस क्रम को आत्म-कार्यान्वयन की जगह आत्म-साक्षात्कार कहकर संबोधित करता है, जिसमें मनुष्य अपने अस्तित्व के सभी आयामों में अपनी आत्मिक प्रकृति तथा उसकी अभिव्यक्ति के प्रति सजग होता है। योग का अन्तिम उद्देश्य है, आत्म-साक्षात्कार, जिसमें मनुष्य के भीतर व्याप्त सभी संभावनाएँ अपने चरमोत्कर्ष पर होती हैं, और उसके बाह्य वातावरण तथा आंतरिक अस्तित्व के बीच पूर्ण समस्वरता होती है।

आधुनिक मनोविज्ञान में आत्मकार्यान्वित व्यक्ति भी इसी प्रकार का होता है, वह अपनी सभी सुप्त क्षमताओं तथा प्रतिभाओं को जगा चुका होता है, वह अपने व्यक्तित्व तथा आस-पास के वातावरण के विरुद्ध प्रतिक्रिया नहीं करता, उसकी सभी आन्तरिक तथा बाह्य अभिव्यक्तियों में हमेशा सामन्जस्य

बना रहता है। आधुनिक मनोविज्ञान तथा योग, दोनों ही क्रम-विकास पर बल देते हैं– 'कम पूर्णता' से 'अधिक पूर्णता' की ओर की यात्रा की बात करते हैं। ईश्वर, परम चेतना, परम सत्ता से एकाकार होना ही योग का सर्वोच्च लक्ष्य है; मनोवैज्ञानिकों ने इस लक्ष्य की बात अभी नहीं कही है, पर कौन जानता है कि निकट भविष्य में वे इस अभिधारणा को प्रस्तुत करें। हालाँकि मन:संश्लेषण का सिद्धान्त मानने वाले लोग कह ही चुके हैं कि आत्म-साक्षात्कार ही जीवन का अंतिम लक्ष्य है।

मनोविज्ञान की विगत मान्यता यह थी कि मनुष्य रूढ़ प्रवृत्तियों में मानसिक रूप से बँधा हुआ है। अत: यह मान लिया गया कि मनुष्य को अनन्त काल तक इन प्रवृत्तियों को तुष्ट करते रहना चाहिए। इन मूलभूत आवश्यकताओं की निर्बाध तथा निरन्तर तुष्टि यद्यपि आवश्यक है, किन्तु यह उसके तनाव तथा असंतोष को कुछ काल के लिए ही कम करती है। ये किसी रूप में व्यक्ति के जीवन से तनाव का सम्पूर्ण निर्मूलन नहीं करती हैं। आधुनिक मनोविज्ञान एवं योग मनुष्य के सर्वांगीण विकास पर जोर देना चाहते हैं ताकि वह इस तनाव और शरीर की क्षणिक तुष्टि के पुराने जाल से निकल सके और संतुष्टि के अधिक उन्नत रूपों की प्राप्ति हेतु अग्रसर हो। यह उच्चतर अभिलाषा अधिक संतोष तथा आनन्द प्रदायक है। इस प्रकार विकासशील व्यक्ति निम्नतर प्रवृत्तियों को छोड़ता जाएगा, क्योंकि उनसे कम सन्तोष मिलता है। योग तो यह पहले ही कह चुका है। आधुनिक मनोविज्ञान इस तथ्य से अधिकाधिक सहमति प्रकट करता जा रहा है।

आधुनिक मनोवैज्ञानिकों की ध्यान के प्रति आस्था बढ़ती जा रही है और इस दिशा में उन्होंने शोध करने शुरू कर दिये हैं। इसके आशय और उपयोग से सम्बन्धित कुछ जानकारी प्राप्त करने के लिए उन्होंने न केवल वैज्ञानिक परीक्षण किए हैं, बल्कि ध्यान सम्बन्धी पुरातन ग्रन्थों का अध्ययन भी शुरू कर दिया है। वे स्वयं भी ध्यान करने का प्रयास कर रहे हैं और ऐसे अनुभव प्राप्त कर रहे हैं जो उन्हें सामान्य बौद्धिक ज्ञान से परे ले जाते हैं। ध्यान द्वारा प्राप्त अनुभवों के आधार पर इन मनोवैज्ञानिकों ने अब सामान्य मानव अस्तित्व की अपनी परिभाषा का पुन: अवलोकन आरम्भ कर दिया है। उन्होंने घोषित किया कि अधिकतर मनुष्यों को वर्ग-व्यवस्था की दासता के कारण जन्म से ही अपने को कुण्ठित करके रखना पड़ता है। उन्हें व्यक्तियों और वस्तुओं का परिचय अच्छा-बुरा, काला-सफेद, हिन्दू-मुसलमान चतुर-बुद्धु कहकर दिया जाता है।

हम या तो प्रेम करते हैं अथवा घृणा। हम शब्दों द्वारा निर्मित इस विभाजन में इतने लिप्त हो जाते हैं कि संसार को यथार्थ रूप में नहीं देख पाते हैं। अतः हम पूर्व निश्चित धारणा के अनुसार एक स्वचालित मशीन की तरह चलते रहते हैं। मनोविज्ञान का एक उद्देश्य है, इस यंत्रवत् स्थिति से हमें उबारना।

आधुनिक विचारक, विशेषकर मनोवैज्ञानिक आज के असंयत और प्रतिद्वन्द्वितापूर्ण जीवन का घातक प्रभाव देखकर चिन्तित हैं। मानसिक समस्यायें महामारी की तरह फैल रही हैं। वर्तमान स्थिति झेलने के लिए फौलादी मस्तिष्क की आवश्यकता है। यह भी जरूरी है कि मनुष्य स्वयं अपना मनोविश्लेषक हो। इसके लिए एक ही उपाय है, ध्यान। यह अत्यधिक चिन्ता, द्वन्द्व और तनाव को दूर करने का यह एक सर्वमान्य उपाय है। यह एक सकारात्मक तथा संतुष्ट जीवन का भी निश्चित उपाय है।

अधिकतर लोग अब मानने लगे हैं कि ध्यान न तो निद्रा है, न सम्मोहन। इस संदर्भ में मनोवैज्ञानिकों ने केवल उन लोगों को लिया है जो नियमित समय पर थोड़े समय के लिए ध्यान करते हैं। वास्तव में कुछ उच्च कोटि के योगी तो निरन्तर सोते-जागते ध्यान की अवस्था में ही रहते हैं, यह इस तथ्य को दर्शाता है कि ध्यान नींद और सम्मोहन के परे है। अधिकतर मनोवैज्ञानिक, लोगों को ध्यान करने का सुझाव दे रहे हैं ताकि वे अपनी आन्तरिक क्रियाओं को देख सकें। इस प्रकार वे विभिन्न अंगों तथा मस्तिष्क की अति क्रियाशीलता के प्रति सजग बन सकते हैं और अत्यधिक उद्दीपन अथवा त्रुटिपूर्ण क्रिया में सुधार लाने के लिए कदम उठाए जा सकते हैं। व्याधि दूर करने का यह सर्वोत्तम तरीका है, बीमारी के होने से पहले ही उसकी रोकथाम। नित्य प्रातःकाल आधे घण्टे का ध्यान ही ऐसी विश्रान्ति ला देता है कि हमारे बाह्य क्रियाकलाप बेहतर और अधिक सुचारु रूप से होने लगते हैं। अपने दैनिक क्रियाकलापों को सम्पन्न करने की योग्यता पूर्ण रूप से हमारी आन्तरिक स्थिति पर निर्भर रहती है। यदि हमारी आन्तरिक स्थिति में सामन्जस्य नहीं है तो बाह्य वातावरण के साथ भी हमारी पारस्परिक क्रिया सामन्जस्यपूर्ण नहीं हो सकती है।

निराशावादिता, उदासी तथा तनाव आदि को अधिकतर लोगों ने जीवन के सामान्य अंग के रूप में स्वीकार कर लिया है, किन्तु ध्यान से इनका निवारण होना अवश्यम्भावी है। मनोविज्ञान के क्षेत्र में प्रगतिशील चिन्तक भी अब इसमें विश्वास करने लगे हैं। योग की ही भाँति अब वे भी मानने लगे हैं कि मनुष्य की स्वाभाविक स्थिति आनन्द की है। प्रत्येक व्यक्ति ध्यान का उपयोग अपनी

मनोस्थिति के नियंत्रण तथा नकारात्मक स्थितियों के अन्धकार को दूर कर स्वस्थ आनन्दित मनोभाव लाने के लिए कर सकता है।

मनुष्य की वर्तमान समस्याओं में सबसे बड़ी समस्या है – परिवर्तन के अनुरूप अपने आपको ढाल पाने में असक्षम होना। यह समस्या सौ वर्ष पूर्व या उससे भी पहले, यहाँ तक कि आज भी उन देशों में नहीं है जहाँ प्रौद्योगिक समाज का विकास नहीं हुआ है, क्योंकि वहाँ दिन-ब-दिन क्या वर्ष-दर-वर्ष कोई परिवर्तन नहीं होता था, जबकि प्रौद्योगिक समाज निरन्तर परिवर्तनशील हैं। प्रौद्योगिक समाज में परिवर्तन की गति इतनी तीव्र होती है कि मस्तिष्क उसका सरलता से अनुकरण नहीं कर पाता है। फलस्वरूप परिवर्तनों को न झेल सकने वाले मनुष्य अपने व्यक्तित्व तथा प्रकृति के अनुसार छोटे या बड़े स्तर पर मानसिक असंतुलन का सामना करते हैं। मनोविज्ञान ने इस समस्या को पहचाना है और इस परिवर्तन का सामना करने की क्षमता पैदा करने के लिए ध्यान को एक निश्चित मार्ग माना है।

मनोविज्ञान ने अचेतन मन की आन्तरिक क्रियाओं का विस्तृत ज्ञान होना सदा आवश्यक माना है, ताकि अचेतन में जड़ जमाए बैठी हमारी कुण्ठाएँ, भय तथा भ्रान्तियाँ, जो जीवन पर आधिपत्य जमाकर समस्या खड़ी कर देती हैं, उनको जाना जा सके तथा उन्हें प्रकट कर उनका क्षय किया जा सके। इस कार्य के लिए योग तथा आधुनिक मनोवैज्ञानिकों द्वारा प्रयुक्त विधि है, ध्यान। साथ ही उच्चतर अचेतन मन का अन्वेषण भी आवश्यक है, जहाँ हमारी क्षमताएँ, प्रतिभाएँ तथा आन्तरिक संभावनाएँ छिपी हैं। हममें से कई लोगों में स्वाभाविक रूप से कुछ कलाएँ, क्षमताएँ तथा हुनर होते हैं, जिन्हें हम जानते नहीं हैं और इसलिए कभी उनका उपयोग नहीं करते। हम सदा निराश तथा परेशान रहते हैं। यदि इस प्रतिभा को हम अभिव्यक्त कर सकें तो आत्म-क्रियान्वयन के क्रम में रचनात्मक और प्रसन्नचित्त जीवन जी सकते हैं। ध्यान ही इसका उपाय है। इस प्रकार हम अपने आन्तरिक अस्तित्व को खोजकर उसकी सहज तथा स्वाभाविक अभिव्यक्ति कर सकते हैं। हम जिस कार्य में सर्वश्रेष्ठ हैं, उसे करना प्रारम्भ कर सकते हैं।

## पुनर्निवेषण (बायोफीडबैक) – योग की एक आधुनिक धारा

ध्यान के क्षेत्र में पुनर्निवेषण तकनीकों का उपयोग हो रहा है। इसका कार्य है – मस्तिष्क से निकलने वाली विद्युत धारा को नापना और निरीक्षण करना।

सर्वप्रथम हमें इन मानस-तरंगों की उत्पत्ति के कारण और इनकी प्रकृति को समझना होगा। उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम चरण में बन्दरों के मस्तिष्क पर शोध करते समय मानस तरंगों की उपस्थिति का पता चला था। बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में यह शोधकार्य मानव मस्तिष्क पर भी किया गया और तरंगों की आवृत्ति, उनके वोल्टेज एवं आयाम में स्पष्ट विविधता दिखाई पड़ी। इस दिशा में निरन्तर शोध हो रहे हैं तथा पैथोलॉजी के क्षेत्र में मस्तिष्कीय तरंगों के पैटर्न का प्रयोग मस्तिष्क में विद्यमान रोगों, जैसे, ट्यूमर एवं सामान्य मानसिक गड़बड़ियों आदि का पता लगाने के लिए किया जाने लगा है।

ये मानस तरंगें क्या हैं? चिकित्सा-विज्ञान शोधकर्त्ता निश्चित रूप से तो कुछ कहने की स्थिति में नहीं हैं, पर संक्षेप में इनके कारण और प्रकृति का विश्लेषण यहाँ प्रस्तुत है। मस्तिष्क करोड़ों-करोड़ कोशाणुओं से बना है, जिन्हें स्नायु-कोशिका कहते हैं। ये कोशाणु अनगिनत जोड़ों के द्वारा एक-दूसरे से जुड़े हैं। हम यह भी कह सकते हैं कि हर कोशाणु प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अन्य सभी कोशाणुओं से जुड़ा है। इन पेचीदा कोशिका परिपथों में स्नायविक संवेग निरंतर प्रवाहित होते रहते हैं। प्रत्येक स्नायु-कोशिका में एक केन्द्रीय पिण्ड, अक्ष तन्तु एवं अनेक द्रुमाश्म होते हैं। अक्ष तन्तु संवेगों को ग्रहण करता है और दूसरी स्नायु कोशिकाओं को द्रुमाश्म के माध्यम से संवाद संचारित करता है। स्नायु संवेगों का संचारण तभी सम्भव है जब स्नायु कोशिका में विद्युत शक्ति एक विशेष मात्रा में विद्यमान रहे। इस पूर्व निर्धारित स्तर में अचानक एक प्रस्फुटन अथवा आवेश उत्पन्न होता है। इसी संवेगात्मक आवेश को मानस-तरंग कहते हैं।

शोधकर्त्ताओं ने पता लगाया है कि मानस तरंगों की आवृत्ति, वोल्टेज एवं आयाम तथा व्यक्ति की स्थिति में एक विशिष्ट सम्बन्ध होता है। सुविधा की दृष्टि से तरंगों को चार प्रकारों में बाँट दिया गया है – बीटा, अल्फा, थीटा और डेल्टा। पाठक यह ध्यान में रखें कि ये मानस तरंगें मन:स्थिति नहीं, बल्कि अभिव्यक्तियाँ हैं, जिनसे हम अपने मन की अवस्था का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। यद्यपि इन तरंगों और मन:स्थिति के बीच के सम्बन्ध के कई आयामों की खोज अभी बाकी है, तथापि अब तक के ज्ञात तत्त्वों के आधार पर यह विवरण प्रस्तुत हैं –

**बीटा तरंगें** – मुख्यत: जाग्रत अवस्था में प्रतिदिन हमारे मस्तिष्क से विकीर्ण होती हैं। इनका सम्बन्ध बाह्य क्रिया-कलापों तथा बहिर्मुखी प्रवृत्ति से

है। बौद्धिक विचार, चिन्ता, इन्द्रिय ज्ञान आदि की स्थिति में ये तरंगें उत्सर्जित होती रहती हैं। इनका विस्तार लघु एवं इनकी आवृत्ति तीव्र होती है। इनकी आवृत्ति तेरह चक्र प्रति सैकण्ड होती है।

**अल्फा तरंगें –** ये तरंगें ध्यान की मन्द अवस्था में स्वत: उठती हैं। इनका सम्बन्ध मस्तिष्क की निश्चिन्त, तनावशून्य एवं शांत स्थिति से है। इनका सम्बन्ध सृजनात्मकता से रहता है, अत: रचनात्मक क्रियाओं के समय ये तरंगें प्रचुरता से उत्सर्जित होती हैं। बौद्धिक मन और इन्द्रियों के चुप बैठने पर ही ये तरंगें उठती हैं। ध्यानावस्था में योगियों का अध्ययन करने से ये तथ्य सामने आये हैं। इनका सम्बन्ध ध्यान के विशेष लक्षण, निष्क्रिय सजगता से है। इनकी आवृत्ति की परिधि आठ से तेरह चक्र प्रति सैकण्ड है।

**थीटा तरंगें –** इनका उत्सर्जन नींद की अवस्था में बहुतायत से होता है। इनका सम्बन्ध अचेतन मन से है। जब अचेतन के गहरे पूर्वांकन चेतन और जाग्रत अवस्था की सतहों पर उभरने लगते हैं, तब ये तरंगें उठती हैं। ये तरंगें गहन ध्यान, तीव्र सृजनात्मकता, आनन्द तथा इन्द्रियातीत अनुभूति की अवस्था में उठती हैं। कई बच्चों में जाग्रत अवस्था में ही इन तरंगों का उत्सर्जन होता है। पर वयस्कों में ऐसा बहुत कम होता है। इनकी आवृत्ति-परिधि चार से सात चक्र प्रति सैकण्ड है।

**डेल्टा तरंगें –** इनका विस्तार गहन है, पर आवृत्ति चार चक्र प्रति सैकण्ड से भी कम है। इन तरंगों के विषय में कम ही जाना जा सका है। पर इनका सम्बन्ध स्वप्न रहित प्रगाढ़ निद्रा से है। इस अवस्था में ग्रहणशीलता तथा सीखने की क्षमता बढ़ जाती है। अर्थात् दूसरे शब्दों में अगर कहें तो इस अवस्था में रहने वाला व्यक्ति गहरी नींद में टेप रेकार्ड की सहायता से ज्ञानार्जन कर सकता है। ऐसी स्थिति में ज्ञानेन्द्रियों को लाँघते हुए ज्ञान सीधे अचेतन मन में प्रवेश कर जाता है।

उपर्युक्त वर्गीकरण स्वेच्छाकारी है। इस वर्गीकरण को प्राकृतिक विभाजन नहीं माना जाना चाहिए। सिद्ध योगी या मानसिक क्रियाओं पर नियंत्रण रखने वाला व्यक्ति एक से दूसरी स्थिति में इच्छानुसार आ-जा सकता है। वह अपनी इच्छाशक्ति का उपयोग कर 'सामान्य' जाग्रत अवस्था में भी बीटा परिधि को पार कर अल्फा तरंगों का उत्सर्जन कर सकता है। प्रारम्भ में बीटा तरंगें विद्यमान होती हैं; अंतत: बीटा तरंगें शान्त हो जाती हैं और कुछ समय पश्चात् थीटा तरंगें उत्पन्न होने लगती हैं। अगर नींद नहीं आई तो गहरा ध्यान लग

जाएगा, जो थीटा तरंगों की प्रधानता बढ़ने के साथ क्रमश: और गहरा होता जाएगा। इस तरह अन्त में वह डेल्टा तरंगों का भी उत्सर्जन कर सकता है, जिसका सम्बन्ध गहरी निद्रा से है। हाँलाकि हमें इस तथ्य पर विचार करना होगा पर ऐसा अनुमान है कि ध्यान तथा संभवत: समाधि की अवस्था में भी डेल्टा तरंगों का प्राधान्य होता है।

इन तरंगों के स्वरूप को इलेक्ट्रोइनसेफलोग्राफ नामक विद्युत उपकरण द्वारा देखा जा सकता है। यह एक विस्तारक प्रणाली है, जो मस्तिष्क में होने वाली विद्युत क्रियाओं का संकेत देती है। ये सूचनाएँ मस्तिष्क में लगे विद्युदग्र द्वारा ग्रहण की जाती हैं। इनसे लगा 'पेन रेकार्डर' ग्राफ इन सूचनाओं को एक ग्राफ में अंकित करता जाता है, जिससे तत्क्षण तरंगों के प्रकार का संकेत मिल जाता है। तरंगों के आकार से व्यक्ति की मानसिक स्थिति ज्ञात होती है। इस प्रकार के यंत्रों का उपयोग अभी पैथोलॉजी में तथा अनुसंधान के लिए ही होता है। अभी ये जन-साधारण के उपयोग में आए, इसका प्रश्न ही नहीं उठता है। पर अनेक यंत्र निर्माता इस दिशा में सक्रिय हैं कि कम मूल्य का ऐसा उपकरण तैयार हो, जो लोगों को आसानी से उपलब्ध हो सके। सबसे प्रचलित और सरल यन्त्र है– 'हेड फोन', जिससे मानस-तरंगों की क्रियाओं से सम्बन्धित ध्वनि सुनाई पड़ती है। एक दूसरा यन्त्र है जो विशेष प्रकार की मानस-तरंग उठने पर विशेष ध्वनि करता है। इस दिशा में अभी और प्रगति होने की आशा है।

अब जानना यह है कि पुनर्निवेषण किस प्रकार ध्यान में सहायक होगा। अपने अन्दर उठने वाली मानस तरंगों की जानकारी रहने पर व्यक्ति उन्हें अपने इच्छानुसार बदल सकता है। इस तरह गहन अभ्यास से मन:स्थिति भी बदल सकती है। यह तो सम्भव नहीं दिखता कि कोई पुनर्निवेषण यन्त्र उठाए और अपनी मन:स्थिति बदल लें। लेकिन अभ्यास से ध्यान की अवस्था प्राप्त की जा सकती है।

सचेतन रहकर किस तरह मानस तरंगों को बदला जा सकता है? शुरू में यह असंभव प्रतीत होता है, क्योंकि तरंग स्वयं एक मानसिक क्रिया है। इसमें वही अभ्यास और धीरज चाहिए, जिसकी आवश्यकता जीवन के प्रत्येक कार्य में होती है। सतत् प्रयास द्वारा ही हम चलना, बोलना, पढ़ना सीखते हैं। आधुनिक शोधों ने सिद्ध किया है कि शरीर की सभी क्रियाओं, जैसे– हृदय गति, श्वसन प्रक्रिया आदि पर नियन्त्रण प्राप्त किया जा सकता है। युगों से योगी यही करते आ रहे हैं। फिर भी विज्ञान ने अब जाकर इसे गंभीरता से लेना शुरू किया है।

वैज्ञानिक परीक्षणों में, जिनमें से कुछ में पुनर्निवेषण का उपयोग भी किया गया है, विशेष अंगों से होने वाले उत्सर्जन को नापा गया और पाया गया कि हृदय तथा दूसरे अंगों की क्रियाशीलता को मात्र संकल्प-शक्ति से कम अथवा अधिक किया जा सकता है। केवल अभ्यास की आवश्यकता है। इसी प्रकार मस्तिष्क तरंगों को भी नियंत्रित किया जा सकता है। प्रत्येक व्यक्ति को अपने अनुरूप पद्धति का चुनाव स्वयं करना होगा। उदाहरण के लिए, किसी व्यक्ति के लिए मस्तिष्क तरंगों को बीटा से अधिक विश्रान्त अल्फा तरंगों में परिवर्तित करना बहुत कठिन हो सकता है। अधिक प्रयास करने से और अधिक तनाव उत्पन्न हो सकता है या संभव है कि बीटा तरंगों की और अधिक प्रधानता हो जाए। कुछ लोगों के लिए यह इतना आसान है कि केवल परिवर्तन के लिए सोचने मात्र से परिवर्तन हो जाता है, परन्तु इन क्रियाओं में व्यक्तिगत भिन्नताएँ रहेंगी। प्रत्येक व्यक्ति को अपने अनुरूप तरीका चुनना चाहिए।

पुनर्निवेषण यंत्र के बिना भी निश्चित रूप से उच्च ध्यान की अवस्था को प्राप्त किया जा सकता है, जैसा कि इतिहास में योगियों ने किया है। महान् योगियों को पुनर्निवेषण यन्त्र की कभी आवश्यकता नहीं पड़ती, क्योंकि उनकी संवेदनशीलता इतनी अधिक होती है कि वे अपनी इच्छा से अपने मन की स्थिति को परिवर्तित कर सकते हैं। तथापि, पुनर्निवेषण तकनीक प्रारम्भिक अभ्यासियों तथा जो लोग निरन्तर अभ्यास के पश्चात् भी ध्यान में कुछ खास प्रगति नहीं कर पाते, उनके लिए कारगर सिद्ध हो सकती है। प्राय: हम लोग इतने असंवेदनशील होते हैं कि हममें यह जानने की क्षमता भी नहीं होती कि हम अधिक विश्रान्त हो रहे हैं अथवा अधिक तनावग्रस्त हो रहे हैं, अथवा मन की एक ही स्थिति में स्थित हैं। ऐसी स्थिति में पुनर्निवेषण तकनीक सहायक होगी। पुनर्निवेषण ध्यानकर्त्ता को सूचित करेगा कि प्रगति हो रही है या नहीं। यह पद्धति इतनी उपयोगी है कि कुछ योग शिक्षक अपने तथा अपने विद्यार्थियों के लिए इसका उपयोग कर रहे हैं।

यद्यपि पुनर्निवेषण तकनीक का ज्ञान अभी अपनी शैशवावस्था में है, पर इसमें भविष्य के लिए अनेक संभावनाएँ दिखायी पड़ रही हैं। यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि ऐसे युवक-युवतियाँ जो अगोचर की झाँकी पाने के लिए ड्रग्स लेते थे, अब इस पुनर्निवेषण यंत्र का उपयोग करने लगे हैं। अभ्यास द्वारा इससे भी वही लाभ तथा परिणाम प्राप्त होते हैं, पर वे ड्रग्स और नशे की लत के दुष्प्रभावों से बच जाते हैं। यह यंत्र ध्यान को पूर्णता प्रदान करने में बहुत

सहायक होगा, जिससे ध्यान के सार्थक अनुभव सभी लोगों के लिए उपलब्ध हो जाएँगे। ध्यान के अभ्यासों तथा पुनर्निवेषण की तकनीकों के संयोजन से विश्व में चेतना तथा मन के स्तर को ऊँचा उठाने में बहुत मदद मिलेगी।

पाठकों को यह जानने की उत्सुकता होगी कि ध्यान की स्थिति एवं तद्सदृश अन्य स्थितियों, जैसे – आत्मविस्मृति और सम्मोहन में उत्सर्जित मानस-तरंगों के बीच क्या अन्तर है। इनमें कहीं कोई सम्बन्ध नहीं है। आत्मविस्मृति और सम्मोहन जैसी स्थितियों में उत्सर्जित तरंगें सम्मोहक द्वारा दिए गए सुझाव के अनुरूप होती हैं। इन स्थितियों में प्रायः बीटा तरंगें निकलती हैं, जो हमारी मन की बहिर्मुखी अवस्था की द्योतक हैं और निश्चित रूप से ये ध्यान से सम्बन्धित नहीं हैं।

## प्रत्येक कोषाणु में अनन्त ज्ञान अंतर्विष्ट है

वैज्ञानिकों ने अभी हाल ही में शरीर के कोषाणु की जटिलता को स्वीकार किया है। कुछ ही वर्ष पूर्व वैज्ञानिक जीवन अणु (डी.एन.ए.) का एक प्रतिमान बना सके हैं। यह अणु संतान में माता-पिता की विशेषताएँ आरोपित करता है। यह शुक्र और रज में वर्तमान रहता है। इतना ही नहीं, यह शरीर के प्रत्येक कोषाणु में उपस्थित रहता है।

वैज्ञानिकों ने इसके रूपाकार की अनुकृति बनाकर इस बात की पुष्टि की है कि व्यक्ति के केशों के रंग, ऊँचाई, पैरों की माप और बचपन से वयस्क होने तक के विकास का ढाँचा इसी के द्वारा तय होता है। अणु जीवन की रूपरेखा तैयार करता है। यद्यपि वातावरण, स्थितियाँ और हमारे पारस्परिक क्रियाकलाप भी प्रभाव डालते हैं, पर जीवन के मूलरूप का निर्धारण इसी अणु द्वारा होता है और व्यक्ति उस पर चलने को बाध्य होता है।

हम देखते हैं कि यह वैज्ञानिक विचारधारा यौगिक दृष्टिकोण के करीब आती जा रही है। योग ने हमेशा से प्रत्येक अणु को चेतना-सम्पन्न माना है। दूसरे शब्दों में प्रत्येक कोषाणु का मूल अस्तित्व चेतना है। इसका प्रत्यक्ष रूप अणु के भौतिक स्वरूप में देखने को मिलता है, तथा डी.एन.ए.मानव जीवन का ब्लू-प्रिन्ट होता है। मानव-अस्तित्व आदि काल से ही कोषाणुओं की इस चेतना के अनुसार ही नियत और निर्देशित होता आया है। वैज्ञानिकों द्वारा अन्वेषित अणु के ढाँचे कोषाणु चेतना की इच्छा को कार्यान्वित करने वाले कार्यपालक मात्र हैं। वैज्ञानिकों के अनुसार डी.एन.ए. ही वह उपकरण है जो

हमारे जीवन की दिशा का निर्धारण करता है। लेकिन वैज्ञानिक डी.एन.ए. के पीछे छुपे चेतना के सिद्धान्त को ही नहीं समझ पाते।

उद्‌भट विचारक आश्चर्यचकित होकर यह स्वीकार कर रहे हैं कि प्रत्येक कोषाणु अपने अन्दर क्रमिक विकास की विगत प्रक्रिया का सम्पूर्ण इतिहास विरासत में लिये चल रहा है। दूसरे शब्दों में व्यक्ति अपने अन्दर प्रत्येक अणु में अतीत की सारी स्मृतियाँ सुरक्षित रखता है। यह गाथा उस समय से प्रारम्भ होती है जब आदि जीव पंक से निकलने को आतुर हो रहा था, जब वह मत्स्य रूप में जल में तैर रहा था, जल से थल की ओर रेंग रहा था, मर्कट स्वरूप में पेड़ों पर लटकने लगा था और मानव रूपाकृति के समीप आ रहा था। कुछ ही हजार वर्षों की तो बात है कि वह वर्तमान मानव स्वरूप पा सका है। माँ के गर्भ में ही उसके निर्माणाधीन शरीर के अणुओं में विगत विकास क्रम के सारे अनुभव संगृहीत हो गए हैं। इस विचार की तात्कालिक प्रतिक्रिया यही होती है कि यह असम्भव है। पूर्वाग्रहों से ग्रस्त हमारा मन इसे नहीं मान सकता, यद्यपि बहुत से महान् वैज्ञानिकों सहित प्रगतिशील चिन्तकों ने इसका बहुत बार वर्णन किया है।

आध्यात्मिक विचारकों ने युगों से यही बात कही है कि अनन्त तथा असीम ज्ञान मनुष्य के अन्दर विद्यमान है। जो बाहर है, वह सब अन्दर है। मनुष्य विश्व का एक लघु संस्करण है। अपने अन्दर गोता लगाकर विगत का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। इन तर्कातीत कथनों की सत्यता अब विज्ञान द्वारा भी प्रमाणित हो रही है। धर्म और विज्ञान कुछ वर्ष पूर्व तक एक-दूसरे से कितने भिन्न लगते थे! पर अब वे उच्चतर ज्ञान के लिए एक-दूसरे के निकट आते जा रहे हैं।

वैज्ञानिकों ने जीवन अणु (डी. एन. ए.) का नक्शा विद्युत सूक्ष्म दर्शक यंत्र से खींचा है। इसका दूसरा चरण है जीवन अणु की अंतर्स्थित प्रकृति का पता लगाना। विज्ञान के लिये अभी यह संभव नहीं है, क्योंकि यह व्यक्तिगत अनुभूति का विषय है। क्या यह कहना अतिश्योक्ति होगी कि ध्यान से ही जीवन अणु की गवेषणा सम्भव है? ध्यान का उद्‌देश्य ही है आन्तरिक प्रकृति का उद्‌घाटन। जीवन-अणु के विश्लेषण या ऐसे ही किसी सूक्ष्म अन्वेषण के लिए ध्यान विज्ञान के हाथों का एक आवश्यक उपकरण बन सकता है।

## अहं वृत्ति

मेरुदण्ड के सिरे पर जालवत् क्रियाशील संस्थान अवस्थित है। यह एक कपाट है, जिसके द्वारा हमारे सचेतन, प्रत्यक्ष ज्ञान से प्राप्त सूचनाओं का नियंत्रण

होता है। यह मस्तिष्क का वह हिस्सा है जो मनुष्य की चेतना के सभी स्तरों का नियमन करता है। जैसे, नींद की अवस्था, चेतना और पराचेतना की अवस्था, इत्यादि। यह बाह्य सूचनाओं के लिए एक छन्नक का कार्य करता है, यानी उनकी छानबीन करके आवश्यक जानकारियों को ही चेतन स्तर पर आने देता है और जिन सूचनाओं को अनावश्यक समझता है उन्हें चेतन स्तर पर आने से रोक देता है। यह मानव मस्तिष्क में स्थित प्रहरी एवं नियंत्रक है।

कुछ लोग इसे अहं कहते हैं, जो मनोविज्ञान का मूल आधार है। इसकी क्रियाओं के कारण हम प्रत्यक्ष ज्ञान के कुछ ही पहलुओं के प्रति सजग रहते हैं, और मस्तिष्क में पहुँचने वाली अधिकांश जानकारियों से पूर्णत: अनभिज्ञ रहते हैं। वास्तव में यह मस्तिष्क का एक अनिवार्य अंग है। अगर यह न होता तो हम सूचनाओं की बाढ़ में डूब जाते। उदाहरणार्थ, जब हम कोई पत्र लिखते रहते हैं, तो क्या लिखना है, इसी ओर हमारा मस्तिष्क सजग रहता है। पृष्ठभूमि में होने वाली ध्वनि, स्पर्श, शारीरिक क्रियाओं की तरफ हमारा ध्यान नहीं जाता, अन्यथा लिख पाना सम्भव नहीं होता। यह जालवत् क्रियाशील संस्थान ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त असंगत सूचनाओं को रोक देता है, जिससे किए जा रहे कार्य से सम्बन्धित सूचना ही चेतना तक पहुँचती है। इससे हम अपने कार्य पर ध्यान केन्द्रित कर पाते हैं।

यह व्यवस्था अहं की तरह कैसे काम करती है? इस क्रियाशील संस्थान का प्रहरी सूचनाओं को तब ही अन्दर जाने देता है जब उनमें प्रबलता होती है। दूसरे शब्दों में, बाह्य जगत् से सम्बन्धित सूचनायें हमारी सजगता के स्तर तक केवल तभी पहुँच पाती हैं, जब वे हमारे मानसिक प्रतिमानों तथा हमारी मान्यताओं एवं धारणाओं के अनुरूप हों। इसी रूप में यह अहं की तरह काम करता है। रुचि-अरुचि, भ्रांति, अन्तर्बाधा आदि के साथ मिलकर यह व्यक्ति को अहंवादी प्रकृति का बना देता है, और तब उन्हीं सूचनाओं से चेतना को भरता है जो व्यक्ति की रुचि और इच्छा के अनुरूप हैं। इसलिए यदि हम किसी चीज से भयभीत हैं, तो उन्हीं सूचनाओं के चेतन स्तर पर आने की सम्भावना रहती है जो इस भय को प्रबल बनाती हैं। यही प्रक्रिया अन्य बौद्धिक तथा भावनात्मक धारणाओं के साथ भी घटित होती है। यही कारण है कि हम दुनिया को यथावत् नहीं देख पाते, बल्कि अपने आस-पास की एक धुँधली तस्वीर ही देखते हैं।

यदि हम भय, रुचि-अरुचि, भ्रान्ति तथा पूर्व धारणाओं को हटा दें तो संसार का हमें अधिक साफ दृश्य दिखाई पड़ेगा। इस जालवत् क्रियाशील संस्थान द्वारा पक्षपात कम होगा, केवल हमारी मनोग्रन्थियों को प्रबल बनाने वाली चीजों के प्रति सजगता की प्रवृत्ति में कमी आएगी, इत्यादि। इससे हमारी चेतना तक पहुँचने वाली सूचनाओं का निर्धारण हमारे नकारात्मक मानसिक प्रतिमानों द्वारा कम होगा। अगर हमारा मस्तिष्क परेशानियों से मुक्त, तनावरहित और प्रेमपूर्ण है तो हम उसी की परछाई संसार में देखेंगे। अगर हमारा मन आदतन विश्रान्त अवस्था में रहता है तो हम संसार को भी उसी रूप में देखेंगे, वहाँ सबकुछ सुव्यवस्थित दिखायी देगा।

अंततः उच्चतम आध्यात्मिक स्तर में प्रेम की संवेगात्मकता समाप्त हो जाती है। इसमें प्रेम की अनुभूति का अतिक्रमण हो जाता है। अतः वह भी मन की दृष्टि को रंग नहीं पाता। चेतना प्रत्येक वस्तु से एकात्म बोध करती है, और तब चेतना एवं वातावरण के बीच किसी भी चीज को छिपाने वाला कोई पर्दा या प्रहरी नहीं रहता। इस हालत में अहं की कोई उपयोगिता नहीं रह जाती है, क्योंकि मन रुचि-अरुचि की परिधि से निकल जाता है। अब चेतना का केन्द्र आत्मा हो जाती है, न कि अहं।

मनशुद्धि योग का सामान्य उद्देश्य है, और यही ध्यान का तथा इस पुस्तक में दी गयी ध्यान की विधियों का विशेष उद्देश्य है। इस तरह वर्तमान भ्रान्तियों, भय और धारणाबद्ध मानसिक योजना को तोड़कर एक शुद्ध मानसिक धारणा की स्थापना करना ही मूल उद्देश्य है। ध्यान, उत्कृष्ट ध्यान तब एक सहज प्रक्रिया बन जाती है। इस प्रकार विज्ञान और आत्मा को एक-दूसरे से दूर रखने वाली बाधायें तेजी से टूट रही हैं। उनके बीच द्विभाजन समाप्तप्राय है। विज्ञान लोगों को आध्यात्मिक पथ पर चलने में सहयोग देने की सम्भावना व्यक्त कर रहा है और ध्यान की विधियाँ मानव मन को सुव्यवस्थित ढंग से समझ कर सृष्टि के प्रति गहरी अन्तर्दृष्टि प्राप्त करने में विज्ञान की सहायक बन रही हैं।

# 3

# ध्यान और स्वास्थ्य

ध्यान में गहन शारीरिक और मानसिक विश्राम मिलता है, जिसकी अनुभूति हममें से कुछ लोगों को निद्रावस्था में भी होती है। अत: ध्यान द्वारा अनेक बीमारियाँ दूर की जा सकती हैं, अपूर्व स्वास्थ्य-लाभ किया जा सकता है।

इस पर विचार-विमर्श करने के पूर्व हम शरीर और मन के अटूट पारस्परिक सम्बन्ध को समझ लें। युगों से यह माना जा रहा था कि शारीरिक व्याधि का मन से कोई वास्ता नहीं और मानसिक व्याधि का शरीर से कोई सम्बन्ध नहीं है। हाल ही में दोनों के बीच के घनिष्ठ आन्तरिक सम्बन्ध को मान्यता दी गयी है। वास्तव में ये दोनों मिलकर एक ही इकाई हैं। जैसे, मानसिक विश्राम से शरीर की थकान कम होती है और शारीरिक विश्राम से मन की। यह तो पाठकों ने भी स्वयं अनुभव किया होगा। अत: यह स्पष्ट है कि किसी भी रोग का कारण निश्चित रूप से मन और शरीर, दोनों ही से सम्बन्धित है और दोनों के संतुलित इलाज से ही रोग-निवारण सम्भव है।

रोग निवारण के लिए दवाओं द्वारा किए जाने वाले इलाज की अपेक्षा ध्यान अधिक समग्र एवं सम्पूर्ण विधि है। दवाओं से जो उपचार होते हैं उनसे किसी अंग विशेष के रोग दूर हो सकते हैं तथा शरीर के दूसरे अंगों पर उनका दुष्प्रभाव भी पड़ सकता है, जिसके कई उदाहरण भी दिए जा सकते हैं। पर ध्यान की परिधि में सम्पूर्ण व्यक्तित्व को लिया जाता है। ध्यान द्वारा उपचार की डोर रोगी के हाथ में आ जाती है। रुग्ण व्यक्ति में ध्यान द्वारा वह क्षमता आ जाती है जिससे वह रोग से लड़ सकने में समर्थ हो जाता है। यह उपचार मन और शरीर से एक साथ सम्बन्ध रखेगा। ध्यान द्वारा मन को रोगों को दूर करने का प्रशिक्षण दिया जा सकता है। लेकिन सबसे पहले तो ध्यान की विधि जान

कर मन और शरीर पर नियंत्रण रखने की कला सीखनी होगी। जब व्यक्ति अपने मन तथा शरीर की आन्तरिक गतिविधियों के प्रति सजग हो जाता है, तब वह अपनी ऊर्जा तथा शक्ति को आवश्यकतानुसार दिशा प्रदान कर सकता है। रोगग्रस्त व्यक्ति ध्यान के अभ्यास से अपनी आन्तरिक ऊर्जा को बीमार अंग की ओर दिशान्तरित करने की कला सीख जाएगा।

## ध्यान के शारीरिक प्रभाव

ध्यान शारीरिक क्रिया-कलापों के नियंत्रण का सबसे सशक्त उपाय है, साथ ही मानसिक क्रियाओं तथा घटनाओं के कारण हो रही शारीरिक प्रतिक्रियाओं के नियंत्रण का भी यह सशक्त माध्यम है। ध्यानावस्था में शरीर पर होने वाला सबसे गहरा परिवर्तन है – चयापचय की गति का मन्द पड़ जाना, क्योंकि ऑक्सीजन के प्रयोग तथा आवश्यकता एवं कार्बन-डाइऑक्साइड की उत्पत्ति, दोनों में ही कमी आ जाती है। प्रयोगों से पता लगा है कि ऑक्सीजन व्यय में 20% तक कमी आ जाती है, क्योंकि श्वसन की गति धीमी पड़ जाती है। चयापचय की गति के मन्द पड़ जाने का कारण है, अनैच्छिक स्नायु संस्थान पर ध्यान के अभ्यास द्वारा प्राप्त नियंत्रण।

रक्तचाप पर ध्यान का बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। यह ध्यानावधि में और उसके बाद भी सामान्य से बहुत नीचे गिर जाता है। इसलिये उच्च रक्तचाप से पीड़ित व्यक्तियों के लिये तो ध्यान विशेष लाभदायक उपचार है। हृदय गति भी अधिक स्वस्थ ढंग से चलने लगती है। रक्त संस्थान से सम्बन्धित एक और रोचक तथ्य यह है कि ध्यान के अभ्यास से रक्त प्रवाह भी बढ़ जाता है। इसे समझने के लिये हम स्वायत्त स्नायु संस्थान की ओर पुनः देखें, विशेष रूप से अनुकम्पी स्नायुजाल। ये स्नायुओं के जाल रक्तवाही नाड़ियों को संकुचित करते हैं, जिससे रक्त का संचार प्रभावित होता है। जितना अधिक संकुचन होगा, रक्त प्रवाह उतना ही कम होगा। ध्यान की अवस्था में अनुकम्पी स्नायु संस्थान की गति धीमी हो जाती है, फलतः रक्तवाही नाड़ियों का संकुचन कम हो जाता है तथा रक्त संचार की गति बढ़ जाती है।

साधक के लिए यह बढ़ा हुआ रक्त संचार अत्यन्त लाभदायक है। उदाहरणार्थ, दुग्धलवण के उत्पादन को ही लें। दुग्धलवण का उत्पादन मांसपेशियों में ऑक्सीजन की कमी के कारण होता है। मांसपेशियाँ जितनी अधिक क्रियाशील होती हैं इसका स्रवण, संचयन उतना ही अधिक होता है,

क्योंकि ऑक्सीजन से प्राप्त शक्ति से अधिक शक्ति मांसपेशियाँ खर्च कर देती हैं। दुग्ध लवण का उत्पादन शक्ति तथा ऊर्जा की इस कमी को पूरा करने के लिए होता है।

विश्राम के समय दुग्धलवण अन्य तत्त्वों में विखण्डित हो जाता है, क्योंकि मांसपेशियों को पर्याप्त मात्रा में ऑक्सीजन प्राप्त होने लगती है। ध्यान में बढ़ते हुए रक्त संचार के फलस्वरूप मांसपेशियों को अधिक ऑक्सीजन मिलनी निश्चित है, अत: दुग्धलवण का शीघ्रता से क्षय होने लगता है। पाठकों को इस बिन्दु पर ध्यान देना चाहिए कि ध्यान में वास्तव में कम ऑक्सीजन ग्रहण की जाती है, पर मांसपेशियों को उपलब्ध ऑक्सीजन का वितरण अधिक होता है, जो दुग्धलवण को तोड़ देता है। साथ ही, उपचयन की क्रिया में कोषाणु कम ऑक्सीजन ग्रहण करते हैं। दुग्ध लवण का उत्पादन अनुकम्पी स्नायु-संस्थान द्वारा उद्दीप्त होता है। ध्यान में इस अनुकम्पी स्नायु संस्थान के निष्क्रिय हो जाने से दुग्ध-लवण की उत्पत्ति भी कम हो जाती है।

दुग्धलवण के उत्पादन के विषय को इतना महत्त्व दिया जा रहा है, क्योंकि औषध विज्ञान के शोधों ने यह निष्कर्ष निकाला है कि चिन्ता, मानसिक रोग, तनाव आदि से पीड़ित लोगों में, दुग्ध लवण की मात्रा, शांत स्थिति में रहने वाले लोगों की अपेक्षा ज्यादा पायी जाती है। वैज्ञानिक शोध तथा अध्ययन के दौरान जिस व्यक्ति के शरीर में दुग्धलवण बाहर से डाला गया, वह चिन्ताग्रस्त हो उठा। साथ ही नियमित रूप से ध्यान करने वाले तथा सामान्य रक्तचाप वाले व्यक्तियों की अपेक्षा उच्च रक्तचाप वाले व्यक्ति में दुग्धलवण की मात्रा ज्यादा रहती है।

दुग्धलवण की मात्रा कम करने का सर्वोत्तम उपाय है, ध्यान। इससे रक्तचाप स्वत: सामान्य हो जायेगा और सभी प्रकार की चिन्तायें कम हो जायेंगी। चिन्ता स्वयं अनेक शारीरिक एवं मानसिक रोगों का मूल कारण है। अत: रोग मुक्ति के अनेक प्रचलित उपायों में ध्यान सर्वोत्तम उपाय है। इससे रोगों का जड़ से निदान होता है, मात्र ऊपरी लक्षणों का नहीं।

इन शारीरिक परिवर्तनों के साथ विश्राम की अन्य विधियों, जैसे, निद्रा और सम्मोहन में क्या साम्य है? कहना चाहिये कि कोई साम्य नहीं; क्योंकि सम्मोहन में चयापचय की मात्रा में बहुत कम अथवा कोई अन्तर नहीं आता। निद्रा में कुछ घंटों के बाद शारीरिक परिवर्तन प्रारम्भ होते हैं। निद्रावस्था में कार्बन-डाइ-ऑक्साइड का विशेष संचयन रक्त में पाया जाता है, जबकि

ध्यानावस्था में रक्त में ऑक्सीजन तथा कार्बन-डाइ-ऑक्साइड का अनुपात (मात्रा नहीं) निरन्तर एक समान बना रहता है।

## संघर्ष अथवा पलायन के हेतु शरीर का रक्षा यंत्र

शरीर में संघर्ष अथवा पलायनवादी रक्षा प्रणाली का भार अनुकम्पी स्नायु संस्थान और एड्रेनल ग्रन्थियों पर है। ये दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। तनाव, भय, विपत्ति आदि की स्थिति में एड्रेनल ग्रन्थि एक रस स्रावित करती हैं, जिसे एड्रेनलिन कहते हैं। यह रस शरीर को संघर्ष या पलायन के लिये तैयार करता है। यह हृदय गति, श्वसन गति एवं दृष्टि, श्रवण आदि इन्द्रियों की ग्रहणशीलता को बढ़ाकर तथा पाचन क्रिया को रोककर सारी शक्ति एक ओर लगा देता है, ताकि व्यक्ति इस शक्ति से अचानक आए हुए खतरे का सामना कर सके। यह व्यवस्था थोड़े समय ठहरने वाली विपत्तियों के लिए है। जो विपत्तियाँ देर तक ठहरने वाली हैं, उनका सामना करने के लिये अनुकम्पी स्नायु संस्थान ही क्रियाशील रहता है और वह शरीर को अधिकाधिक गतिशील बनाये रखता है। धीरे-धीरे जब संकट समाप्त हो जाता है तब शरीर की क्रियायें पुन: सहज तथा स्वाभाविक ढंग से चलती हैं।

आधुनिक जीवन-पद्धति इतनी प्रतिद्वन्द्विता और कठिनाइयों से भरी हुई है कि अधिकतर लोगों को सदा ही संघर्ष अथवा पलायन के लिये तनावयुक्त स्थिति में रहना पड़ता है। इसका कारण अपने अधिकारी का डर, मित्रों तथा पड़ोसियों के समक्ष सम्मान खोने, किराये एवं खर्चों के सभी बिल न चुका पाने इत्यादि का डर हो सकता है। इस स्थिति में व्यक्ति सदा तनावयुक्त तथा बदलती हुई मन:स्थिति में रहता है। निरन्तर असंतोष और क्षोभ की ऐसी स्थिति में रहते हुए व्यक्ति अपनी रोग प्रतिरोधक क्षमता भी खो बैठता है।

बहुत से लोग कहते और सोचते हैं कि मैं अपने जीवन में अधिकतर विश्रान्त रहता हूँ। कुछ लोगों के लिए यह बात सत्य हो सकती है, परन्तु वैज्ञानिक परीक्षणों का निष्कर्ष बतलाता है कि अधिकतर लोग निरन्तर तनावयुक्त रहते हैं, यद्यपि वे इसके प्रति सजग नहीं होते। विभिन्न तनावपूर्ण परिस्थितियों के प्रतिक्रिया स्वरूप, चाहे वे तृणवत् तुच्छ ही क्यों न हों, वे मांसपेशियों को तानने, आँखें झपकाने या नाखून कुतरने लगते हैं। ये क्रियाएँ आदतन इतने सहज तथा स्वाभाविक ढंग से होती हैं कि करने वाले को भी यह जानकारी नहीं रहती कि वह ऐसी प्रतिकारात्मक क्रियाएँ कर रहा है।

आदतन होने वाली ये नगण्य सी प्रतिकारात्मक क्रियायें मनोकायिक व्याधियों की पूर्व-सूचना देती हैं। जब व्यक्ति जाने-अनजाने इन तनावों को अभिव्यक्त करता है, तो वह वास्तव में अपने को संघर्ष अथवा पलायन के लिए तैयार कर रहा होता है, यह प्रतिक्रिया अनुकम्पी स्नायु संस्थान तथा एड्रीनल ग्रन्थियों के द्वारा होती है। इन क्रियाओं का बाह्य स्वरूप छोटा और नगण्य होता है, परन्तु यदि जाँचा जाय तो पता लगेगा कि ऐसे व्यक्तियों की हृदयगति, श्वसन क्रिया आदि में आन्तरिक रूप से परिवर्तन हो रहा होता है। एड्रीनल ग्रन्थि एवं अनुकम्पी स्नायु संस्थान की लम्बे समय तक उत्तेजना धीरे-धीरे उन्हें उच्च रक्तचाप, अल्सर, मधुमेह, थ्रौमबोसिस के साथ-साथ अनेक मानसिक रोगों तथा पीठ-दर्द, त्वचा सम्बन्धी समस्याओं, पेशीय ऐंठन तथा इस प्रकार के बहुत से दूसरे रोगों की ओर ले जा रही होती है।

इन्हें रोकने और इनसे मुक्ति पाने का एकमात्र निश्चित उपाय है, प्रतिदिन सम्पूर्ण शरीर व मन को पूरी तरह नियत विश्राम देना। निद्रा निश्चय ही विश्राम की एक सामान्य स्थिति है। पर कुछ लोग इतने तनावपूर्ण होते हैं कि नींद में भी तनावरहित नहीं हो पाते। वे लोग नींद में भी अपनी दैनिक समस्याओं को सुलझाने का प्रयास कर रहे होते हैं। एड्रेनल तथा अनुकम्पी स्नायु संस्थान के अतिशय उपयोग से शरीर में जो क्षति होती है उसकी पूर्ति तथा पुनर्संतुलन की स्थापना निद्रा पर्याप्त रूप से नहीं कर पाती। गहन शिथिलीकरण के बाद ही क्षतिपूर्ति होती है और शरीर की आंतरिक क्रियाएँ पुनः सामान्य हो पाती हैं। ध्यान में यह संभव है। एक अर्थ में ध्यान एड्रेनल ग्रंथि तथा अनुकम्पी स्नायु संस्थान के प्रभावों को संतुलित करता है। आधुनिक जीवन के लिए यह रामबाण है। यह मनुष्य के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य का सर्वोत्तम साधन है।

हम केवल शिथिलीकरण की नहीं, अपने वातावरण के प्रति अपनी प्रतिक्रिया बदलने की भी कला सीखें। वातावरण से भीति नहीं, प्रीति रखकर ही हम आनन्द पा सकते हैं। शरीर एवं मन की व्यवस्था में हमें नये कार्यक्रम लागू करने होंगे, ताकि प्रत्येक संभावित परिस्थिति में रक्त में एड्रीनलीन का स्राव न हो, हमारी प्रतिक्रिया भिन्न हो, हम शिथिल तथा विश्रान्त हो सकें, प्रसन्न रहें और चेतना के स्तर को ऊँचा उठा सकें।

मन का परिवर्तन कितना महत्त्वपूर्ण है, इसे पाठक को समझाने के लिए मस्तिष्क की उस क्रियाविधि का संक्षिप्त वर्णन दिया जा रहा है जो हमारी तनावयुक्त या विश्रान्त स्थिति से सम्बन्धित है। मस्तिष्क का एक मुख्य भाग

लिम्बिक संस्थान है, जो मस्तकदण्ड के शीर्ष पर अवस्थित है। इसका मुख्य कार्य है ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त संवादों को मस्तिष्क में संचित पूर्व अनुभवों से मिलाना। दूसरे शब्दों में लिम्बिक संस्थान इन्द्रियों से प्राप्त नए संवादों की तुलना हमारे मस्तिष्क में संचित सभी अनुभवों (स्मृतियों) से करता है और इन पूर्व अनुभवों के आधार पर उनका विश्लेषण करता है।

यदि अनुभव नये हैं और मस्तिष्क की धारणाओं तथा स्मृतियों से मेल नहीं खाते तो लिम्बिक संस्थान उनके प्रति हमारी भावनात्मक प्रतिक्रियाओं को गहन बना देता है। इसलिए जब हमारे साथ कुछ अनपेक्षित घटित होता है या हमें अपने पूर्व अनुभवों से भिन्न कोई अनुभव होता है, तो लिम्बिक संस्थान तुरंत क्रोध, तनाव आदि भावनात्मक प्रतिक्रियाओं को जन्म देता है। फलस्वरूप एड्रिनल ग्रन्थि से रक्त में एड्रीनलिन का स्राव अधिक होता है और हममें क्रोध या विपत्ति संरक्षण सूचक प्रतिक्रियाएँ होने लगती हैं, जिससे सारे शरीर में तनाव व्याप्त हो जाता है, रक्त प्रवाह, हृदय की गति और श्वसन क्रिया तीव्र हो जाती हैं। आधुनिक युग के अधिकतर लोग अपना जीवन ऐसे ही व्यतीत करते हैं और लम्बे समय तक बना रहने वाला यह तनाव उन्हें अनेक प्रकार के रोगों का शिकार बना देता है।

मस्तिष्क के इसी संस्थान का एक हिस्सा, जिसे पटीय क्षेत्र कहते हैं, दूसरी दिशा में कार्य करता है। यह हमारी भावनात्मक प्रतिक्रियाओं को घटा कर तनाव कम कर देता है। ऐसे में मन और शरीर को शिथिलता की अनुभूति होती है। ध्यान द्वारा जीवनभर हम लिम्बिक संस्थान के पटीय क्षेत्र के हाथ में बागडोर थमाये रख सकते हैं। इन अवस्थाओं में हम रोग-मुक्त तथा निश्चिन्तता की स्थिति में रहते हैं, आलस्य में नहीं। हम अधिक दक्षता से कार्य कर सकते हैं।

जो निश्चिन्त, आनन्दमय जीवन की आकांक्षा रखते हैं, उन्हें दूसरे का नहीं, अपना मन बदलना है। अपने मन तथा बाहरी दुनिया के प्रति उसकी प्रतिक्रियाओं को बदलकर ही स्वस्थ तथा सुख-शान्ति से परिपूर्ण जीवन की प्राप्ति होती है। मन को बदले बिना संसार में सुख खोजना मृगतृष्णा है। यदि रोगमुक्त स्वस्थ जीवन चाहिये तो आप ध्यान करें और अपने मन को एक नई दिशा दें। कष्ट से मुक्ति पाने के लिए अपनी उन मानसिक धारणाओं को बदलें जो आपके पालन-पोषण के समय गलती से आपके मस्तिष्क में भर दी गईं थीं, क्योंकि वे ही आपकी अप्रसन्नता का मूल कारण हैं।

# 4

# योग का अतीन्द्रिय शरीर विज्ञान

मानव अस्तित्व का अतीन्द्रिय पक्ष सामान्य जन को उलझन में डाल देता है। इसका कारण यह है कि इसे देखा नहीं जा सकता तथा इसकी सुगम व्याख्या के लिए उपयुक्त शब्द भी उपलब्ध नहीं हैं। यह खुशी की बात है कि बहुत से देशों में अनेक मूर्धन्य वैज्ञानिक अपने शोध कार्यों के क्रम में इस क्षेत्र की ओर बढ़ रहे हैं, तथा मानव अस्तित्व के सूक्ष्म आयामों पर अनुसंधान कर रहे हैं। उन्होंने इसका विवरण अपने ढंग से देने की चेष्टा की है। हमें विश्वास है कि वह दिन अब दूर नहीं जब ये अतीन्द्रिय बातें मनुष्य के सामान्य ज्ञान का एक अंग बन जायेंगी। तब सब लोग अतीन्द्रिय जगत् का दर्शन कर पायेंगे। संसार में ऐसी बहुत-सी अनुसंधान-संस्थाएँ हैं जो विभिन्न वैज्ञानिक यंत्रों के द्वारा इस पर शोध कार्य कर रही हैं, यद्यपि वे कार्य अभी प्रारम्भिक अवस्था में हैं। इस दिशा में अभी बहुत कुछ होना बाकी है।

योग पद्धति की एक मूल आधार मान्यता यह है कि समष्टि अनेक सूक्ष्म स्तरों पर अवस्थित है। पार्थिव जगत् में रहने वाला प्रत्येक पदार्थ एवं प्राणी तदनुरूप विभिन्न सूक्ष्म स्तरों पर भी विद्यमान है। ठोस पृथ्वी पर रहने वाले प्राणियों के जीवन और गतिविधियाँ सूक्ष्म स्तरों में रहने वालों के समान हैं या बहुत मिलती-जुलती हैं।

कहा जाता है कि जो पदार्थ प्रोटॉनों, इलेक्ट्रॉनों तथा न्यूट्रॉनों से भी छोटे अणुओं से मिलकर बना होता है, और जिसके स्पन्दन की दर प्रकाश की गति से भी तीव्र होती है, वह अतीन्द्रिय प्रकृति का होता है। कुछ स्तर अतीन्द्रिय से भी सूक्ष्म हैं, पर उन्हें अभी भौतिक विज्ञान की शब्दावली में वर्णित नहीं किया जा सकता है। इनमें दो उच्च स्तर हैं – मानसिक स्तर और

कारण शरीर का स्तर। इनकी अनुभूति ध्यान की उस अवस्था में ही सम्भव है जब मनुष्य अपने अस्तित्व के सभी आयामों को पार करके समाधि में प्रवेश करने वाला होता है।

भौतिक जगत् के ठीक ऊपर अतीन्द्रिय जगत् है। इसकी अनेक चीजें भौतिक जगत् से साम्य रखती हैं, इसीलिये बहुत लोगों को अतीन्द्रिय अनुभव आसानी से प्राप्त हो जाते हैं। ऐसा अक्सर निद्रा या बेहोशी की स्थिति में अथवा जब व्यक्ति को गहरा शारीरिक या भावनात्मक सदमा पहुँचता है, तब हुआ करता है। इन सहज अतीन्द्रिय घटनाओं का दृश्य कुछ हानिकारक द्रव्यों (दवाइयों) के सेवन से भी देखने को मिलता है। सहज अतीन्द्रिय जागृति हमारी अन्तर्प्रज्ञा, आध्यात्मिक अनुभव एवं दिव्य-दर्शन का आधार है।

प्राचीन तंत्र-शास्त्र पर आधारित कुण्डलिनी योग प्रणाली में ऐसी बहुत-सी विधियाँ बतलायी गयी हैं जिनके द्वारा नियंत्रित ढंग से साधकों को बहुत तरह के सूक्ष्म अतीन्द्रिय अनुभव कराये जा सकते हैं। साधना को गंभीरता से करने वाले साधक के लिए अतीन्द्रिय अनुभव महत्त्वपूर्ण नहीं है, क्योंकि यह उसका लक्ष्य नहीं होता। सच्चे साधक का लक्ष्य आध्यात्मिक जागृति या आत्म-साक्षात्कार होता है, तथापि यह एक ऐसा स्तर है जिसे प्रत्येक साधक को पार करना ही पड़ता है।

कुण्डलिनी योग के अनेक अभ्यासों में अतीन्द्रिय क्षेत्र की घटनाओं का पर्यवेक्षण करना आवश्यक होता है। इन क्रियाओं में उन सूक्ष्म अतीन्द्रिय केन्द्रों का दर्शन करना पड़ता है जिन्हें चक्र कहते हैं। ये चक्र मनुष्य के सूक्ष्म शरीर में विद्यमान हैं। साथ ही, सूक्ष्म शक्ति को भी देखना पड़ता है जो इन सूक्ष्म केन्द्रों को मिलाने वाली नाड़ियों में प्रवाहित होती है। इन अतीन्द्रिय घटनाओं को सामान्य व्यक्ति स्वेच्छा से नहीं देख सकता, इसीलिये कुण्डलिनी योग के अभ्यास में साधक को वैकल्पिक रूप से अपनी चेतना को उन विशिष्ट शारीरिक केन्द्रों तथा नाड़ियों के पथों पर चलाने का आदेश मिलता है जो वास्तविक चक्रों से सम्बद्ध हैं और जिनका प्रयोग साधक प्रवर्तन बिन्दु के रूप में कर सकता है।

मनुष्य के अतीन्द्रिय शरीर में स्थित चक्रों तथा भौतिक शरीर में स्थित शक्तिपथों का उल्लेख अब किया जायेगा, जिनका उपयोग अतीन्द्रिय केन्द्रों की जागृति के लिए इस पुस्तक में दिये गए अभ्यासों में किया गया है।

## चक्र

यद्यपि अतीन्द्रिय केन्द्र या चक्र अनेक हैं, पर योगाभ्यासी के लिए ग्यारह ही महत्त्वपूर्ण हैं। इनमें आठ प्रधान चक्र सुषुम्ना नाड़ी में अवस्थित हैं और बाकी तीन सहायक चक्र हैं जो अन्य चक्रों को उत्तेजित करने का कार्य करते हैं। निम्नलिखित विवरण में विभिन्न चक्रों के नाम, अतीन्द्रिय शरीर में उनकी स्थिति, प्रकृति, मन्त्र, वाहन तथा सम्बद्ध अनुभवों का वर्णन किया गया है। साथ ही इस भौतिक शरीर के उन क्षेत्रों को भी दर्शाया गया है जो इन चक्रों को जाग्रत करने के लिए 'प्रवर्तक बिन्दु' का कार्य करते हैं, जिससे योगाभ्यास करते समय सही-सही स्थान पर सजगता को लाया जा सके।

**मूलाधार –** मूल + आधार = मूलाधार। मूलाधार चक्रों में निम्नस्थ है और मूल केन्द्र माना जाता है। यह प्रकृति के पृथ्वी तत्त्व से सम्बन्धित है। इसे मनुष्य का आदिम शक्ति पीठ कहा जाता है। इसे ही कुण्डलिनी शक्ति कहते हैं। यह मनुष्य की काम (यौन) शक्ति और आध्यात्मिक शक्ति का केन्द्र है।

मूलाधार चक्र का दर्शन चतुष्दल रक्त कमल के रूप में होता है। इन दलों पर संस्कृत के ये चार मंत्र काले रंग में अंकित होते हैं – वं, शं, षं, सं। कमल के केन्द्र में अधोमुखी समान भुजा वाला त्रिकोण है। इस त्रिकोण में धूम्ररंग का शिवलिंग अवस्थित है जिसे एक सुनहले सर्प ने साढ़े तीन कुण्डली मारकर लपेट रखा है।

मूलाधार चक्र के स्वामी सृष्टि कर्त्ता ब्रह्मा हैं और अपनी शक्ति डाकिनी के साथ निवास करते हैं। डाकिनी शक्ति शरीर के त्वचा तत्त्व का नियंत्रण करती है। इस चक्र का बीज मंत्र 'लं' है और इसका वाहन है हाथी, जो पृथ्वी तत्त्व की गुरुता का प्रतीक है। मूलाधार चक्र का सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण पक्ष यह है कि यह मनुष्य की आदि शक्ति का मूल केन्द्र है। इसे एक कुण्डलीबद्ध सर्प के रूप में माना जाता है जो आध्यात्मिक जागरण के समय सुषुम्ना नाड़ी के रास्ते सभी चक्रों से होते हुए ऊपर उठती है।

मूलाधार चक्र की स्थिति इस भौतिक शरीर में, स्त्री और पुरुष में अलग-अलग होती है। पुरुषों में यह जननेन्द्रिय और मलद्वार के बीच स्थित है और स्त्रियों में गर्भाशय और योनिमार्ग के बीच स्थित है।

**स्वाधिष्ठान –** स्व + अधिष्ठान = स्वाधिष्ठान। स्वाधिष्ठान का शाब्दिक अर्थ है 'अपना निवास'। यह दूसरा चक्र है, जिसका सम्बन्ध अचेतन मन में संचित सम्पूर्ण मानव चेतना के विगत संस्कारों के भण्डार, सभी स्मृतियों से

है। यह उन संवेगों और मूल पाशविक प्रवृत्तियों का केन्द्र है जो आधुनिक मनुष्य के लिये बड़ी दु:खद और भ्रामक सिद्ध हो रही हैं।

यह चक्र सिंदूरी रंग के षट्दलीय कमल के रूप में दृष्टिगोचर होता है। इस पर संस्कृत के ये मंत्र लिखे होते हैं– बं, भं, मं, यं, रं, लं। कमल के मध्य में रजत वर्ण का धवल अर्द्धचन्द्र विराजमान है। साथ ही चक्र का बीज मंत्र 'वं' काले अक्षरों में लिखा हुआ है। स्वाधिष्ठान चक्र के अधिपति जगतपालक विष्णु भगवान हैं और स्वामिनी हैं भगवती राकिनी, जिनका नियंत्रण शरीर के रक्त प्रवाह पर है। इस चक्र में निद्रा संवेदना ही मुख्य है। इससे प्रजनन तथा मल-मूत्र त्याग करने वाले अंग सम्बन्धित हैं।

स्वाधिष्ठान का प्रवर्तक बिन्दु जघनास्थि या अनुत्रिक के स्तर पर स्थित होता है। सामान्यत: इसका मानस दर्शन मेरुदण्ड में किया जाता है, परन्तु कुछ अभ्यासों में शरीर के अग्रभाग में भी इसका अनुभव किया जाता है।

**मणिपुर** – मणि + पुर = मणिपुर। मणिपुर का शब्दार्थ है मणियों का नगर। यह ताप का केन्द्र है। यह शक्ति से सम्बन्धित है और इसका प्रतीक अत्यन्त क्रोधी और आक्रामक पशु मेष है। सर्व संहारक रुद्र इसके अधिपति हैं और मांस-मज्जा तत्त्व पर नियंत्रण रखने वाली देवी लाकिनी इसकी स्वामिनी हैं।

मणिपुर चक्र दसदलीय पीत कमल के रूप में दिखाई पड़ता है, जिस पर संस्कृत के ये मंत्र लिखे हुए हैं– डं, ढं, णं, तं, थं, दं, धं, नं, पं, फं। कमल के मध्य में अधोमुखी लाल त्रिकोण पर बीज मंत्र लिखा हुआ है, 'रं'। ध्यान के दृष्टिकोण से इस भौतिक शरीर में मणिपुर चक्र को नाभि केन्द्र के पास देखा जाता है। इसका अनुभव साधारणत: रीढ़ की हड्डी में नाभि केन्द्र के पास होता है। पर कुछ लोगों को शरीर के अग्रभाग में, नाभि में इसकी अनुभूति हो जाती है।

**अनाहत** – अन + आहत या बिना आघात = अनाहत। यह वह चक्र है जहाँ उच्च ध्यान की स्थिति में साधक को अतीन्द्रिय स्वर सुनायी पड़ते हैं। इन्हें अनहद् इसलिये कहा जाता है कि ये भौतिक-घर्षण से उत्पन्न नहीं होते। सभी भावनाओं का मूल, हृदय ही अनाहत का केन्द्र है, जहाँ ईश्वरीय तथा मानवीय प्रेम की चरम अभिव्यक्ति दिव्यता में हो सकती है।

अनाहत का दर्शन द्वादश दलीय नील कमल के रूप में होता है, जिस पर संस्कृत के ये मन्त्र अंकित हैं– कं, खं, गं, घं, ङं, चं, छं, जं, झं, ञं, टं,

ठं। मध्य में दो त्रिकोण मिलकर एक-दूसरे को काटते हैं और षट्कोण बनाते हैं, जो डेविड के सितारे की तरह दिखता है। उसके बीच में 'यं' लिखा होता है, जो वायु तत्त्व  का प्रतीक है। अनाहत का प्रतीक एक द्रुतगामी मृग होता है। इसके अधिपति जगत् में सर्वव्याप्त ईश हैं और शरीर की मांसलता की नियंत्रिका देवी काकिनी इसकी स्वामिनी हैं।

भौतिक शरीर में अनाहत चक्र हृदय क्षेत्र में छाती की हड्डियों के पीछे अवस्थित है। इसका मानस दर्शन मेरुदण्ड में और सीने के सामने के आंतरिक भाग में भी किया जाता है।

**विशुद्धि –** विशुद्धि चक्र पवित्रीकरण का केन्द्र है। ऐसी मान्यता है कि यह अमृत और विष का केन्द्र है। यह नील-लोहित रंग के सोलह दल वाले कमल के रूप में दिखाई पड़ता है, जिस पर ये मंत्र लिखे होते हैं – अं, आं, इं, ईं, उं, ऊं, ऋं, ॠं, ऌं, ॡं, एं, ऐं, ओं, औं, अं, अः। कमल के मध्य में एक सफेद वृत्त है, जिस पर इसका बीज मंत्र 'हं' लिखा होता है। इस चक्र का प्रतीक हाथी है, जो आकाश तत्त्व का प्रतीक है और इसके अधिपति हैं – शिव-पार्वती या अर्द्ध-नारीश्वर। इस विशुद्धि चक्र की स्वामिनी हैं, अस्थि नियंत्रिका देवी शाकिनी।

विशुद्धि चक्र शरीर में कण्ठ (टेंटुआ) में स्थित है। इसका अनुभव मेरुदण्ड के बीच कण्ठ क्षेत्र में होता है। इस चक्र में ऐसी अनुभूति होती है मानो शीतल अमृत की बूँदें ऊपर से टपक रही हैं, जिससे आनन्ददायक मदमत्तता सी आती है।

**आज्ञा चक्र –** आज्ञा चक्र को तीसरा नेत्र कहा जाता है। अतीन्द्रिय शरीर में आज्ञा वह केन्द्र बिन्दु है जहाँ बाहरी संवाद प्राप्त किये जाते हैं तथा साधना की उच्चतर स्थिति में इसी केन्द्र के द्वारा शिष्य गुरु के सूक्ष्म आदेशों को प्राप्त करता है। यही वह ज्ञान-चक्षु है जिसके जग जाने से व्यक्ति भौतिक और अतीन्द्रिय, दोनों ही स्तरों पर होने वाली घटनाओं को देख सकता है। आज्ञाचक्र ज्ञान का केन्द्र माना जाता है।

आज्ञा चक्र को रजत नील द्विदलीय कमल के रूप में देखा जा सकता है, जिस पर हं और क्षं मन्त्र लिखे होते हैं। इसके मध्य में पीले रंग में 'ॐ' बीज मंत्र लिखा होता है। तीन लाल रेखायें ऊपर से नीचे की ओर खिंची होती हैं और श्वेत अर्द्ध चन्द्र शीर्ष पर स्थित होता है। आज्ञा चक्र के देव अमूर्त्त चेतना स्वरूप परमशिव हैं और स्वामिनी हैं सूक्ष्म मन की नियंत्रिका देवी हाकिनी।

इस भौतिक शरीर में आज्ञा चक्र की स्थिति भ्रूमध्य के ठीक पीछे मेरुदण्ड के सबसे ऊपरी भाग में है। इसमें ध्यान करने से काल और देश से परे निराकार जगत् में संचरण करने की अनुभूति होती है।

**बिन्दु –** यह चन्द्र चक्र है। बिन्दु चक्र में ध्यान करने से नाद की अनुभूति होती है। अतीन्द्रिय स्वरों की स्थिति यहीं पर है। योग्य साधक ध्यान की स्थिति में इन स्वरों को सुन सकते हैं। चाँदनी रात में अर्द्ध-चन्द्र की तरह इसका दर्शन होता है। यह कुण्डलिनी योग का बहुत ही महत्त्वपूर्ण चक्र है। इसका शारीरिक केन्द्र बिन्दु मस्तक का वह पिछला भाग है जहाँ हिन्दू लोग शिखा रखते हैं।

**सहस्त्रार –** यह सर्वोच्च अतीन्द्रिय केन्द्र है। इसे अतीन्द्रिय और आध्यात्मिक क्षेत्रों के बीच की दहलीज कहा जा सकता है। कहा जाता है कि सहस्त्रार में सभी चक्र समाहित हैं, क्योंकि इसका विस्तार अनंत है। यह एक वृहद् प्रकाशित स्तूप की तरह है, जिसके अन्दर सभी अतीन्द्रिय सत्ताएँ निवास करती हैं।

सहस्त्र दलयुक्त ज्योतिर्मय रक्त कमल के रूप में इसका दर्शन होता है, जिस पर संस्कृत के सभी वर्ण बीस बार लिखे होते हैं। इसके मध्य में ज्योतिर्मय शिवलिंग अवस्थित है। भौतिक शरीर में यह मस्तिष्क के शीर्ष पर स्थित है। यहीं से अपनी अर्न्दृष्टि की क्षमता के अनुसार इसके चतुर्दिक असीम प्रसार की अनुभूति की जा सकती है।

**ललना –** ललना चक्र मुख्य चक्र नहीं है, तथापि कुण्डलिनी चक्र के साधकों के लिये इसकी महत्त्वपूर्ण स्थिति है। यह टाँसिल की जड़ के पास अवस्थित है, जहाँ से अमृत की बूंदें विशुद्धि चक्र पर गिरती हैं।

**भ्रूमध्य –** यह अपने आप में चक्र नहीं है। यह आज्ञा चक्र का केन्द्र बिन्दु है। इसकी स्थिति दोनों भौहों के बीच है।

**अज्ञात बिन्दु –** यह भी चक्र नहीं है परन्तु केन्द्र बिन्दु है। इसकी स्थिति सिर के मध्य में कर्ण रन्ध्रों के बीच है।

**चिदाकाश –** चित + आकाश = चिदाकाश या अन्त:करण का आकाश। इसका अर्थ है ज्ञान का आकाश। यह वह आकाश है जहाँ सभी अतीन्द्रिय घटनाएँ देखी जा सकती हैं। ललाट के पीछे घोर कालिमा युक्त कक्ष के रूप में इसकी अनुभूति की जाती है। इस कक्ष के मध्य भाग में सतह के मध्य एक छिद्र है जिससे होकर सुषुम्ना नाड़ी नीचे की तरफ जाती है।

**हृदयाकाश** – हृदय स्थित आकाश प्रदेश को हृदयाकाश कहते हैं। छाती के मध्य इसकी स्थिति मानी जाती है।

## अतीन्द्रिय सूक्ष्म पथ और नाड़ियाँ

नाड़ी का शाब्दिक अर्थ है बहाव या धारा। प्राचीन शास्त्रों में लिखा है कि मनुष्य के अतीन्द्रिय शरीर में बहत्तर हजार नाड़ियाँ हैं। जिनकी अन्तर्दृष्टि जाग्रत हो चुकी है उन्हें ये नाड़ियाँ प्रकाश-किरणों के रूप में दिखाई पड़ती हैं। ये नाड़ियाँ सूक्ष्म शरीर में विभिन्न चक्रों और अतीन्द्रिय केन्द्रों को एक-दूसरे से जोड़ती हैं। साधकों के लिए अभ्यास के दृष्टिकोण से इन नाड़ियों में से कुछ महत्त्वपूर्ण हैं। कुण्डलिनी योग के अभ्यास में प्रायः साधकों को उनकी चेतना की जागृति के समय सर्प, अमृत, बाण, त्रिशूल या कमल की कली के रूप में आध्यात्मिक शक्ति इन नाड़ी पथों में प्रवाहित होती हुई दृष्टिगोचर होती है। इन नाड़ियों तथा अतीन्द्रिय पथों का संक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है।

**सुषुम्ना** – यह अतीन्द्रिय शरीर की सर्व प्रधान नाड़ी है। यह मनुष्य शरीर में सबसे महत्त्वपूर्ण अतीन्द्रिय पथ भी है। इसकी जड़ मूलाधार चक्र में है। मूलाधार से सुषुम्ना किंचित् ऊपर स्वाधिष्ठान चक्र में जाती है और मेरुदण्ड में प्रवेश करती है और मेरुदण्ड में मणिपुर, अनाहत तथा विशुद्धि चक्रों से होती हुई ऊपर की ओर आती है। निम्न मस्तक में जहाँ से मेरुदण्ड समाप्त होता है, सुषुम्ना सीधे आज्ञा चक्र और बिन्दु चक्र को पार करती हुई सहस्रार में विलीन हो जाती है।

**पिंगला और इड़ा** – ये दो महत्त्वपूर्ण अतीन्द्रिय नाड़ियाँ हैं। लेकिन अतीन्द्रिय पथ के रूप में केवल पिंगला नाड़ी का ही उपयोग किया जाता है। इसका कारण यह है कि इड़ा का उपयोग इस प्रकार करने से मनुष्य की मानसिक शक्तियाँ प्रबल हो जाती हैं और उसकी प्राण शक्ति को अधीनस्थ कर लेती हैं। फलतः मनुष्य अपना शारीरिक एवं मानसिक संतुलन खो बैठता है। पिंगला मूलाधार से प्रारम्भ होकर शरीर के दाहिने भाग में अर्द्धवृत्त बनाती हुई ऊपर उठती है तथा स्वाधिष्ठान चक्र में सुषुम्ना को बायीं ओर से पार कर पुनः अर्द्धवृत्त बनाती हुई ऊपर जाती है और मणिपुर में सुषुम्ना से मिल जाती है। इसी प्रकार यह ऊपर उठती हुई अनाहत चक्र को दाहिनी ओर से पार करती हुई विशुद्धि के बायीं ओर जाती है, फिर आज्ञा के दाहिनी ओर पहुँच कर समाप्त होती है। इड़ा नाड़ी का प्रवाह ठीक इसकी विपरीत दिशा में हैं।

**अग्रभाग –** अग्र भाग का क्षेत्र धड़ के अगले भाग में नाभि से कण्ठ तक है। कुण्डलिनी योग के प्राथमिक अभ्यासों में जैसे – विशुद्धि-शुद्धि और अजपा-जप में इसका मुख्य उपयोग होता है।

**श्वास-नली मार्ग –** वास्तव में श्वास नली मार्ग अग्र भाग का ही विस्तार है। यह कण्ठ के मध्य से शुरू होकर मस्तक के एक अज्ञात बिन्दु पर आज्ञा चक्र से कुछ ऊपर कनपटियों के स्तर पर समाप्त हो जाता है।

**आरोहण-अवरोहण मार्ग –** यह मार्ग शरीर में बेडौल वृत्त की भाँति है जिसका आकार दबाव में पड़े अण्डे से मिलता-जुलता है। अवरोहण का मार्ग बिन्दु चक्र से प्रारम्भ होकर सुषुम्ना द्वारा मूलाधार तक आकर समाप्त होता है। आरोहण मार्ग मूलाधार में प्रारम्भ होकर जघन अस्थि (प्यूबिक बोन) से होता हुआ निम्न उदर के मोड़ तक और वहाँ से नाभि तक जाता है। वहाँ यह अग्र भाग से मिल जाता है। फलत: यह उसके साथ कण्ठ के मध्य तक पहुँच जाता है। फिर सीधे खोपड़ी के भीतर बिन्दु चक्र तक पहुँच जाता है।

**एकान्तर आरोहण मार्ग –** इस मार्ग की चर्चा तंत्र शास्त्र में कुण्डलिनी योग के अभ्यास में की गई है। परम्परागत वर्णन् के अनुसार यह मार्ग भी ऊपर वर्णित आरोहण मार्ग से होते हुए विशुद्धि तक जाता है। वहाँ से सीधे ललना चक्र में, टांसिल के समीप जाता है और वहाँ से थोड़ा ऊपर जाकर सामने की ओर भ्रूमध्य (दोनों भौहों के मध्य) पर पहुँच कर खोपड़ी के मोड़ों में होता हुआ सहस्त्रार में पहुँचता है। फिर नीचे सुषुम्ना के साथ बिन्दु पर उतर आता है।

**आज्ञा नलिका –** यह भ्रूमध्य केन्द्र से चलकर आज्ञा चक्र से होती हुई सीधे मस्तक के पीछे चली जाती है।

**शांकव मार्ग –** ये मार्ग भौतिक शरीर के बाहर अवस्थित हैं। ये भ्रूमध्य बिन्दु के पीछे से शुरू होकर नासिका छिद्रों से निकलते हुए शरीर के बाहर कुछ दूरी पर समाप्त हो जाते हैं। नासिकाग्र से आगे इनकी दूरी का निर्धारण श्वास की शक्ति और स्थूलता द्वारा होता है।

**अमृत मार्ग –** यह मार्ग विशुद्धि चक्र से प्रारम्भ होकर सीधे ऊपर की ओर तालू के मूल में ललना चक्र तक जाकर समाप्त हो जाता है।

# 5

# मन का पुनर्संयोजन

मानव मस्तिष्क एक सर्वाधिक विलक्षण चीज है, जो कम्प्यूटर यंत्र के सदृश है। यह एक ऐसा जीवित कम्प्यूटर है जिसकी बनावट और पेचीदगी कल्पना से परे है। आधुनिक वैज्ञानिकों के मतानुसार इसमें दस से तेरह अरब न्यूरॉन्स हैं जो बाह्य जगत् एवं शरीर से प्राप्त संवादों-संवेगों का संचालन, विश्लेषण, तुलनात्मक अध्ययन व प्रसारण करते हैं। शरीर के प्रत्येक अंग से संवेदी आँकड़ों के साथ-साथ प्रति क्षण ये ज्ञानेन्द्रियों द्वारा करोड़ों संवादों को प्राप्त कर उन पर कार्य करने में सक्षम हैं। याद रखें शरीर के प्रत्येक बाल का सम्बन्ध मस्तिष्क से है। शरीर के प्रत्येक वर्ग इंच का सम्बन्ध मस्तिष्क के बहुसंख्यक सूत्रों से है।

इसके अलावा अवचेतन मन के क्षेत्र में असंख्य क्रियाएँ होती रहती हैं, जिनसे हम अनभिज्ञ हैं। यदि हमें इन सबकी जानकारी होती तो हम सूचनाओं की बाढ़ में डूब जाते। इस परिस्थिति में यह आवश्यक है कि हमारी चेतना शरीर और इन्द्रिय संवेदनाओं की क्रियाओं से मुक्त होकर दूसरे कार्यों का सम्पादन कर सके।

मस्तिष्क का यंत्र कैसे कार्य कर रहा है, यह जानना आवश्यक है। हमारा मस्तिष्क विद्युत द्वारा परिचालित आधुनिक कम्प्यूटर यंत्र की भाँति है। यदि कम्प्यूटर का संचालक किसी प्रश्न को हल करना चाहता है तो उसका उत्तर पाने में वह ज्यादा उत्सुक रहता है, न कि प्रश्न हल करने की क्रियाविधियों में। लेकिन यंत्र बिगड़ जाने पर यंत्र-चालक उसकी गतिविधियों को जानने का प्रयास करता है। जब मशीन में ही गड़बड़ी रहती है तो सही उत्तर पाने की कैसे आशा की जा सकती है? गड़बड़ी या तो संयोजन में होती है या यंत्र में। इस अध्याय का यही मुख्य विषय है।

हममें से अधिकतर लोग जिस कम्प्यूटर रूपी मस्तिष्क को लेकर चल रहे हैं उससे भ्रामक उत्तर ही प्राप्त होते हैं। वास्तव में कुछ अपवादों को छोड़कर मस्तिष्क में गड़बड़ी नहीं है, गड़बड़ी है उसके संयोजन में। दूसरे शब्दों में, अगर हम एक सार्थक जीवन व्यतीत करना चाहते हैं तो हमें अपने मस्तिष्क का पुनर्संयोजन करना होगा। गलत मानसिक संयोजन की आदत हमने जन्म से ही डाल ली है, जिसके फलस्वरूप हम जीवन में सुख-शान्ति की कमी की स्थिति झेल रहे हैं। मन को पुन: संयोजित करके हम एक ऐसे जीवन की देहरी पर पदार्पण करेंगे, जहाँ एक नयी उल्लास भरी सार्थकता होगी। भली प्रकार से संयोजित किया हुआ मन इस संसार को सच्चा स्वर्ग बना देगा। यदि मन की स्थिति विपरीत हुई तो जीवन नारकीय बन जायेगा।

हमारा मानसिक संयोजन ही हमारे दु:खों का कारण है। हम अपने अहं को पुष्ट करके आनन्द की खोज करते हैं। इस तरह से सुख खोजने का यह परिणाम होता है कि हमें धन की प्राप्ति, नयी कार खरीदने, खान-पान, मान-मर्यादा और प्रभुता स्थापित करने में सुख की प्राप्ति दिखायी देती है, जो कि क्षणिक है। एक वाक्य में कहें तो हम अपने अहं के पोषण में ही सुख का अनुभव प्राप्त करने का प्रयास करने लगते हैं। सुख-प्राप्ति के इस प्रकार के प्रयास के फलस्वरूप हम अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए दूसरे लोगों का उपयोग करने को बाध्य हो जाते हैं। यदि वे हमारे रास्ते में आते हैं तो हम हर सम्भव प्रयास कर उन्हें अपने रास्ते से हटाने का प्रयास करते हैं, जिसके फलस्वरूप घृणा, ईर्ष्या, चिन्ता, तनाव और भय आदि से वातावरण दूषित हो जाता है। आनन्द की खोज के इस तरीके का परिणाम विपरीत ही होता है। अगर हमें इच्छित वस्तु प्राप्त नहीं होती तो हमारे मन में कई तरह के मानसिक तनाव, दु:ख और अशान्ति व्याप्त हो जाते हैं।

ये सभी वस्तुएँ हमें सुख नहीं दे पाती हैं, इसके बावजूद हम इन चीजों के पीछे क्यों भाग रहे हैं? इसका उत्तर यही है कि हमारे मन का संयोजन ही ऐसा है कि हम इन क्षणिक चीजों में सुख खोजने लगते हैं। आजकल जैसे कम्प्यूटर यंत्र बिगड़ जाने पर उसे नये ढंग से सुधार सकते हैं, उसी प्रकार हम अपने मन को सुधारने के लिये उसका पुनर्संयोजन कर सकते हैं। आवश्यक प्रयास करने से यह संभव है। इस नये संयोजन के परिणामस्वरूप हम अपने वातावरण के प्रति नवीन तथा बेहतर प्रतिक्रियायें व्यक्त करेंगे और तब हमारा आनन्द अहंकार की तुष्टि और वासनाओं पर निर्भर नहीं रहेगा।

यदि हम जीवन में अपने आसपास के वातावरण तथा लोगों के साथ निरन्तर संघर्षरत रहें तो ध्यान सर्वथा असंभव है। अगर हम जीवन में संघर्षरत रहने की अपेक्षा जीवन-धारा में बह चलें तो ध्यान स्वत: लगा करेगा। यदि हम अपने मन का पुनर्संयोजन कर सकें तो हम वातावरण के साथ सामंजस्य स्थापित कर सकते हैं, तब बिना प्रयास के ध्यान स्वत: लग जाएगा। इससे हमारी चेतना विस्तृत होगी। आनन्द इसी उन्मुक्त चेतना की देन है।

संसार को खींच-तान कर अपनी इच्छा के अनुरूप बनाने से आनन्द नहीं मिलेगा। आनन्द अपने मन के ऊपर निर्भर करता है, न कि संसार को अपनी इच्छाओं के अनुरूप बनाने पर। अपने मन के विचारों को नये ढंग से संयोजित करने से हम चिरस्थायी आनन्द पा सकते हैं जो हमारी आत्मा के अंदर स्वयं विद्यमान है।

वर्तमान जीवन की हमारी मान्यताएँ और धारणाएँ, रुचि-अरुचि, राग-द्वेष, रह-रह कर उठने वाली ईर्ष्या आदि के द्वारा संसार की जो व्याख्या की जाती है, वह बिल्कुल विकृत और निराधार है। हमारा मन उन्हीं सूचनाओं और संवेदनाओं को ग्रहण करता है जो उसकी पूर्व-निश्चित धारणाओं और संयोजन के अनुरूप हुआ करते हैं। दूसरे शब्दों में, यदि हम ऐसा अनुभव करें कि संसार में हर कोई हमसे घृणा का भाव रखता है तब हमारा मन उसी प्रकार की सूचनाओं को तेजी से ग्रहण करेगा जो घृणा को बढ़ाने वाली होंगी। तब मन दूसरे प्रकार के अनुभवों को दबा देगा। यदि हम समझें कि संसार में हर कोई हमें प्यार करता है तो हमारा मन बाह्य जगत् की सारी घटनाओं को प्रेम के ही रंग में रंगा हुआ देखेगा। ऐसे अनेक उदाहरणों से हम देख सकते हैं कि मन बाह्य घटनाओं को अपने संयोजन के अनुरूप सिद्ध करने में बहुत पटु है। हम भ्रम के जाल में अधिकाधिक उलझते चले जाते हैं। बाहरी दुनिया का यथार्थ स्वरूप हम इसी मन के कारण, अपनी कामनाओं के कारण नहीं देख पाते।

याद रखें, हमारे कहने का तात्पर्य यह कदापि नहीं है कि कामनायें एवं इच्छाएँ बुरी होती हैं। परन्तु आध्यात्मिकता के विकास और ध्यान के अनुभवों की प्राप्ति में वे बाधक अवश्य हैं। अवर्णनीय आनन्द और उच्चतर चेतना हमारी प्रतीक्षा कर रही है। हमें मात्र अपने मन का पुनर्संयोजन करना है और ध्यान में रत हो जाना है।

## ध्यान देने योग्य बातें

इस सन्दर्भ में सबसे पहली बात यह है कि हम यह नहीं चाहते कि आप अपने जीवन की शैली बदलने की चेष्टा करें। सिर्फ बाह्य जगत् के साथ अपने सम्बन्धों को सुधारते हुए अपने मन का पुनर्संयोजन करें।

दूसरी बात यह है कि आप इस बात का स्वयं अनुभव करें कि संसार में आनन्द (सच्चा सुख) पाने के पीछे दौड़ना व्यर्थ है। अगर इतनी भाग-दौड़, इतनी निराशाओं के बाद भी हम यह बात समझ न पाये तो कब समझेंगे? आप अपने मन को बदलने में तभी सफल होंगे जब आप समझ लेंगे कि बाह्य जगत् में सुख एवं शान्ति मिलने वाली नहीं है। जिन लोगों ने अपना सारा जीवन सांसारिक सुख पाने के लिए भाग-दौड़ में बिता दिया है, वे भी अपनी इच्छित वस्तु नहीं पा सके। अन्तत: उन्हें एक सनक सी हो जाती है और वे यह मानने लग जाते हैं कि स्थायी आनन्द और शान्ति केवल कपोल-कल्पना है।

तीसरी बात याद करने योग्य यह है कि मन का एक नया कार्यक्रम बनाना चाहिये। एक कहावत है कि जैसा हम सोचते हैं, वैसा ही हम बनते हैं। हमारी वर्तमान मन:स्थिति हमारे पुराने विचारों पर आधारित होती है। मन मोम की तरह है, जिस प्रकार का ठप्पा इसके ऊपर लगाते हैं, यह वैसा ही बन जाता है। अगर हम इसे नये साँचे के अनुसार ढालने की कोशिश करें, नये ढंग से सोचना प्रारम्भ करें तो निश्चित ही हमारा मन अपने को पुनर्संयोजित कर लेगा।

इसको एक उदाहरण द्वारा समझें कि किस प्रकार मन संयोजित होता है और व्यक्ति किस प्रकार उसकी बात मानने के लिए विवश होता है। मान लीजिये, एक परिवार का अभिभावक क्रूर प्रकृति का है। वह वही करता है जो उसकी इच्छा होती है। सभी को अपने शासन में दबा कर रखता है। उस परिवार का एक बच्चा बाहर जाकर अपने मित्रों के साथ खेलना चाहता है, पर उसका पिता उसे रोकता है। उस बच्चे का मन अपने को संयोजित करता है। उसकी धारणा बन जाती है कि संसार में शक्ति और प्रभुत्व ही सब कुछ है। जब वह बड़ा हो जाता है, वह इसी के अनुसार सुख प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील रहता है। हमारी सभी बाह्य इच्छाओं के मूल में ऐसी ही बातें रहा करती हैं। लेकिन इसके साथ ही हममें यह भी क्षमता रहती है कि हम पुराने संयोजनों को हटाकर मन को पुनर्संयोजित करें, जिससे जीवन में सामंजस्य स्थापित हो सके और हमारी चेतना का विस्तार तथा विकास हो सके। तब हम अपने इस परिवर्तित मन से जागृत एवं विस्तृत चेतना के आधार पर एक सकारात्मक तथा

रचनात्मक भविष्य का निर्माण कर सकते हैं। शनैः शनैः हम अपने अन्दर छिपे हुए सत्य और सौन्दर्य के आगार की अनुभूति प्राप्त कर सकेंगे।

## आत्मसुझाव

सभी व्यक्तियों में किसी न किसी रूप में भय, कुण्ठाएँ और संवेगात्मक तनाव रहते हैं, भले ही वे चेतन-अचेतन रूप से उनके बारे में सजग न हों। ये सब चीजें मन को शान्त नहीं होने देतीं तथा ध्यान में बाधा पहुँचाया करती हैं। यह सूत्र वाक्य सदैव स्मरण रखने योग्य है कि हम जैसा सोचते हैं, वैसा ही बनते हैं। यह वाक्य हमारे मानसिक अवरोधों को हटाने में मार्गदर्शक बनेगा। आत्मसुझाव में बहुत बड़ी शक्ति है। यदि हम जीवन में नकारात्मक दृष्टिकोण रखेंगे तो हमारा जीवन भी नकारात्मक तथा निराशावादी हो जायेगा। यदि हम जीवन में रचनात्मक दृष्टिकोण रखेंगे तो हमारा जीवन आशावादी बनेगा। यदि हमारे मन में तीव्रता से यह विचार आने लगे कि हमें कैंसर हो जाएगा, तो एक दिन हमें सचमुच में कैंसर रोग का कष्ट भोगना पड़ेगा। आत्मसुझाव में ऐसी प्रबल शक्ति है।

वास्तव में ये सारी चीजें सिर्फ मन से ही नहीं, बाहर से भी आती हैं। हमारा मन बाहरी घटनाओं से लगातर प्रभावित होता रहता है। ये प्रभाव हमारे ऊपर हमेशा ही पड़ा करते हैं। जब हम कोई पुस्तक पढ़ते हैं तो हम इससे सुझाव प्राप्त करते हैं और हमारा आचरण वैसा ही बनता है। हम किसी से बातें करते हैं तो भी सुझाव प्राप्त करते जाते हैं, चाहे हम इसके प्रति सजग हों या न हों। जो कुछ हमारे मन में आता है, सुझाव के रूप में ही आता है। लोगों की बातों, हाव-भावों से भी हमें सुझाव प्राप्त होते हैं। सुझाव की इस शक्ति को आत्मसुझाव के रूप में व्यवहृत करने से हम अपनी मानसिक तनाव की स्थिति को सरलतम रूप से दूर कर सकते हैं। साथ-ही मन के ऊपर पड़ने वाले नकारात्मक प्रभावों को भी हम दूर कर सकते हैं जो हमारे अन्दर अवरोध पैदा करते हैं।

ध्यानाभ्यास के पूर्व की तैयारी में भी आत्मसुझाव का उपयोग आवश्यक है। आत्मसुझाव प्रारम्भ करने से पूर्व अपने अंदर परिवर्तन की आवश्यकता का अनुभव करना होगा। बिना तीव्र इच्छा और आवश्यकता के इसके उद्‌देश्य की पूर्ति नहीं होगी। यदि किसी में आधे मन से ही परिवर्तन करने की इच्छा है तो वह बार-बार इस विषय का चिन्तन-मनन करके परिवर्तन करने की उत्कट इच्छा जगा सकता है।

पाठक इस बात को अच्छी तरह समझें कि आध्यात्मिक पथ पर अग्रसर होने के साथ ही अनेक मानसिक बाधायें उपस्थित हो जाती हैं। जितनी अधिक प्रगति इस पथ में होगी, उतनी ही अधिक बाधायें चेतना के क्षेत्र में उभर कर राह रोकेंगी। अतएव जैसे ही वे दिखायी पड़ें, उनके प्रति निषेधात्मक रुख अपनाना होगा। विपरीत भावनाओं को उनके स्थान पर (जैसे, क्रोध की जगह क्षमा, दण्ड की जगह दया, आदि) बैठाना होगा, आत्मसुझाव देना होगा कि वे उतनी महत्त्वपूर्ण नहीं हैं जितनी दिखायी पड़ती हैं।

चूँकि प्रत्येक व्यक्ति की समस्या अपने ढंग की होगी, इसलिए पाठक को अपने अनुकूल विधि की तलाश करनी होगी और बाधाओं से छुटकारा पाने के लिए अपने लिए विकसित की गई विधि का उपयोग करना होगा। उदाहरणार्थ, एक ऐसे व्यक्ति को लें जिसे अंधेरे से डर लगता है। चूँकि उसे अपना अधिकांश जीवन अंधकार में ही व्यतीत करना होगा, इसलिए मानसिक उपद्रव स्वाभाविक है। उसका मन जाने-अनजाने सदा तनावग्रस्त रहेगा। मन से इस भय के भूत को भगाने का उपाय यह है कि वह अनुभव करे कि यह भय कितना हास्यास्पद है। वह महसूस करे कि अंधकार मात्र प्रकाश का विपरीत रूप है। वह अपने अनुभव में लाये कि इस अंधकार से अन्य लोग भयभीत नहीं होते हैं। वह समझने का प्रयास करे कि जब इस अंधकार का अपना कोई अस्तित्व नहीं है, और अन्य लोग इसकी परवाह नहीं करते, तो मैं क्यों भयभीत हूँ। इस प्रकार मन को निरन्तर आत्म-सुझाव देते रहने से निश्चित रूप से उसके मन से भय का भूत बाहर निकल भागेगा। इस प्रकार के सुझाव तब बड़े शक्तिशाली प्रमाणित होते हैं जब मन पूरी तरह विश्रान्त हो। इस प्रकार के उपचार से दृढ़मूल भय भी जड़ से समाप्त हो सकता है, बशर्ते भयग्रस्त व्यक्ति उसके निर्मूलन के लिए पूरे मन से इस प्रयास में लग जाए। सतत् प्रयास का परिणाम यह होगा कि अंधकार के प्रति एक बिल्कुल नई और उदासीन वृत्ति उस व्यक्ति के मन में उत्पन्न होगी, जो उसके अर्द्ध-चेतन मन में प्रवेश कर अंधकार के भय को निकाल बाहर करेगी।

आत्म-सुझाव सभी प्रकार के भय, मनोग्रन्थियों और अन्तर्द्वन्द्वों में एक कारगर उपाय सिद्ध होगा। आवश्यकता इस बात की है कि हम समस्या से मुक्त होने की प्रबल इच्छा रखते हों। प्रश्न यह है कि कोई व्यक्ति कैसे गहराई में बैठी इन समस्याओं का पता करे, जो उसके जीवन पर कुप्रभाव डाल रही हैं, जो उसका सुख-चैन छीन कर उसे तनावग्रस्त बना रही हैं। उसे इन जटिल

समस्याओं की जानकारी तक नहीं है और अनजाने में ये उसके जीवन को खोखला बना रही हैं। अभ्यासी यह अनुभव करेगा कि योग और ध्यान के द्वारा ज्यों-ज्यों उसकी आत्म-सजगता बढ़ेगी, त्यों-त्यों उसकी समस्याएँ, भय, तनाव आदि सतह पर दृष्टिगोचर होने लग जाएँगे।

इन दृढ़मूल भावनात्मक और मानसिक तनावों को उभार कर सतह पर लाने के लिए ध्यान की एक विशेष विधि अन्तर्मौन है। अन्तर्मौन के नियमित अभ्यास के दौरान जो भी सकारात्मक या नकारात्मक अनुभव आए, उसे मन में या कागज पर नोट कर रखना चाहिए।

मानसिक और भावनात्मक समस्याओं को हटाने की चेष्टा में दूसरी आवश्यक बात यह है कि बाहरी घटनाओं और संकटों को मन से बाहर रोक रखने का अभ्यास करना चाहिये, क्योंकि ये मन पर विपरीत प्रभाव डालते हैं। दूसरे शब्दों में, हमारा मन इतना मजबूत होना चाहिए कि बाह्य घटनाओं का प्रभाव ही हमारे ऊपर न पड़े। इसके लिये प्रत्येक व्यक्ति और वस्तु के प्रति धीरे-धीरे वैराग्य भाव पैदा करना होगा। इसका अर्थ यह नहीं कि हम उद्भिज (शाक-सब्जी) की तरह व्यक्तिगत सम्बन्धों से विलग होकर जीवन के उतार-चढ़ाव में भाग न लें। इसका तात्पर्य यह है कि सांसारिक व्यवहार तथा बाह्य क्रिया-कलापों में प्रेम, घृणा, आदि का प्रदर्शन करते समय आपके अंतर्मन को ये चीजें प्रभावित न कर सकें। संवेगात्मक भाव आपके व्यक्तित्व को अवश्य स्पर्श करें, लेकिन चेतना की गहराइयों में उनकी कोई छाप न पड़े।

यह सब मात्र अपनी समझ तथा हम किसके साथ तादात्म्य स्थापित कर रहे हैं, इसी का ही खेल है। हम अपने को शरीर या मन समझेंगे तब सुख-दुख, इच्छा-अनिच्छा, प्रतिकूल और अनुकूल भावनाओं की लहरों से उद्वेलित होंगे ही। इसके विपरीत अगर हम मन-शरीर से तादात्म्य स्थापित न करके चेतना के केन्द्र से जुड़ेंगे तो मानसिक-शारीरिक व्याधियाँ हमें कम ही छू पायेंगी, अर्थात् सुख-दुःख का थोड़ा ही असर होगा। हम संसार की बाह्य उत्तेजनाओं की तुलना तालाब में उठने वाली जल की तरंगों से कर सकते हैं। लहरें जल की ऊपरी सतह को ही प्रभावित या उद्वेलित करती हैं, आन्तरिक तल को नहीं। हमें भी बाह्य प्रभावों से ऐसा ही हल्का सम्बन्ध रखना चाहिये। आध्यात्मिक जिज्ञासु साधक की अंतरात्मा की शांति को मन या शरीर के नकारात्मक स्पंदनों एवं बीमारियों से किंचित् भी प्रभावित नहीं होना चाहिए। ऐसा करने की अपेक्षा कहना आसान है। परन्तु स्वयं के प्रति सजग होने के अनवरत अभ्यास

से इस स्थिति की प्राप्ति हो सकती है, जिसमें व्यक्ति संसार की विक्षुब्धकारी एवं कोलाहलपूर्ण घटनाओं के बीच शान्त एवं अप्रभावित रह सकता है।

आत्मसुझाव का दूसरा महत्त्वपूर्ण उपयोग है, शारीरिक रोगों की चिकित्सा और रोकथाम। बहुत तरह के असाध्य रोग जैसे–कैंसर, ल्युकीमिया आदि रोगों से ग्रस्त व्यक्ति भी अपनी दृढ़ इच्छाशक्ति और संकल्प शक्ति के बल पर स्वस्थ होते देखे गये हैं। ध्यान के अभ्यास के पश्चात् का समय आत्मसुझाव के लिए सबसे उत्तम है। प्रात:काल सोकर उठने के बाद या रात में सोने के पूर्व का समय भी उपयुक्त है। इन समयों में हमारा मस्तिष्क सुझावों के प्रति ग्रहणशील रहता है। ऐसे समयों में दृढ़-संकल्प और विश्वास के साथ कुछ मिनटों तक आत्मसुझावों को दुहराया जाय। उस समय हमेशा विश्वास रखें कि इच्छित परिवर्तन होगा ही और अपने अभीष्ट की प्राप्ति अवश्य होगी। लेकिन आधे मन से दिये हुए आत्मसुझाव पूरे नहीं होंगे। उनकी सफलता में सन्देह है।

## आत्मा से तादात्म्य

हमें अपने आप से तथा अपने परिवेश के साथ पुन: तादात्म्य स्थापित करना चाहिए। यह प्रक्रिया आवश्यक है। हमारे जीवन में दु:ख-शोक तभी आता है जब हम अपने आपको अपने शरीर, अपने मन, अपने काम-धन्धे या जीवन के अन्य कार्यों के साथ जोड़ लेते हैं। हम क्षणभंगुर पदार्थों के साथ अपना तादात्म्य स्थापित कर लेते हैं, जबकि हमें जीवन के सनातन और अपरिवर्तनीय तत्त्वों के साथ तादात्म्य स्थापित करना चाहिए। दूसरे शब्दों में हमें अपनी आन्तरिक सत्ता के साथ तादात्म्य स्थापित करना चाहिए, जो कि निर्विकार और शाश्वत है। जैसे ही हम अपने जीवन की सांसारिक भूमिकाओं से और अपने शारीरिक एवं मानसिक प्रसंगों से अपना सम्बन्ध-विच्छेद कर उन्हें इस रूप में स्वीकार कर लेंगे कि वे हमारी आत्म-सत्ता के बाह्य प्रकट रूप हैं, ध्यान हमारे लिए एक निरन्तर सहज प्रक्रिया बन जाएगी। जीवन के बाह्य पक्षों, जैसे, मन और शरीर आदि से यदि थोड़ा भी अनासक्त हो जाएँगे, तो इस तटस्थता के कारण ध्यानजन्य अनुभवों में वृद्धि होने लगेगी, क्योंकि शारीरिक उपद्रव, मानसिक उद्वेलन एवं भावनात्मक उथल-पुथल, ध्यान-मार्ग के बाधक तत्त्व हैं और इनके प्रति वैराग्य-भाव का उदय होते ही ध्यान की गहनता में वृद्धि होने लग जाती है। हमारे व्यक्तित्व के समस्त शारीरिक,

मानसिक और भावनात्मक पक्षों के शिथिल और शान्त होते ही ध्यान एक सरल, स्वाभाविक और सहज क्रिया बन जाती है।

यह एक विचित्र बात है कि आप किसी से उसका परिचय पूछें तो वह कहेगा, 'मैं चिकित्सक हूँ' अथवा 'मैं इन्जीनियर हूँ', अथवा 'मैं गृहिणी हूँ', अथवा 'मैं फुटबॉलर हूँ'। वह सांसारिक दृष्टि से जीवन में अपनी मुख्य भूमिका को ध्यान में रखकर उत्तर देगा। लोग भिन्न-भिन्न प्रकार के उत्तर देंगे। कोई स्त्री कह सकती है कि मैं माँ हूँ, पत्नी हूँ और दिन में टंकण का कार्य करती हूँ। किन्तु उनकी दैनिक चर्या का परिचय उनके व्यक्तित्व का सच्चा परिचय नहीं है। यह उनके कार्यों का परिचय है, स्वयं उनका नहीं।

यहाँ हम एक आत्यंतिक उदाहरण द्वारा समझने की कोशिश करें कि अपनी सांसारिक भूमिका के साथ तादात्म्य स्थापित करने पर किस प्रकार व्यक्ति का जीवन दु:खमय हो जाता है। एक अभिनेता का उदाहरण लें। वह अपने को अभिनेता के रूप में देखता है, एक ऐसा अभिनेता जिसका सुन्दर-सुडौल शरीर है, कमनीय मुखमण्डल है और पुरुषोचित वाणी है। वह अपनी कमनीय देहयष्टि के आकर्षण को बनाए रखने के लिए सदा जागरूक रहता है। इसके बावजूद ज्यों-ज्यों समय बीतता जाएगा, वह दर्पण के सम्मुख खड़ा होकर देखेगा कि उसका ललित, सुगठित शरीर धीरे-धीरे क्षीण हो रहा है, उसके मुख की कान्ति घटती जा रही है, उसकी आवाज का जादू अपना असर खोता जा रहा है, उसके शारीरिक ओज में भी ह्रास हो रहा है। उसे यह समझने में देर भले लगेगी कि वह तीव्र गति से बुढ़ापे की ओर बढ़ रहा है। फिर भी वह प्रतिदिन घण्टों दर्पण के पास खड़ा होकर अपनी रौनक उतरते देखेगा तो उसका मन अवसाद से भर जाएगा। वह दु:खी हो जाएगा, क्योंकि स्वयं के बारे में उसकी कल्पित छवि निस्तेज होती दिखेगी। अनित्य एवं क्षणभंगुर जग-प्रपंच को चिरस्थायी एवं नित्य समझ बैठने की भूल की भारी कीमत उस अभिनेता को चुकानी पड़ेगी। क्षणिक चकाचौंध भरी जिन्दगी के साथ आत्मीय-सम्बन्ध बना लेने और उसे अपना सच्चा परिचय मान लेने के कारण कई लोगों के साथ, विशेषकर फिल्म-जगत् के सितारों के साथ दारुण त्रासदियाँ घटित हुई हैं और कई लोगों ने आत्महत्या तक कर ली है।

माँ के साथ भी यही होता है। उसका अपने बच्चे के साथ एकात्म होना ही उसे उसके वियोग से उत्पन्न दु:ख झेलने के लिये विवश करता है। यही बात किसी डॉक्टर, वकील, लिपिक, कलाकार या गृहणी पर भी लागू होती

है। जीवन के अस्थायी कार्यों के साथ इनका गहरा तादात्म्य होता है। इनके साथ एकात्म भावना रखने के कारण ही इनकी अनुपस्थिति में दु:ख और भावनात्मक असंतुलन होने लगता है।

शरीर, मन और भावना के साथ हमारा तादात्म्य इतना प्रबल, सामान्य एवं विस्तृत है कि हम इसे सहज रूप में सत्य मान लेते हैं। जब कोई कहता है कि मैं प्यासा हूँ तो यह बात बिना इसके वास्तविक अर्थ पर ध्यान दिए हुए कही जाती है। इसमें यह नहीं सोचा जाता कि 'मैं' से तात्पर्य आत्मा के साथ तादात्म्य स्थापित करने से है। 'मैं' का अर्थ क्षणिक शरीर ही समझा जाता है। कहना यह चाहिए कि 'मेरा शरीर प्यासा है'। इस तरह यह अर्थ स्पष्ट हो जायेगा कि यह शरीर हमारी आत्मा की भौतिक तथा क्षणभंगुर अभिव्यक्ति मात्र है।

यही स्थिति हमारे विचारों और भावनाओं के साथ भी है। हम कहते हैं, 'मैं क्रुद्ध हूँ' अथवा 'मैं अवसादग्रस्त हूँ'। परन्तु यह तो हमारे मस्तिष्क के संवेगात्मक पक्ष की एक क्रिया मात्र है। ये सब अस्थायी स्थितियाँ हैं जो क्षण-क्षण रंग बदलती हैं, एवं मिटती-बनती रहती हैं। अभी किसी के साथ मित्रता की भावना है, तो दूसरे ही क्षण शत्रुता की भावना पैदा हो जायेगी। यद्यपि ये स्थायी चीजें नहीं हैं, तथापि हम अपनी आदत के अनुसार इनके साथ तादात्म्य की भावना स्थापित करते हैं। हम कहा करते हैं, 'मैं यह सोचता हूँ कि आसमान का रंग नीला है' या 'मैं सोचता हूँ कि एक और एक मिल कर दो होता है।' वस्तुत: सोचने वाला 'मैं' नहीं होता, मन होता है, जो नित्य-प्रति बदलता रहता है। एक दिन हमारा मन कुछ सोचता है, तो दूसरे दिन कुछ और। हम कैसे उसके साथ तादात्म्य स्थापित कर सकते हैं? इस स्थिति में यही कहना उपयुक्त होगा कि 'मेरा मन यह सोचता है' या 'मेरा मन यह अनुभव करता है'।

हमलोगों में अपने मन और शरीर की क्रियाओं को देखने की क्षमता है। जिन चीजों को हम अलग वस्तु मान कर देख सकते हैं, वह कैसे हमारी असली पहचान हो सकती है? कोई ऐसी चीज अवश्य है जो हमारे शरीर और मन की सभी क्रियाओं को द्रष्टा और साक्षी की तरह देखा करती है। अतएव यह शरीर और मन हमारे प्रत्यक्ष ज्ञान, क्रिया और विचारों का यंत्र मात्र है, उससे अधिक कुछ नहीं। हमारा वास्तविक परिचय, हमारी चेतना का केन्द्र आत्मा है। हम अपने जीवन में जो कुछ करते हैं, जो कुछ देखते हैं, आत्मा ही उन सबको उद्भासित करती है, सबकी साक्षी है तथा सभी को प्रकाशित

करती है। यद्यपि यही हमारे व्यक्तित्व का केन्द्र है, हमारी सत्ता का बीज है, सार है, तथापि बहुत कम लोग इस तत्त्व को समझ पाते हैं अथवा उससे प्रेरित होकर व्यवहार करते हैं। जैसा कि ऊपर बतलाया जा चुका है, अधिकतर व्यक्ति आत्मा की अभिव्यक्ति के उपकरण, शरीर और मन से तादात्म्य स्थापित कर लेते हैं। यदि हम आत्मा से परिचालित हों, उसे ही अपना वास्तविक स्वरूप समझें तो हम शरीर और मन का समुचित सदुपयोग करने में समर्थ हो सकेंगे, सम्पूर्ण क्षमता के साथ हम उन्हें काम में ला सकेंगे। हम स्वस्थ रह सकेंगे, क्योंकि शरीर और मन के संचालन में हमारी भ्रान्तियाँ और हमारे दुराग्रह बाधक नहीं होंगे। इस दृष्टि से ध्यान एक स्वाभाविक-सहज क्रिया होगी।

परन्तु आत्म-चेतना के केन्द्र से, वास्तविक 'मैं' के केन्द्र से जीवन संचालन किस प्रकार शुरू किया जाए? यही आध्यात्मिक पथ का मुख्य उद्देश्य है। यह एक लम्बा और कठिन मार्ग है तथापि इस पर अग्रसर हो जाना अपने आप में एक सफलता है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि आत्मा के साथ किंचित मात्र तादात्म्य स्थापित हो जाये और मन-शरीर के साथ उसी मात्रा में विलगाव हो जाये तो इससे ध्यानानुभूति में बड़ा सहयोग मिलेगा। ध्यान अपने आप में एक शक्तिशाली साधन है जो हमें केन्द्रस्थ आत्मा तक पहुँचाने में सहायक होता है।

सर्वप्रथम आपको यह जान लेना है कि जीवन की सभी क्रियाएँ मात्र भूमिका निर्वाह करने के समान हैं। ये न तो हमारी सत्ता का प्रतिनिधित्व करती हैं, न हमारा सच्चा परिचय देती हैं। ये मात्र अभिव्यक्तियाँ हैं। इसका यह अर्थ नहीं कि काम करना व्यर्थ है। इसका अर्थ है कि हमें कार्य करते जाना है, केवल एक अभिनेता की तरह। अपने अभिनय तथा भूमिका का साक्षी बनना है। इस तरह अभ्यास करते हुए हम देखेंगे कि हमारी आत्मा द्रष्टा की तरह सब कुछ देख रही है और शरीर तथा मन अभिनेताओं की तरह अपने कर्त्तव्यों की भूमिका निभा रहे हैं।

दूसरी बात हमको यह समझ लेनी है कि 'मैं शरीर नहीं हूँ, इन्द्रियों की संवेदनाएँ नहीं हूँ, मन के भाव या संवेग नहीं हूँ, मैं मन नहीं हूँ, बुद्धि नहीं हूँ।' प्रारम्भ में इन सब चीजों को हमें बौद्धिक स्तर पर ग्रहण करना होगा। अभ्यास से अपने इन सभी अभिव्यक्त पक्षों से तादात्म्य समाप्त होता जाएगा, तत्पश्चात् आप अपनी आत्मा के सत्य स्वरूप को समझ सकेंगे, जो परमात्मा का एक अंश है।

## ध्यान का अनुभव

ध्यान में निश्चिन्तता की अनुभूति होती है। अपना व्यक्तिगत स्वार्थ हट जाता है और सभी के लिए समान भाव आ जाता है। विरोधी विचारों और धारणाओं से जीवन खण्डित नहीं होता। एक पूर्णता में प्रत्येक वस्तु विलीन होती दिखती है। बाह्य संसार की घटनायें मस्तिष्क में प्रवेश करती हैं, मस्तिष्क उन्हें ग्रहण भी करता है, किन्तु उनसे किसी प्रकार की बाधा या तनाव या आवेग उत्पन्न नहीं होता तथा सभी कार्य निर्बाध सम्पन्न होते जाते हैं। जीवन की सबसे बड़ी बाधा, 'भय' का अन्त हो जाता है। यहाँ तक कि 'मृत्यु-भय' भी तुच्छ, सत्ताहीन और महत्त्वहीन मालूम होता है। जीवन के उतार-चढ़ाव, आशा-निराशा, सभी आनन्द की एक सतत् प्रवाहित उच्च अनुभूति में बदल जाते हैं। विरोधी दृष्टिगोचर होने वाली धार्मिक, दार्शनिक और सांस्कृतिक मान्यताओं में सामंजस्य दिखायी देने लगता है। सब कुछ दिव्य परम सत्ता की क्रीड़ा के रूप में दिखायी देने लगता है। भूत और भविष्य का महत्त्व नहीं रह जाता। अनन्त वर्तमान महत्त्वपूर्ण बन जाता है। पूर्णत: वर्तमान में रहना ही एकमात्र मुख्य उद्देश्य बन जाता है।

वर्तमान इतना महत्त्वपूर्ण हो जाता है कि मन पूर्णतया अपने कार्य में केन्द्रित हो जाता है। अपने कार्यों में दक्षता और पूर्णता स्वाभाविक बन जाती है। दक्षता के बाधक तत्त्व, चिन्ता और क्रोध मस्तिष्क की तल्लीनता को खण्डित नहीं कर पाते। इस स्थिति में कार्य और क्रीड़ा के बीच कोई अन्तर नहीं रह जाता। जीवन इतना आनन्दपूर्ण बन जाता है कि किसी महत्त्वाकांक्षा, किसी औचित्य या तर्क की आवश्यकता नहीं रह जाती। अपना अस्तित्व ही पर्याप्त होता है। यह याद रखना चाहिये कि नैराश्य, असंतोष और दु:ख के कारण ही हम जीवन का कारण ढूँढ़ने लगते हैं अथवा जीवन की उन गतिविधियों का अनुसरण करने लगते हैं जो हमारी सत्ता के विपरीत हैं।

ध्यान से न तो उत्साह भंग होता है, न संसार के प्रति कर्म करने की रुचि में कमी आती है। हाँ, चिन्ता समाप्त हो जाती है। ऊपरी तौर पर चिन्ता भले ही दिखे, पर अन्तर्मन में पूर्णत: शान्ति रहती है। ध्यान से प्राप्त होने वाले अनुभवों के लिए की जाने वाली प्राथमिक तैयारियाँ भी अब महत्त्वपूर्ण नहीं रह जातीं, न ही उनकी आवश्यकता महसूस होती है। दूसरे शब्दों में यम, नियम आदि ('राजयोग' अध्याय में देखें) के अन्तर्गत त्याग, वैराग्य और इसी तरह की अन्य बातों की अब कोई आवश्यकता नहीं रह जाती। ध्यान के अनुभव इन नियमों से ऊपर हैं। ये नियम मानसिक अशान्ति को दूर करने के

लिए बने हैं। अब व्यक्ति उत्तेजक, क्रोधपूर्ण, आनन्दपूर्ण– सब तरह के कार्य कर सकता है। उसके अन्त:प्रदेश पर अब इनका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। वह साक्षी भाव से जीवन में क्रियाशील रहता है। इन्द्रिय-जनित आनन्द कम नहीं होते, अपितु बढ़ जाते हैं।

प्रत्येक वस्तु एक इकाई बन जाती है। सूक्ष्म-अन्तर्ज्ञान ही ज्ञान का माध्यम बनता है। वस्तुओं का गूढ़ एवं सार अर्थ दिखायी पड़ने लगता है। संसार की प्रत्येक वस्तु के प्रति अपनत्व एवं मित्रता का भाव उत्पन्न हो जाता है, तथा सम्पूर्ण सृष्टि अपनी सहायक प्रतीत होती है। विरोधी स्थितियाँ समाप्त हो जाती हैं। प्रत्येक अणु जीवन्त होकर चमकने लगता है। देश और काल के नियत अर्थ समाप्त हो जाते हैं। ये चीजें ईश्वरीय-सत्ता की अभिव्यक्ति मात्र बन कर रह जाती हैं। समय रुकता-सा दिखता है और अंतरिक्ष विस्तारहीन हो जाता है। तारे हमारी पहुँच की वस्तु प्रतीत होते हैं। अनन्तता और नित्यता स्पष्ट हो जाते हैं। प्रत्येक वस्तु के अस्तित्व में सृष्टि का शाश्वत रूप दिखता है। व्यक्ति अपने आपको हर चीज से अन्तरंग रूप से जुड़ा हुआ पाता है। उसे अपने अहं की स्थिति दिखती ही नहीं अथवा नगण्य-सी दिखती है।

सम्पूर्ण सृष्टि में उसे सामान्य रूप से अपना अस्तित्व एक बिन्दु-सा दिखता है– पहिये में दाँते की तरह अथवा अनन्त काल के एक क्षणांश के समान। जीवन में कभी-कभी ऐसा लगने लगता है कि व्यक्ति सृष्टि के अन्य भागों से विच्छिन्न हो गया है। लगता है कि इस एकाकी और मरणशील जीवन से छुटकारा नहीं होगा। अधिकतर लोग इसे नियति समझ कर हार मान लेते हैं। ध्यान से इस स्थिति में परिवर्तन आ जाता है। ध्यान द्वारा मनुष्य यह समझने लगता है कि मनुष्य सृष्टि का एक आवश्यक, आत्मीय और महत्त्वपूर्ण अंश है। सृष्टि की प्रत्येक वस्तु के साथ उसका सम्बन्ध है। इसकी सत्ता अलग नहीं है। तुम वही हो, यह ध्यान की रहस्यपूर्ण स्थिति है।

ध्यान की गहराई और ऊँचाई के अनुरूप अनुभवों के विवरण में भिन्नता होती है। साथ ही, इस अकथनीय अनुभव को अभिव्यक्त करने की कोशिश में प्रत्येक व्यक्ति अपनी भाषा, अपने धार्मिक शब्द तथा प्रतीकों एवं स्वानुभूति का उपयोग करता है। ध्यान की उच्चतम स्थिति का अनुभव अचानक नहीं होता है। इन आध्यात्मिक अनुभवों का तीव्रीकरण क्रमिक रूप से होता है। प्रारंभ में छोटी-छोटी बातों में इसका अनुभव होता है, यह अनेक मूर्त्त-अमूर्त्त रूपों में दृष्टिगोचर होता है। इनमें से अधिकांश रूप तो दैनिक जीवन के साथ

असम्बद्ध होने की वजह से बड़े विचित्र लगते हैं। हमें आश्चर्य होने लगता है कि किस प्रकार ऐसी चीजें हमारे अन्दर से घटित हो रही हैं। हम भगवान बुद्ध की जगमगाती प्रतिभा तथा बहुरंगी अन्त:शक्ति के नमूने देख सकते हैं। अनुभूतियों और संवेगों की तीव्रता भी ध्यान में संभव हो जाती है। व्यक्तित्व की गहराई से उठने वाले नाद भी सुने जा सकते हैं।

अन्त में हम एक लोकोत्तर अनुभव को विलियम जेम्स की 'द वैराइटीज ऑफ रिलीजियस एक्सपीरियंस' नामक पुस्तक से उद्धृत करते हैं–

"एकाएक मैंने अपने को अग्नि की लपटों में लिपटा पाया। एक क्षण के लिए मैंने सोचा कि कहीं आसपास आग लग गई है, पर दूसरे ही क्षण मैंने जान लिया कि यह अग्नि मेरे अन्दर ही है। इसके तुरन्त बाद उल्लास तथा अपरिमित आनन्द के साथ बौद्धिक उद्बोधन की अवर्णनीय बाढ़-सी आ गयी। मैंने मात्र विश्वास कर लिया हो, ऐसी बात नहीं है। मैंने देखा कि यह विश्व जड़ पदार्थों से बना हुआ नहीं है, बल्कि हर चीज एक जीवन्त सत्ता है। मैं अपने शाश्वत जीवन के प्रति सजग हो उठा, सचेतन रूप में। मैंने देखा कि सारे मनुष्य अमर हैं। इस विश्व-व्यवस्था में हर चीज एक-दूसरे के हितार्थ ही कार्य करती हैं। इस संसार का तथा सम्पूर्ण विश्व का मूल सिद्धान्त प्रेम तथा परोपकार है। यह दृश्य कुछ क्षण तक ही रहा, लेकिन उसकी याद आज तक बनी है यद्यपि इस घटना को हुए लगभग 25 वर्ष बीत चुके हैं। मैं जान गया कि इस दृश्य के द्वारा जो कुछ मुझे दिखा वह सत्य है। वह चेतना गहरे अवसाद के क्षणों में भी नष्ट नहीं हुई है।"

आध्यात्मिक प्रगति और आध्यात्मिक अनुभव भाषा के परे हैं। आज तक जितने भी धर्मग्रन्थ, शास्त्र आदि लिखे गये, वे सब प्रतीकात्मक हैं। ये सब बातें उन्हीं की समझ में आयेंगी, जिन्हें इस तरह के अनुभव होने शुरू हो गये हों, अन्य सभी के लिए ये मात्र साहित्यिक कथाएँ ही होंगी। उदाहरण के लिए श्रीराम कथा या श्रीकृष्ण की जीवनी पर आधारित रामायण तथा श्रीमद्भगवद्गीता का उदाहरण लें। इसके अलावा दाँतें की 'डिवाइन कॉमेडी', गोथे का 'फाउस्ट' आदि पुस्तकें भी ध्यान देने योग्य हैं जो बौद्धिक मन से भी गहरे स्तर पर हृदय को छूती हैं।

विचार की इसी श्रृंखला के क्रम में पाठकों से कहा जाता है कि ध्यान को अपने लिए अनुकूल विधि से प्रारम्भ करें। दूसरों के अनुभवों तथा आध्यात्मिक पथों से वे प्रभावित न हों।

# 6

# योग दर्शन

योग में सिद्धान्त की अपेक्षा अभ्यास पर ज्यादा बल दिया जाता है तथापि दार्शनिक पक्षों का मूलभूत ज्ञान रहने पर साधक यह जान सकेगा कि योग के द्वारा वह किस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सचेष्ट है, ध्यान की अवस्थाएँ कैसे उसे प्राप्त होंगी। यद्यपि योग दर्शन में अन्तर्दृष्टि की बहुत बातें भरी पड़ी हैं परन्तु अन्ततः सबका उद्‌देश्य है कि साधक किस प्रकार आत्मदर्शन की ओर अग्रसर होता है। अनेक दर्शन विशेषकर पाश्चात्य दर्शन अपने ही शब्दों की भूल-भुलैया में खो जाते हैं। वास्तविकता का एक सुन्दर शब्द-चित्र प्रस्तुत करने के लिए अपनी ही धारणाओं को अपने आस-पास की वस्तु-स्थिति के अनुरूप ढालने की उनकी प्रवृत्ति होती है। दार्शनिक अपने ही शब्दों में इतने लीन हो जाते हैं कि उन्हें ऐसा प्रतीत होने लगता है कि उनके द्वारा प्रस्तुत की गई तस्वीर सत्य का वास्तविक प्रतिबिम्ब है। वे यह नहीं समझते कि उनकी धारणा एक नमूना मात्र है। मकान का नक्शा मकान नहीं हो सकता। पूर्वी दर्शन में योग, जेन, आदि मत इसकी पुष्टि करते हैं कि साधक अपने ही प्रयासों से सत्य तक पहुँच सकता है। मौखिक या लिखित शब्दों-चित्रों से सत्य का उद्‌घाटन न तो हुआ है और न होने की सम्भावना दिखती है। योग दर्शन की विचारधारा सब के ऊपर लागू होती है। यह एक व्यावहारिक ज्ञान है।

उपयोगी दर्शन की सबसे पहली आवश्यकता है कि उसका सम्बन्ध मानव जीवन से हो। वह यह बता सके कि मानवता को दुःखों और कष्टों से किस प्रकार ऊपर उठाया जा सकता है। महात्मा बुद्ध ने इस आवश्यकता को समझा था। फलतः ईश्वर की सत्ता से सम्बन्धित प्रश्नों का उत्तर देना उन्होंने अस्वीकार किया, इसलिये नहीं कि उन्हें उनका कोई ज्ञान नहीं था, वरन् इसलिये कि

मनुष्य जीवन का कोई सम्बन्ध इन प्रश्नों से नहीं था। वे उनका उत्तर 'ईश्वर है' या 'ईश्वर नहीं है' में दे सकते थे, परन्तु इन दोनों उत्तरों से मानवता को कुछ उपलब्धि नहीं होती। उसके लिए ये उत्तर शब्द मात्र होते। इस प्रश्नोत्तर से मानव-अस्तित्व या जीवन की खुशी में कोई अन्तर नहीं आता। बुद्ध का मुख्य उद्देश्य था – मनुष्यों को दु:खों से ऊपर उठाना। जब वे अपनी वर्त्तमान स्थिति से अपने को ऊपर उठा लेते तो उन्हें अपने इच्छित प्रश्नों के उत्तर स्वत: मिल जाते। उन्हें प्रश्नोत्तर की आवश्यकता ही नहीं रहती।

## क्लेश

योग का उद्देश्य यह भी है कि मनुष्य अपने कष्टों का उन्मूलन करे ताकि उसके सामने आध्यात्मिकता का स्वरूप प्रकट हो और वह अपने को देख सके। मनुष्य के दु:खों एवं कष्टों के कारणों का उल्लेख योग में है। वे पाँच प्रकार के होते हैं, जिन्हें पंच-क्लेश कहा जाता है। ये क्लेश जटिल सिद्धान्तों पर नहीं, अपितु मनुष्य के जीवन और कार्यों के अध्ययन पर आधारित हैं। इन पंच-क्लेशों की अभिधारणा उन ऋषियों ने की जिन्होंने स्वयं इन्हें अनुभव किया और इनका अतिक्रमण कर इनसे मुक्ति पाई, जिसके फलस्वरूप वे चित्र के टुकड़ों की अपेक्षा सम्पूर्ण चित्र का अवलोकन कर सके। हम में से अधिकतर लोग अपने दु:खों में इस तरह लिप्त हैं कि उनके कारणों को पहचान नहीं पाते। इन क्लेशों के कारण हैं –

- अज्ञान या वास्तविकता की जानकारी न होना
- अहंकार
- राग या वस्तु के प्रति आकर्षण
- द्वेष या वस्तु से विकर्षण
- अभिनिवेश, अर्थात् मृत्यु-भय

वास्तव में ये क्लेश अलग-अलग नहीं हैं। एक से दूसरे क्लेश की उत्पत्ति होती है। सत्य या वास्तविकता के प्रति अज्ञान ही इनका मूल कारण है, जिसके फलस्वरूप प्रत्येक व्यक्ति अपने ही विषय में सोचता है। वह अपने अहं से एकात्म होकर अन्य व्यक्तियों और वस्तुओं से अपने को अलग देखने लगता है। वह अपने अहं से प्रेरित होकर इधर-उधर घूमता और कार्यों को करता है। अपने आनन्द और आराम के साधन जुटाने में वह सभी वस्तुओं को किसी-न-किसी रूप में अपना सेवक समझता है। इसी तरह उसके मन में पसन्द-

नापसन्द की बात उठती है। वह ऐसे पदार्थों और लोगों की तरफ आकृष्ट होता है जो उसे आनन्द देते हैं, उसके अहं को पोषित करते हैं। जिन चीजों से उसे अप्रसन्नता या असुविधा होती है, वे उसकी घृणा का विषय बन जाती हैं। निश्चय ही सुखद और दु:खद वस्तुओं एवं विषयों के बीच इतनी स्पष्ट विभाजक रेखा नहीं खींची जा सकती है। कुछ विषय अथवा लोग अलग-अलग समय में कभी सुख और कभी दु:ख पहुँचा सकते हैं। कुछ विषयों और व्यक्तियों के प्रति वह उदासीन रह सकता है, उसे उनमें न रुचि होगी, न अरुचि। किन्तु उपयुक्त स्थिति में ये उदासीन पदार्थ भी आसानी से रुचि या अरुचि के विषय बन सकते हैं। विषयों एवं व्यक्तियों के प्रति हमारी आसक्ति और अहं की भावना के कारण जीवन के प्रति गहन आसक्ति एवं मृत्यु के प्रति जुगुप्सा का भाव उत्पन्न होता है। हम न अपनी निजी पहचान खोना चाहते हैं और न उन विषयों अथवा व्यक्तियों से बिछुड़ना चाहते हैं जो हमारे अहं को पोषित करते और तुष्टि प्रदान करते हैं।

क्लेश व्यक्ति को क्षणभंगुर निस्सार वस्तुओं से तादात्म्य का अनुभव कराकर दु:ख पहुँचाता है। व्यक्ति अपने को शरीर, मन और अहंकार मान बैठता है। इसीलिए वह जाने-अनजाने हमेशा दु:खी रहा करता है कि ये सारी चीजें मृत्यु के समय तिरोहित हो जाएँगी। वह अपनी पहचान नित्य आत्मा के साथ नहीं बना पाता, जो शाश्वत और चिरंतन है। यही बात उन विषयों के साथ लागू होती है जिनसे तृष्णा पैदा होती है। वे चिरन्तन नहीं हैं और काल-क्रम में उनका विनाश हो जाएगा। वे तुष्टि प्रदान नहीं कर पायेंगे। वितृष्णाओं के बारे में क्या कहें? यह बात सही है कि वे हमारे अहं को इस प्रकार पोषित नहीं कर पातीं जिससे हमें सुखानुभूति हो। इसलिए बाह्यत: वे हमारे दु:ख का कारण हैं। लेकिन वास्तव में रुचि-अरुचि से तत्त्वत: भिन्न नहीं है। वे एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। हम लोग तृष्णा और वितृष्णा, सुरुचि और अरुचि, दोनों चक्कियों के बीच पिस रहे हैं। इस कथन में बड़ी सचाई है, 'जिससे आप सबसे अधिक प्रेम करते हैं, उसी से आप सबसे अधिक घृणा भी करते हैं।' जिस व्यक्ति से हम घृणा करते हैं, परिस्थितियों के अनुकूल होने पर हम उसी से प्रेम करने लग जाते हैं।

क्लेश निरन्तर हमें दु:ख पहुँचाते रहते हैं, क्योंकि हम उनकी वर्तमान स्थिति को बरकरार रखने की चेष्टा में लगे रहते हैं। हमें नयी मोटर कार से भारी लगाव हो जाता है। यदि कोई उसे चुरा लेता है, तो हम दु:खी और

अवसादग्रस्त हो जाते हैं। कोई टिप्पणी कर देता है कि आपका काम अधिक संतोषप्रद नहीं है, तो आप दु:खी हो जाते हैं, क्योंकि काम आपके व्यक्तित्व का ही विस्तार है, आपके अहं का एक अविभाज्य अंग है। इसी प्रकार जीवन में हम जो कुछ करते हैं, उससे हमारा लगाव हो जाता है। यदि पाठक अपने जीवन के समस्त कृत्यों पर सावधानीपूर्वक विचार करे और उन कृत्यों से प्राप्त क्षणिक या चिरस्थायी दु:खों का विश्लेषण करे, तो वह इसी निष्कर्ष पर पहुँचेगा कि जीवन में अनुभूत हर प्रकार के दु:ख इन्हीं पंच क्लेशों के अन्तर्गत आ जायेंगे।

वासनाएँ अथवा कामनाएँ हमें निरन्तर ऐसे परिवेश की ओर आकृष्ट करती रहती हैं जहाँ उनकी तृप्ति हो सके। यदि हम सावधानीपूर्वक अपने समस्त मानसिक और शारीरिक क्रियाकलापों का विश्लेषण करें तो यही निष्कर्ष निकलेगा कि वे किसी-न-किसी रूप में (कभी सूक्ष्म तो कभी स्थूल) हमारी वासनाओं से परिचालित होते हैं। जीवन के प्रत्येक विचार और कार्य के पीछे वासना ही प्रेरक तत्त्व है। वही हमें उद्दीपन प्रदान करती है। मन और शरीर उसी दिशा में गमन करते हैं जिधर व्यक्ति की अन्तर्निहित वासना या कामना को तृप्ति मिलती है।

इस तरह वह चेतन शक्ति भी, जो हमारे मन को प्रकाश देती है, इच्छापूर्ति की इस भाग-दौड़ में शामिल होने को विवश हो जाती है। सभी इच्छायें एक साथ पूरी नहीं होतीं, इसलिये उपयुक्त अवसर पाते ही अपने को प्रकट कर देती हैं।

इन इच्छाओं का कारण क्या है? कारण वे क्लेश हैं जिनकी चर्चा हम ऊपर करते आए हैं। अगर क्लेश न हों तो इच्छायें भी न होंगी। वस्तुओं के प्रति आकर्षण, विकर्षण, अहंभाव, जीवन के प्रति आसक्ति और सत्य की अनभिज्ञता ही इच्छाओं को जन्म देते हैं। ये इच्छायें किस प्रकार हमारे ध्यानाभ्यास पर विपरीत प्रभाव डालती हैं? ये सदा हमारे मन को ध्यान के विषय से दूर रखती हैं। ये इच्छायें अपनी तृप्ति के लिए हमारे मन को किसी-न-किसी बाह्य पदार्थ पर टिकाये रखती हैं। फलत: भटकता हुआ मन एकाग्र नहीं हो पाता। एकाग्रता के अभाव में ध्यान भी नहीं लग पाता।

बिना आत्मज्ञान के क्लेशों का निवारण बिल्कुल संभव नहीं। अधिक-से-अधिक हम यही कर सकते हैं कि उन्हें क्रमश: कम करते चलें। यह क्रिया कई विधियों से की जा सकती है। कुछ प्रभावशाली विधियाँ इस पुस्तक में दी

जा रही हैं। सर्वप्रथम हमें क्लेशों की उत्पत्ति पर विचार करके उन्हें समझना होगा कि वास्तव में ये क्लेश कष्टों के वाहक हैं। भली प्रकार विचार करने पर हम समझ जायेंगे कि ये क्लेश किस प्रकार दु:खों एवं कष्टों का सृजन करते हैं। यद्यपि इस विषय में यहाँ पर कुछ विचार-विमर्श किया गया है तथापि व्यक्तिगत रूप से अनुभव कर लेना अच्छा है। स्वानुभव के बाद व्यक्ति अपनी रुचि-अरुचि तथा अहं को दूर करने के लिए अपने मन का पुनर्संयोजन कर सकता है।

इसी तरह 'आत्म-सुझाव' शीर्षक वाले अध्याय में दिये सुझावों के अनुसार शरीर एवं मन के साथ तादात्म्य-भाव को दूर किया जा सकता है। इससे अहं भाव कम होगा और व्यक्ति शाश्वत सत्य और आत्मा से सम्बन्ध स्थापित कर सकेगा। इसी के साथ 'राजयोग' शीर्षक अध्याय में वर्णित यम और नियम का अभ्यास क्लेशों का निवारण करने में सहायक होगा। कर्मयोग और भक्तियोग भी जीवन के क्लेशों को दूर करने के सफल उपाय हैं।

आध्यात्मिक पथ पर अग्रसर होने के साथ ही क्लेशों का प्रभाव स्वभावत: कम होने लगता है। पाठक यह कह सकते हैं कि क्लेशों की अनुपस्थिति में जीवन का आनन्द ही समाप्त हो जायेगा; जीवन का कोई अर्थ ही नहीं रह जायेगा। इच्छा और अनिच्छा ही जीवन को विशिष्टता प्रदान करने वाले तत्त्व हैं। उनके अभाव में जीवन सूना हो जायेगा। इन बातों से पता लगता है कि हम जीवन के प्रति कितने आसक्त हैं। जिस जीवन को हम देख रहे हैं वह तो अपने सबसे स्थूल स्वरूप में है। जैसे-जैसे मनुष्य आध्यात्मिक पथ पर प्रगति करता जाता है, वह सत्य के निकट आता जाता है। उसे स्पष्ट रूप से समझ में आने लगता है कि उसको चेतना की वर्तमान स्थिति में जो जीवन अभी दिख रहा है वह शनै: शनै: दिखाई पड़ने वाले सूक्ष्मतर जीवन तत्त्व के सम्मुख कुछ भी नहीं है। दोनों प्रकार के जीवन में बड़ा अन्तर है। हमें यह भी स्पष्ट होने लगेगा कि जीवन के वर्तमान स्वरूप से जितनी आसक्ति हमने पाल रखी है, यह जीवन उसके योग्य नहीं है। इस तरह हम स्वत: ही क्लेशों के प्रभाव से मुक्त होने लगेंगे।

# 7

# राजयोग की पद्धति

ध्यान का सबसे सुव्यवस्थित पथ राजयोग ही है। पर यही एकमात्र पद्धति नहीं है। वास्तव में अन्य सभी योग-मार्ग, जैसे भक्ति, कर्म, ज्ञान योग, इत्यादि का भी उतना ही महत्त्व है। इन सभी का एक ही लक्ष्य है – ध्यान के अनुभवों द्वारा आत्मज्ञान की प्राप्ति। वस्तुत: इन विविध पद्धतियों का अभ्यास मिला-जुलाकर करना चाहिए, क्योंकि ये मार्ग या पद्धतियाँ एक-दूसरे का विरोध नहीं करतीं। अन्य पद्धतियों का वर्णन अगले अध्याय में किया गया है।

राजयोग के प्रणेता महर्षि पातंजलि थे। उन्होंने अपनी पुस्तक, 'योग-सूत्र' में राजयोग का वर्णन किया है। महर्षि पातंजलि द्वारा बतलाये गये राजयोग की पद्धति पर विचार-विमर्श करना उचित ही है, क्योंकि यह उन बाधाओं पर प्रकाश डालता है जिसका निवारण सफल ध्यान के लिए अनिवार्य है।

राजयोग की प्रारंभिक क्रियाओं का ध्यान से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है। परन्तु उनका महत्त्व इसलिए है कि वे साधक के शरीर और मन को उच्चतर योग की अवस्था के लिए तैयार करती हैं। प्रथम पाँच क्रियाओं का अभ्यास किये बिना शायद ही किसी को ध्यान में सफलता प्राप्त हो। कुछ ऐसे भाग्यशाली व्यक्ति हो सकते हैं जिनके शरीर और मन में कोई विकार न हो तथा जो जन्म से ही आध्यात्मिकता की तरफ उन्मुख हों और अन्तर्दर्शन के मार्ग में विकास करने की प्रबल कामना रखते हों। ऐसे लोग बाह्य जगत् की क्रियाओं एवं प्रभावों से मुक्त रहकर कभी भी ध्यान की क्रिया में रत हो सकते हैं। राजयोग सबके लिए है, हर प्रकृति के व्यक्ति इससे लाभान्वित हो सकते हैं। इसके अन्तर्गत उच्च आध्यात्मिक उन्नति के लिए आवश्यक तत्त्वों की

अनिवार्यता पर बल दिया गया है। यह चारित्रिक तत्त्वों का निर्माण करते हुए साधक को आध्यात्मिकता के पथ पर आगे बढ़ाता है।

## राजयोग के चरण

पतंजलि ऋषि ने राजयोग को आठ भागों में बाँटा है, जिसे अष्टांग योग भी कहा जाता है। यह चारित्रिक गठन के मूल नियमों से प्रारंभ होकर समाधि की पूर्ण अवस्था तक मार्गनिर्देशन करता है। समाधि को चार भागों में विभक्त किया गया है। समाधि का चरमोत्कर्ष है, आत्म-साक्षात्कार। प्रथम पाँच चरण तैयारी से सम्बन्धित हैं और अंतिम तीन चरण उच्च अभ्यास हैं।

1. यम – (सामाजिक आचार संहिता)
2. नियम – (व्यक्तिगत आचार संहिता, जीवन के विकास के लिए आवश्यक नियम)
3. आसन – (विशेष प्रकार की शारीरिक स्थितियाँ)
4. प्राणायाम – (प्राण शक्ति का नियंत्रण)
5. प्रत्याहार – (इन्द्रियों को अन्तर्मुख करना)
6. धारणा – (एकाग्रता)
7. ध्यान – (ध्येय वस्तु में मन को लगाना, दत्तचित होना)
8. समाधि – (अतीन्द्रिय चेतना की जागृति)

इसमें प्रारम्भिक पाँच साधन बहिरंग हैं और शेष साधन अन्तरंग हैं। जब बहिरंग साधनों का अभ्यास पक्का हो जाता है तो उच्च स्तर की अन्तरंग साधना आसान हो जाती है। इसका कारण यह है कि हममें से अधिकांश का मन अनेकानेक विचारों में उलझा रहता है जिससे एकाग्रता और ध्यान की स्थिति पाना दुष्कर हो जाता है। शान्त मन वाला व्यक्ति ही ध्यान कर सकता है। ध्यान और चित्त की एकाग्रता में जो बाधाएँ उपस्थित होती हैं उन पर अब हम दृष्टिपात करेंगे।

- भावनात्मक बाधाएँ मानसिक विचारों के आन्तरिक संघर्षों और नैतिक अपूर्णताओं के कारण उत्पन्न होती हैं, जिनका 'यम' और 'नियम' के अभ्यास द्वारा निराकरण किया जाता है।
- शारीरिक बाधाओं, जैसे, शारीरिक अस्वस्थता, दर्द आदि को आसनों के द्वारा दूर किया जाता है।
- प्राणशक्ति के अनियमित ढंग से प्रवाहित होने से बाधा उत्पन्न हो सकती

है। हमारे शरीर में एक शक्ति है, जिसे 'प्राणशक्ति' कहते हैं। प्राणायाम वाले अध्याय में इसकी विस्तृत चर्चा की गयी है। प्राणायाम के अभ्यास से प्राणशक्ति के प्रवाह में आयी बाधा के कारण उत्पन्न मानसिक विकृतियों को दूर किया जा सकता है।

- बाह्य विक्षेपों से भी मानसिक बाधाएँ उत्पन्न होती हैं। यदि बाह्य कोलाहल हमें निरन्तर घेरे रहें तब हम अपने मन को कैसे अन्दर की ओर मोड़ सकते हैं? प्रत्याहार का कार्य-क्षेत्र यहीं पर है। इसके द्वारा हमारी ज्ञानेन्द्रियाँ विषयों से अलग कर दी जाती हैं। इस प्रकार बाह्य घटनाओं का संवाद मस्तिष्क तक नहीं पहुँच पाता है। अगर ये संवाद मस्तिष्क में पहुँच भी जाए तो मस्तिष्क को उनका बोध नहीं होता।

यहाँ पाठकों को यह बात स्पष्ट समझ में आ गई होगी कि पतंजलि द्वारा वर्णित ये सीढ़ियाँ कितनी महत्त्वपूर्ण हैं। बिना इनका अभ्यास किये उच्चतर स्थितियों तक पहुँचना प्राय: असम्भव है। इन अवस्थाओं के अभ्यास पर हम लोग संक्षेप में विचार करेंगे। यद्यपि प्रथम पाँच चरणों की चर्चा इस विषय पर उपलब्ध अन्य पुस्तकों में विस्तार से की गयी है।

### यम या आत्म-संयम

इनकी संख्या पाँच है। इन्हें पढ़कर पाठकों को लगेगा कि समाजशास्त्र की इन बातों से योग का क्या सम्बन्ध है? परन्तु वास्तव में योग की उच्चतर अवस्था से इनका गहरा सम्बन्ध है, और इन नियमों से व्यक्ति के सारे भावनात्मक तनाव और मानसिक बीमारियाँ समाप्त हो जाती हैं। आपको यह समझने में देर नहीं लगेगी कि ये प्रसंग हमारे अन्दर अपराधभाव, अन्तर्द्वन्द्व और सामान्य प्रकृति के मानसिक उपद्रव उत्पन्न करते हैं। रोग के इन लक्षणों को दूर करने का एकमात्र उपाय यह है कि इनके कारण को ही निर्मूल कर दिया जाए। तब मन अधिक शान्त होकर उच्च स्तरीय अभ्यास के लिए तत्पर हो जाएगा।

पतंजलि वास्तव में आदर्शवादी थे। उन्होंने राजयोग का पथ उन व्यक्तियों के लिए निश्चित किया था जो आध्यात्मिक सिद्धि एवं आत्म-दर्शन के लिए सम्पूर्ण जीवन लगा सकते थे। सम्भवत: उस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए वे पूरे समाज से सम्बन्ध-विच्छेद कर सकते थे। यह बात उस समय बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है जब वे अपने एक सूत्र में कहते हैं कि ये नियम अलंघ्य हैं। इनका पालन जीवन की बाजी लगाकर भी करना चाहिये। वस्तुत: आज के युग में

ये नियम व्यावहारिक नहीं हैं, क्योंकि यौन सम्बन्ध, कामवासना आधुनिक जीवन के स्वाभाविक अंग हैं। समय-समय पर परिस्थितिवश झूठ भी बोलना पड़ता है।

इन सब बातों को देखते हुए हम पाठकों को सलाह देते हैं कि वे इनका पालन अपनी सामयिक सूझ-बूझ का उपयोग करते हुए यथाशक्ति करें। हम इस बात पर बल देना चाहते हैं कि व्यक्तिगत क्षमता और परिस्थिति के अनुसार यथासम्भव यमों का पालन करने से मानसिक शान्ति और स्थिरता प्राप्त होती है और यह तभी सम्भव है जब हमारे विवेक और विचारों या कर्म में कोई विरोध न हो। यम के पाँच प्रकारों का वर्णन नीचे किया जा रहा है –

**अहिंसा** – अहिंसा का पालन यथासम्भव किया जाना चाहिये। इसका सम्बन्ध केवल शरीर से ही नहीं, बल्कि विचारों और वाणी से भी है। अगर आपको कोई कष्ट दे और आपको संघर्ष करना आवश्यक हो गया हो तो आप ऐसा अवश्य करें, परन्तु मन में घृणा और द्वेष को न आने दें। वस्तुतः जब व्यक्ति ध्यान की उच्चतर भूमिका में प्रवेश करता है तो उसे किसी को कष्ट देने की इच्छा नहीं होती। वह सबके प्रति संवेदनशील हो जाता है तथापि सिद्ध पुरुषों को स्वधर्म पालनार्थ ऐसे कार्य करने पड़ते हैं जिससे सम्भव है किसी की हानि हो जाये।

**सत्य** – सत्य का पालन दूसरी अनिवार्यता है। व्यक्ति को जहाँ तक संभव हो, सत्य का पालन करना चाहिये। असत्य ही मानसिक तनाव को जन्म देता है। असत्य का कथन करने वाले, जाने-अनजाने इस भय से ग्रस्त रहते हैं कि कहीं उनके झूठ का भंडाफोड़ न हो जाये। असत्य या मिथ्याचरण के कई प्रकार होते हैं – जैसे, अपने आपको बढ़-चढ़कर प्रस्तुत करना, अधिक धनवान होने का ढोंग करना, तथ्यों पर परदा डालना, अर्द्ध सत्य का कथन कर सचाई पर परदा डालना, आदि। एक बात और भी है। ध्यान का उद्‌देश्य है, सत्य की खोज। व्यावहारिक जीवन में बिना सत्यवादी बने, यह कैसे संभव है।

**अस्तेय** – अस्तेय यानी चोरी नहीं करना और ईमानदारी से रहना। इसके विषय में थोड़ा विचार करना आवश्यक है। अस्तेय की अनिवार्यता से कौन परिचित नहीं है? कपट और बेईमानी से मानसिक तनाव होता है। विशेष कर जो योग पथ पर अग्रसर होना चाहते हैं उन्हें इससे उत्पन्न बाधाओं का अनुभव होगा ही।

**ब्रह्मचर्य** – ब्रह्मचर्य अथवा काम-ऊर्जा के नियंत्रण को आधुनिक युग के उन्मुक्त स्त्री-पुरुष अधिक गंभीरता से नहीं लेते हैं। अधिकतर लोग कहेंगे,

"हमें यौन-सम्बन्ध से क्यों परहेज करना चाहिए? क्या यह स्वाभाविक क्रिया नहीं है?" हाँ, यौन-सम्बन्ध एक स्वाभाविक क्रिया है और प्राचीन इतिहास का सिंहावलोकन करें तो देखेंगे कि विभिन्न धर्मों द्वारा यौन-सम्बन्ध पर नियंत्रण रखने हेतु बनाए गए कठोर नियमों का पालन कर लोग अपनी स्वाभाविक यौन भावना का दमन कर गंभीर भावनात्मक पीड़ा झेल चुके हैं। धार्मिक अनुशासन के कोड़े फटकारने वालों ने इस बात पर ध्यान नहीं दिया कि ब्रह्मचर्य व्रत के पालन के पीछे मूल कारण क्या था। आज के संदर्भ में इस नियम की व्याख्या इस प्रकार की जानी चाहिए कि ध्यानाभ्यास में अधिक-से-अधिक सफलता प्राप्त करने हेतु अभ्यासी, यथासंभव काम क्रिया में कमी लायें। वैवाहिक जीवन में पति-पत्नी को एक-दूसरे की भावना और आवश्यकता का ख्याल रखकर इस दिशा में कदम उठाना चाहिए। ऐसा क्यों? रति-क्रिया और ध्यान के बीच क्या सम्बन्ध है? रति-क्रिया की आवश्यकता तभी अनुभव होती है जब शरीर में अधिक प्राणशक्ति का संचय हो जाता है। रति-क्रिया में प्राणशक्ति का क्षय होता है। शक्ति का प्रकटीकरण कई प्रकार से हो सकता है। यौन-शक्ति भी इसका अपवाद नहीं है। यदि इस शक्ति का उपयोग आध्यात्मिक लाभ के लिए किया जाये तो ध्यान के उच्च अनुभवों का विकास होगा। साधक को स्वयं इसका अनुभव और परीक्षण करना होगा।

**अपरिग्रह –** इसका आशय यह है कि आपके पास ऐश्वर्य और समृद्धि तो हो, पर आप उसमें लिप्त न हों। किसी बहुमूल्य धरोहर के अचानक खो जाने से जो दु:ख आपको होता है, उस पर विचार करें और इस बात पर भी गौर करें कि कैसे किसी कीमती वस्तु के खो जाने या उसको हानि पहुँचने का भय आपको बराबर सताता रहता है। इन सबका परिणाम यह होता है कि आपका मन जाने-अनजाने निरन्तर तनाव की स्थिति में रहता है। आप एक समृद्ध व्यक्ति हो सकते हैं, किन्तु यदि आप अपने अन्दर अनासक्ति का भाव और अपरिग्रह की प्रवृत्ति विकसित कर लेंगे तो बहुत सारे तनावों और दुश्चिन्ताओं से मुक्त हो जायेंगे।

## नियम

यम की तरह नियमों की संख्या भी पाँच है। इनका सम्बन्ध साधक के व्यक्तिगत अनुशासन से है। इनका उद्देश्य है, आध्यात्मिक जिज्ञासु को योग के कठिन

पथ के लिए तैयार करना। यम के समान नियमों का पालन करने से मनुष्य के मानसिक और भावनात्मक विरोध समाप्त हो जाते हैं तथा ध्यान और एकाग्रता के लिए मन तैयार होता है।

**शौच –** नियमित स्नान और शुद्ध सात्त्विक अन्न के सेवन द्वारा व्यक्ति को अपने शरीर को यथासंभव शुद्ध एवं पवित्र बनाए रखना चाहिए। यदि व्यक्ति ऐसा नहीं करता है, तो बाह्य और आन्तरिक रोग घर कर लेते हैं, जो ध्यान के लिए सबसे बड़ी बाधा हैं। शरीर की पीड़ा यदि मन को बरबस घेरे रहे तो कोई कैसे अपने मन को अन्तर्मुख कर सकता है?

एक दूसरी बात यह भी है, व्यक्ति की ध्यान करने की क्षमता उसके भोजन से अधिक सम्बन्धित है। अशुद्ध और तामसिक अन्न खाने से ध्यान की सूक्ष्म अनुभूति एवं तरंगों के प्रति मन की ग्रहणशीलता कम हो जाती है। ध्यान की सूक्ष्म स्थितियाँ अपने प्रकटीकरण के लिये शुद्ध मन का आधार चाहती हैं। उत्तेजक विचारों से मन को त्राण दिलाने के लिए भी शौच का नियम आवश्यक रूप से लागू होता है। यम और नियमों का प्रावधान इसी कारण किया गया है, इसलिए इनका अभ्यास अवश्य करना चाहिए।

**संतोष –** संतोष से हर स्थिति का सामना करने की क्षमता प्राप्त होती है। जीवन के उतार-चढ़ाव पर अपना मनोभाव बदलने की आदत अधिकतर लोगों में होती है। क्षण में रुष्ट और क्षण में तुष्ट रहने वाला मन ध्यान के लिए उपयुक्त नहीं है। इसी कारण संतोष परम आवश्यक घटक है। दूसरों पर प्रभाव डालने के लिए कृत्रिम संतोष नहीं, वरन् आन्तरिक संतोष की आवश्यकता है। आप कह सकते हैं, "कहना जितना सरल है, करना उतना ही कठिन।" यह सत्य है, किन्तु अन्य यमों और नियमों को अपने अन्दर धीरे-धीरे विकसित करने से और जो भी परिस्थिति सामने आए उसे धैर्यपूर्वक स्वीकार कर लेने से संतोष का अवतरण होगा।

**तप –** तपस्या से इच्छाशक्ति बलवान होती है। उपवास, मौनादि छोटे-मोटे तपों द्वारा भी मन को अनुशासित किया जा सकता है। परन्तु इसमें मन को मारने की बात नहीं होनी चाहिये, क्योंकि उससे तो कुप्रभाव ही उत्पन्न होगा। योग में इच्छाशक्ति का बड़ा महत्त्व है। मन चंचल बालक की तरह इधर-उधर भागता रहता है। आप जो नहीं करना चाहेंगे, मन वही करना चाहेगा। इस तरह मन में और अधिक बाधायें उत्पन्न होंगी, जो ध्यान के अभ्यास में बाधक होंगी। इच्छाशक्ति से ही इसे वश में किया जा सकता है।

**स्वाध्याय –** इसकी कई व्याख्याओं में सबसे उपयुक्त यह प्रतीत होती है कि आप अधिक सजगतापूर्वक निरंतर अपनी क्रियाओं एवं प्रतिक्रियाओं के साक्षी बने। हमेशा ख्याल रखें कि विभिन्न परिस्थितियों में आप किस प्रकार अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं; कैसे किसी घटना से आप बेहद खुश हो जाते हैं, और किसी दूसरी घटना से आप पर मायूसी छा जाती है। यदि आपके अन्दर क्रोध का आवेश आता है तो आप खुद से सवाल करें, "मैं क्यों क्रुद्ध हुआ?" यदि किसी वस्तु के प्रति आपका गहरा लगाव है तो स्वयं से प्रश्न करें, "मैं क्यों इसके प्रति इतना आसक्त हूँ?" इस प्रकार निरन्तर आत्मविश्लेषण करते रहने से क्रमश: आपको अपने मन के क्रियाकलापों की जानकारी मिलती रहेगी। यह जानकारी भले ही सतही किस्म की हो, फिर भी मन को उद्वेलित करने वाली चीजों की जानकारी हो जाने पर आप उसका प्रतिकार कर सकते हैं।

स्वाध्याय का विस्तार ध्यान की गहराइयों तक होना चाहिए ताकि आप अपने को अधिक-से-अधिक समझ सकें। दूसरे शब्दों में यदि ध्यानावस्था में आपको बिम्ब या दृश्य-दर्शन हो तो होने दें। उनका दमन न करें, क्योंकि इससे आपके अवचेतन मन में छुपी स्मृतियों और दृढ़मूल समस्याओं पर से परदा हटेगा। आपकी दमित वासनाएँ उभर कर सामने आएँगी, जिनके कारण मन में जाने-अनजाने निरन्तर तनाव बना रहता है। अपने मन के कोने में अनजाने ही दबी पड़ी इन समस्याओं के प्रत्यक्ष होने पर ही आप इनसे छुटकारे का उपाय कर सकेंगे। इन दबावों और तनावों के कारण ही ध्यान की गहराइयों में उतरने में आपको कठिनाई हो रही है। इनके हट जाने से आप सहज ही ध्यान की गहरी अनुभूति पा सकते हैं।

**ईश्वर-प्रणिधान –** ईश्वर-प्रणिधान का अर्थ है, अपने कर्मों को परमेश्वर के निमित्त अर्पित कर देना। प्रत्येक चेष्टा और कर्म, ईश्वर के प्रति अर्पणभाव से पूजा के रूप में हो। अपने अहं को मिटाकर, अपने अस्तित्व को उस परम चेतन स्वरूप आत्मा के प्रति समर्पित करके हमें यह समझना होगा कि हमारा सारा कर्म उस परमेश्वरीय सत्ता की अभिव्यक्ति मात्र है। हम हमेशा याद रखें कि यह अहं ही हमारी संवेगात्मक और मानसिक समस्याओं का कारण है। अहं से ही हम घृणा, संघर्ष, आसक्ति आदि के दलदल में फँसते हैं। ज्यों-ज्यों हम अपने अहंकार को घटाते जायेंगे, हमारा मन स्थिर और शान्त होता जायेगा। यद्यपि यह अत्यन्त कठिन है, पर यदि हम अपना अहं पूरी तरह खो

दें तो सहजरूपेण हम सत्य के अत्यधिक निकट पहुँच जायेंगे। कर्म और भक्ति योग इस दिशा में बड़े सहायक होते हैं।

## यम और नियम – सारांश

प्रश्न उठता है कि शायद मनुष्य का वास्तविक स्वभाव ही कपटी और असत्यवादी है। अत: यम और नियम का पालन उसके स्वभाव के विपरीत होगा और उसकी मानसिक समस्याओं को दूर करने के बदले और अधिक उलझनें पैदा कर देगा। यम-नियम हमें कहाँ तक मदद करेंगे, यह प्रश्न विवादास्पद तथा सैद्धान्तिक है, फिर भी महान् चिन्तकों एवं ऋषियों ने इस बात पर बल दिया है कि मनुष्य की मूल प्रकृति सात्त्विक है। वह आन्तरिक रूप से सच्चा, ईमानदार और सुन्दर होता है। वह जो कुछ इस मूल प्रकृति के विरुद्ध करता है, उसका कारण उसकी परिस्थितियाँ हैं। इन परिस्थितियों में गरीबी और दुर्व्यवहार मुख्य हैं, जो मनुष्य को तरह-तरह के कुकर्म करने को प्रेरित करते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि वह जो कुछ कर रहा है, वह उसकी प्रकृति से संचालित हो रहा है, परन्तु बात कुछ और होती है। उसके अवचेतन मन में संघर्ष उत्पन्न होते हैं, जिसका कुप्रभाव उसके चेतन मन पर पड़ने लगता है। इससे जो मानसिक अस्तव्यस्तता होती है, उसका ठीक-ठीक कारण व्यक्ति नहीं समझ पाता। मनुष्य क्या करता है और वास्तव में क्या करना चाहता है, इसके बीच की खींचतान ही अधिकांशत: मानसिक असंतुलन का कारण बनती है।

इसलिये बिना किसी भेदभाव के यम-नियम का पालन करना अपेक्षित है। पाठकों को ये यम-नियम कुछ अव्यावहारिक और बोझिल लग सकते हैं। लेकिन हमें यह याद रहे कि हमारा लक्ष्य असीम है, हमारा लक्ष्य पूर्णता की ओर उन्मुख होना है। यदि इस लक्ष्य-बोध से हम किंचित् भी संचालित होते रहे, तो निश्चित रूप से हम सही दिशा में आगे बढ़ेंगे। इस मार्ग में हमारा छोटा-सा कदम भी सहायक सिद्ध होगा। हमें अपनी क्षमता से अधिक श्रम करने की आवश्यकता नहीं है। आध्यात्मिकता के मार्ग में धीर एवं सौम्य गति ही अपेक्षित है।

## आसन

महर्षि पतंजलि द्वारा वर्णित राजयोग की परम्परा में आसन की परिभाषा देते हुए बतलाया गया है कि शरीर को सुखपूर्वक स्थिर रखने को आसन कहते हैं।

आसन में स्थिर होकर बैठने से व्यक्ति को बिना शारीरिक बाधा के ध्यान लगेगा और चित्त को एकाग्रता की प्राप्ति होगी। शरीर और मन में निकट सम्बन्ध होने के कारण ध्यान लगाने के लिए यह एक आवश्यक बात है। शारीरिक असुविधायें ध्यान में बाधा पहुँचाती हैं। इसकी वजह से मन उन असुविधाओं से ही निपटने में व्यस्त हो जायेगा।

पाठक जानते ही हैं कि ऐसे अनेक आसन हैं जो ध्यान के लिये उपयुक्त नहीं हैं। ये ध्यान के आसन के विपरीत आसन हैं; इनका उपयोग विभिन्न शारीरिक रोगों के उपचार के दृष्टिकोण से किया जाता है। तथापि कुछ उपचारात्मक आसन, जैसे, शीर्षासन, हलासन आदि का अभ्यास साधकों को ध्यान में बहुत सहायता पहुँचाते हैं। यदि ये आसन प्रतिदिन नियमित रूप से किये जायें तो शरीर और मन के रोगों का निवारण होता है तथा उनसे बचाव भी होता है। ये कड़ी मांसपेशियों को ढीली तथा स्नायु संस्थान को क्रियाशील बनाते हैं। मन शान्त हो जाता है, ये आसन ध्यान में बाधा पहुँचाने वाले तत्त्वों को दूर करके सफल ध्यान करने में सहायक होते हैं। ये आसन दैनिक जीवन में क्रियाशीलता और नव-स्फूर्ति का संचार करके उत्साह भर देते हैं। इससे ध्यान के अभ्यास हेतु अनुकूल और उपयुक्त वातावरण का निर्माण होगा।

इन आसनों की विस्तृत चर्चा योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर से प्रकाशित 'आसन प्राणायाम मुद्रा बंध' सहित अन्य कई पुस्तकों में की गई है। पाठक इनमें से किसी पुस्तक की मदद से इन अभ्यासों की विस्तृत जानकारी प्राप्त कर दैनिक अभ्यास को निष्ठापूर्वक आगे बढ़ाकर लाभान्वित हो सकते हैं। उपर्युक्त पुस्तक के 'ध्यान के लिए उपयुक्त आसन' नामक अध्याय को विशेष रूप से देखना चाहिए।

## प्राणायाम

योग में प्राण शब्द का प्रयोग बहुलता से किया गया है, पर इसका अर्थ लोगों को ठीक से मालूम नहीं है। प्राण को इस तरह पारिभाषित किया जा सकता है – यह ऊर्जा है, जो जीवन धारण करने में सहायक है। इस ऊर्जा को ही प्राण कहा जाता है। इसका विशेष वर्णन इस पुस्तक के 'प्राणायाम' वाले अध्याय में दिया गया है। पाठक वहाँ इसका अध्ययन करेंगे।

प्राण पदार्थ और मन को चेतना से संयुक्त करने का माध्यम है। यह स्वयं जड़ तत्त्व है। प्राणशक्ति के बिना मन द्वारा चेतना अपने को बाह्य जगत् में

प्रकट नहीं कर पाती। इसलिए यह बात तर्कसंगत प्रतीत होती है कि प्राणशक्ति के प्रवाह पर नियंत्रण करने से मन नियन्त्रित होता है और ध्यान के मार्ग में सहायता मिलती है। इसीलिये प्राणशक्ति को नियंत्रण करने के प्रयास में प्राणायाम की अनेक पद्धतियों का आविष्कार हुआ है।

योग से जुड़े नए लोगों की यह धारणा है कि प्राणायाम की भूमिका श्वास-प्रश्वास के नियमन तक ही सीमित है। इस कथन में आंशिक सचाई है, क्योंकि प्राणायाम के अभ्यास के दौरान श्वास-प्रश्वास में परिवर्तन होता है। फिर भी श्वास-प्रश्वास का नियमन ही प्राणायाम का सम्पूर्ण लक्ष्य नहीं है। प्राणायाम का अंतिम लक्ष्य है, प्राण-प्रवाह पर नियन्त्रण, जो श्वसन-प्रक्रिया से गहरा सम्बन्ध रखता है। दोनों क्रियाओं के बीच ऐसा अन्तरंग सम्बन्ध है कि श्वास क्रिया में किसी भी प्रकार का परिवर्तन स्वत: प्राण-प्रवाह में परिवर्तन का कारण बन जाएगा।

प्राणायाम के बिना भी ध्यान किया जा सकता है, लेकिन इसका नियमित अभ्यास ही ध्यान में सफलता प्रदान करेगा। उदाहरणार्थ राजयोग में ध्यान के पूर्व की स्थिति है 'धारणा', जिसका मोटा अर्थ है एकाग्रता। किसी वस्तु पर एकाग्र होने की क्षमता के बिना ध्यान संभव नहीं है। ध्यान की सामान्य पद्धति है, आँखें बन्द करके किसी आन्तरिक वस्तु का दर्शन करना। यह क्रिया अपने आप में कठिन है, क्योंकि मन पर पड़ने वाला प्रतिबिम्ब धुँधला हो जाता है या मिट ही जाता है।

मानसिक बिम्ब की स्पष्टता बनाए रखने में प्राणायाम का अभ्यास अत्यन्त उपयोगी है। यह शरीर में प्राण के पुनर्विभाजन द्वारा संभव होता है, जिससे मन आन्तरिक बिम्बों को ग्रहण करने और उन्हें अपने वश में रखने में अधिक सक्षम हो जाता है। प्राणायाम और उसकी विधियों की विस्तृत चर्चा योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित 'प्राण एवं प्राणायाम' पुस्तक में की गयी है। इस सम्बन्ध में अधिक जानकारी प्राप्त करने हेतु उस पुस्तक का अनुशीलन कर सकते हैं।

### प्रत्याहार

इन्द्रियों को अन्तर्मुखी करने की कला का नाम प्रत्याहार है। हममें से अधिकतर व्यक्तियों की चेतना बहिर्मुखी रहती है। दूसरे शब्दों में हमारा मन शरीर के बाहर की घटनाओं में ही मुख्यत: लगा रहता है। ध्यान में सफलता प्राप्ति के लिये अपने मन को बाह्य सम्पर्कों से विलग करना होगा। हमें अपने परिवेश

को भूलना पड़ेगा। हमारे मन की जन्मजात आदत है – बहिर्मुखी रहना, बाह्य जगत् का दर्शन करना। इस आदत से पीछा छुड़ाना आसान नहीं है। अधिकतर लोगों के लिए क्षणभर भी बाह्य जगत् को भूल जाना दु:साध्य सा लगता है। ध्यान में साधक को आँखें मूँद कर अभ्यास करने का निर्देश दिया जाता है। उन्हें कहा जाता है कि आँखें खोलने का लोभ संवरण करते हुए वे स्वयं से प्रश्न करें – 'बाहर क्या है, जिसमें मेरी दिलचस्पी होगी? मैं एक कमरे में हूँ और बाहर निश्चित रूप में कुछ भी नहीं घट रहा है।' वस्तुगत चेतना से चुम्बकवत् सम्बद्ध रहने की हम सब की आदत-सी पड़ गयी है।

सबसे विकट समस्या यह है कि हमारी ज्ञानेन्द्रियों – कान, नेत्र आदि के माध्यम से हमारे मन को बाह्य-जगत् की सूचनाएँ प्राप्त होती रहती हैं। हमारा मन तब तक बाह्य-जगत् के संसर्ग से अपने को विरत नहीं करेगा जब तक उसे यह प्रशिक्षण या प्रोत्साहन नहीं दिया जाएगा कि इन्द्रियों से प्राप्त संवादों की उपेक्षा करना ही हितकर है। यह एक स्वाभाविक प्रक्रिया है, क्योंकि ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से निरन्तर प्राप्त हो रहे असंख्य संवादों को मन न तो अपने अन्दर आत्मसात् कर सकता है और न उनको सँभाल सकता है। मन यदि सभी संवादों को स्वीकारने लगे तो उन पर निर्णय लेना संभव नहीं होगा। वह संवादों के प्लावन में ऐसे डूबने-उतरने लगेगा कि बाह्य जगत् के ज्ञान से वंचित हो जाएगा। मन की दशा वैसी ही हो जाएगी जैसी किसी कमरे में पचास रेडियो पर एक साथ पचास रेडियो स्टेशनों से अलग-अलग प्रसारण सुनने पर किसी श्रोता की हो सकती है। कमरे में बैठा कोई व्यक्ति पचास प्रसारणों में से किसी एक प्रसारण को भी नहीं सुन सकता है। मन इन्द्रियों से प्राप्त संवादों में से चुनाव करता है और तब उन पर निर्णय ले पाता है।

अब करना यह है कि यह कार्य घटते-घटते शून्य तक पहुँच जाय। हम लोग कभी-कभी इस स्थिति में होते हैं। जब हम कोई पुस्तक पढ़ते रहते हैं तो आस-पास की सुधि नहीं रह जाती; घड़ी की टिक्-टिक् की आवाज भी नहीं सुनायी पड़ती; बगल के कमरे में बैठे लोग बातें करते हैं, तो उनकी आवाज भी नहीं सुनायी पड़ती। कभी-कभी आसपास में यदि पटाखा भी छूट जाये तो उसे भी हम नहीं सुन पाते। प्रत्याहार में वातावरण के प्रति इसी प्रकार की शून्यता होती है, पर उसमें पुस्तक पढ़ने जैसा कोई उत्तेजक सहारा नहीं होता, जिसमें मन की बौद्धिक क्षमता ही लीन हो जाये। मन में तल्लीनता-एकाग्रता आनी चाहिए, पर उसे बौद्धिकता से युक्त नहीं होना चाहिये।

मस्तिष्क का स्वभाव एक ऐसे चंचल, नटखट बालक की तरह है जो मना करने पर भी वही काम करता है जो वह चाहता है। इसलिए जब आप इन्द्रियजन्य प्रत्यक्ष ज्ञान की अनुभूति को हटाना चाहते हैं तो वह आप की अवहेलना कर उन अनुभूतियों को तीव्र कर देता है। ठीक इसके प्रतिकूल, अगर आप अपने मन को बाह्य पदार्थों की ओर लगाने का प्रयास करें तो कुछ ही समय के बाद यह उनसे विमुख होने लगेगा और इन्द्रियानुभूति से अपना सम्पर्क हटा लेगा। मन की यही स्थिति प्रत्याहार कहलाती है, जो ध्यान के लिए अति आवश्यक है। मन की इसी विशिष्टता का उपयोग अन्तर्मौन के अभ्यास में होता है, जो प्रत्याहार और ध्यान की तैयारी के लिए प्रारंभिक, परंतु अद्भुत सूत्र है। ध्यान सम्बन्धित अभ्यासों के खण्ड में इस विधि का वर्णन किया गया है।

प्रत्याहार की सफलता अभ्यासकाल में व्यक्ति के किसी एक आसन में सुविधाजनक स्थिति में बैठने की क्षमता पर निर्भर करती है। बैठने में यदि बराबर असुविधा का अनुभव होगा, तो मन को निरन्तर ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा कष्ट की सूचना दी जाती रहेगी। इस अवस्था में प्रत्याहार अथवा ध्यान नहीं हो सकेगा। इसलिए यह परमावश्यक है कि अभ्यासी अपने शरीर को चुस्त-दुरुस्त रखे ताकि बिना किसी कष्ट या असुविधा के शरीर किसी विशेष आसन में लम्बे काल तक बैठा रह सके।

इस पुस्तक में दी गई कई विधियों में शरीर के विभिन्न अंगों पर चेतना को घुमाने, श्वास-प्रश्वास के प्रति जागरूकता, मानसिक रूप से या मौखिक रूप से उच्चारित ध्वनियों के प्रति जागरूकता आदि की चर्चा की गई है। इसके दो उद्देश्य हैं, एक तो मन में एकाग्रता उत्पन्न करना है और दूसरा मन को अन्तर्मुख करना, ताकि वह अपने परिवेश को स्वत: भूल जाए और प्रत्याहार की अवस्था में पहुँच जाए। इस क्रिया से मन की भ्रमणशील प्रवृत्ति को तुष्टि प्राप्त होती है और साथ ही उस पर नियन्त्रण भी बना रहता है। इससे एकाग्रता-साधन के दौरान आने वाली समस्याओं से भी निवृत्ति हो जाती है। अप्रशिक्षित मन बलपूर्वक आरोपित नियंत्रणों के प्रति विद्रोह कर बैठता है और इस कारण प्रगति अवरुद्ध हो जाती है।

## धारणा

धारणा की स्थिति में आने के पूर्व मन की सारी बाह्य बाधायें शांत हो जानी चाहिए। फिर भी मन विचारों के कोलाहल से घिरा रहता है। चूँकि बाहर की

उत्तेजनाओं को प्रत्याहार की साधना द्वारा बन्द कर दिया गया है, इसलिए वर्तमान के विचार भले ही न हों, पर दूसरे प्रकार के विचार तो मन में होंगे ही। इन्हें दो भागों में बाँटा जा सकता है – भूतकाल की स्मृतियाँ और भविष्य की घटनाओं की कल्पना। मस्तिष्क की इस क्रिया को धारणा के अभ्यास द्वारा रोक सकते हैं।

इस संदर्भ में धारणा का अर्थ है मन को सभी चीजों से हटाकर किसी एक चीज पर केन्द्रित करना। जब यह स्थिति आ जाती है तब मन स्वत: स्थिर हो जाता है। बन्द आँखों के आगे रखे गये किसी आन्तरिक बिम्ब पर या बाह्य पदार्थ पर ही चित्त एकाग्र हो जाता है। यद्यपि बाह्य वस्तु पर ध्यान केन्द्रित करने से मन के इधर-उधर भटकने का भय है, परन्तु जो आंतरिक बिम्ब देख पाने में असमर्थ हैं, उनके लिए यह उपयोगी विधि है। यदि किसी बाह्य वस्तु पर ही प्रतिदिन लम्बे समय तक एकाग्र होने का अभ्यास किया जाये, तो बन्द आँखों से उसका बिम्ब देखना सम्भव हो जाता है। सभी विचारों को परे हटाकर किसी एक विचार पर धारणा का अभ्यास भी किया जा सकता है, परन्तु यह क्रिया अधिक कठिन है और इसका अभ्यास प्राय: तभी किया जाता है जब व्यक्ति अपने भीतर एकाग्रता की क्षमता को बहुत अधिक विकसित कर लेता है।

वास्तव में यौगिक एकाग्रता में मन जड़ नहीं हो जाता। उस समय मन की प्रगति भी नहीं रुकती। बस, मन एक वस्तु पर टिक जाता है। उसकी गतिशीलता बनी रहती है। इस स्थिति में व्यक्ति उस वस्तु के उन पहलुओं का दर्शन करता है जिन्हें चंचल मन द्वारा देख पाना सम्भव नहीं था। किसी कला-प्रदर्शनी में एक व्यक्ति अगर उड़ती दृष्टि से सभी चित्रों को देख जाये, तो वह उनकी बारीकियाँ नहीं परख सकेगा, परन्तु आधे घण्टे तक एक-एक चित्र पर उसकी एकाग्र-दृष्टि पड़े, तो उसके सामने चित्र के सूक्ष्म कला पक्ष भी उद्भासित हो जायेंगे।

जो लोग सोचते हैं कि उन्होंने एकाग्रता शक्ति विकसित कर ली हैं, उनके लिये भी एक वस्तु पर एकाग्र हो पाना कठिन हो जाता है। किसी विचार-शृंखला पर एकाग्र होने की अपेक्षा किसी पदार्थ पर ध्यान टिका पाना कठिन है, परन्तु यह क्रिया उतनी ही लाभकारी भी है, क्योंकि जिस पदार्थ पर मन एकाग्र किया जाता है उसकी गहराई तक पहुँचा जा सकता है।

किसी एक वस्तु पर एकाग्रता असंभव नहीं है। यदि राजयोग की प्रारंभिक पाँच अवस्थाओं का अनवरत अभ्यास किया जाये, तो सभी मानसिक

बाधाओं का शमन हो जायेगा। जब मन इन मूल अभ्यासों के द्वारा शुद्ध हो जायेगा, तब एकाग्रता स्वत: आ जायेगी। उसके लिये कोई विशेष प्रयत्न नहीं करना पड़ेगा।

## ध्यान

ध्यान धारणा शक्ति का ही प्रसार एवं विस्तार है। पतंजलि ने इसे एक वस्तु पर एकाग्रता का निर्बाध रूप से प्रवाहित होना बतलाया है। दोनों के बीच एक सूक्ष्म अन्तर है। धारणा में मन ध्यातव्य वस्तु से भागने की चेष्टा में रहता है और साधक उसे खींच लाने की कोशिश करता है। ध्यान की अवस्था में मन ध्यातव्य वस्तु में पूर्णत: तल्लीन हो जाता है। ध्यान की स्थिति में वस्तु के सूक्ष्म स्वरूप की अनुभूति होती है। धारणा की अपेक्षा ध्यान में एकाग्रता की गहराई बहुत ज्यादा होती है, नित्य नियमित एकाग्रता के अभ्यास से ध्यान स्वत: फलित होने लग जाता है।

## समाधि

ध्यान का चरम सीमा तक विस्तार ही समाधि है। यह ध्यान का चरमोत्कर्ष है। इसका विभाजन चार चरणों में किया गया है। योग की चरम परिणति तक पहुँचने के लिए इन चारों चरणों की यात्रा पूरी करनी पड़ती है। आत्मानुभूति अथवा जीवन का चरम लक्ष्य भी यही है। इस पुस्तक में इन चार अवस्थाओं की विस्तृत चर्चा नहीं की जाएगी, क्योंकि यह विषय सामान्य अनुभवों से परे है, जिसे शब्दों की सीमा में बाँधना संभव नहीं है। निम्न तल पर समाधि की व्याख्या करना शब्दों का खेल ही होगा। फिर भी, जिन्हें समाधि के तकनीकी पक्षों का ज्ञान प्राप्त करना हो वे योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'मुक्ति के चार सोपान' का अवलोकन कर सकते हैं, जो 'पातंजल योग सूत्र' पर भाष्य के रूप में प्रकाशित है।

महर्षि पतंजलि का कहना है कि समाधि ध्यान की वह अवस्था है जिसमें ध्यातव्य वस्तु के अतिरिक्त अन्य कोई समवर्ती चेतना कार्य नहीं करती। ध्यान की प्रारम्भिक अवस्थाओं में ध्येय विषय (इष्टदेव) के सूक्ष्म तत्त्व धीरे-धीरे प्रकट होते हैं। तब भी उस समय असली तत्त्व (सार तत्त्व) प्रकट नहीं होता। कोई चीज इसे रोके रहती है। यह रुकावट या बाधा है, साधक का अपना मन। यह ध्येय और चेतना के बीच एक पर्दा खड़ा कर देता है। मन का स्व-चेतन

स्वभाव चेतना से वस्तु के असली तत्त्व को छिपा देता है। एक गायक का उदाहरण लें। जब वह आत्म-विस्मृत होकर गाता है तब उस स्थिति में उसका गायन अच्छा होता है। जब वह श्रोताओं की ओर उन्मुख होकर गाता है तो उसका संगीत तल्लीनतापूर्ण नहीं होता। संसार के महापुरुषों के जीवन तथा कार्यों से हम शिक्षा ले सकते हैं, जब उन्होंने तल्लीनता की स्थिति में अपने अहं को विस्मृत कर दिया, तभी वे महान् कार्य कर सके। जब मन अपनी बाधायें दूर कर लेता है, तब उच्चतर प्रेरणाएँ स्वत: उद्भासित हो जाती हैं। ध्यान की उच्च अवस्था में यही होता है।

समाधि में मन की स्वयं की चेतना लुप्त हो जाती है। ध्यातव्य और ध्यानार्थी के बीच भेद समाप्त हो जाता है; दोनों एक हो जाते हैं। इसी स्थिति में ध्यातव्य का चरम सत्य प्रकट होता है, क्योंकि जब ध्याता-ध्येय में कोई अन्तर नहीं रह जाता, तब एक के विषय में दूसरा अवश्य जानेगा। ज्ञान का विषय, ज्ञान करने वाला और ज्ञान की प्रक्रिया – तीनों मिलकर एक हो जाते हैं। इस स्थिति का शब्दों में वर्णन करना अत्यन्त कठिन है, क्योंकि यह अनुभव इन्द्रियातीत तथा सामान्य अनुभव से परे है।

एक स्थूल उपमा के सहारे इसको समझाना चाहेंगे। कोई व्यक्ति कुछ दूरी पर से एक बड़े जन-समूह को देखता है। वह उस जन-समूह से अपने को अलग समझता है और वास्तव में वह अलग है भी। हमारे इर्द-गिर्द जो संसार है उसके साथ भी हमारा सम्बन्ध इसी प्रकार का है। वह जन-समूह आपस में कुछ चर्चा कर रहा है, जिसे दूर खड़ा व्यक्ति सुन नहीं पा रहा है। जन-समूह और उस व्यक्ति के बीच में एक बाड़ है, जिसकी वजह से वह उस चर्चित विषय की जानकारी नहीं पा रहा है। मन ही वह बाड़ है। मन ही वह अवरोध है। उस बाड़ के पार छलांग लगाकर अथवा मन की सीमा को लाँघ कर ही जन-समूह के वार्तालाप को सुना जा सकता है। वह व्यक्ति, उस बाड़ को लाँघकर उस पार चला जाता है और बातचीत को सुन लेता है। स्थूल अर्थ में वह व्यक्ति भीड़ में मिलकर भीड़ का हिस्सा बन जाता है और भीड़ के इकट्ठा होने के कारण को भी जान लेता है। द्रष्टा दृश्य का अंश बन जाता है और समूह की दृष्टि से भी अवगत हो जाता है। इस प्रकार द्रष्टा, दृश्य और दृष्टि, तीनों मिलकर एक हो जाते हैं। समाधि में भी यही दशा हो जाती है। निश्चय ही समाधि की अवस्था में जो एकत्व घटित होता है वह वर्णनातीत है और हमारे दैनिक अनुभवों से बहुत ऊपर की अवस्था है।

वास्तव में समाधि की अवस्था में प्राप्त अनुभव अवर्णनीय हैं। हमारे दैनिक अनुभवों की पहुँच वहाँ तक नहीं है। समाधिस्थ व्यक्ति को देखकर यह नहीं जाना जा सकता कि उस अवस्था में वह क्या अनुभव कर रहा है। देखने वाले को यह भी लग सकता है कि वह मात्र सो रहा है या सोच रहा है। समाधि में जाने वाला व्यक्ति भी अपने अनुभवों की ऊँचाई के प्रति सजग नहीं होता। समाधि टूटने पर जब व्यक्ति सामान्य चेतना या कहा जाए सामान्य अचैतन्यता की अवस्था में लौटता है तो उसकी क्रियाओं पर विवेक और शांति की एक स्वस्थ आभा प्रकट होती है। एक बार भी समाधि का अनुभव पा लेने वाले व्यक्ति के विचार-व्यवहार में बहुत अन्तर आ जाता है। वह हर वस्तु को एक नये दृष्टिकोण से देखने लगता है।

धारणा से लेकर समाधि तक की स्थितियों को उपलब्धि की मात्रा के अनुसार अलग-अलग नाम दिया गया है। एक स्थिति में पूर्णता प्राप्त होने पर दूसरी स्थिति स्वत: आ जाती है। ये आसन, प्राणायाम जैसी प्रारम्भिक स्थितियों की तरह बिल्कुल अलग-अलग स्थितियाँ नहीं हैं। एक स्थिति से दूसरी स्थिति में अचानक नहीं जाया जाता। ध्यान में साधक की प्रगति स्वाभाविक एवं सहज होती है। इन्हीं परिस्थितियों में गुरु की आवश्यकता होती है, क्योंकि तब साधक की चेतना पूर्णत: अनुभवों से भरी होती है, तथा गुरु का मार्गदर्शन उसे लक्ष्य की ओर निर्बाध गति से आगे ले जा सकता है।

# 8

# योग के अन्य मार्ग और ध्यान

यह पहले ही कहा जा चुका है कि सभी प्रकार के योग-मार्गों का एक ही लक्ष्य है – 'ध्यान की प्राप्ति'। पाठक यह न समझें कि किसी एक योग-मार्ग का अनुसरण करने से अन्य मार्गों से अपने को विमुख करना पड़ेगा। यद्यपि योग के इन विभिन्न रूपों को योग के भिन्न-भिन्न मार्ग कहा गया है तथापि यहाँ पर यह कहना उचित है कि योग एक प्रधान मार्ग है और उसके विभिन्न रूप गलियाँ हैं जो चारों तरफ से आकर प्रधान मार्ग में मिलती हैं। इसकी तुलना रस्सी से भी की जा सकती है। जिस प्रकार कई लड़ियों को संग्रहीत करने से रस्सी बन जाती है, उसी प्रकार एक-दूसरे के साथ सामंजस्य स्थापित करते हुए योग की विभिन्न लड़ियों का अभ्यास करने से ध्यान की उपलब्धि होती है।

## भक्तियोग

भक्तियोग का सम्बन्ध भाव और भक्ति के साथ है। इसमें परम सत्ता के किसी रूप के प्रति आत्म-समर्पण होता है। भक्त अपनी भावना का आधार कृष्ण, राम, बुद्ध, ईसा, महावीर, मुहम्मद आदि दिव्य विभूतियों को बनाता है। गुरु या किसी पूज्य व्यक्ति के प्रति भी भक्ति का भाव उमड़ सकता है। मुख्य बात यह है कि अपने इष्ट के प्रति भक्त का इतना भावनात्मक लगाव होता है कि वह अपनी सारी भावनात्मक शक्तियों को, अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व को, परम चेतना के वैयक्तिक रूप की सेवा में लगा देता है। राजयोग या ज्ञानयोग की तरह वह उसके अवैयक्तिक रूप में अपना ध्यान नहीं लगाता है। यहाँ भक्त का प्रेम मूर्त्त आधार पर टिका हुआ होता है।

प्राय: सभी में कम या ज्यादा भाव और भक्ति की मात्रा अवश्य रहती है। यह मानव प्रकृति का एक विशेष गुण है। बहुत लोग इस भावना को दबा देते हैं; फलत: यह बीमारियों के रूप में प्रकट होती है। कुछ लोगों की भावनाएँ अनेक दिशाओं में प्रकट होती हैं और चारों तरफ बिखर जाती हैं, जिसके कारण वे प्रभावहीन हो जाती हैं। इससे मानसिक असन्तुलन भी उत्पन्न हो जाता है, क्योंकि बहुतेरी चीजें एक साथ उनकी भावनात्मक ऊर्जा का आधार नहीं बन सकतीं। इसी तरह से व्यक्ति अपनी भावना का वह आधार ढूँढ़ने में लगा रहता है, जिसके लिये वह अपनी सुध-बुध खो दे, जिसके प्रति वह अपनी सम्पूर्ण भावनाओं को आत्म-समर्पित कर सके। साधक की यह खोज आयुपर्यन्त चल सकती है। एक बार भक्ति के योग्य आधार प्राप्त हो जाय तो भावनात्मक समस्यायें समाप्त हो जाती हैं और हम एक पूर्ण जीवन बिताना शुरू कर देते हैं।

हम अपनी भक्ति का मुख्य आधार किस प्रकार ढूँढ़ें? वास्तव में भक्ति का आधार हमें खोजना नहीं पड़ता; यह स्वत: प्रकट हो जाता है। व्यक्ति सहज रूप से इस मार्ग पर अग्रसर होता है। यद्यपि भक्ति-भावना सबमें होती है पर यह कुछ कारणों से दबी रह सकती है। भक्ति का मार्ग सभी मार्गों से अनुपम है। इसे प्रयत्न से विकसित नहीं किया जा सकता। शक्तिशाली और व्याकुल करने वाली यह भक्ति हृदय में स्वत: उमड़ने लगती है। ऐसा बचपन के संस्कारों के कारण भी हो सकता है, किन्तु एक बात निश्चित है कि जैसे-जैसे हम योग के आधार पर जीवनयापन शुरू करते हैं, मानसिक विक्षेप कम होने लगते हैं और हमारी चेतना जीवन का एक सही दृष्टिकोण देखने लग जाती है। उस समय हमारे अन्दर स्वत: आराध्य देव का दर्शन होने लगता है।

भक्तियोग से ध्यान की अवस्था कैसे प्राप्त होती है? उत्तर है, भक्तियोग में ध्यान की सहज स्थिति पा लेना संभव है, क्योंकि भक्त की चेतना सदैव अपने इष्ट देव के प्रति सहजरूपेण उन्मुख रहती है। चित्त की एकाग्रता उसकी भक्ति-भावना की तीव्रता के ऊपर निर्भर रहती है। जो व्यक्ति सदा ही अपने इष्ट के चिन्तन में लगा रहता है, उसका मन अत्यन्त एकाग्र होता है। जीवन के उतार-चढ़ाव उसके मन को कम ही छू पाते हैं। आराध्य के प्रति मन को तल्लीन रखने वाले व्यक्ति का अहं समाप्त होने लगता है। लम्बे काल तक इस स्थिति में रहने के फलस्वरूप वह अपने आपको भूल जाता है। इस तरह उसके क्लेश और कामनाओं का अन्त होने लगता है। ध्यान के लिए यह आवश्यक

भी है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि ध्यान और भक्ति का आधार चंचलता पैदा करने वाला न हो।

आदर्श भक्ति ध्यान की उच्च स्थिति और आत्मसाक्षात्कार तक की योग्यता स्वत: प्राप्त कराने के लिए पर्याप्त होती है। साधक में पूर्ण एवं अखण्ड भक्ति हो तो उसके लिए राजयोग, कर्मयोग आदि के अभ्यास अनावश्यक हो जाते हैं। परन्तु बहुत कम ही व्यक्ति इस अवस्था तक पहुँच पाते हैं। हममें से बहुत लोग तो कुछ ही समय के लिए भक्तिभाव में लीन रह सकते हैं। उनकी आस्था भी समाप्त होने लगती है। तब ध्यान की स्थिति उनसे बहुत दूर हो जाती है। ऐसा होने पर अन्य पूरक योग मार्गों का सहारा लेना आवश्यक हो जाता है।

## भक्ति के विभिन्न चरण

यदि सहज रूप से मन में भक्तिभावना का उदय हो और मन निरहंकार हो जाय तो भक्तियोग परम शक्तिशाली साधन बन सकता है। जैसा ऊपर दर्शाया गया है, भक्ति भावना को अधिक तीव्रतापूर्वक अभिव्यक्त करने हेतु विशेष विधियाँ उपलब्ध हैं। सामान्यत: भक्ति का आलम्बन किसी-न-किसी रूप में ईश्वर का कोई पारम्परिक अवतार ही होता है। हालाँकि यह आवश्यक नहीं है कि भक्ति का आलम्बन सर्वदा कोई ईश्वरीय अवतार ही हो। थोड़ी देर के लिए हम यह मानकर चलें कि भक्ति का आलम्बन कोई साकार विग्रह अथवा ईश्वरीय अवतार ही होता है। ऐसा मानने से भक्ति के विविध रूपों की व्याख्या करने में सुविधा होगी। लौकिक भावना और संवेगों के उदात्तीकरण हेतु प्राय: सभी धर्मों द्वारा इन विधियों को उपयोग में लाया जाता है। ये विधियाँ हैं–

1. *श्रवण*– इसका सम्बन्ध श्रीमद्भागवत, बाइबिल, कुरान, आदि शास्त्रों के अध्ययन एवं ईश्वर की महिमा गान करने वाली कहानियों का श्रवण करने से है।
2. *नाम संकीर्तन*– इसमें परमेश्वर के पवित्र नाम का निरन्तर गायन होता है।
3. *स्मरण*– जप के द्वारा ईश्वर का निरन्तर स्मरण किया जाता है।
4. *वन्दना*– भगवद् प्रार्थना का नाम वन्दना है।
5. *अर्चना*– इसमें उपास्य देव की पूजा विधि-विधान (अनुष्ठान) से की जाती है। यह सभी धर्मों में किसी-न-किसी रूप में प्रचलित है।

भक्ति की उच्च अवस्था में भक्त अपने को भगवान का सेवक मानता है और उनकी इच्छा के प्रति अपने आपको समर्पित कर देता है। फिर भी यह प्रेम

अहं का स्वरूप है। भले ही अहं का यह प्रत्यारोपण आध्यात्मिक और परिशुद्ध हो। इसमें अहंकार का पूर्ण लोप नहीं होता। भक्त भगवान से प्रेम इसलिए करता है कि प्रेम-भावना उसमें जन्मजात है। इसी जन्मजात प्रेम-भावना से कोई भाई अपनी बहन से और कोई प्रेमी अपनी प्रेमिका से प्रेम करता है। यह दो व्यक्तियों के बीच के सम्बन्ध पर आधारित प्रेम है। इस प्रेम में उपासक और उपास्य के बीच कुछ भेद रह जाता है, कुछ दूरी रह जाती है। यदि भक्त या उपासक को आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करना है तो उसे भक्त और भगवान के बीच की इस कृत्रिम दूरी को मिटाना होगा। दोनों के बीच किसी प्रकार का अलगाव नहीं रहना चाहिए।

आत्मज्ञान हो जाने पर भक्त अपने अंतरतम की गहराई से यह कहने योग्य हो जाता है, *'अहं ब्रह्मास्मि'* (मैं ब्रह्म हूँ) तथा उसके इस कथन में अनुभव की गहराई होती है। वह ईसामसीह की तरह 'मैं और मेरे पिता एक ही हैं' कह सकने की स्थिति में आ जाता है। भक्ति के माध्यम से भक्त चरम लक्ष्य की देहरी तक पहुँच जाता है। अपने अन्तिम लक्ष्य को पाने के लिए उसे यह देहरी भी लाँघनी पड़ती है। इस स्थिति में भक्त अपने प्रेम का विस्तार इतना अधिक कर लेता है कि उसमें द्वैत नहीं रह जाता। इस आत्मीयता में वह स्वयं प्रेममय ही बन जाता है। इस बिन्दु पर वह एक राजयोगी या ज्ञानयोगी की भाँति ही वह परम दिव्यतापूर्ण स्थिति को प्राप्त करता है। प्रेम का यह पथ उसे परम ज्ञान तक पहुँचा देता है।

जिन आध्यात्मिक जिज्ञासुओं का उद्देश्य ध्यान के अनुभवों को प्राप्त करना है, वे समझ लें कि भक्ति इसका सबसे सशक्त साधन है। भक्ति मन को वह शक्ति प्रदान करती है जिससे ध्यान स्वत: प्रतिष्ठित हो जाता है। जिन्हें अपने इष्ट की जानकारी नहीं है वे योग करते हुए तब तक प्रतीक्षा करें जब तक वह स्वत: प्रकट नहीं हो जाता, क्योंकि वह एक दिन अवश्य प्रकट होगा, शायद तब जब आपको उसके प्रकटीकरण की तनिक भी आशा न हो।

## कर्मयोग

कर्मयोग सिर्फ कर्म करना ही नहीं है। यह है फल की आशा से रहित, पूर्ण चेतना-युक्त कर्म-सम्पादन। अच्छी तरह से सम्पन्न किया गया कार्य ही कार्य की पूर्णता है, न कि अन्त में मिलने वाला पारिश्रमिक या पुरस्कार। यह निष्काम कर्म है। इसमें व्यक्ति अपना अहं त्याग कर कार्य करता है और कार्य

का माध्यम, एक उपकरण मात्र बनकर रहता है। प्रारम्भ में कर्मयोगी सिर्फ कर्म ही करता है। यद्यपि यह बात ठीक है कि व्यक्ति अपने अहं को पोषित करने के लिये चेतन या अचेतन रूप से अपने कार्य के लिए और कुछ नहीं तो कम-से-कम प्रशंसा के दो शब्द तो सुनना ही चाहता है; परन्तु निरन्तर अपने को कार्य में तल्लीन रखकर मानसिक प्रयत्नों द्वारा धीरे-धीरे अपनी चेतना को अहं से मुक्त किया जा सकता है।

कर्मयोग में, व्यक्ति जिस व्यक्त जगत् में रहता है, वहाँ अपने आपको परम चेतना का एक सुन्दर उपकरण बनाना चाहता है। इस पूर्णता में साधक का व्यक्तिगत मनमौजी स्वभाव और अहं बाधा पहुँचाते हैं। जब व्यक्ति अपने कर्त्तापन के अभिमान का त्याग कर देता है और खुद को निमित्त मात्र समझने लगता है तब उसके द्वारा किया गया कृत्य कर्मयोग बन जाता है। उसके कर्म में आध्यात्मिकता की सुगंध भर जाती है। तब व्यक्ति अपने कार्यों में प्रवीण हो जाता है। व्यक्ति हर परिस्थिति में अपने भीतर समत्व प्राप्त कर लेता है। जब वह उपकरण मात्र रह जायेगा, तो फिर उसके मन में क्षोभ कैसे पैदा होगा? कामना और अहंमन्यता के वशीभूत होकर ही व्यक्ति अन्य लोगों के प्रति आक्रोश और क्षोभ व्यक्त करता है।

बीसवीं सदी में महात्मा गाँधी कर्मयोग के सर्वोत्कृष्ट उदाहरण हैं, जिनका जीवन कर्मयोग के समस्त आदर्शों के अनुरूप था। वे आजीवन कर्मरत रहे, पर राग-द्वेष और व्यक्तिगत कुण्ठाओं से ग्रस्त नहीं हुए। ईश्वरीय विधान के अन्तर्गत परम चेतना के आह्वान् पर उनके समस्त कार्यकलाप संचालित हुआ करते थे। वे ईश्वर द्वारा रचित महानाट्य के पात्र की तरह अपनी भूमिका निभाते थे। वे निमित्त मात्र थे और साक्षी भाव से सब कुछ किया करते थे। अपने कृत्यों के समस्त फल उन्होंने मानवता और ईश्वर की सेवा में अर्पित कर दिये।

कर्मयोग का ध्यान के साथ क्या सम्बन्ध है? कर्मयोग अहं से पीछा छुड़ाने का सबसे बड़ा और सशक्त साधन है। इच्छा-अनिच्छा, रुचि-अरुचि व मानसिक तनाव अपने आप समाप्त होने लगते हैं। ये सब ध्यान की बाधायें ही तो हैं। इनका कम हो जाना ध्यान की उच्च स्थिति तक पहुँचने में सहायक होता है। बेकार बैठने से या एकान्तवास करने से मानसिक समस्यायें नहीं सुलझतीं। वे मन के एक कोने में दबी रह जाती हैं। कर्मयोग की क्रियाशीलता आन्तरिक द्वन्द्वों को उभार देती है। कर्मयोग के दौरान लोगों के साथ स्थापित पारस्परिक सम्बन्ध से व्यक्तित्व जनित समस्याएँ उभर कर सतह पर आती हैं। समस्याओं

की पहचान हो जाने पर आत्म-विश्लेषी सजगता और आत्म-सुझाव द्वारा उनको निर्मूल करने हेतु कारगर कदम उठाए जा सकते हैं।

कर्मयोग का निरंतर अभ्यास एकाग्रता की क्षमता को बढ़ाता है। सभी योग मार्गों में एकाग्रता ही पहली शर्त है। अत: कर्मयोग में एकाग्रता का विकास स्वभावत: ध्यान की ओर ले जता है। राजयोग और कुण्डलिनी योग में भी एकाग्रता को बहुत महत्त्व दिया गया है। कर्मयोग की उच्च अवस्था ध्यान का रूप ले लेती है। कर्त्ता, कार्य और कार्य से प्रभावित होने वाले व्यक्ति या पदार्थ तीनों एक हो जाते हैं। इस स्थिति में कर्मयोगी सचमुच ध्यानस्थ हो जाता है।

कर्मयोग में इच्छाशक्ति का विकास होता है, जिस पर लोग प्राय: ध्यान नहीं देते। इच्छाशक्ति को महत्त्व नहीं देने की भूल बहुत लोग कर बैठते हैं। संक्षेप में, इच्छाशक्ति व्यक्ति की क्षमताओं और कर्मों को एक निश्चित लक्ष्य तक पहुँचाने में सहायक होती है। कर्मयोग में व्यक्ति पूरी दक्षता से काम करना चाहता है। इससे उसकी इच्छाशक्ति बलवती होती है। इच्छाशक्ति के द्वारा ही व्यक्ति अपने वास्तविक स्वभाव का परिचय पाता और देता है। अपनी इच्छाशक्ति को अभिव्यक्त करने की क्षमता ही उसके व्यक्तिगत अस्तित्व का प्रमाण है। जितना ही उसकी इच्छाशक्ति उसकी प्रकृति के साथ समस्वर होती जायेगी, उतना ही वह अपनी आत्मा के निकट होता जायेगा।

भगवद् गीता के निम्नलिखित उद्धरण द्वारा कर्मयोग का सार-संक्षेप प्रस्तुत किया जा सकता है। 'संसार के लोग अपने ही कर्मों से आबद्ध रहते हैं, जब तुम प्रत्येक कर्म ईश्वरार्पित भाव से और फल के प्रति आसक्ति से अपने को मुक्त करके करते हो तब तुम्हें कर्म नहीं बाँधते।'

## तान्त्रिक कुण्डलिनी योग

कुण्डलिनी योग में चक्रों के जागरण की विधि बतलायी गई है। इन चक्रों के कार्यों को समझने के पूर्व पाठकों को याद रखना होगा कि मनुष्य का मन अत्यन्त सूक्ष्म स्तरों का बना हुआ है। इन स्तरों की ऊँचाई जैसे-जैसे बढ़ती जाती है, चेतना सत्य के अत्यधिक निकट आती जाती है। मन का प्रत्येक स्तर एक चक्र से सम्बन्धित है। चक्र मनुष्य के आन्तरिक अतीन्द्रिय शरीर में स्थित है। कुछ का सम्बन्ध सामान्य मन से है और कुछ का उस उच्चतर मन से है जो ज्यादा चैतन्य है। कुछ ऐसे भी चक्र हैं जो मनुष्य की पाशविक चेतना से सम्बन्धित हैं। पर कुछ ऐसे चक्र हैं जो हमारी चेतना को सांसारिक स्तर से ऊपर ले जाने

में सहायक होते हैं। कुण्डलिनी योग का सम्बन्ध उन चक्रों से है जो चेतना को उच्च स्तरों की तरफ ले जाने में सहायक हैं। कुण्डलिनी योग का मुख्य उद्देश्य है, साधक की सजगता को मन के इन उच्चतर केन्द्रों (चक्रों) पर ले जाना और छुपी हुई उन सूक्ष्म शक्तियों को जाग्रत करना, जो उन चक्रों से सम्बन्धित हैं। इन चक्रों का जागरण अस्वाभाविक बात नहीं है। हम इन चक्रों से सम्बद्ध मन के विभिन्न आयामों के प्रभाव में स्वाभाविक रूप से रहते हैं।

हममें से अधिकतर लोग अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अन्य व्यक्तियों की सेवा लेने में अपना समय लगा देते हैं। यह बात कुछ लोगों में बहुत ज्यादा, कुछ में न्यून और कुछ में बिल्कुल नहीं पायी जाती है। ऐसा इसलिये होता है कि उन पर उनके नाभि केन्द्र के मणिपुर चक्र का ज्यादा प्रभाव रहता है। कुछ लोग मानव-प्रेम से भर उठते हैं, कुछ लोगों में यह प्रेम-भाव यदाकदा ही पाया जाता है और कुछ लोग सदैव इसी प्रेममय स्थिति में स्थित रहते हैं। ये भाव हृदय-केन्द्र के अनाहत चक्र से नियंत्रित होते हैं। जब हम 'बहुजन हिताय' के भाव से भरे हों तब समझना चाहिये कि हमारा अनाहत चक्र कार्यरत है तथा मन पर उसका पूरा प्रभाव पड़ रहा है।

कुण्डलिनी योग का लक्ष्य है, उच्चतर चक्रों की क्रिया को इस प्रकार नियंत्रित करना कि वे उद्दीपित तथा जाग्रत हों और व्यक्ति मन के उच्चतर स्तरों का अनुभव प्राप्त कर सके। कुण्डलिनी योग में चक्रों को जगाने की मूल विधि है– उन चक्रों पर चित्त एकाग्र करना और उनके जागरण के लिए संकल्पबद्ध होना। आसन, प्राणायाम, मुद्रा, बंध और मंत्र-जप की विधियों से भी इन चक्रों को जगाने में सहायता मिलती है। वास्तव में योग की सभी विधियों द्वारा अन्त:चक्रों का जागरण ही होता है। साधक का मन जब उच्चतर चेतना के क्षेत्रों में आरोहण करता है, तो ये चक्र स्वत: जाग्रत होने लगते हैं। योग के अन्य मार्गों में धीरे-धीरे प्रगति होती है और मन के मैल धुलते जाते हैं। कुण्डलिनी योग में चक्रों के अपरिपक्व जागरण से जो अवांछनीय अनुभव होते हैं (और जो गुरु के मार्ग-निर्देशन के अभाव में हानिकारक सिद्ध होते हैं), वे इन मार्गों में नहीं हुआ करते।

## हठयोग

हठयोग का सम्बन्ध मुख्यत: शरीर शुद्धि से है। इससे मन शान्त होता है और शरीर नियंत्रित होता है। हठयोग में परम्परागत छ: विधियाँ प्रचलित हैं, जिन्हें षट्कर्म की संज्ञा दी गयी है। ये इस प्रकार हैं–

1. *नेति* – नासिका-शोधन की विधियाँ
2. *धौति* – आहार-नाल की सफाई की विधियाँ
3. *नौलि* – उदरीय पेशियों की मालिश की विधि
4. *बस्ति* – आँत-शोधन की विधियाँ
5. *कपालभाति* – मस्तिष्क के अग्र-भाग के परिशोधन की विधि
6. *त्राटक* – एकाग्रता-शक्ति को विकसित करने की विधि

तकनीकी तौर पर आसन, प्राणायाम, मुद्रा और बन्ध भी एक दृष्टि से हठयोग के अन्तर्गत आते हैं। शास्त्रों में उनकी चर्चा भी है। राजयोग के आसनों की तुलना में हठयोग के आसनों की संख्या बहुत अधिक है। इनमें ऐसे बहुतेरे आसन हैं जो संपूर्ण मन और शरीर-संस्थान पर प्रभाव डालते हैं। शरीर की विभिन्न व्यवस्थाओं को नियंत्रित करते हुए चेतना की उच्च स्थिति में मन को स्थापित कर देना ही हठयोग का उद्देश्य है। स्नायु संस्थान के तनिक भी उत्तेजित होने पर उसका प्रभाव मन पर पड़ता है, क्योंकि शरीर की सभी नाड़ियों का सम्बन्ध प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मस्तिष्क से है। हठयोग के अभ्यास से हमारे शरीर में अनुकम्पी और परानुकम्पी स्नायु संस्थान के बीच संतुलन स्थापित होता है। इसका प्रभाव लगभग शरीर के सभी अंगों पर पड़ता है। ये दोनों संस्थान शरीर के विभिन्न अंगों, जैसे – फेफड़े, हृदय तथा पाचनक्रिया के अंगों से सम्बन्धित हैं।

ये एक-दूसरे के विपरीत कार्य करते हैं। अत: शरीर के विभिन्न अंगों के कार्य इन दोनों के आपसी समझौते से ही हो सकते हैं। एक ओर अनुकम्पी स्नायु संस्थान शरीर को बाह्य क्रियाओं के लिए तैयार करता है, तो दूसरी ओर परानुकम्पी स्नायु संस्थान व्यक्ति को अन्तर्मुखी चिन्तन की ओर ले जाता है। इन दोनों का आधिक्य ध्यान में बाधक है। अधिक सोचने वाले व्यक्ति के लिए ध्यान संभव नहीं है। यदि किसी व्यक्ति की चेतना केवल बहिर्मुखी है, तो उसके लिए भी ध्यान असम्भव है। आदर्श स्थिति है, दोनों का संतुलन। हठयोग से यह संतुलन संभव है। यह एक उदाहरण है, हठयोग से अन्य अनेक प्रभाव पड़ते हैं।

हठ शब्द में 'ह' का अर्थ 'पिंगला नाड़ी' या सूर्य और 'ठ' का अर्थ है 'इड़ा नाड़ी' या चंद्रमा। दाहिनी नासिका सूर्य मार्ग है और बायीं नासिका है चन्द्र मार्ग। प्राणिक शरीर में भौतिक शरीर की अपेक्षा सूक्ष्मतर प्राणशक्ति होती है। इसमें अनेकानेक अतीन्द्रिय मार्ग या नाड़ियाँ हैं, जिनके द्वारा प्राणशक्ति का

प्रवाह निश्चित मार्गों से होता रहता है। यह क्रिया रक्तप्रवाह से मिलती-जुलती है। ये दोनों नाड़ियाँ, इड़ा और पिंगला, मूलाधार से आज्ञा चक्र तक जुड़ी हुई हैं और बीच के हर चक्र के अगल-बगल से होती हुई और एक-दूसरे को काटती हुई ऊपर की ओर बढ़ती हैं।

मूलाधार से आज्ञा चक्र तक सीधी जाने वाली सुषुम्ना नाड़ी सबसे महत्त्वपूर्ण है। जब कुण्डलिनी शक्ति का जागरण होता है तब उसका प्रवाह इसी मार्ग से होता है। यह देखा जाता है कि जब इड़ा और पिंगला नाड़ी समान रूप से प्रवाहित होने लगती हैं तब कुण्डलिनी शक्ति स्वत: जाग उठती है। हठयोग, जैसा नाम से ज्ञात होता है, इड़ा और पिंगला, इन दो नाड़ियों से ही सम्बन्ध रखता है। इसका लक्ष्य है, दोनों नाड़ियों में प्राण-प्रवाह को संतुलित करना। इस प्रकार कुण्डलिनी सक्रिय होकर चक्रों को उद्दीप्त करने लग जाती है और इससे ध्यान स्वत: घटित होने लग जाता है।

मन के विभिन्न सूक्ष्म से सूक्ष्मतर तलों पर स्थित मध्यवर्ती चक्रों को हठयोग की कई क्रियाएँ सीधे तौर पर उत्तेजित करने का प्रयत्न करती हैं। चक्रों के निम्नतम प्रकट रूप शरीर के विभिन्न भौतिक अंगों से जुड़े हुए हैं। हठयोग में इन अंगों को स्वच्छ कर, इन्हें अधिक स्वस्थ बनाकर उद्दीप्त करने की चेष्टा की जाती है ताकि चक्रों का जागरण सुगमतापूर्वक हो सके। उदाहरण के लिए, कपालभाति द्वारा मस्तिष्क के अग्रभाग की शुद्धि होती है और नेति के अभ्यास से नासिका के ऊपर मस्तिष्क के विशेष भाग में स्थित तन्त्रिकाओं को उत्तेजित किया जाता है। यह आज्ञा-चक्र को उद्दीप्त करने का प्रमुख केन्द्र माना जाता है। धौति की क्रियाओं से आहार-नली की पूरी सफाई हो जाती है और इससे वक्षीय-प्रदेश की तन्त्रिकाओं का उद्दीपन होता है, जिससे अनाहत चक्र प्रभावित होता है। इसी प्रकार, नौलि क्रिया से उदरीय प्रदेश की मालिश हो जाती है और इससे मणिपुर चक्र प्रभावित होता है। ये चक्र मन के विभिन्न तलों से सीधे तौर पर जुड़े हैं। इनका जागरण होने से ध्यान सहज रूप से घटित होता है।

हम कह सकते हैं कि हठयोग समझता है कि यह शरीर आत्मा का मंदिर है और इस हेतु शरीर को स्वस्थ रखना चाहिए। हठयोग से कई रोग और शारीरिक व्याधियाँ दूर हो जाती हैं। रोग और व्याधियाँ ध्यान-मार्ग में बड़े कठिन बाधक तत्त्व हैं। स्पष्टत: जब शरीर में दर्द या कष्ट हो तो उसे भूलकर कोई कैसे ध्यान में बैठ सकता है, और मन को शान्त कर सकता है? जिनका

शारीरिक स्वास्थ्य ठीक हो उनके लिए ध्यान बड़ा सरल है। यदि आपको मधुमेह, उच्च रक्त-चाप, कब्ज आदि हों तो आपको आसन, प्राणायाम, आदि अभ्यासों को सम्मिलित करते हुए हठयोग के अभ्यास के साथ अपना कार्यक्रम प्रारम्भ करने की सलाह दी जाती है। इन अभ्यासों की उपादेयता सुन्दर स्वास्थ्य के लिए ही नहीं है, ये ध्यान के पथ पर आरूढ़ होने के प्रथम सोपान भी हैं।

हठयोग का छठा अभ्यास त्राटक क्रिया है, जिसे प्राय: हठयोग के क्षेत्र से बाहर माना जाता है। कारण यह है कि हठयोग के अन्य अभ्यासों में शारीरिक क्रिया की आवश्यकता होती है और उन सबका सीधा सम्बन्ध शरीर-शुद्धि से है। इसके विपरीत त्राटक क्रिया में किसी आन्तरिक या बाह्य पदार्थ पर दृष्टि टिकाकर एकाग्रता-शक्ति का विकास किया जाता है। फिर भी, यदि हम इस बात का ख्याल रखें कि हठयोग, राजयोग के शिखर पर आरोहण के लिए प्रारम्भिक सोपान है तो हठयोग में त्राटक को सम्मिलित करना अप्रासंगिक नहीं है। ध्यान में उतरने के पूर्व एकाग्रता प्राप्त करना अत्यन्त आवश्यक है और जब तक एकाग्रता प्राप्त न हो तब तक ध्यान की गहराई में प्रवेश संभव नहीं है। हठयोग, कुण्डलिनी योग की भी पूर्व पीठिका तैयार करता है। इससे चक्रों को उद्दीपन और पोषण प्राप्त होता है, जिन्हें बाद में कुण्डलिनी योग की क्रियाओं द्वारा जाग्रत किया जाता है।

संक्षेप में, हम यही कह सकते हैं कि हठयोग स्वयं ध्यान की अवस्थाओं में प्रवेश नहीं कराता है; फिर भी यह अत्यन्त उपयोगी है और योग की अन्य विद्याओं से ध्यान की अवस्था में प्रवेश हो जाने पर साधक को अग्र सोपानों पर आरूढ़ कराने के लिए इसका उपयोग सामान्यत: किया जाता है।

### मन्त्र योग

मंत्र योग में कुछ मंत्रों का उच्चारण या मानसिक जप किया जाता है। ये मात्र ध्वनियाँ नहीं हैं। इन्हें प्राचीनकाल के ऋषि-मुनियों ने ध्यान की गहरी अवस्था में अनुभव किया था। इन्हें ही 'मंत्र' कहा गया। ये परम्परागत रूप से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को प्राप्त हुए।

योगाभ्यास की प्रारम्भिक अवस्था में साधकों को अपने गुरु द्वारा प्राप्त मंत्र का पूर्ण सतर्कता और एकाग्रता के साथ अभ्यास करना चाहिये। मंत्र अभ्यास में यह सतर्कता और एकाग्रता दूसरे अन्य विचारों को रोकती है। जब मंत्र योग

का अभ्यास साधक के द्वारा पूर्ण समर्पण भाव से होता है तब उसका जप सहज ही बिना किसी प्रयत्न के अपने आप होने लगता है। इस तरह पूर्ण समर्पण-भाव से किये गये जप में प्रयास की आवश्यकता नहीं होती। मंत्र मन में गूँजने लगता है और व्यक्ति के भीतर अपना स्थान बना लेता है। यह श्वास के साथ सहज ही उच्चारित होने लगता है। ध्यान की अवस्था प्राप्त करने के लिए यह एक शक्तिशाली उपाय है, क्योंकि इसमें मानसिक शांति के साथ-साथ चित्त की एकाग्रता बढ़ती है। सामान्य लौकिक चेतना और पराचेतना के बीच मंत्र एक मार्ग बन जाता है।

एकाक्षरी मंत्र ॐ सर्वविदित ही है। इसे मूल नाद कहा जाता है। ऐसा माना जाता है कि सभी शब्द इसी से प्रसूत हुए हैं। ईसाई और इस्लाम धर्मों में 'आमेन' और 'आमीन' इसी से निकले हैं। मिस्त्र में परमेश्वर के लिये 'आमोन' शब्द आया है। इसी कारण मिस्त्र के फराव राजाओं के नामों में 'आमोन्' शब्द जुड़ा रहता था; जैसे तूतनकामोन्, अमेनहोतेप आदि। हिन्दू धर्म में राम, ॐ नमः शिवाय, ॐ शान्ति आदि महत्त्वपूर्ण मंत्र हैं, जिनका एकाग्रता तथा भक्तिभाव से जप करने से अनुभवातीत तत्त्व की स्थिति प्राप्त होती है।

## तन्त्र योग

तंत्र एक प्राचीन विद्या है। योग के साथ इसका निकट का सम्बन्ध है, बल्कि योग को तन्त्र की ही एक उपशाखा माना गया है। प्राचीन तन्त्रशास्त्रों में आसन, प्राणायाम, त्राटक, योग निद्रा और क्रिया योग आदि विषयों का वर्णन् है। ये तन्त्र शास्त्र उपनिषदों और योग सूत्रों से कई शताब्दी पूर्व के हैं। इसलिए हम कह सकते हैं कि महान् योग गुरु, गुरु गोरखनाथ और ऋषि मत्स्येन्द्रनाथ ने वास्तव में उपनिषदों के दर्शन को तांत्रिक अभ्यासों के साथ समेकित कर योग शास्त्र का निर्माण किया था। आज वही योग पद्धति हमारे बीच उपलब्ध है।

योग और तन्त्र का व्यावहारिक उद्देश्य एक ही है। वह उद्देश्य यह है कि जिस संसार में हम रहते हैं उससे परे जाना है। दोनों ही में साधक ध्यान के अनुभव प्राप्त करता है। फिर भी इनकी पद्धतियाँ एक-दूसरे से भिन्न दिखाई देती हैं। उदाहरणत: बहुत से वेदान्तिक सिद्धान्तों पर आधारित योग के सिद्धान्त इस बात पर जोर देते हैं कि कामशक्ति का उदात्तीकरण आध्यात्मिक शक्ति में हो जाना चाहिए। योग शास्त्रों में कामशक्ति का दमन करने की

बात नहीं कही गयी। अपनी कामशक्ति को अधिकाधिक नियंत्रण में रखना चाहिए। इससे शक्ति का क्षय कम होगा और इस शक्ति को उदात्त बनाकर हम इन्द्रियातीत अनुभवों की प्राप्ति हेतु व्यय कर सकेंगे, साथ ही कामवासना को दमन का शिकार न बनाकर कामेच्छा के प्रति अपनी गहरी आसक्ति में कमी ला सकेंगे।

फ्रायड ने बतलाया कि मनुष्य के लिए दो चीजें समस्त क्रियाओं की प्रेरणा स्रोत हैं – काम भावना और आत्म-सुरक्षा की भावना। ये बातें सरल ढंग से कही गई हैं। परन्तु इससे पता चलता है कि हमलोग अपना कितना समय काम-चिन्तन या काम-क्रिया में खर्च करते हैं। योगी लोग कहा करते हैं कि इस समय को आध्यात्मिक अनुभवों को प्राप्त करने के लिए उपयोग में लाया जा सकता है। यौगिक दृष्टिकोण यह है कि कामक्रिया एक इन्द्रियातीत अनुभव है, यद्यपि यह अनुभव ध्यान के उच्चतर अनुभवों की बराबरी नहीं कर सकता। यदि आप काम-क्रिया को छोड़ देते हैं तो आप अपेक्षाकृत अत्यन्त उच्चस्तरीय आध्यात्मिक अनुभव तथा परमानन्द की प्राप्ति कर सकते हैं। सांसारिक दृष्टिकोण से काम एक आवश्यक अंग माना गया है, परन्तु आध्यात्मिक विकास के साथ इसका विरोध है।

इस सम्बन्ध में तंत्र की क्या दृष्टि है? वह ठीक इसके विपरीत दृष्टि रखता है। उसका कथन है कि कामसुख से प्राप्त इन्द्रियातीत अनुभव का उपयोग आध्यात्मिक जागरण के लिए किया जाना चाहिए। क्या इसका यह अर्थ निकाला जाय कि कोई एक पद्धति गलत है? नहीं, बिल्कुल नहीं! इसका मतलब यह है कि इन्द्रियातीत अनुभव की समस्या को दोनों पद्धतियाँ भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों से देखती हैं। दोनों का लक्ष्य तो एक ही है, पर दोनों द्वारा अपनायी गयी मौलिक विधियाँ भिन्न-भिन्न हैं। तंत्र विधि का उपयोग उन लोगों द्वारा किया जाना चाहिए जो अपनी प्रकृति के वशीभूत होकर काम-सुख का परित्याग नहीं कर सकते हैं अथवा पारिवारिक बंधन के कारण यौन-सम्बन्ध का त्याग नहीं कर सकते। तंत्र का कथन है कि कामभावना का दमन न करें, बल्कि कामशक्ति का उपयोग पारलौकिक अनुभवों के लिए करें। कामसुख के लिए काम-कृत्य में लिप्त न हों, आध्यात्मिक शिखर पर आरोहण के लिए उसका उपयोग करें। काम-कृत्य के समय अपनी घनीभूत चेतना के प्रति सजग रहें और इसका उपयोग उच्चतर चेतना के विकास के लिए करें। तांत्रिक काम-कृत्य और तांत्रिक क्रियाओं के माध्यम से साधक का आध्यात्मिक विकास

होगा और उसके फलस्वरूप स्वाभाविक रूप से कामेच्छा में उसकी अभिरुचि समाप्त हो जाएगी। निश्चय ही काम क्रीड़ा मन के विक्षेप को बंद नहीं कर पाएगी, किन्तु जब कामोद्दीपन तीव्र हो तो उसे दबाकर मारने की बजाय आध्यात्मिक कार्यों में नियोजित करना चाहिए।

ऐसा नहीं समझना चाहिए कि तंत्र में अविवेकपूर्ण यौन क्रियाओं को प्रोत्साहित किया गया है। इसमें यौन क्रिया के विशेष नियम बताये गए हैं, जिनसे काम ऊर्जा का अधिक-से-अधिक सदुपयोग किया जा सके। उदाहरणार्थ, तांत्रिक मैथुन में बिना कामोत्ताप के संभोग करने की बात की गई है। इसके लिए सबसे दृढ़ इच्छाशक्ति और स्नायविक नियन्त्रण की आवश्यकता है। इस प्रकार की तंत्र साधना करने वाले साधक को किसी अनुभवी गुरु के निर्देशन में साधना करनी चाहिए।

## सारांश

योग के और भी कई प्रकार हैं; किन्तु वे सभी उन्हीं पद्धतियों के रूपान्तर हैं जिनकी चर्चा हम ऊपर कर आए हैं। उदाहरण के लिए, ज्ञान योग को ध्यान की गहनतर अवस्थाओं में प्रवेश के लिए साधन के रूप में उपयोग में लाया जाता है, जिसकी परिणति समाधि में होती है। इसमें तर्क-वितर्क और नीर-क्षीर विवेक का सहारा लिया जाता है और सत्य एवं असत्य के बीच के भेद को समझने की चेष्टा की जाती है। यह राजयोग के बहुत निकट है। अन्तर सिर्फ यह है कि इसमें राजयोग के प्रारम्भिक चरण, यथा – यम, नियम, आसन और प्राणायाम को उपयोग में नहीं लाया जाता है। राजयोग में इनका उपयोग मन को शान्त करने के लिए किया जाता है। ज्ञानयोग में मन को शान्त करने के लिए विवेक-बुद्धि का उपयोग किया जाता है।

समस्त धर्मों का अनुसरण करने वाले यह जानते हों या नहीं, सभी का लक्ष्य ध्यान अथवा इन्द्रियातीत अनुभव को प्राप्त करना है। इस विषय पर विस्तृत चर्चा तो नहीं करेंगे, लेकिन कुछ उदाहरणों द्वारा संक्षेप में इस पर प्रकाश डालेंगे। ईसाई, इस्लाम और यहूदी धर्म मूलत: भक्ति-प्रधान धर्म हैं, जिनका लक्ष्य ईश्वर के किसी सगुण-रूप के साथ एकात्म स्थापित करना है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु प्रार्थना, स्तवन, स्तुति, चिन्तन-मनन और कर्म-काण्डों का उपयोग किया जाता है। इन साधनों के सहारे मन को स्वच्छ कर एकाग्रचित्त होकर इन्द्रियातीत अनुभव प्राप्त किये जाते हैं।

बौद्ध धर्म में राजयोग तथा ज्ञानयोग की बातें हैं। इसमें सतर्कता तथा द्रष्टा-भाव पर बल दिया गया है तथा प्रत्येक कार्य और विचार को साक्षी रूप में देखने की बात कही गयी है। योग को दार्शनिक पृष्ठभूमि प्रदान करने वाले सांख्य में भी यही बात कही गई है। हमारे अधिकतर कार्य सहज तथा स्वाभाविक होते हैं। हमें केवल उनके प्रति सचेत रहना है। लगातार उन्हीं के प्रति सजग रहना है। तब हमारी चेतना नई सम्भावनाओं के क्षेत्र में प्रवेश करेगी। तब अपनी समस्याओं, राग-द्वेष, भय आदि की तरफ हमारा ध्यान कम जाएगा। तब वे स्वत: समाप्त हो जायेंगी या उनकी भूमिका नगण्य हो जायेगी। तब हम प्रत्येक क्षण ध्यान की स्थिति में रह सकेंगे।

हिन्दू धर्म कोई एक धर्म नहीं है। इसमें सभी प्रकार के धर्म और योग सम्मिलित हैं। यह धर्मों का संघ है। हिन्दू धर्म के समस्त साधना-पथ ध्यान की अवस्थाओं में प्रवेश का मार्ग प्रशस्त करते हैं। इस विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि सभी धर्मों का सामान्य लक्ष्य ध्यान की गहराई में प्रवेश कराकर अंतत: आत्म-साक्षात्कार तक पहुँचाना है। उन धर्मों का लक्ष्य भी यही है जिनका उल्लेख ऊपर की विवेचना में नहीं किया गया है।

# ध्यान के लिए तैयारी

# 9

# सामान्य निर्देश एवं सुझाव

ध्यान की स्थिति प्राप्त करने के लिए उसकी तैयारी का महत्त्व कम नहीं है। बहुत कम लोग ऐसे हैं जिनको बैठते ही ध्यान लग जाता है और इने-गिने ही लोग होंगे जो हर स्थिति में ध्यानस्थ रहते हैं, किन्तु सामान्य रूप से प्रायः सभी लोगों को ध्यान करने के लिए कुछ तैयारियाँ करनी पड़ती हैं। प्रारम्भिक तैयारियों के बिना ध्यान शुरू करने से अनेक बाधाएँ उपस्थित हो जाती हैं। इसलिये यहाँ साधकों को आवश्यक तैयारी के कुछ निर्देश दिये जा रहे हैं। जैसे-जैसे वे प्रगति करते जायेंगे, आगे के लिए आवश्यक तैयारियाँ वे स्वतः कर लेंगे। निम्नलिखित निर्देश प्रायः सभी लोगों का मार्गदर्शन करेंगे–

### मन को शान्त करना

कभी तो बैठते ही मन ध्यानस्थ हो जाता है, परन्तु अधिकतर वह जंगली हाथी की तरह मतवाला होकर इधर-उधर डोलने लगता है। ऐसी स्थिति में आत्मसुझाव भी काम नहीं करते। ऐसी भटकने वाली प्रवृत्ति से मन को उबारने के लिये अति उत्तम उपाय है, जब तक बन पड़े 'ॐ' मंत्र का सस्वर उच्चारण। यह मन्त्रोच्चारण हृदय से होना चाहिये, न कि केवल मुँह से। इसके साथ भाव की तीव्रता भी होनी चाहिये। अपने अहं को मन्त्रोच्चारण की ध्वनि के इस अनुभव में विलीन कर दें। शरीर तथा मन में इसके स्पन्दनों का अनुभव करें। यदि इससे भी मन शान्त नहीं होता तो इस हेतु अन्य कोई विकल्प नहीं है। ॐ का उच्चारण मन को शान्त करने के लिए ब्रह्मास्त्र के समान है।

## नियमितता एवं निष्ठा

ध्यान में प्रथम बार बैठते ही अनुभूतियाँ होंगी, ऐसी आशा न करें। आप धैर्य के साथ निरन्तर अभ्यास करते जाइये। कभी-कभी तो ऐसा भी लग सकता है कि ध्यान नहीं हो रहा है, बल्कि समय की बरबादी हो रही है, या ध्यान एक कपोल कल्पना मात्र है। निष्ठा और लगन बनी रहेगी तो इन्द्रियातीत अनुभूतियाँ अवश्य प्राप्त होंगी। अंतिम लक्ष्य है कि ध्यान सहज और सतत् आनन्द-प्रवाह बन जाय। इस प्रकार आपका सम्पूर्ण जीवन ध्यान जनित अनुभूतियों से सराबोर हो जायेगा। एक विशेष स्थान पर, किसी विशेष समय पर प्रतिदिन ध्यान के लिए बैठने पर यह चरमोत्कर्ष होगा।

## ध्यान के लिए उपयुक्त स्थान

जब आप ध्यान करने के लिए निश्चित स्थान का चुनाव कर लें तो प्रतिदिन उसी स्थान पर ध्यान का नियमित अभ्यास करें। यह स्थान शांत और स्वच्छ होना चाहिए। कमरा हवादार हो, पर तेज हवा का झोंका न हो। पंखे के नीचे न बैठें। सूखा स्थान अच्छा है। जमीन पर कम्बल या कोई आसनी बिछा लें। आस-पास दो मीटर के भीतर फर्नीचर या इस तरह के सामान आदि नहीं हों। ध्यान की अवधि में बाहर की उत्तेजनाएँ ज्यादा प्रभावित न करें, ऐसी कोशिश होनी चाहिए। इसलिए कमरे का कोई कोना चुनने की सलाह दी जाती है ताकि जहाँ बैठें हों वहाँ से बाहर के दृश्य न दिखाई दें।

## समय

ध्यान का सबसे उत्तम समय है प्रात:काल और संध्याकाल, बिस्तर में जाने के पूर्व और ब्रह्ममुहूर्त की बेला। ध्यान का अभ्यास नाश्ते के एक-डेढ़ घंटा पहले और भोजन के चार घंटे बाद ही किया जाना चाहिए। यह नियम इसलिए है कि भोजन के बाद भारी पेट होने से समूचा ध्यान पेट और पाचन-क्रिया की तरफ ही चला जाता है। इसलिए उचित मात्रा में भोजन करें। आवश्यकता से अधिक भोजन न करें। ध्यान के अभ्यास में नियमितता का होना आवश्यक है। प्रात: 4 से 6 बजे और सांयकाल 8 से 10 बजे तक का समय ध्यान के लिए उपयुक्त है। आप सुविधानुसार अपने लिए समय निश्चित कर लें और फिर इसे बदलें नहीं। आप आधे घंटे के ध्यान के अभ्यास से शुरुआत कर सकते हैं। इस अवधि को धीरे-धीरे बढ़ाते जाएँ।

## निद्रा पर विजय

जिन्हें प्रात: जल्दी उठने की आदत नहीं है, उन्हें ऐसा लगता है कि ध्यान में सो जायेंगे। ऐसी आदत होने पर सबेरे जगकर अपना समय बरबाद नहीं करना चाहिए। नींद भगाने के अनेक उपाय हैं। एक तरीका है, जल्दी सो जाना; दूसरा, ध्यान के पूर्व अच्छी तरह स्नान कर लेना या ध्यान के पूर्व या मध्य में जब नींद आने लगे, मुँह धो लेना। तीसरा, अभ्यास करने के पूर्व बार-बार आत्मसुझाव देना कि मैं नहीं सोऊँगा। यह संकल्प साधक दिन में कई बार दुहरा सकते हैं ताकि यह विचार अवचेतन की गहराई में उतर जाए।

यदि आपको लगे कि ध्यान करने के बाद आप ज्यादा थक गये हैं तो ऐसा समझना चाहिए कि आप ध्यान नहीं, मन से संघर्ष कर रहे हैं। ध्यान आनन्द का स्रोत है। आनन्द देने वाली वस्तु से हम थकान का अनुभव कैसे कर सकते हैं? जो वस्तुएँ हमारी प्रकृति से भिन्न हैं, उन्हीं से हमें क्लेश और क्लान्ति को प्राप्ति होती है। इसलिए ध्यान के बाद यदि थकावट हो, तो अपनी ध्यान-विधि की जाँच कर लें।

## शिथिलीकरण

ध्यान में सबसे बड़ी बाधा है तनाव। यदि शरीर में किसी प्रकार का तनाव या कष्ट है तो चेतना उसी ओर उन्मुख रहेगी। ऐसी स्थिति में शरीर से परे जाकर ध्यान का अनुभव प्राप्त करना कठिन होगा। अत: शरीर को शिथिल करें।

इसे शिथिल करने का एक सरल, किन्तु अद्‌भुत उपाय है–पहले शरीर में अधिकाधिक तनाव भरकर एकाएक उसे ढीला छोड़ देना। इसमें विरोधाभास-सा दिखता है। लेकिन पाठक ऐसा करके देखें तो उन्हें शिथिलता का स्पष्ट अनुभव होगा। इसकी तुलना आप एक रबर से कर सकते हैं। यदि आप किसी रबर को खूब ताने और फिर उसे वापस छोड़ दें तो पहले की अवस्था की अपेक्षा वह अधिक मात्रा में सिकुड़ जाएगा। ठीक यही बात हमारी मांसपेशियों के साथ भी है। थोड़े समय के लिए उनमें खूब तनाव पैदा कीजिये और फिर ढीला छोड़ दीजिए। सामान्य अवस्था से पेशियाँ अधिक विश्रान्त एवं तनावमुक्त हो जाएँगी। पेशियों में आत्यंतिक तनाव महसूस करने के बाद आप आत्यंतिक शिथिलता का अनुभव करेंगे। शरीर के समस्त अंगोंपांगों को एक-एक कर तानना चाहिए। अपनी पीठ के बल लेटना सर्वोत्तम विधि है। पैरों से शुरू करें और एक-एक कर उन्हें अधिक-से-अधिक ताने। हर पैर को

पूरी तरह बीस सैकण्ड तक विश्राम प्रदान करें। यही प्रक्रिया बाँहों, मुट्ठियों, पैरों, उदर, कंधों और अंतत: सम्पूर्ण शरीर के साथ दुहराएँ। फिर पूरे शरीर को एक-दो मिनट विश्रान्त कर ध्यान का अभ्यास प्रारम्भ करें।

## सामान्य बाधाएँ

ध्यान के मार्ग में कई प्रकार की बाधाएँ हैं। जैसा कि ऊपर वर्णन किया गया है, मुख्य बाधाएँ शारीरिक एवं मानसिक उपद्रव हैं। अनेक शारीरिक रोग आसनों एवं अन्य योगाभ्यासों तथा ध्यान की प्रक्रिया से दूर हो सकते हैं अथवा कम हो सकते हैं। आसनों का विवरण इस पुस्तक में नहीं दिया गया है। अत: पाठकों को सलाह दी जाती है कि वे आसनों की विशेष जानकारी हेतु स्वामी सत्यानन्द सरस्वती द्वारा लिखित पुस्तक 'आसन प्राणायाम मुद्रा बंध' का अध्ययन करें।

मानसिक बाधाएँ ईर्ष्या, घृणा, घमण्ड, स्वार्थ, क्रोध, आदि के रूप में आती हैं। इन्हें दूर करने के अनेक तरीके हैं। इसके लिए यम-नियम तथा आत्मसुझाव की विधियाँ अत्यन्त उपयोगी हैं। मानसिक समस्याओं को दूर करने के लिए पाँचवें अध्याय में बताया गया है कि साधक को अपने निज की पहचान को मन और शरीर से असम्बद्ध करके चेतना के केन्द्रबिन्दु से सम्बद्ध कर देना चाहिये। इस तरह उस पर घटनाओं और शारीरिक व मानसिक बाधाओं का प्रभाव नहीं के बराबर होगा। उसकी नयी आत्म-पहचान जितनी विकसित होती जाएगी, इस कार्य में उसे उतनी ही अधिक सफलता मिलेगी।

ध्यान के मार्ग में अवसाद एक बहुत बड़ी बाधा है। इसे भी ऊपर बतायी गयी विधि के अनुसार दूर किया जा सकता है। दूसरी सरल एवं तात्कालिक, किन्तु प्रभावशाली विधि है, ॐ का उच्चारण। आप ॐ का उच्चारण जोर-जोर से आधा घंटा या उससे भी अधिक समय तक कर सकते हैं। पहाड़ों पर या गाँवों में प्रकृति के साथ आप रहें, तो भी इस बाधा से बचाव हो सकता है।

क्रोध एक अन्य सामान्य कंटक है जो ध्यान को भंग करता है। इसके मूल में अभिमान और जीवन की तुच्छ वस्तुओं के साथ तादात्म्य स्थापित करना है। आत्म-पहचान का अभ्यास करें (पाँचवें अध्याय में 'मन का पुनर्संयोजन' देखें), अथवा यह अनुभव करने का प्रयास करें कि आप इस समग्र अस्तित्व के एक अविभाज्य अंग हैं।

संदेह ध्यान-मार्ग में एक अन्य व्यवधान है। किसी प्रकार की इन्द्रियातीत अनुभूति प्राप्त किए बिना ही कई लोग यह सोचने लग जाते हैं कि कहीं ध्यान विधि व्यर्थ तो नहीं, या ध्यान के विषय में जितनी बढ़-चढ़ कर बातें की जाती हैं, शायद यह उस कसौटी पर खरा न उतरे। यदि आपके मन में इस प्रकार के संशययुक्त विचार उठते हों तो आप महान् संतों की जीवनियों का अध्ययन करें अथवा ऐसे योगियों की रचनाएँ पढ़ें जिन्होंने स्वानुभूत आध्यात्मिक अनुभूतियों का उल्लेख किया है। आप उनके लेखों में इतना उत्साह और विस्मय पाएँगे कि इन्द्रियातीत अनुभवों के प्रति आपका विश्वास द्विगुणित हो जाएगा।

अपने मानसिक उपद्रवों को निर्मूल करने हेतु इस पुस्तक में दी गयी विधियों का उपयोग करें अथवा आप स्वयं कोई नई तकनीक विकसित करें। इस प्रकार आप ध्यान-मार्ग में आने वाले प्रबलतम अवरोध को पार कर जाएँगे। अचेतन अन्तर्द्वन्द्व, मनोग्रन्थि, भय आदि के कारण ध्यान में हम कई बाधाओं एवं उपद्रवों का अनुभव करते हैं, बहुधा हमें इन उपद्रवों के सही कारण का पता भी नहीं चल पाता है। ध्यान की विधि के द्वारा हम इन समस्याओं की पहचान कर धीरे-धीरे इनसे छुटकारा पा सकते हैं। फिर भी इन समस्याओं से ग्रस्त होने पर प्रारम्भ में ध्यान करना कठिन होता है। इस बाधा पर विजय पाने हेतु सर्वप्रथम हमें आत्म-सुझाव द्वारा ज्ञात मानसिक उपद्रवों को दूर करना चाहिए। इससे मन थोड़ा अधिक विश्रान्त होगा।

इस स्थिति में ध्यान करना शायद संभव न हो, पर इस विधि से अन्तर्मन की उलझने चेतना के तल पर प्रकट होने लग जाएँगी और आप उनकी पहचान कर सकते हैं। अवचेतन मन में बैठे गहरे अन्तर्द्वन्द्व उभर कर सामने आएँगे। जब द्वन्द्व और भय आदि प्रकट रूप में पहचान में आ जाएँगे तो आत्म-सुझाव द्वारा सरलतापूर्वक उनसे छुटकारा पाया जा सकता है। यह एक-दूसरे से जुड़ी हुई प्रक्रिया है। जितना ही आप अपने मन को शुद्ध और निर्मल बनाएँगे, उतना ही आपका ध्यान सहज होता जाएगा। जैसे-जैसे आप ध्यान के द्वारा मन की गहराई में प्रवेश करेंगे, अवचेतन में छिपी ग्रंथियों का उच्छेदन करने में सफल होंगे। अन्तर्मन की गहराई में जितनी गहरी पैठ होती जाएगी, आपकी समस्याएँ उसी मात्रा में छू-मंतर होती जाएँगी। इस प्रकार धीरे-धीरे आपका इन्द्रियातीत अनुभवों से साक्षात्कार होगा और यह अनुभव चिरस्थायी होगा। ऐसा नहीं कि ध्यानाभ्यास के बाद आप उससे वंचित हो जाएँ।

## विचार

लक्ष्य है, तर्कयुक्त विचारों को देखते जाना और धीरे-धीरे उनसे परे पहुँच जाना। इस स्थिति तक पहुँचने पर ध्यान स्वतः लग जाता है। ध्यान का लक्ष्य है तार्किक विचारों के परे मन की गहराई में प्रवेश। इसलिए ध्यान का अभ्यास करते समय यथासंभव तर्क-बुद्धि का उपयोग कम करना चाहिए। इस समय अभ्यास की पूर्ति हेतु मन को अभ्यास सम्बन्धी आवश्यक क्रियाओं को पूरा करने के लिए मुक्त छोड़ दें। इसमें अन्तर्मौन का अभ्यास एक अपवाद है, जिसके कुछ चरणों में हम बौद्धिक मन को उपयोग में लाते हैं, लेकिन अन्ततः लक्ष्य बुद्धि के परे जाने का ही रहता है।

## एकाग्रता के लिए प्रतीक का चुनाव

ध्यान के लिए किसी भी विषय-वस्तु का चयन किया जा सकता है, लेकिन प्रायः देखा जाता है कि जो विषय-वस्तु व्यक्ति के लिए गहरा अर्थ रखती है और महत्त्वपूर्ण है, उस पर मन को टिकाने से उसे गहरी एकाग्रता की प्राप्ति होती है। मन उस वस्तु पर आसानी से टिक जाता है और दूसरे विषयों की खोज में इधर-उधर नहीं भटकता। यदि एकाग्रता की विषय-वस्तु का अभ्यासी के लिए महत्त्व कम या नहीं के बराबर है तो मन निश्चय ही भटकने लगेगा और अभ्यासी को एकाग्रता साधने हेतु शायद मन पर लगाम कसने की नौबत आ जाय। इससे मानसिक तनाव में वृद्धि होगी, जो निस्संदेह ध्यान के लिए सहायक नहीं है।

वस्तु का चयन स्व-विवेक से करना चाहिए। हो सकता है अभ्यासी ईश्वर के किसी अवतार पर ध्यान करना चाहे। यदि वह ईसाई देश में पैदा हुआ है तो ईसामसीह अथवा किसी अन्य ईसाई संत पर एकाग्रता साधने से ध्यान में सफलता की अधिक संभावना है। यदि साधक एशियाई है तो हिन्दू-धर्म या इस्लाम के किसी अवतारी पुरुष का चुनाव करने से उसको ध्यान में सफलता प्राप्त होगी। ध्यान हेतु विषय-वस्तु के चुनाव के लिए कोई बंधा-बंधाया नियम नहीं है। इसमें कई अपवाद भी हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, कोई अंग्रेज एकाग्रता के लिए आदर्श विषय के रूप में गौतम बुद्ध का चुनाव कर सकता है। अपनी पृष्ठभूमि से अवगत होकर, अपने अनुभव के आधार पर पाठक सर्वोत्तम आदर्श का चयन स्वयं करे। यदि वह ईश्वर के किसी अवतार विशेष के साथ तादात्म्य का अनुभव करता है, तो यह ध्यान रखते हुए इस विषय में निर्णय ले।

यह अनिवार्य नहीं है कि एकाग्रता का विषय कोई अवतार ही हो। वह कोई व्यक्ति या पदार्थ हो सकता है; ख्याल यह रखना है कि उस व्यक्ति या विषय से साधक का मन स्वत: तादात्म्य स्थापित कर ले। उदाहरण के लिए, वह पदार्थ क्रॉस-चिह्न, यिन और यांग प्रतीक, प्रतीक रूप में ॐ, फूल, चन्द्र या जलती मोमबत्ती, कुछ भी हो सकता है। हम पुन: इस बात पर बल देते हैं कि वह पुरुष या पदार्थ ऐसा हो जिसके प्रति मन सहज रूप से आकृष्ट हो जाय और बिना प्रयास स्वत: उस पर एकाग्र होना चाहे। ध्यान में प्रयास से अधिक सहजता होनी चाहिए।

बहुधा लोग ऐसा सोचते हैं कि किसी वस्तु विशेष के प्रति उनके मन में कोई वास्तविक आकर्षण नहीं है। फिर भी, कई प्रकार की ध्यान-विधियों के अभ्यास के बाद, जिनमें ध्यान के लिए किसी विषय-वस्तु की विशेष आवश्यकता नहीं होती, उन्हें ऐसा लगता है कि मन के अवलोकन के क्रम में मन के दर्पण में कोई दृश्य अथवा मूर्ति सहसा अभिव्यक्त हो गई है। यह प्रतीक मन की अतल गहराई से उद्भूत होकर चेतना के दर्पण में प्रकट होता है। इस छवि के प्रति द्रष्टा की सजगता बड़ी सघन होगी। उसे ऐसा अहसास होगा कि इस दृश्य का उसके जीवन के लिए बड़ा महत्त्व है, भले ही वह वस्तु इसके पूर्व उसके लिए महत्त्वपूर्ण नहीं रही हो। उस आकृति को देख कर उसे घोर आश्चर्य भी हो सकता है, क्योंकि वह छवि उसकी संस्कृति या जीवन पद्धति से बिल्कुल अलग भी हो सकती है। यदि इस प्रकार की घटना हो जाय, जैसा कि प्राय: होता भी है, तो इस प्रतीक को ध्यान की वस्तु के रूप में उपयोग में लाना चाहिए। यदि आवश्यक समझें तो उस छवि का एक रेखाचित्र तैयार कर लें और उस पर त्राटक का अभ्यास करें। इससे अभ्यासी के भीतर ऐसी क्षमता का विकास होगा जिसके सहारे अंतत: वह स्पष्ट आन्तरिक छवि देख सकेगा।

प्रारम्भ में मन को निश्चित वस्तु पर टिकाना कठिन होता है। पर अभ्यास से यह आसान होता जाएगा। इसके लिए केवल धैर्य और सतत् प्रयास की आवश्यकता होती है। आदतों का निर्माण मन में ही होता है, अत: अभ्यासी का मन धीरे-धीरे ध्येय पर आसानी से टिकने लगता है और अंतत: स्वत: ही ध्येय पर स्वयं को केन्द्रित कर लेता है, किसी अन्य दिशा में नहीं जाता। यद्यपि एक वस्तु पर ध्यान सरलता से केन्द्रित होता है, तथापि उदात्त विचारों पर भी मन को एकाग्र किया जा सकता है, जैसे, प्रेम, करुणा, असीमता, अनन्तता, चेतना और अस्तित्व, आदि। पर सामान्य रूप से ध्यान के लिए एक दृश्य वस्तु अधिक उपयोगी होती है।

# 10

# ध्यान के आसन

ध्यान के सभी आसनों का मुख्य उद्‌देश्य है, साधक को लम्बे समय तक पूर्णतः स्थिर बैठने की क्षमता प्रदान करना। ध्यान की उच्चतर अवस्थाओं में कुछ घण्टों तक बिना किसी शारीरिक कष्ट के एक अवस्था में जम कर बैठे रहने की आवश्यकता होती है। वास्तव में जब शरीर स्थिर एवं निश्चल हो जाय तभी गहरा ध्यान लग सकता है। पुस्तक में सूचीबद्ध आसन इस प्रकार के हैं कि कुछ समय के अभ्यास के पश्चात् बिना किसी तनाव और कष्ट के लम्बे समय तक इन आसनों में स्थिर रहा जा सकता है। अन्य आसनों में यह विशेषता नहीं है। एक बात और ख्याल रखने की है कि ये आसन मेरुदण्ड को सीधा रखते हैं, जो कि गहरे ध्यान के लिए पूर्वापेक्षित है, और साथ ही बिना विशेष प्रयत्न के शरीर को अविचल अवस्था में बाँध कर रखते हैं। गहरे ध्यान की अवस्था में जब साधक अपनी मांसपेशियों पर से नियंत्रण खो बैठता है, उस दशा में ये आसन ध्यानजनित परिस्थिति का निराकरण करते हैं।

ध्यान के प्रारम्भिक अभ्यासी शुरू में सुखासन में बैठ सकते हैं, परन्तु धीरे-धीरे उन्हें ध्यान के उपयुक्त आसनों, जैसे, पद्मासन, सिद्धासन (पुरुषों के लिए), सिद्धयोनि आसन (स्त्रियों के लिए) में बैठने का अभ्यास करना चाहिए। ऐसे अभ्यासी जिनकी पैर और जाँघ की मांसपेशियाँ बहुत कड़ी हैं तथा किसी रोग के कारण दुर्बल हैं, वे ऐसी कुर्सी पर भी ध्यान का अभ्यास कर सकते हैं जिसमें पीठ सीधी रहे, अथवा आवश्यकतानुसार कड़े बिस्तर पर ध्यान कर सकते हैं। परन्तु उनकी रीढ़ की हड्‌डी सीधी रहनी चाहिए। किसी भी आसन में बैठ जाएँ और कल्पना करें कि आपका शरीर चट्‌टान की तरह दृढ़ और स्थिर है। आप अपने आसन में जितना स्थिर होंगे, आपकी एकाग्रता एवं दत्तचित्तता उतनी ही बढ़ेगी।

एक वर्ष के नियमित अभ्यास से आप अवश्य तीन घण्टे लगातार एक आसन में बैठ सकेंगे। जिनका शरीर कड़ा है ऐसे लोग भी अभ्यास और अध्यवसाय द्वारा पद्मासन में बैठने लगते हैं। ऐसे लोगों को 'आसन प्राणायाम मुद्रा और बंध' पुस्तक में वर्णित कुछ विशेष आसनों (पवनमुक्तासन 1,2,3 एवं ध्यान की तैयारी के आसन) का अभ्यास करना चाहिए। उन्हें प्रतिदिन एक-एक मिनट बढ़ाते हुए एक ही आसन में अधिक देर तक बैठने का अभ्यास करना चाहिए। पद्मासन में बैठने की पूर्ण योग्यता केवल शरीर को लचीला बना लेने से ही नहीं आती। यह मन:स्थिति पर भी निर्भर करती है। यदि साधक का अपने मन पर नियंत्रण है, तब निश्चित ही मन शरीर को पद्मासन लगाने में मदद देगा।

ध्यान के शास्त्रीय आसन हैं – पद्मासन, सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन और स्वस्तिकासन। प्रारम्भिक अभ्यास करने वाले साधकों के लिए सुखासन और अर्द्धपद्मासन सरल हैं। ध्यानाभ्यास में मदद पहुँचाने वाले अन्य पूरक आसन हैं – वज्रासन, भद्रासन और शवासन। हमने इसमें विपरीतकरणी आसन और नादानुसंधान को भी जोड़ दिया है, हालाँकि ये ध्यान की मूल विधियों के उपयुक्त नहीं हैं, फिर भी ध्यान के कुछ अभ्यास इन्हीं आसनों में किये जाते हैं।

शास्त्रीय आसनों का अभ्यास सामान्यत: ज्ञान मुद्रा और चिन्मुद्रा के साथ किया जाता है।

## सावधानियाँ

किसी भी आसन में बैठने की कोशिश में शरीर पर अनावश्यक जोर नहीं पड़ना चाहिए। यदि ध्यान के किसी आसन में बैठने के बाद पैरों में पीड़ा होने लगे तो उन्हें सीधा कर के मालिश कर देनी चाहिए। शास्त्रीय या सरल आसनों का भी अभ्यास साइटिका के रोगियों एवं निम्न मेरुदण्ड और कटिप्रदेश की व्याधियों से पीड़ित व्यक्तियों को नहीं करना चाहिए। ये लोग सिर्फ वज्रासन, भद्रासन और शवासन कर सकते हैं।

## सुखासन

पैरों को शरीर के सामने फैलाकर बैठ जाइये।
दायें पैर को मोड़कर पंजे को बायीं जाँघ के नीचे रखिये।
बायीं पैर को मोड़कर पंजे को दायीं जाँघ के नीचे रखिये।




हाथों को घुटनों पर चिन् या ज्ञान मुद्रा में रखिये।

सिर, गर्दन और पीठ को सीधा रखिये, पर बिना किसी तनाव के। आँखें बंद कर लीजिए। सम्पूर्ण शरीर को शिथिल और विश्रान्त कीजिए।

भुजाएँ आरामदायक स्थिति में रहनी चाहिए, उन्हें सीधा करने का प्रयास न करें।

**लाभ –** यह उन अभ्यासियों के लिए ध्यान का आदर्श आसन है जो ध्यान के शास्त्रीय आसनों में बैठने में कष्ट का अनुभव करते हैं। जब अभ्यासी ध्यान के अन्य किसी आसन में बैठने में समर्थ हो जाए, तो उसे इस आसन का परित्याग कर देना चाहिए।

**अभ्यास टिप्पणी –** सुखासन विश्रामदायक आसन है, इसलिए लम्बे समय तक सिद्धासन या पद्मासन में बैठने के बाद इस आसन का उपयोग किया जा सकता है।

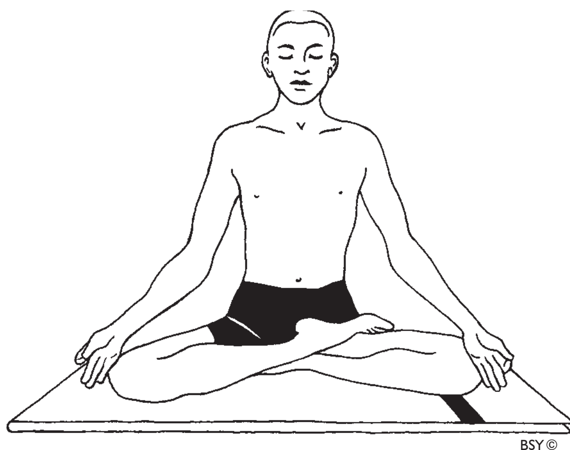
यद्यपि सुखासन ध्यान का सरलतम आसन माना जाता है। लेकिन जब तक घुटने भूमि के सन्निकट या भूमि पर न हों, तब तक लम्बे समय तक इस आसन में भी बैठना आसान नहीं है। ऐसा नहीं होने से शरीर का अधिकांश भार नितम्बों पर आ जाने के कारण पीठ-दर्द शुरू हो जाता है। ध्यान के अन्य आसन नितम्बों के अतिरिक्त अन्य अंगों पर शरीर के भार को वितरित कर सहारे के लिए बड़े और स्थिर क्षेत्र का निर्माण करते हैं।

**प्रकारान्तर –** जिनके अंग अत्यन्त कड़े हैं, वे पालथी मारकर सुखासन में बैठ सकते हैं, साथ ही कमर में बेल्ट लगा लें या घुटनों एवं पीठ के निम्न भाग में कस कर कपड़ा लपेट लें।

मेरुदण्ड को सीधा रखें।

शारीरिक संतुलन एवं भार को शरीर के दायें-बायें भागों में बराबर-बराबर वितरित करने पर ध्यान दें। इस अवस्था में हल्केपन का अनुभव होगा।

इस भंगिमा को बनाए रखकर, दोनों हाथों को चिन् या ज्ञान मुद्रा में घुटनों के ऊपर रखें। (अगला अध्याय, 'मुद्रा तथा बंध' देखें)




## अर्द्धपद्मासन

पैरों को शरीर के सामने फैलाकर बैठ जाइये।

एक पैर मोड़िये और उसके तलवे को दूसरी जाँघ के अन्दरूनी भाग पर रखिये।

दूसरा पैर मोड़िये और पँजे को दूसरी जाँघ के ऊपर रखिये।

बिना तनाव पैदा किए ऊपर की एड़ी को उदर के अधिक-से-अधिक समीप रखने की चेष्टा कीजिए। अपनी शारीरिक स्थिति को समायोजित कर लीजिए, ताकि यह आरामदायक हो जाय।

हाथों को चिन् या ज्ञान मुद्रा में घुटनों के ऊपर रखिये।

पीठ, गर्दन और सिर को सीधा रखिये।

आँखों को बंद कीजिए एवं सम्पूर्ण शरीर को विश्राम की स्थिति में ले आइए।

**लाभ –** पद्मासन के ही समान, किन्तु थोड़ी कम मात्रा में।

**अभ्यास-टिप्पणी –** इस ध्यानासन को वही लोग कर सकते हैं जो पद्मासन का अभ्यास लगभग कर लेते हैं, किन्तु जिन्हें अंतिम भंगिमा तक पहुँचने में कठिनाई होती है। यह आसन सुखासन से अच्छा है।




**पद्मासन**

दोनों पैरों को सामने फैलाकर बैठ जाइए।

एक पैर को मोड़िये और उसके पंजे को दूसरी जाँघ पर इस प्रकार रखिये कि एड़ी जघनास्थि का स्पर्श करे। पैर का तलवा ऊपर की ओर रहे। अपना दूसरा पैर मोड़िये और उसके पंजे को दूसरी जाँघ पर रखिये।

**लाभ –** पद्मासन में बैठने पर शरीर लम्बे समय तक पूर्णत: स्थिर और अडिग रह सकता है। पैरों के दृढ़ आधार के सहारे यह धड़ एवं सिर को स्तम्भ की तरह टिका कर रखता है। शरीर के अचल हो जाने पर मन शान्त हो जाता है। वास्तविक ध्यान की दिशा में यह स्थिरता और शान्ति ही पहला कदम है। पद्मासन मूलाधार से प्राण-प्रवाह को सहस्रार चक्र की ओर निर्देशित करता है, जिससे ध्यान की गहरायी में वृद्धि होती है। यह आसन मेरुदण्ड के निम्न भाग पर दबाव डालता है, जिसका प्रशान्तिदायक प्रभाव तंत्रिका-तंत्र पर पड़ता है। इसमें श्वास की गति मंद पड़ जाती

है, मांसपेशीय तनाव कम हो जाता है और रक्तचाप न्यून हो जाता है। इससे अनुत्रिक और रीढ़ के निम्न भाग को पोषण प्राप्त होता है, क्योंकि सामान्यत: पैरों को प्राप्त रक्त-प्रवाह उदरीय प्रदेश में पुनर्प्रेषित हो जाता है। इससे पाचन-क्रिया भी उद्दीप्त होती है।




**सिद्धासन**

पैरों को समाने फैलाकर बैठ जाइए।

दायें पैर को मोड़िये और दायें पैर के तलवे को बायीं जाँघ से इस प्रकार सटा दीजिए कि एड़ी का दबाव मूलाधार (अंडकोश तथा गुदामार्ग के बीच की जगह) पर पड़े।

बायें पैर को मोड़िये और बायें पैर को दाहिनी पिंडली के ऊपर रखिये।

बायीं एड़ी का दबाव मूत्रेन्द्रिय के ऊपर श्रोणि-अस्थि पर रहे।

बायें पैर की अंगुलियों तथा पंजे के बाहरी भाग को दायीं पिण्डली और जाँघ की मांसपेशियों के बीच फँसाइये।

इस समय दाहिने पैर को थोड़ा उठाकर फिर रखने की आवश्यकता हो सकती है।

दायें पैर की अंगुलियों को बायीं पिण्डली के ऊपर या नीचे से पकड़कर बायीं पिंडली एवं जाँघ के बीच घुसाइये।

घुटने जमीन पर रहें तथा बायीं एड़ी को दायीं एड़ी के ऊपर रखिये। अब आपके पैर एक प्रकार से बँध जायेंगे।

मेरुदण्ड को इस प्रकार सीधा एवं स्थिर रखिए मानो वह जमीन में धँसा हुआ हो।

**लाभ –** सिद्धयोनि आसन के लाभों के समान।

**अभ्यास-टिप्पणी –** सिद्धासन का अभ्यास दोनों में से किसी एक पैर को ऊपर रखकर, ज्ञान या चिन्-मुद्रा के साथ किया जा सकता है। यदि नितम्बों को एक छोटी गद्दी के सहारे थोड़ा ऊपर उठा दिया जाय तो कई साधक, विशेषकर प्रारम्भिक साधक सिद्धासन में लम्बे समय तक बैठ सकते हैं।




## सिद्धयोनि आसन

पैरों को सामने फैलाकर बैठ जाइए।

दायें पैर को मोड़िये और उसके तलवे को बायीं जाँघ से इस प्रकार सटाइये कि एड़ी का दबाव योनि-मुख पर पड़े।

बायें पैर को मोड़िये और उसके पंजे को दाहिनी पिंडली और जाँघ के ऊपर रखिये। दायें पैर की अंगुलियों को बायीं पिंडली और जाँघ के बीच के स्थान में ऊपर की ओर खींचिये। मेरुदण्ड सीधा और स्थिर रहे, मानो उसे जमीन में गाड़ दिया गया हो।

**लाभ –** सिद्धासन और सिद्धयोनि आसन सफल ध्यान के लिए लम्बे समय तक स्थिर रह पाने की दृष्टि से श्रेष्ठ आसन हैं, क्योंकि इनमें मेरुदण्ड को लम्बे समय तक स्थिर रखा जा सकता है। इस आसन में मूलबंध और वज्रोली मुद्रा स्वत: क्रियाशील होकर स्नायविक यौन संवेगों को मेरुदण्ड से होकर मस्तिष्क में वापस भेज देते हैं। इससे काम-भावना पर नियंत्रण प्राप्त होता है, जिसका उपयोग ब्रह्मचर्य पालन, आध्यात्मिक उद्देश्य के लिए काम ऊर्जा के पुन: ऊर्ध्वगमन अथवा इन्द्रियजन्य यौन-कृत्य पर अधिक नियंत्रण प्राप्त करने के लिए किया जा सकता है। सिद्धासन एवं सिद्धयोनि आसन सम्पूर्ण स्नायविक संस्थान को शांत एवं संतुलित रखते हैं।

**अभ्यास टिप्पणी –** इस आसन का अभ्यास दोनों पैरों में से किसी एक को ऊपर रख कर किया जा सकता है। बिना अधोवस्त्र (अण्डरवियर) के इसका अभ्यास सर्वाधिक सुविधापूर्ण होता है। इसका अभ्यास सदा ज्ञान या चिन्-मुद्रा के साथ किया जाता है। बहुत से अभ्यासी, विशेषकर प्रारम्भिक अभ्यासी अपने नितम्बों के नीचे एक छोटा तकिया या गद्दी रखकर इस आसन में दीर्घकाल तक बैठ सकते हैं।

## स्वस्तिकासन

अपने पैरों को शरीर के सामने फैलाकर बैठ जाइये।

बायें पैर को मोड़िये और उसे दायीं जाँघ की मांसपेशियों के पास रखिये।

इसी प्रकार दाएँ पैर को मोड़िये और पैर की अंगुलियों को बायीं जाँघ और पिंडलियों के बीच फँसाइये।

दोनों पैरों की अंगुलियाँ दोनों जाँघों और पिण्डलियों के बीच रहनी चाहिये।

हाथों को घुटनों पर ज्ञानमुद्रा या चिन्मुद्रा में रखिये अथवा गोद में रखिये।

**लाभ –** इससे सिद्धासन एवं सिद्धयोनि आसन के लाभ सीमित मात्रा में मिलते हैं, क्योंकि मूलाधार या योनिमुख पर दबाव न पड़ने के कारण अभ्यास करते समय मूलबंध और वज्रोली मुद्रा स्वत: नहीं लग पाती।

**अभ्यास टिप्पणी –** प्राचीन परम्परागत ध्यान के आसनों में से यह सबसे सरल आसन है। बाह्य तौर पर यह सिद्धासन की तरह ही है; अंतर केवल इतना ही है कि इसमें मूलाधार क्षेत्र पर एड़ी का दबाव नहीं पड़ता।




**वज्रासन**

घुटनों के बल खड़े हो जाइये।
पंजों को पीछे फैलाकर एक पैर के अँगूठे को दूसरे अँगूठे पर रख दीजिये।
आपके घुटने पास-पास और एड़ियाँ अलग-अलग रहनी चाहिए।
अपने नितम्बों को फैली हुई एड़ियों के बीच के स्थान पर टिका दीजिये।
आपकी एड़ियाँ नितम्बों की तरफ रहेंगी।
हथेलियों को घुटनों पर रखिये।

**लाभ** – श्रोणीय तथा आन्त्रिक क्षेत्रों में स्नायविक आवेगों तथा रक्त के प्रवाह को बदल देता है। यह सम्पूर्ण पाचन संस्थान की क्षमता को बढ़ाता है। साइटिका और सेक्रमी संक्रमण से पीड़ित लोगों के लिए यह ध्यान का उपयोगी आसन है।

***टिप्पणी*** *– मुसलमानों और जापानी बौद्धों के लिए यह प्रार्थना का आसन है।*

**भद्रासन**

वज्रासन में बैठ जाइये।
घुटनों को जितना सम्भव हो सके, दूर-दूर कर लीजिये।
पैरों की अंगुलियों का सम्पर्क जमीन से बना रहे।
अब एड़ियों को इतना अलग करिये कि उनके बीच आपके नितम्ब जमीन पर जम जायें।



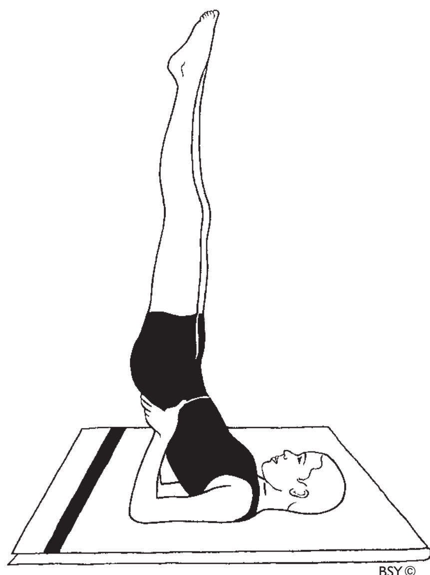

बिना किसी तनाव के घुटनों को और अधिक दूर कीजिये।
हाथों को घुटनों पर रखिये।
हथेलियाँ नीचे की ओर रहें।

**लाभ –** इसके लाभ वज्रासन के ही समान हैं। मुख्य रूप से यह आसन आध्यात्मिक साधकों के लिए है, क्योंकि मूलाधार चक्र पर इसका उद्दीपक प्रभाव पड़ता है। ध्यान का यह एक उत्कृष्ट आसन है। मूलत: वज्रासन से प्राप्त होने वाले समस्त लाभ इससे भी प्राप्य हैं।

**अभ्यास-टिप्पणी –** आवश्यकतानुसार एक तह किया हुआ कम्बल नितम्बों के नीचे डाल सकते हैं। कम्बल का उपयोग हो या न हो, मूलाधार चक्र को उद्दीपन प्रदान करने हेतु यह आवश्यक है कि नितम्ब जमीन पर दृढ़तापूर्वक जम जाएँ।

## विपरीतकरणी आसन

पीठ के बल सीधा लेट जाइये।
पैर मिले हुए हों। हाथ बगल में हों।
हथेलियाँ नीचे की ओर खुली हों।
हाथों का सहारा लेकर पैरों को धीरे-धीरे ऊपर उठाइये।
आप की पीठ फर्श से 45 अंश का कोण बनायेगी। हाथों से नितम्बों को थामे रहिये।




**श्वास –** धड़ को ऊपर उठाते और नीचे लाते समय श्वास को अन्दर रोकिये। जब तक धड़ ऊपर की ओर रहे, तब तक सामान्य ढंग से श्वास लेते रहिये।

**अवधि –** प्रारम्भ में कुछ क्षणों तक अभ्यास कर, कुछ सप्ताहों में धीरे-धीरे अवधि का विस्तार करते हुए कुछ मिनटों तक बढ़ायें।

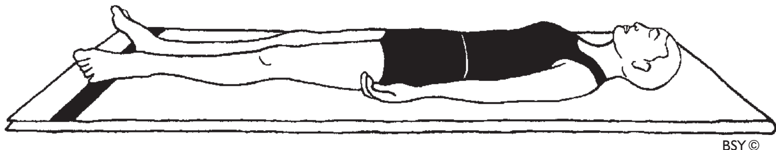
**सीमायें –** बढ़ी हुई थायरॉइड ग्रन्थि, जिगर, तिल्ली, उच्च रक्त चाप तथा हृदय के रोगी इस आसन का अभ्यास न करें।

***टिप्पणी–*** *विपरीतकरणी आसन, विपरीतकरणी मुद्रा के अभ्यास के लिए एक आधार बनाता है, जो कि कुण्डलिनी योग की एक महत्त्वपूर्ण क्रिया है। इसका उपयोग विशुद्धि चक्र में अमृत प्रवाह की जागृति के लिए किया जाता है।*

**शवासन**

पीठ के बल लेट जाइये।
भुजाएँ शरीर की बगल में रहें।
हथेलियाँ ऊपर की तरफ खुली रहें।
पैरों को आरामदायक स्थिति में थोड़ा दूर-दूर कर लीजिये।

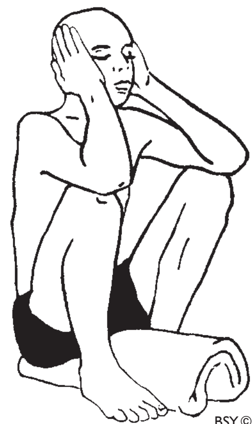
आँखें बन्द रहें।
पूरे शरीर को ढीला छोड़ दीजिये।
शरीर के किसी भाग को नहीं हिलाइये।
श्वास को सहज होने दीजिये।
मन को अपनी श्वास-प्रश्वास के प्रति सजग बनाए रखिए।




**लाभ –** शवासन अभ्यासी के शरीर और मन को विश्रान्ति प्रदान करता है। योग निद्रा और अन्य अभ्यास, जिनके लिए पूर्ण विश्रान्ति की आवश्यकता होती है, यह सर्वोत्तम आसन है। शयन के लिए यह उत्कृष्ट आसन है। ध्यान के आसन के रूप में इसकी यही त्रुटि है। बहुत से साधक, विशेषकर प्रारम्भिक अभ्यासी जो शवासन में ध्यान करने का प्रयास करते हैं, सोने लग जाते हैं।

**नादानुसन्धान आसन**

किसी गद्दी या लपेटे हुए कंबल पर इस तरह बैठ जाइये कि वह नितंबों के नीचे तथा दोनों पैरों के बीच आ जाये।
गद्दी इतनी ऊँची हो कि बैठे-बैठे पीठ जकड़ने न लगे।
सिर और मेरुदण्ड सीधे रहने चाहिए।
केहुनियों को घुटनों पर रख लीजिये, अंगुलियों को सिर पर और अँगूठों को कानों पर।
अँगूठों या तर्जनी अंगुलियों से दोनों कानों के छिद्रों को हल्के से बन्द कर लीजिये।




***टिप्पणी–*** *नादयोग के अभ्यास के लिए अति उत्तम आसन है।*

# 11

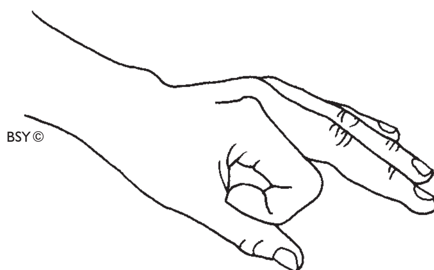
# मुद्रा तथा बन्ध

शरीर तथा चित्त के किसी विशेष भाव को मुद्रा कहते हैं। यौगिक अभ्यासों में मुद्राओं का बड़ा महत्त्व है। ये चित्त की सूक्ष्म स्थितियों तथा घटनाओं को नियन्त्रित करती हैं। मुद्राओं की विधियाँ अनेक हैं। हाथ की भंगिमा से लेकर सूक्ष्म एकाग्रता तक की स्थितियाँ इनके अन्तर्गत हैं। बन्धों का अभ्यास अतीन्द्रिय ऊर्जा या प्राणशक्ति की तरंगों को शरीर के निश्चित स्थानों पर नियंत्रित करके इसकी दाबानुकूलित शक्ति से साधक को लाभ पहुँचाता है। साधक इस ऊर्जा पर नियंत्रण प्राप्त कर लेता है। फलत: वह अपने शरीर में इच्छित अंग पर उसे पहुँचाने की क्षमता अर्जित करता है। मुद्रा और बंध मिलकर ध्यान की विविध विधियों का आधार हैं। इन्हें जाने बिना साधक अपनी प्रगति में सीमित रह जाते हैं।

मुद्राओं तथा बंधों की संख्या अनेक हैं। इस अध्याय में हमने उन्हीं को शामिल किया है जो इस पुस्तक में वर्णित ध्यान-विधियों में सहायक हैं। कई अन्य अधिक क्लिष्ट मुद्राओं की सूची दूसरे भागों में दी जाएगी। आप देखेंगे कि इन क्लिष्ट मुद्राओं का अधिकांश विभिन्न प्रारम्भिक मुद्राओं के मेल से गठित हुआ है, जिन पर हम अभी चर्चा करने जा रहे हैं।

अधिकांश मुद्राएँ एवं बंध बड़ी शक्तिशाली क्रियाएँ हैं। उन्हें विशेष रूप से शक्तिशाली बनाया ही गया है, क्योंकि प्रगति के लिए शक्ति आवश्यक है। अतएव क्रमश: एवं सावधानीपूर्वक उन्हें सीखना चाहिए ताकि उनसे साधक को कोई शारीरिक या मानसिक हानि न पहुँचे। यदि मुद्रा और बंध के अभ्यास के दौरान किसी प्रकार की कठिनाई का अनुभव हो अथवा अभ्यास प्रारम्भ करने के बाद कोई शारीरिक

असंतुलन दिखाई पड़े तो अभ्यास रोककर गुरु या विशेषज्ञ से मार्गदर्शन प्राप्त करना चाहिए।




**ज्ञानमुद्रा**

ध्यान के किसी आसन में बैठ जाइये।
दोनों हाथों की तर्जनियों को इस प्रकार मोड़िये कि उसका स्पर्श अंगूठे के मूल से हो।
शेष तीन अंगुलियों को एक-दूसरे से कुछ दूरी पर फैलाइये।
हाथों को घुटनों पर रखिये। हथेलियाँ नीचे की ओर रहें।

**प्रकारान्तर –** कुछ लोग इस मुद्रा का अभ्यास इस प्रकार करते हैं कि उनकी तर्जनी एवं अँगूठे के सिरे आपस में स्पर्श करते हैं। यह अभ्यास भी ठीक है।

**चिन्मुद्रा**

चिन्मुद्रा और ज्ञान मुद्रा में इतना ही अंतर है कि चिन्मुद्रा में दोनों हथेलियाँ ऊपर की ओर रहती हैं।

**दोनों मुद्राओं के लाभ –** ये अत्यन्त सरल मुद्रायें हैं, पर पद्मासन, सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन, सुखासन, वज्रासन आदि को पूर्णता प्रदान करती हैं। स्नायविक आवेग के प्रवाह को शरीर में ऊपर की ओर ले जाकर ये आसनों के प्रभाव को शक्तिशाली भी बनाती हैं।

**नासाग्र मुद्रा**

ध्यान के किसी भी आसन में बैठ जाइये।
बायें हाथ को बायें घुटने पर ज्ञान मुद्रा या चिन्मुद्रा में रखिये।




दायें हाथ की मध्यमा और तर्जनी को मिलाकर दोनों भौहों के बीच रखिये। इस अवस्था में अँगूठा दाहिनी नासिका की ओर तथा अनामिका बायीं नासिका की ओर रहेंगे तथा नासिका छिद्रों को बारी-बारी से बन्द करने की क्रिया करेंगे। कनिष्ठका का उपयोग इस मुद्रा में नहीं होता है।

दाहिनी कोहनी छाती के पास सामने की ओर रहेगी।

भुजा का अग्र भाग लगभग सीधा रहेगा।

**अभ्यास-टिप्पणी –** प्राणायाम का बहुत अधिक अभ्यास करने वाले कुछ साधक दाहिनी कोहनी को सहारा देने के लिए अपने गले में कपड़े की एक पट्टी बाँध कर रखते हैं। नासाग्र मुद्रा का अभ्यास हाथों को बदलकर भी किया जा सकता है।

***टिप्पणी –*** *नासाग्र का अर्थ है, नाक का अग्रिम भाग। इसका उद्देश्य प्राणायाम के नियमों के अनुसार एक नासिका को बन्द कर के दूसरी से श्वास लेने या छोड़ने की क्रिया के लिए साधक को सक्षम बनाना है।*

## षणमुखी मुद्रा

पद्मासन, सिद्धासन या सिद्धयोनि आसन में बैठ जाइये।

आँखों को बन्द कर लीजिए और हाथों को घुटनों पर रखिये।

धीमी और गहरी श्वास लीजिये।

श्वास रोककर हाथों को चेहरे के समीप ले जाइये।




कानों को अँगूठों से, आँखों को तर्जनी से, नासिका रंध्रों को मध्यमा से और होंठों को अनामिका तथा कनिष्ठिका अंगुलियों से बन्द कर लीजिये।

बिन्दु चक्र पर ध्यान लगाते हुए यथासम्भव श्वास रोके रखिये।

तब मध्यमा अंगुलियों को हटाकर नाक खोल दीजिये और धीरे-धीरे श्वास छोड़िये और लीजिए।

पुन: नासिकाछिद्रों को बन्द करके यह अभ्यास दोहराइए।

**सावधानियाँ –** इस मुद्रा में कुम्भक लगाया जाता है, अत: इसे धीरे-धीरे तथा सावधानी से कीजिये।

**लाभ –** यह मुद्रा प्रत्याहार के लिए अत्यन्त उपयोगी है।

यह मन को अन्तर्मुखी बनाकर आत्मदर्शन की ओर उन्मुख करती है।

***टिप्पणी –*** *'षण्मुखी' दो धातुओं से निर्मित शब्द है। षण् का अर्थ सात और मुखी का तात्पर्य 'द्वार' या 'मुख'। इसका उपयोग कुण्डलिनी योग में किया जाता है।*

## खेचरी मुद्रा

### विधि 1 – राजयोग पद्धति

मुँह बन्द कर लीजिये। जिह्वा को ऊपर मोड़कर उसके अग्रभाग से तालू का स्पर्श कीजिए।

अधिक जोर न लगाते हुए जिह्वाग्र को अधिकाधिक पीछे की ओर लाइये। वैकल्पिक रूप से इस अवस्था में उज्जायी प्राणायाम कर सकते हैं।
इस अभ्यास को जितनी देर तक सहजता और सरलता के साथ कर सकें, करें। नये अभ्यासी थोड़ी ही देर में असुविधा का अनुभव करने लगेंगे। उन्हें कुछ क्षणों तक अपनी जिह्वा को उसकी मूल स्थिति में लाकर तथा थोड़ा विश्राम देकर पुन: इसका अभ्यास करना चाहिये।
अभ्यास करने से जिह्वा तालू के ऊपरी छिद्र से ऊपर साइनसेस तक चली जाएगी, इससे मस्तिष्क के अनेक महत्त्वपूर्ण नाड़ी-केन्द्र उद्दीप्त होंगे।

**श्वास –** खेचरी मुद्रा के प्रारम्भिक अभ्यासी श्वसन क्रिया को सामान्य रखें। कुछ हफ्तों और महीनों तक अभ्यास करते हुए श्वास की गति धीमी करते जायें। दो महीने या इससे अधिक की अवधि के बाद श्वास की गति प्रति मिनट पाँच से आठ श्वास तक होनी चाहिए।
गुरु के निर्देशन में अभ्यास करते हुए कुछ अभ्यास के पश्चात् श्वसन क्रिया की गति में और अधिक न्यूनता लाई जा सकती है।

**सावधानियाँ –** इस मुद्रा के दो स्वरूप हैं – पहला, राजयोग की पद्धति पर आधारित, और दूसरा हठयोग की पद्धति पर। हठयोग की पद्धति का अभ्यास किसी अनुभवी गुरु के निर्देशन में ही करना चाहिए। इस पुस्तक में जहाँ कहीं खेचरी मुद्रा का निर्देश दिया गया है, उसे राजयोग की खेचरी मुद्रा समझें।
यदि अभ्यास करते समय कड़वे स्वाद का अनुभव हो तो यह हानिप्रद है, ऐसी अवस्था में तुरन्त अभ्यास बन्द कर दीजिये।

## विधि 2 – हठयोग पद्धति

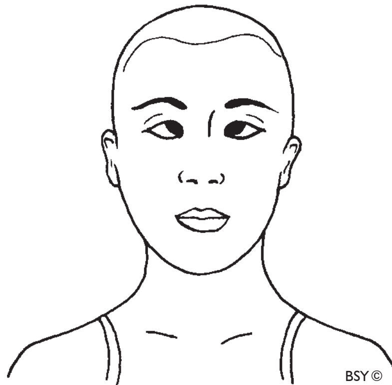
इस प्रकार की खेचरी मुद्रा का अभ्यास योग के उच्च अभ्यासी साधकों को किसी अनुभवी गुरु के निर्देशन में ही करना चाहिए, क्योंकि इसका प्रभाव अनुत्क्रमणीय होता है।
इसमें जिह्वा के नीचे की नसों को धीरे-धीरे प्रति सप्ताह काटा जाता है; इसके लिये शल्यविधि या तीव्र धारदार पत्थर का उपयोग किया जा सकता है। दूध दुहने की क्रिया के समान प्रतिदिन लम्बे समय तक जिह्वा की मालिश की जाती है। इस मालिश की क्रिया को सुगम बनाने के लिए मक्खन, तेल आदि चिकने और तरल पदार्थों का प्रयोग किया जाता है।

इस क्रिया का अभ्यास तब तक करना चाहिए जब तक जिह्वा के अग्रभाग का स्पर्श भ्रूमध्य से न होने लगे। जिह्वा को मोड़कर सावधानी से तालू के ऊपरी छिद्र से अधिक-से-अधिक ऊपर की ओर ले जाने की कोशिश होनी चाहिए। इस प्रकार श्वास मार्ग बन्द हो जायेगा और ललना चक्र जाग्रत होगा।

**सावधानियाँ –** एक बार यदि जिह्वा कट जाय तो वाचा-शक्ति एवं भोजन-पानी निगलने की क्षमता क्षीण हो जाती है और इस त्रुटि का उत्क्रमण नहीं हो सकता है। इसी कारण हठयोग पद्धति प्राचीन योगियों द्वारा ही अपनायी जाती थी, जो आध्यात्मिक जागरण के लिए समर्पित होते थे और सांसारिक व्यवहार से विरक्त होते थे। खेचरी मुद्रा के प्रभाव से साधक सांसारिक व्यवहार के अनुपयुक्त हो जाता है।

**लाभ –** खेचरी मुद्रा का प्रभाव अत्यन्त सूक्ष्म होता है। मुख के पृष्ठ भाग में तथा तालू के पीछे के रन्ध्र में बहुत प्रकार के दबाव-बिन्दु एवं ग्रन्थियाँ होती हैं, जो इस अभ्यास द्वारा उद्दीप्त हो जाती हैं। ये बिन्दु समस्त शरीर को प्रभावित करते हैं। कई ग्रन्थियों की मालिश हो जाने से कुछ हार्मोन और लार-स्रवण को उत्तेजना प्राप्त होती है। इस क्रिया से भूख और प्यास के संवेगों में न्यूनता आती है और आन्तरिक शान्ति एवं स्थिरता में वृद्धि होती है। यह अभ्यास शरीर की प्राणवत्ता का रक्षण करता है और आन्तरिक उपचार में सहायक होता है। अंतत: इस मुद्रा में प्राण को उद्दीप्त कर कुण्डलिनी शक्ति को जाग्रत करने की क्षमता है। यह मुद्रा अपनी पूर्ण अवस्था को प्राप्त करने पर सूक्ष्म शरीर को भौतिक शरीर से विलग कर सकती है। इससे चेतना सूक्ष्म तथा भौतिक शरीर के मध्य के आकाश में विचरण करने लगती है। प्राचीन योग शास्त्रों में खेचरी मुद्रा को बड़ा महत्त्व प्रदान किया गया था।

***टिप्पणी –*** *खेचरी मुद्रा का शब्दार्थ होता है, 'ऊपर उड़ान भरने का भाव', ध्यान की उच्च अभ्यास-विधियों के लिए अत्यन्त मौलिक अभ्यासों में इसकी गणना की जाती है। कुण्डलिनी योग के अभ्यास के इच्छुक साधकों के लिए इस मुद्रा में निपुणता प्राप्त करना पूर्वापेक्षित है।*




## शाम्भवी मुद्रा

ध्यान के किसी आरामदायक आसन में बैठिये।

पीठ सीधी रखिये। हाथ घुटनों पर चिन्मुद्रा या ज्ञानमुद्रा में रहें।

सामने किसी बिन्दु पर दृष्टि एकाग्र कीजिये।

तत्पश्चात् सिर को स्थिर रखते हुए अधिक-से-अधिक ऊपर देखने का प्रयास कीजिये।

अब भ्रूमध्य पर दृष्टि जमाइये।

भ्रूमध्य पर चित्त एकाग्र कीजिये।

**लाभ –** आज्ञा चक्र को जाग्रत करने वाली शक्तिशाली क्रियाओं में इसका स्थान है। आज्ञा चक्र उच्चतर और निम्नतर चेतना का संधि-स्थल है। शारीरिक स्तर पर इस मुद्रा का अभ्यास आँखों के स्नायुओं को मजबूत बनाता है। इसके अभ्यास से मानसिक शान्ति मिलती है तथा तनाव और क्रोध समाप्त हो जाते हैं।

***टिप्पणी –*** *शाम्भवी मुद्रा का शाब्दिक अर्थ है, शम्भू की भंगिमा। इसे भ्रूमध्य दृष्टि भी कहते हैं।*

## अगोचरी मुद्रा अथवा नासिकाग्र दृष्टि

ध्यान के किसी आरामदायक आसन में बैठ जाइये।

मेरुदण्ड और सिर को सीधा रखिये।

नासिका के अग्र भाग पर दोनों नेत्र-गोलकों को स्थिर कीजिये।




**सावधानियाँ –** नेत्रों में तनाव उत्पन्न न हो। धीरे-धीरे कई सप्ताहों और महीनों में अभ्यास की अवधि में वृद्धि कीजिये।

**लाभ –** शाम्भवी मुद्रा की तरह इससे भी एकाग्रता में वृद्धि होती है। लम्बे समय तक पूर्ण सजगता से अभ्यास करने पर यह मूलाधार चक्र को जाग्रत करती है तथा ध्यानावस्था में ले जाती है। साधक को अन्तर्मुखी बनाकर उसे चेतना के इन्द्रियातीत तथा आध्यात्मिक स्तरों तक ले जाती है।

***टिप्पणी –*** *अगोचरी मुद्रा का शाब्दिक अर्थ है, अज्ञात भंगिमा। इसे नासिकाग्र दृष्टि भी कहते हैं तथा ध्यान की अनेक तकनीकों में इसका उपयोग होता है।*

## आकाशी मुद्रा

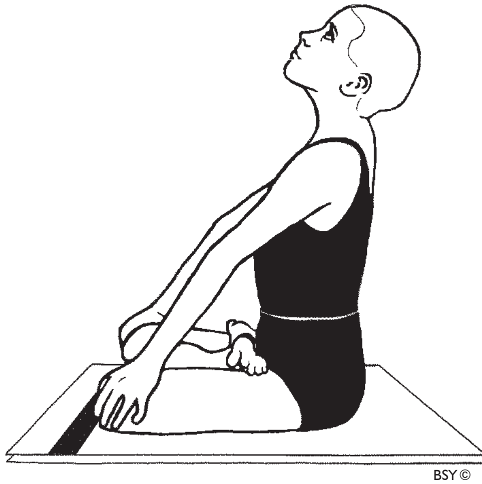
ध्यान के किसी आरामदायक आसन में बैठ जाइए।

जिह्वा को पीछे की ओर मोड़कर ऊपरी तालू से सटाते हुए खेचरी मुद्रा में रखिए। उज्जायी प्राणायाम एवं शाम्भवी मुद्रा का अभ्यास कीजिए।

साथ ही सिर को पीछे की ओर झुकाइये; किन्तु इतना अधिक न झुकाइये कि सिर को पीछे कंधों पर टिकाना पड़ जाए।

धीरे-धीरे और गहरी श्वास लीजिए।

**लाभ –** यह अभ्यास मन में शान्ति एवं सुकून पैदा करता है। इस अभ्यास में दक्षता प्राप्त होने पर विचार प्रक्रिया निरुद्ध हो जाती है और चेतना की उच्च अवस्था की प्राप्ति होती है।




**अभ्यास-टिप्पणी –** प्रारम्भ में झुके हुए सिर के साथ उज्जायी प्राणायाम करने पर गले में खराश उत्पन्न हो सकती है, किन्तु अभ्यास बढ़ने पर यह प्रक्रिया आरामदायक हो जाएगी।

***टिप्पणी –*** *आकाशी मुद्रा का शब्दार्थ 'आन्तरिक जगत् की भंगिमा' होता है। यह परम शक्तिशाली भंगिमा है। इसलिए इसका अभ्यास धीरे-धीरे एवं सावधानीपूर्वक होना चाहिए।*

## वज्रोली/सहजोली मुद्रा

### विधि 1 – सरल अभ्यास

सिद्धासन/सिद्धयोनि आसन अथवा ध्यान के किसी अन्य आरामदायक आसन में बैठ जाइए।
सिर एवं मेरुदण्ड सीधे रहें।
हाथों को घुटनों पर रखिये।
आँखों को बंद कर शरीर को विश्राम की स्थिति में लाइए।
चेतना को मूत्र मार्ग पर ले जाइए।
श्वास लेकर उसे अन्दर रोकिये और मूत्र-मार्ग को ऊपर खींचने का प्रयास कीजिए। यह पेशीय खिंचाव मूत्र-त्याग की प्रबल इच्छा को रोकने जैसा है।

इस संकुचन-क्रिया में पुरुषों के वृषण एवं स्त्रियों की योनि को थोड़ा गतिशील होना चाहिए।

इस संकुचन को जितनी देर संभव हो, रोक कर रखिये। संकुचन का त्याग करते समय श्वास छोड़िए और विश्राम की स्थिति में आइए।

**विधि 2 – उच्च अभ्यास**

उच्च विधि का अभ्यास सिद्ध गुरु के निर्देशन में ही प्रारम्भ करना चाहिए, अन्यथा स्थायी व्रण हो सकता है।

मूत्र-मार्ग में 12 इंच अथवा 30 सेन्टीमीटर लम्बी चाँदी की नली को प्रविष्ट कराया जाता है। इस नली के द्वारा पानी ऊपर की ओर खींचा जाता है। इस क्रिया में दक्षता प्राप्त होने पर नली से दूध खींचा जाता है। इस विद्या में पारंगत हो जाने के बाद मधु और बाद में पारे को ऊपर खींचा जाता है। लम्बे अभ्यास के बाद इन तरल द्रव्यों को मूत्र-नली में बिना किसी नली के पहुँचाया जा सकता है। पहले नली या शलाका को एक इंच या 21/2 सेन्टीमीटर तक ही अन्दर डालना चाहिए। इस दूरी को धीरे-धीरे 12 इंच या 30 सेन्टीमीटर तक बढ़ाना चाहिए।

**सावधानियाँ –** वज्रोली मुद्रा दो प्रकार की होती है। उच्च अभ्यास केवल पुरुषों के लिए उपयुक्त है और गलत तरीके से करने पर यह संकट उत्पन्न कर सकता है। इसलिए इस पुस्तक में जहाँ कहीं वज्रोली मुद्रा का प्रसंग आया है, उसका अभिप्राय सरल विधि से है।

**लाभ –** वज्रोली/सहजोली मुद्रा सम्पूर्ण मूत्र एवं प्रजनन-प्रणाली का नियमन करती एवं उसे पुष्ट बनाती है। यह मनो-लैंगिक द्वन्द्वों और अवांछित कामुक विचारों को दूर करने में सहायक है।

वज्रोली मुद्रा के अभ्यास से शरीर की काम-ऊर्जा के द्वार पर नियन्त्रण प्राप्त हो जाता है और साधक अपनी प्राणशक्ति को नियन्त्रित कर उसे आध्यात्मिक जागरण में नियोजित कर सकता है।

***टिप्पणी –*** *वज्रोली शब्द संस्कृत की वज्र धातु से बना है और सहजोली संस्कृत की सहज धातु से बना है तथा ओली का अर्थ 'ऊपर उड़ना' होता है। इसलिए वज्रोली वह शक्ति है जो विद्युत गति से ऊपर की ओर गमन करती है और सहजोली सहज जागरण की अतीन्द्रिय मनोवृत्ति है। वज्र एक नाड़ी का भी नाम है, जो जननेन्द्रियों को मस्तिष्क से जोड़ती है।*

## अश्विनी मुद्रा

### विधि 1 – द्रुत संकुचन

ध्यान के किसी आरामदायक आसन में बैठ जाइये।

शरीर को शिथिल कीजिये। आँखों को बन्द कीजिये।

गुदाद्वार की अवरोधिनी मांसपेशियों का कुछ क्षणों के लिये संकुचन व प्रसारण कीजिये। इस क्रिया को जितनी बार सम्भव हो दुहराइये।

### विधि 2 – अन्तर्कुम्भक के साथ संकुचन

पहली स्थिति में बैठ कर गुदाद्वार की अवरोधिनी मांसपेशियों का संकुचन करते हुए पूरक कीजिये।

संकुचन करते हुए ही अंतर्कुम्भक लगाइये।

रेचक के साथ मांसपेशियों का प्रसारण कीजिये।

उपलब्ध समय के अनुसार इसे कुछ बार दुहराइये।

**अवधि –** जब तक आराम से हो सके, तब तक अभ्यास कीजिये। अधिक जोर मत लगाइये।

**लाभ –** यह अभ्यास गुदा-पेशियों को सुदृढ़ बनाता है और मल-द्वार की विकृतियों को दूर करता है। इस अभ्यास के द्वारा गुदा की अवरोधिनी मांसपेशियों पर नियंत्रण प्राप्त किया जाता है। इस अभ्यास के द्वारा साधक अपनी प्राणशक्ति के ह्रास को रोकने तथा शक्ति का संचय करने में समर्थ होता है। तब वह इस शक्ति के प्रवाह को ऊपर की ओर उच्च उद्देश्य की पूर्ति के लिए मोड़ सकता है।

**अभ्यास टिप्पणी –** मूलबंध के पूर्वाभ्यास के लिए यह एक उपयोगी मुद्रा है।

***टिप्पणी –*** *अश्विनी मुद्रा का शाब्दिक अर्थ है, घोड़े की भंगिमा। यह मुद्रा घोड़े की उस मुद्रा से मिलती-जुलती है जिसमें वह लीद करने के बाद अपनी अवरोधिनी पेशियों का संचालन करता है।*

## मूलबन्ध

सिद्धासन या सिद्धयोनि आसन में बैठ जाइए ताकि एड़ी का दबाव मूलाधार प्रदेश पर पड़े। हाथों को घुटनों पर ज्ञान मुद्रा या चिन्मुद्रा में रखिये। आँखें बन्द रहें। शरीर को शिथिल रखिये।

तत्पश्चात् मूलाधार चक्र की स्थिति का ध्यान कीजिये। अपनी सजगता से इसको स्पर्श करने का प्रयत्न कीजिए। फिर इसका संकुचन कीजिए। इस स्थिति में अधिक-से-अधिक देर तक रहिए।

फिर धीरे-धीरे सामान्य स्थिति आने दीजिये।

कुछ क्षण विश्राम के बाद इसकी पुनरावृत्ति कीजिये।

**सावधानियाँ –** मूलबन्ध का अभ्यास धीरे-धीरे सतर्कता से करना चाहिए। इसका अभ्यास करते समय अधिक जोर मत लगाइए।

**लाभ –** इस बंध में गुदा-मार्ग एवं मूत्र-मार्ग के बीच स्थित मूलाधार चक्र का संकुचन एवं ऊपर की ओर खिंचाव होता है। यह संकुचन एवं कर्षण अपान वायु को ऊपर की ओर प्रवाहित होकर प्राण वायु के साथ मिलने के लिए उत्प्रेरित करता है। इससे अभ्यासी की प्राणशक्ति में वृद्धि होती है। इस अभ्यास में दक्षता प्राप्त होने से भौतिक, मानसिक एवं अतीन्द्रिय शरीरों के बीच सहज ही एकसूत्रता कायम हो जाती है।

**अभ्यास टिप्पणी –** अभ्यास की प्रारम्भिक स्थिति में साधक मूलाधार चक्र से सम्बन्धित मांसपेशियों को सिकोड़ें। बाद में जब साधक मूलाधार के सही बिन्दु को पहचान जायेंगे तब मांसपेशियों के संकुचन की आवश्यकता नहीं रह जायेगी। साधक अपनी सजगता द्वारा सही स्थान का स्पर्श कर लेंगे। यदि ऐसा होने लगे, तो मांसपेशियों के स्थूल संकुचन की अपेक्षा यह अवस्था कहीं अधिक प्रभावोत्पादक होगी।

***टिप्पणी –*** *मूल का अर्थ 'जड़' और बंध का अर्थ 'बाँधना' है। यह विधि अतीन्द्रिय शरीर के ऊर्ध्वभाग में अतीन्द्रिय शक्ति को बाँधकर रोक लेती है और उसे नीचे के अंगों में स्खलित नहीं होने देती है। यह अभ्यास मानसिक दबाव द्वारा भी मूलाधार चक्र को उद्दीप्त करता है, जिससे कुण्डलिनी-शक्ति के जागरण में सहायता प्राप्त होती है।*

## अश्विनी, वज्रोली/सहजोली और मूलबन्ध परिवर्तन

### प्रथम चरण

ध्यान के किसी आसन में, विशेषकर सिद्धासन या सिद्धयोनि आसन में बैठ जाइए। हाथों को ज्ञान या चिन्मुद्रा में रखिए।

वज्रोली/सहजोली मुद्रा की सरल विधि का अभ्यास कीजिए।

मुद्रा से होने वाले संकुचन को धीरे-धीरे दस की गिनती तक रोके रखिए। वज्रोली/सहजोली मुद्रा को मुक्त कर दीजिए।
इसके बाद मूलबंध लगाइए और दस की गिनती तक उसे रोककर रखिए। मूलबंध खोल दीजिए। जितनी देर तक बन पड़े इस प्रकार अभ्यास करते जाइए। अगले दिनों में गिनती दस से बढ़ाकर पन्द्रह या उससे अधिक कर दीजिए।

**द्वितीय चरण**

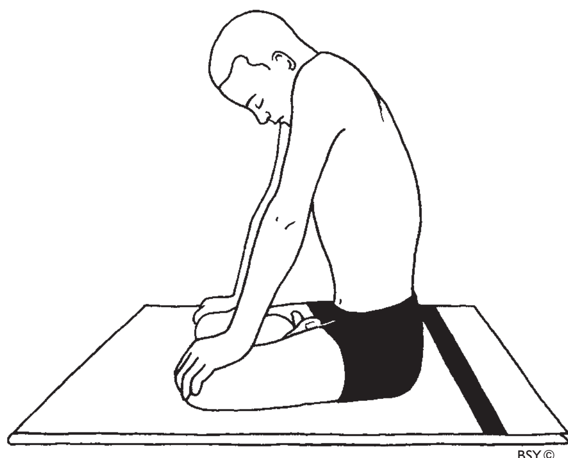
प्रथम अवस्था के ही आसन में बैठिये।
वज्रोली/सहजोली मुद्रा का अभ्यास कीजिये।
वज्रोली/सहजोली मुद्रा को मूलबन्ध के साथ जोड़ दीजिये।
इसके साथ ही अश्विनी मुद्रा का भी अभ्यास जोड़ दीजिये।
इन तीनों क्रियाओं की स्थिति में एक साथ कुछ क्षणों तक रहिये।
इसके बाद पहले अश्विनी मुद्रा छोड़िये, तत्पश्चात् मूलबन्ध और अन्त में वज्रोली/सहजोली मुद्रा।

**अभ्यास टिप्पणी –** अश्विनी मुद्रा, वज्रोली मुद्रा/सहजोली मुद्रा और मूलबंध की भिन्नता को समझने के लिए यह अभ्यास बड़ा सहायक है। इन तीनों क्रियाओं की मूल विधियों को अलग-अलग सीखने के पश्चात् ही इस अभ्यास की चेष्टा करनी चाहिए। अभ्यास की प्रारम्भिक अवस्था में साधक इन तीनों क्रियाओं की सूक्ष्म भिन्नता को नहीं समझ पाने के कारण उस क्षेत्र की समस्त पेशियों को तान देते हैं। वे यह समझने की कोशिश नहीं करते कि किस अभ्यास की कौन-सी विधि वे अपना रहे हैं। यह भूल करने पर कुण्डलिनी योग की उच्च क्रियाओं के समय इनका उपयोग करने पर इन तीनों क्रियाओं की उपादेयता समाप्त हो जाती है। साधक की एकाग्रता तीनों क्रियाओं के लिए तीन भिन्न क्षेत्रों के संकुचन के भेद को समझने पर होनी चाहिए। प्रतिदिन इसका अभ्यास तब तक करें जब तक इन तीनों का पारस्परिक भेद अच्छी तरह समझ में न आ जाय।

## जालन्धर बन्ध

### विधि 1 – राजयोग पद्धति

सुखासन के अतिरिक्त ध्यान के किसी भी आसन में बैठ जाइये ताकि घुटने स्थिरता से धरती पर टिके रहें। जो किसी आसन में नहीं बैठ सकते, वे




खड़े रहकर भी जालन्धर बन्ध का अभ्यास कर सकते हैं।
हथेलियों को घुटनों पर रखिए।
सम्पूर्ण शरीर को शिथिल करके आँखों को बन्द कर लीजिए।
दीर्घ पूरक के बाद अन्तर्कुम्भक लगाइये।
सिर को सामने झुकाइये तथा ठुड्ढी को छाती पर उरोस्थि से लगा कर दबाइये।
भुजाओं को सीधा करते हुए उन्हें इस स्थिति में स्थिर रखिये।
साथ ही दोनों कन्धों को ऊपर उठाते हुए कुछ सामने की ओर लाइए। इससे हाथ स्थिर रहेंगे। हथेलियाँ घुटनों पर ही रहेंगी।
इसी अंतिम स्थिति में श्वास रोक कर उतनी देर तक रहिये, जितनी देर तक आराम से रह सकें।
फिर कंधों को शिथिल कीजिये, भुजाओं को मोड़ लीजिये और बन्ध खोलते हुए सिर को ऊपर उठाइये।
धीरे-धीरे रेचक कीजिये।
श्वास सामान्य होने पर इस प्रक्रिया की पुनरावृत्ति कीजिये।

**विधि 2 – कुण्डलिनी योग पद्धति**

जालन्धर बन्ध की यह पद्धति राजयोग से मिलती-जुलती है। थोड़ा-सा अन्तर यही है कि इसमें कंधों और भुजाओं पर बिना दबाव डाले ही सूक्ष्म

रूप से अभ्यास किया जाता है।

केवल सिर को नीचे झुकाया जाता है जिससे ठुड्ढी उरोस्थि को छू सके। इस स्थिति में साधक को मानसिक रूप से हमेशा इस बात का ख्याल रहना चाहिये कि धड़ के क्षेत्र में प्राणशक्ति का संपीड़न हो रहा है।

**श्वसन –** इस क्रिया को बहिर्कुम्भक के साथ भी किया जा सकता है। ठुड्ढी को झुकाकर छाती पर दबाव डालने के कारण इस अभ्यास में वायु नलिका बन्द हो जाती है तथा गले के अनेक अंगों पर दबाव पड़ता है।

**सीमाएँ –** जो लोग उच्च रक्तचाप, अन्त:कपाल दबाव तथा हृदय रोगों से पीड़ित हों, उन्हें इसका अभ्यास कुशल निर्देशक के मार्गदर्शन में ही करना चाहिये।

**लाभ –** जालन्धर बन्ध के अभ्यास से सम्पूर्ण शरीर तथा मन का शिथिलीकरण हो जाता है।

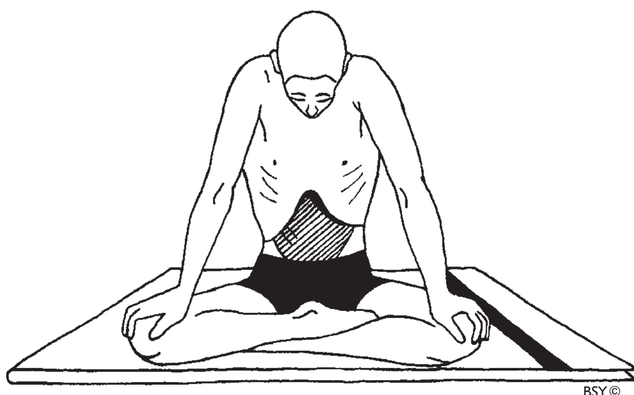
हृदय की धड़कनों के मन्द हो जाने से हृदय को आराम मिलता है। गले के हिस्से में स्थित शिरानाल अभिग्राहकों पर इस प्रक्रिया से उचित दबाव पड़ता है, जिसके फलस्वरूप मस्तिष्क को रक्त प्रदान करने वाली गल-शिरा के रक्तचाप से ये अभिग्राहक प्रभावित होते हैं। यदि रक्तचाप उच्च हो, तो ये अभिग्राहक हृदय और मस्तिष्क को संदेश देते हैं तथा दिल की धड़कने कम हो जाती हैं। यदि रक्तचाप निम्न हो जाये तो दिल की धड़कन बढ़ जाती है। ये अभिग्राहक दबाव के प्रति अत्यन्त संवेदनशील होते हैं। अत: जालन्धर बन्ध में इन पर दबाव पड़ने के कारण हृदय की धड़कन धीमी हो जाती है और मन को शांति मिलती है।

इससे थायरॉइड और पैराथायरॉइड ग्रन्थियों की मालिश होती है। इनकी क्रियाशीलता बढ़ती है।

इनका, विशेषकर थायरॉइड ग्रन्थि का शारीरिक-रचना के विकास तथा प्रजनन क्रियाओं पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। ग्रन्थियों की क्षमता बढ़ने से समस्त शरीर प्रभावित होता है। मानसिक तनाव, चिन्ता व क्रोध के निवारणार्थ यह एक अच्छा अभ्यास है।

**अभ्यास टिप्पणी –** जब तक ठुड्ढी छाती से लगी रहे और जब तक सिर ऊपर उठकर सीधा नहीं हो जाये, श्वास रोके रहें।

***टिप्पणी –*** *इस महत्त्वपूर्ण यौगिक विधि से समस्त प्राण-ऊर्जा धड़ में सिमट जाती है जो कुण्डलिनी जागरण में सहायक है।*




## उड्डियान बंध

सिद्धासन/सिद्धयोनि आसन या पद्मासन में मेरुदण्ड को सीधा रख कर बैठ जाइये।

घुटने भूमि को छूते रहें।

हथेलियों को घुटनों पर रखिये। आँखें बन्द करके शरीर को शिथिल कीजिये।

पूर्ण गहरा रेचक कीजिए और श्वास को बाहर रोकिये।

जालंधर बंध लगाइये।

अब उदर की मांसपेशियों को अधिक-से-अधिक ऊपर तथा भीतर की ओर संकुचित कीजिये।

यह पूर्ण अवस्था है।

जितनी देर तक आराम से इस बंध को लगाए रख सकें, लगाए रखिए।

तत्पश्चात् क्रमश: उदर के स्नायुओं तथा जालन्धर बन्ध को शिथिल कीजिये।

श्वास अन्दर लीजिये।

जब श्वास की गति सामान्य हो जाए, तब इस क्रिया का अभ्यास फिर से शुरू कीजिये।

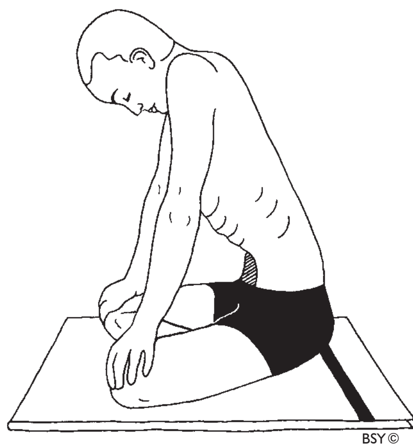
**सीमाएँ –** हृदय-रोगी, उच्च रक्तचाप, वृहदान्त्र शोथ, आँत के वर्ण, हार्निया, ग्लूकोमा, आन्तर-कपालीय दाब, पेप्टिक तथा ड्यूडेनल अलसर से पीड़ित व्यक्ति और गर्भवती महिलाएँ इस क्रिया का अभ्यास न करें।

**लाभ –** उड्डियान बंध सौर जालक को उद्दीप्त करता है और शरीर के अन्दर ऊर्जा-वितरण पर इसका सूक्ष्म प्रभाव पड़ता है। यह चूषण-दाब उत्पन्न करता

है, जो प्राण और अपान के प्रवाह को पलट कर समान वायु से युक्त कर देता है और मणिपुर चक्र को उद्दीपन प्रदान करता है। तब सूक्ष्म शक्ति का विस्फोट होता है, जो सुषुम्ना नाड़ी के मार्ग से ऊर्ध्वगमन करती है।

**अभ्यास टिप्पणी –** खाली पेट ही इस क्रिया का अभ्यास कीजिये। श्वास अन्दर लेने के पूर्व ठुड्ढी ऊपर उठा लीजिये।

***टिप्पणी –*** *उड्डियान शब्द का अर्थ है, ऊपर उड़ना। इस बंध में उदर तथा मध्यपट को ऊपर उठाने की क्रिया की जाती है। इसका उद्देश्य है प्राण को शरीर के ऊपरी हिस्सों में बाँधकर प्राणशक्ति को ऊर्ध्वगामी बनाना।*




**महाबन्ध**

ध्यान के किसी भी आसन में बैठ जाइये।
पद्मासन, सिद्धासन या सिद्धयोनि आसन सबसे उत्तम हैं।
हथेलियाँ घुटनों पर और मेरुदण्ड सीधा रहे।
आँखों को बन्द कर पूरे शरीर को शिथिल कीजिए।
धीरे-धीरे श्वास छोड़ दीजिये।
श्वास को बाहर रोकिए।
जालन्धर बन्ध लगाइये।
फिर उड्डियान बन्ध लगाइये।
फिर मूलबन्ध लगाइये।

आराम से इस स्थिति में आप जितनी देर रह सकते हों, रहिये।
इस स्थिति में तीनों बन्धों पर अपनी चेतना को ले जाइये।
क्रमशः कुछ क्षणों तक वहाँ अपनी चेतना को स्थिर कीजिये।
तब सर्वप्रथम मूलबन्ध शिथिल कीजिये।
तत्पश्चात् उड्डियान बन्ध।
अन्त में जालन्धर बन्ध शिथिल करके सिर सीधा कीजिये।
थोड़ी-सी श्वास बाहर निकाल कर, धीरे-धीरे श्वास लीजिये।
श्वास की गति सामान्य हो जाने पर इस क्रिया की पुनरावृत्ति कीजिये।

**सावधानियाँ –** कई क्रियाओं का संयुक्त रूप यह महाबन्ध बहुत शक्तिशाली अभ्यास है। अतः तीनों बन्धों और नाड़ी शोधन प्राणायाम का भली प्रकार अभ्यास किये बिना इस क्रिया का अभ्यास नहीं करना चाहिये।

**लाभ –** अपने अंदर की छुपी हुई अतीन्द्रिय तथा आध्यात्मिक शक्ति को विकसित करने हेतु यह महाबन्ध अत्यन्त उपयोगी क्रिया है। ध्यान के लिए यह मन को अन्तर्मुखी बनाता है। इसमें तीनों बन्धों के लाभ मिलते हैं।

***टिप्पणी –*** *महाबन्ध मूलबन्ध, जालन्धर बन्ध, उड्डियान बन्ध और बहिर्कुम्भक की मिली-जुली क्रिया है और प्राणायाम की विधियों के अनुरूप इनका अभ्यास किया जाता है।*

# 12

# प्राणायाम

योगाभ्यास का उद्देश्य चाहे रोग-निवारण या स्वास्थ्य-लाभ हो अथवा आध्यात्मिक उपलब्धि, साधक के लिए प्राण तथा सूक्ष्म शक्ति पर नियन्त्रण प्राप्त करना आवश्यक है। योग स्वयं ही जीवनीशक्ति का विज्ञान है। मनुष्य के अन्दर ऊर्जा के प्रवाह को संतुलित करने का सबसे सरल तरीका है, प्राणायाम।

बहुत से लोग प्राणायाम को श्वास-नियंत्रण की शारीरिक क्रिया मात्र समझते हैं। यह उनकी भ्रान्त धारणा है। प्राणायाम के प्रमुख प्रभाव तंत्रिका-तंत्र और सूक्ष्म अतीन्द्रिय ऊर्जा-तंत्र में परिलक्षित होते हैं, जबकि श्वास पर नियंत्रण इन सूक्ष्म क्रियाओं को कुशलतापूर्वक संचालित करने का एक साधन मात्र है। श्वास को 'जीवन का सूत्र' कहा जाता है और हमारे जीवन की समस्त क्रियाओं को इसके द्वारा ही परिशोधित एवं संतुलित किया जाता है। यदि श्वास की क्रियाएँ ठीक न हों तो जीवन के समस्त कार्य-व्यापार अस्त-व्यस्त हो जाएँगे।

अनेक प्रकार के ध्यान के अभ्यास प्राणायाम पर आधारित होते हैं। ध्यान की क्रियाओं के अन्तर्गत इसका उपयोग किया जाता है। यह साधक के शरीर और मन को ध्यान के निरापद एवं सफल अभ्यास के लिए तैयार करता है और ध्यान में बैठने के पूर्व मन को अन्तर्मुखी बनाने में योगदान देता है। यह बहुत महत्त्वपूर्ण विद्या है। हमारा सुझाव है कि जो ध्यान में सफलता प्राप्त करना चाहते हैं, वे सर्वप्रथम प्राणायाम की विधियों में दक्षता प्राप्त कर लें। इससे उन्हें बड़ी सहायता मिलेगी। लेकिन एक चेतावनी दी जाती है कि प्राणायाम अत्यन्त शक्तिशाली होता है। जिनके शरीर में किसी तरह का असंतुलन हो, वे कुशल योग शिक्षक के मार्गदर्शन के बिना इसका अभ्यास न करें। यह

चेतावनी विशेषकर उन लोगों के लिए है जो वृद्ध हैं अथवा हृदय-रोग से ग्रस्त हैं। इसके अतिरिक्त एक और चेतावनी दी जाती है कि प्राणायाम प्रारम्भ करने के बाद यदि कोई अनियमित प्रभाव दिखाई पड़े तो अभ्यास बंद कर विशेषज्ञ से मार्गदर्शन प्राप्त कर लें। साथ ही अभ्यास विधियों को धीरे-धीरे क्रमश: अच्छी तरह सीख लेना चाहिए। नाड़ी शोधन प्राणायाम को सिद्ध करने में काफी समय लग जाता है। जब तक प्रारम्भिक चरण के अभ्यासों में कुशलता प्राप्त न हो जाय तब तक अगले चरण के अभ्यास के लिए शीघ्रता नहीं करनी चाहिए। यदि इन सुझावों का निष्ठापूर्वक पालन करेंगे, तो प्राणायाम से कई प्रकार के गुणकारी लाभ प्राप्त होंगे।

## नाड़ी शोधन प्राणायाम

पूरक, अन्तर्कुम्भक, रेचक तथा बहिर्कुम्भक में श्वास-नियन्त्रण प्राणायाम-साधना की सबसे महत्त्वपूर्ण आवश्यकता है। नाड़ी शोधन की प्रत्येक अवस्था का क्रमिक अभ्यास करना चाहिए। हाँफने की स्थिति न आने पाये। अभ्यास के बीच किसी प्रकार की कठिनाई होने पर तुरंत अभ्यास बन्द करके योग्य शिक्षक की सलाह लेनी चाहिए। नाड़ी शोधन का अभ्यास अगर ठीक तरह से किया जाये, तो यह शरीर की शुद्धि तथा मन को शान्त करने की दृष्टि से सर्वोत्तम प्राणायाम सिद्ध होगा। कुछ लोगों के लिए इसका अभ्यास अनुकूल नहीं होता। उन्हें इसके अभ्यास के परिणामस्वरूप अपने शरीर के अन्दर हो रहे परिवर्तनों के प्रति सजग रहना चाहिए।

## नाड़ी शोधन प्राणायाम

### विधि 1 – प्रारम्भिक अभ्यास

ध्यान के किसी आरामदायक आसन बैठ जाएँ, जैसे, सिद्धासन/सिद्धयोनि आसन या पद्मासन।

आँखों को बन्द कर लें और पूरे शरीर के प्रति सजग हो जाएँ। सिर एवं मेरुदण्ड को सीधा रखें।

सम्पूर्ण शरीर को ढीला छोड़ दें।

अब अपनी सजगता को शरीर के अन्दर चल रही स्वाभाविक श्वसन-प्रक्रिया पर ले जाएँ।

प्रत्येक श्वास-प्रश्वास के प्रति सजग बन जाएँ।

दाहिने हाथ से नासाग्र मुद्रा का अभ्यास करें, अनामिका और मध्यमा अंगुलियों को भ्रूमध्य पर रखें और बायें हाथ को घुटने पर चिन् या ज्ञान-मुद्रा में रखें।
दोनों नासिका छिद्रों से श्वास लें।
अँगूठे से दाहिने नासिकाछिद्र को बंद कर लें।
बायें नासिकाछिद्र से धीरे-धीरे पाँच बार श्वास लें और छोड़ें।
श्वास-प्रश्वास की गति सामान्य रहनी चाहिए।
प्रत्येक श्वास के प्रति सजग रहें।
पाँच श्वास-प्रश्वास के बाद दाहिने नासिकाछिद्र पर से अँगूठे का दबाव हटा दें। बायें नासिकाछिद्र को अनामिका से दबाकर वायु-प्रवाह को अवरुद्ध कर दें।
श्वास-प्रश्वास की गति सामान्य रख कर पाँच बार दाहिने नासिकाछिद्र से श्वास लें और छोड़ें।
हाथ को नीचे ले आयें और दोनों नासिकाछिद्रों से पाँच बार श्वास लें और छोड़ें।
यह एक चक्र हुआ।
कुछ मिनटों तक पाँच चक्र अभ्यास करें।
15 दिनों तक यह अभ्यास करने के बाद विधि 2 का अभ्यास आरम्भ करें।

## विधि 2 – एकान्तर नासिका श्वसन

इस विधि में श्वास-प्रश्वास की अवधि नियंत्रित की जाती है।
अँगूठे से दायीं नासिका को बंद कर बायीं नासिका से श्वास लें।
साथ ही मन-ही-मन गणना करें, 1 ॐ, 2 ॐ, 3 ॐ, जब तक आराम से श्वास पूरी न हो जाए, तब तक यह गणना जारी रखें। यह मौलिक गणना है।
अब बायीं नासिका को अनामिका से बंद कर लें, दायें नासिकाछिद्र पर से अँगूठे का दबाव हटा लें और दायीं नासिका से श्वास छोड़ते समय गिनती करें, 1ॐ, 2ॐ, 3ॐ . . . श्वास एवं प्रश्वास का समय बराबर रहना चाहिए।
दायीं नासिका से श्वास लें तथा बाँयीं नासिका से श्वास छोड़ें और इसी प्रकार गणना करें।
यह एक चक्र हुआ।
दस चक्र अभ्यास करें।

**अनुपात और अवधि –** कुछ दिनों के अभ्यास के बाद पूरक/रेचक की लम्बाई एक की गणना से बढ़ाएँ। बिना अधिक जोर लगाए, एक-एक कर गिनती बढ़ाते हुए श्वास की लम्बाई को 24:24 की गणना तक बढ़ाते जाइए। श्वास को उसकी स्वाभाविक क्षमता से अधिक न बढ़ायें। यदि असुविधा महसूस होने लगे तो गणना कम कर दें।

इस अनुपात में दक्षता प्राप्त हो जाने पर अनुपात को 1:2 कर दें। उदाहरण के लिए, 4 की गणना तक श्वास लें और 8 की गणना तक श्वास छोड़ें। इस प्रकार अनुपात को 12:24 तक ले जाएँ।

जब इस विधि का अभ्यास पूरी सहजता के साथ होने लग जाए, तब विधि 3 का अभ्यास आरम्भ करें।

## विधि 3 – अन्तर्कुम्भक के साथ

इस विधि में अन्तर्कुम्भक को सम्मिलित किया गया है।

पाँच की गिनती तक बायीं नासिका से श्वास लें, दोनों नासिकाओं को बंद कर लें और वायु को पाँच की गिनती तक अन्दर ही फेफड़े में रोक लें।

फेफड़े में ली गई श्वास को रोक रखने के लिए कण्ठ-द्वार को थोड़ा संकुचित किया जा सकता है।

दायीं नासिका को खोल दें, थोड़ी श्वास लें और फिर पाँच की गिनती तक श्वास छोड़ें।

दायीं नासिका से पाँच की गिनती तक श्वास लें और दोनों नासिकाओं को बंद कर उसे पाँच की गिनती तक भीतर रोक रखें।

बायीं नासिका खोल दें, थोड़ी श्वास अन्दर लें और फिर पाँच की गिनती तक श्वास बाहर छोड़ें।

यह अभ्यास का एक चक्र हुआ।

दस चक्र अभ्यास करें।

**अनुपात और अवधि –** श्वास लेने, रोकने और छोड़ने के बीच के अनुपात को कायम रखना बहुत महत्त्वपूर्ण है। अधिक लम्बे समय तक श्वास को रोके रखने की क्षमता का विकास हो जाने पर यह अनुपात बदलेगा। 1:1:1 के अनुपात में निपुणता प्राप्त कर लेने पर अनुपात को 1:1:2 कर दें। उदाहरणार्थ, 5 की गिनती तक श्वास लें, 5 की ही गिनती तक अन्तर्कुम्भक करें और 10 की गिनती तक श्वास छोड़ें। कुछ सप्ताहों के

अभ्यास के बाद जब इस अनुपात पर पकड़ कायम हो जाए, तो अनुपात को 1:2:2 तक बढ़ा दें। 5 की गिनती तक श्वास लें, 10 की गिनती तक कुम्भक करें और 10 की ही गिनती तक श्वास छोड़ें। इस अनुपात में दक्षता प्राप्त हो जाने के बाद क्रमश: श्वास लेने में एक की, कुम्भक में दो की और श्वास छोड़ने में भी दो की गिनती बढ़ाएँ। एक चक्र की गणना होगी 6:12:12। जब यह अनुपात बिना कठिनाई के सिद्ध हो जाय तो गणना को बढ़ाकर 7:14:14 कर दें। क्रमश: एक या दो वर्षों की अवधि में अनुपात को बढ़ाते जाएँ और 24:48:48 तक पहुँचा दें। उसके बाद क्रमश: वृद्धि करते हुए अनुपात को 1:3:2 और तब 1:4:2 तक लाकर विधि 4 का अभ्यास आरम्भ करें।

**विधि 4 – अन्तर और बहिर्कुम्भक के साथ**

इस विधि में बहिर्कुम्भक को सम्मिलित किया गया है। बायीं नासिका से श्वास लें, विधि 3 के समान श्वास को भीतर रोकें और फिर दायीं नासिका से श्वास छोड़ें।

श्वास छोड़ने के बाद जब फेफड़े अधिक-से-अधिक खाली हो जाएँ, तब दोनों नासिकाओं को बंद कर बाहर निकाली गयी श्वास को इच्छित गणना तक बाहर ही रोक कर रखें।

श्वास को फेफड़े से बाहर रोके रखने के लिए कण्ठ-द्वार को थोड़ा सिकोड़ना पड़ सकता है।

फेफड़े और कण्ठ-द्वार के बंध को शिथिल करने हेतु श्वास लेने के तुरंत पहले दाहिनी नासिका से थोड़ी श्वास छोड़ दें।

धीरे-धीरे दायीं नासिका से श्वास लें, अन्तर्कुम्भक करें और फिर बायीं नासिका से श्वास छोड़ें।

पुन: दोनों नासिकाओं को बंद कर इच्छित गणना तक बहिर्कुम्भक करें।

यह एक चक्र हुआ।

पाँच चक्र अभ्यास करें।

**अनुपात और अवधि –** पूरक, अन्तर्कुम्भक, रेचक और बहिर्कुम्भक के लिए 1:4:2:2 के अनुपात से प्रारम्भ करें। पूरक की अवधि धीरे-धीरे 5 से 6, फिर 6 से 7 के क्रम में बढ़ाते जाएँ और रेचक तथा कुम्भक की अवधि को इसी क्रम में समायोजित करें।

**उच्च अभ्यास –** नाड़ी शोधन का अभ्यास जालंधर, मूल और उड्डियान बंधों के साथ किया जा सकता है। सर्वप्रथम केवल अन्तर्कुम्भक के साथ जालंधर बंध लगाएँ। जब इसमें दक्षता प्राप्त हो जाए तब बहिर्कुम्भक के साथ जालंधर बंध लगाएँ। फिर अन्तर्कुम्भक के साथ मूलबंध को जोड़कर जालंधर बंध का अभ्यास करें और उसके बाद बहिर्कुम्भक लगाकर यही क्रिया करें। जब इस क्रिया में निपुणता प्राप्त हो जाय तब केवल बहिर्कुम्भक के साथ उड्डियान बंध लगाएँ।

**अवधि –** प्रतिदिन 5 से 10 चक्र अथवा 10 से 15 मिनट तक।

**लाभ –** नाड़ी शोधन शारीरिक स्वास्थ्य एवं मानसिक ओजस्विता को सुनिश्चित करता है। यह प्राणिक अवरोधों को दूर करता और इड़ा एवं पिंगला के बीच संतुलन लाता है, जिससे सुषुम्ना नाड़ी प्रवाहित होने लगती है। इसके फलस्वरूप गहन ध्यान की अवस्था प्राप्त होती है और आध्यात्मिक जागरण होता है।

**अभ्यास-टिप्पणी –** अनेक साधक श्वास की अवधि की गणना के लिए ॐ नमः शिवाय अथवा गायत्री मंत्र का जाप एक निश्चित संख्या तक करते हैं। इससे जप एवं प्राणायाम, दोनों के लाभ प्राप्त होते हैं और साथ-ही अभ्यास अधिक सरल हो जाता है। जब नाड़ी-शोधन के बाद अन्तर त्राटक या चिदाकाश धारणा जैसी एकाग्र होने वाली ध्यान-साधना की जाती है, तब यह अत्यन्त प्रभावकारी सिद्ध होता है।

## उज्जायी प्राणायाम

सरल खेचरी मुद्रा का अभ्यास करें। कण्ठ-द्वार को संकुचित करें।

जब आप इस स्थिति में श्वास लेंगे तब गले से हलके खर्राटे की-सी आवाज आयेगी, जैसी कि सोते बच्चे के गले से आती है।

ऐसा अनुभव करें कि श्वसन क्रिया नासिका से नहीं, गले से हो रही है।

इसका अभ्यास लम्बी अवधि तक और सभी प्रकार की ध्यान विधियों में किया जा सकता है (उन विधियों को छोड़कर जिनमें सस्वर मंत्रोच्चारण किया जाता है)।

**लाभ –** यह अत्यन्त सरल प्राणायाम है, किन्तु प्राण-शरीर पर इसका बड़ा शक्तिशाली एवं सूक्ष्म प्रभाव पड़ता है। ध्यान के समय इसका अभ्यास करना बड़ा ही उपयोगी होता है, क्योंकि यह मन को अधिकाधिक शान्ति

प्रदान करता है। उज्जायी प्राणायाम करते समय ग्रीवा धमनी के कोटर नालों (कैरोटिड साइनस) पर दबाव पड़ने के कारण रक्तचाप में कमी आती है। फलस्वरूप मानसिक तनाव में भी कमी आती है और मन में विचार-प्रक्रियाओं की उथल-पुथल घटती है। इस प्रकार उज्जायी प्राणायाम ध्यान के अभ्यास में सहायक है।

**अभ्यास-टिप्पणी –** सामान्यत: उज्जायी प्राणायाम खेचरी मुद्रा के साथ किया जाता है, जिससे गले में खराश या दर्द की संभावना नगण्य हो जाती है।

## भस्त्रिका प्राणायाम

भस्त्रिका प्राणायाम में फेफड़ों का उपयोग लोहार की धौंकनी की तरह होता है। यह मन और स्नायु संस्थान को शुद्ध बना देता है। इसका अभ्यास मन को अन्तर्मुखी बनाता है तथा एकाग्रता प्रदान करता है। अभ्यास करते समय यदि किसी प्रकार की विपरीत प्रतिक्रिया दिखाई पड़े, तो योग-शिक्षक की राय लें।

### विधि 1 – मूल-विधि

हाथों को ज्ञान या चिन्मुद्रा में रखकर ध्यान के किसी स्थिर आसन में बैठ जायें। आँखों को बंद कर पूरी तरह विश्रान्त हो जाएँ।

यह सुनिश्चित कर लें कि मेरुदण्ड सीधा है और सिर बीचोंबीच एवं संतुलित है।

गहरी श्वास लें और नासिका-मार्ग से बलपूर्वक श्वास छोड़ें।

फिर तुरंत समान बल के साथ श्वास लें और छोड़ें।

इस प्रकार श्वास-प्रश्वास की दस आवृत्तियाँ करें।

यह एक चक्र हुआ।

10 चक्रों तक अभ्यास करें।

**अभ्यास-टिप्पणी –** श्वास की लय को बनाए रखते हुए धीरे-धीरे श्वसन की गति में तीव्रता लायें। श्वास और प्रश्वास समान रहनी चाहिए।

### विधि 2 – बायीं, दाहिनी एवं दोनों नासिकाओं से

ध्यान के किसी आरामदायक आसन में बैठ जायें।

दाहिने अँगूठे से दाहिनी नासिका को बंद करते हुए नासाग्र मुद्रा धारण कर लें।

बायीं नासिका से धीरे-धीरे श्वास लें।
फिर विधि 1 की तरह तीव्र श्वास-प्रश्वास करें।
लगातार 20 श्वास-प्रश्वास करें।
अंतिम प्रश्वास थोड़ी अधिक बलपूर्वक और लम्बी होनी चाहिए।
बायीं नासिका बंद कर लें और दाहिनी नासिका खोलकर उससे धीमी और गहरी श्वास लें।
बीस की गणना तक दाहिनी नासिका से तीव्र श्वास-प्रश्वास प्रारम्भ करें। अंतिम प्रश्वास अधिक गहरी और लम्बी हो। दाहिनी नासिका से श्वसन करने के बाद नासाग्र मुद्रा खोल दें और हाथों को घुटनों पर रख लें। दोनों नासिकाओं से श्वास-प्रश्वास करते हुए इस प्रक्रिया को दुहरायें।
बायीं, दाहिनी और दोनों नासिकाओं से मिलाकर अभ्यास का यह एक चक्र हुआ।
इस प्रकार 5 चक्र अभ्यास करें।

**विधि 3 – अन्तर्कुम्भक के साथ**

बायीं नासिका से भस्त्रिका प्रारम्भ करें और 30 श्वासों तक जारी रखें।
फिर बायीं नासिका से गहरी श्वास लें, दोनों नासिकाछिद्रों को बंद कर लें और जितनी देर बन सके श्वास को रोके रखें।
बायीं नासिका से गहरी श्वास छोड़ दें।
बायीं नासिका बंद कर लें और दायीं नासिका खोलें तथा 30 बार तीव्र गति से श्वसन करें।
फिर दायीं नासिका से गहरी श्वास लें, दोनों नासिका छिद्रों को बन्द कर लें तथा जितनी देर सम्भव हो श्वास को रोके रखें।
दायीं नासिका से श्वास छोड़ें तथा नासाग्र मुद्रा को भी विश्राम दें और 30 श्वास तक दोनों नासिकाछिद्रों से भस्त्रिका का अभ्यास करें।
अन्तिम प्रश्वास के पश्चात् दोनों नासिकाछिद्रों से गहरी श्वास अन्दर लें तथा श्वास को जितनी देर सम्भव हो रोके रहें, तत्पश्चात् दोनों नासिकाछिद्रों से प्रश्वास करें।
यह एक चक्र है।
ऐसे 10 चक्र पूर्ण करें।
अधिक जोर न लगायें।

**विधि 4 – अन्तर्कुम्भक तथा जालन्धर बन्ध के साथ**

विधि 3 का अभ्यास करें, श्वास की गिनती 40 तक बढ़ा दें।
अन्तर्कुम्भक की अवस्था में जालन्धर बन्ध लगा लें।
दायीं तथा बायीं नासिका से कुम्भक की अवधि को बराबर रखें।
इस प्रकार अधिकतम 10 चक्र पूरे करें।

**विधि 5 – अन्तर्कुम्भक, जालन्धर तथा मूलबन्ध के साथ**

विधि 4 का अभ्यास करें, श्वास की गिनती 50 तक बढ़ा दें।
अब मूलबन्ध तथा जालन्धर बन्ध का अभ्यास भी सम्मिलित कर लें।
कुम्भक की अवधि को बढ़ा दें।
इस प्रकार 10 चक्रों तक अभ्यास करें।

**विधि 6 – बहिर्कुम्भक तथा महाबन्ध के साथ**

श्वास की गिनती सौ तक बढ़ा दें।
अन्तर्कुम्भक के बदले बहिर्कुम्भक का अभ्यास करें तथा जितनी देर सम्भव हो कुम्भक लगाये रखें।
कुम्भक के समय महाबन्ध का अभ्यास भी करें, अर्थात् जालन्धर, उड्डियान तथा मूलबन्ध एक साथ।
इस प्रकार 10 चक्र अभ्यास करें।

**सावधानियाँ –** अभ्यास के दौरान मूर्च्छा या पसीना आने के लक्षण प्रकट हों तो समझना चाहिए कि अभ्यास में कहीं त्रुटि हो रही है। बहुत जोर लगाकर श्वास-प्रश्वास न करें। मुखाकृति को विकृत न करें और शरीर को अधिक न हिलायें-डुलायें, क्योंकि ये क्रियायें भी त्रुटिपूर्ण अभ्यास की सूचक हैं। सम्पूर्ण अभ्यास के दौरान साधक को विश्रान्त रहना चाहिए।
नये अभ्यासियों को सावधानीपूर्वक अभ्यास करना चाहिए और यथासंभव किसी योग्य शिक्षक के मार्गदर्शन में अभ्यास प्रारम्भ करना चाहिए।

**सीमाएँ –** उच्च रक्तचाप, चक्कर आना, रक्त-संचार में गड़बड़ी, या हृदय अथवा श्वसन-प्रणाली के रोग से ग्रस्त व्यक्ति को भस्त्रिका का अभ्यास नहीं करना चाहिए।

**लाभ –** यह ध्यान के लिए एक महत्त्वपूर्ण अभ्यास है, क्योंकि ऑक्सीजनीकरण के द्वारा यह मन एवं तन्त्रिका-तन्त्र का शोधन करता है।

भस्त्रिका मन को अन्तर्मुखी और एकाग्र बनाता है, इसीलिए ध्यान के लिए बैठने के पूर्व इसका अभ्यास उपयोगी माना जाता है।

**अभ्यास टिप्पणी –** भस्त्रिका प्राणायाम के बाद तुरन्त ध्यान का कोई अभ्यास, जैसे, जप, चिदाकाश धारणा अथवा अन्तर्मौन का अभ्यास करना चाहिये।

***टिप्पणी–*** *भस्त्रिका शब्द का अर्थ धौंकनी होता है, जिस पर लुहार धातुओं को गर्म करता है।*

## कपालभाति प्राणायाम

### विधि 1 – मूल-विधि

हाथों को ज्ञान या चिन्मुद्रा में रखकर ध्यान के किसी सुखद आसन में बैठ जाएँ। आँखों को बंद कर सम्पूर्ण शरीर को स्थिर बनायें।

रेचक पर बल देते हुए द्रुत गति से श्वसन क्रिया करें, प्रति सैकण्ड एक श्वास की दर से 10 श्वास-प्रश्वास लें और छोड़ें।

श्वास पूर्णत: सहज ढंग से लें, जैसे श्वास स्वत: भीतर आ रही हो, किन्तु प्रश्वास बलपूर्वक होनी चाहिए।

जब यह क्रिया सुखपूर्वक होने लगे, तब श्वास-प्रश्वास की संख्या बढ़ाकर बीस कर दें।

### विधि 2 – अन्तर्कुम्भक के साथ

मूल विधि से 20 श्वास-प्रश्वास तक अभ्यास करें।

अंतिम प्रश्वास के बाद पूरी श्वास अन्दर लें; जब तक सुविधापूर्वक बन पड़े श्वास को अन्दर रोके रखें और फिर श्वास को पूरी तरह बाहर निकाल दें।

5 चक्र तक अभ्यास करें।

### विधि 3 – अन्तर्कुम्भक, जालंधर और मूलबंध के साथ

विधि 2 को दुहराएँ, किन्तु अन्तर्कुम्भक के दौरान जालंधर और मूलबंध लगायें। अधिक बलपूर्वक श्वसन-क्रिया न करें। प्रति चक्र श्वास-प्रश्वास की संख्या 30 तक बढ़ाएँ।

फिर धीरे-धीरे इस संख्या को 50 तक बढ़ा दें।

10 चक्रों तक यह अभ्यास करें।

**विधि 4 – बहिर्कुम्भक एवं महाबंध के साथ**

50 श्वास-प्रश्वास तक अभ्यास करें।

फिर धीरे-धीरे गहरी श्वास अन्दर भरें, उसे पूरी तरह बाहर निकाल दें और महाबंध का अभ्यास करें।

अपनी सजगता को चिदाकाश के क्षेत्र में रखें।

अपनी सजगता को चिदाकाश की दीवारों के आगे-पीछे और अगल-बगल घुमायें और फर्श तथा छत की ओर भी दौड़ायें। जब तक सुखपूर्वक बन सके इस मनोभाव को बनाये रखें।

फिर महाबंध खोल दें, थोड़ी श्वास बाहर कर धीरे-धीरे श्वास अन्दर लें।

आवश्यकतानुसार कुछ सामान्य श्वास-प्रश्वास लें और छोड़ें। तब अभ्यास की पुनरावृत्ति करें।

पहले केवल 2 चक्र अभ्यास करें।

कुछ समय पश्चात् 10 चक्रों तक यह अभ्यास करें।

**सावधानियाँ –** भस्त्रिका प्राणायाम में दक्षता प्राप्त कर लेने के बाद ही कपालभाति का अभ्यास सीखना चाहिए। यह अत्यन्त शक्तिशाली विधि है। अधिक बल-प्रयोग से बचना चाहिए।

**सीमाएँ –** उच्च रक्तचाप, चक्कर आना, रक्त-संचार में गड़बड़ी, या हृदय अथवा श्वसन-प्रणाली के रोग से ग्रस्त व्यक्ति को यह प्राणायाम नहीं करना चाहिए।

**लाभ –** ध्यान की तैयारी के लिए यह सर्वोत्कृष्ट विधियों में से एक है। यह मन को विचार-तरंगों और स्वप्न-बिम्बों से पूर्णत: मुक्त कर देता है और साधक को सहज ही अन्तर्मुखी बना देता है। इस प्राणायाम के बाद किये जाने वाले किसी भी ध्यानाभ्यास की गुणवत्ता में वृद्धि होती है और अभ्यासी को आत्म-जागरण के सूक्ष्म स्तरों तक पहुँचने में सहायता प्राप्त होती है। इस शक्ति का यही हानिकारक पक्ष भी है, अत: बड़ी सावधानी के साथ सीखकर इसका अभ्यास करना चाहिए।

**अभ्यास-टिप्पणी –** कपालभाति के अभ्यास के बाद प्रतिदिन कम-से-कम दस मिनट के लिए चिदाकाश धारणा का अभ्यास भी करना चाहिए।

***टिप्पणी –*** *संस्कृत शब्द कपाल का अर्थ 'मस्तक' और भाति का अर्थ 'प्रकाश' या 'भव्यता' अथवा 'बोध' या 'ज्ञान' भी होता है। अतएव कपालभाति वह अभ्यास है जिससे मस्तिष्क के अग्र-भाग में दीप्ति या सुस्पष्टता की प्राप्ति होती है।*




**भ्रामरी प्राणायाम**

हाथों को ज्ञान अथवा चिन्मुद्रा में घुटनों पर रखकर ध्यान के किसी सुखद आसन में बैठ जाएँ। दोनों नासिकाओं से पूरी तरह श्वास अन्दर भर लें।

श्वास को भीतर ही रोके रखें और जालंधर तथा मूलबंध लगा लें।

पाँच की गिनती तक अन्तर्कुम्भक और बंधों को लगाए रखें।

फिर बंधों को खोल दें और दोनों हाथों को कानों की सीध में ऊपर उठाएँ।

तर्जनी अंगुलियों से कानों को बंद कर लें, अन्य अंगुलियों को आराम से मोड़ लें और कोहनियों को बाहर की ओर फैला लें।

मुँह बंद कर लें, पर ऊपर और नीचे के दाँत अलग-अलग रहें।

भौंरे के गुंजन जैसी लम्बी और अप्रतिहत गूँज पैदा करते हुए श्वास बाहर छोड़ें।

अपने भीतर ध्वनि-तरंग का अनुभव करें, अपने मस्तिष्क में केवल इस गुंजन के प्रति सचेत रहें। रेचक के बाद हाथों को नीचे ले आयें। पुनः श्वास अन्दर भर लें और अभ्यास की पुनरावृत्ति करें।

5 चक्रों से प्रारम्भ कर प्रतिदिन एक-एक चक्र बढ़ाते जायें।

**सावधानियाँ –** अधोमुख होकर भ्रामरी प्राणायाम का अभ्यास नहीं करना चाहिए, क्योंकि झुकी हुई स्थिति में कण्ठ-द्वार में भारी तनाव पैदा हो जाता है।

**लाभ–** भ्रामरी प्राणायाम, नाद (अभ्यासी के अन्दर सूक्ष्म ध्वनि) की सजगता को जाग्रत करता है। यह मस्तिष्कीय तनाव को कम करता है। क्रोध, चिन्ता और निराशा को दूर करता है और साथ-ही उच्च रक्तचाप को घटाता है।

***टिप्पणी–*** *यह गुंजनकारी प्राणायाम है, जिसका उपयोग मूलत: नादयोग के लिए किया जाता है।*

इन अभ्यासों के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी के लिए योग पब्लिकेशन ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित पुस्तक *'आसन प्राणायाम मुद्रा बंध'* और *'प्राण एवं प्राणायाम'* पुस्तकों का अध्ययन करें।

# ध्यान के अभ्यास

# 13

# जप योग

प्रत्याहार की अवस्था में ले जाकर अन्ततः समाधि की उपलब्धि कराने वाली योग की सभी पद्धतियों में जप योग सबसे सरल, सुरक्षित एवं निरापद है। इसका अभ्यास हर व्यक्ति, हर परिस्थिति में आसानी से कर सकता है। जप का अर्थ है पुनरावृत्ति या आवर्तन और जप योग का उद्‌देश्य है, चेतना के आवर्तन द्वारा परम सत्ता से एकीकरण, अर्थात् मिलन।

जप के अभ्यास के लिए प्रथम आवश्यकता है, एक मन्त्र। 'मन्त्र' ध्वनि तरंगों का एक समूह है, जिसका प्रभाव मनुष्य की अतीन्द्रिय चेतना पर पड़ता है। शास्त्रीय परम्परा के अनुसार यह कहा जाता है कि जो मन्त्र गुरु से या स्वप्न में प्राप्त होते हैं, वे सर्वश्रेष्ठ होते हैं। मुख्य बात यह है कि मन्त्र पूरी तरह से मन में बैठ जाये। मानसिक या वाचिक जप द्वारा वे ध्वनि तरंगें व्यक्ति की आन्तरिक चेतना में एक रूप ग्रहण करती हैं। यह आन्तरिक या अतीन्द्रिय प्रतीक है, जिसका भौतिक प्रकटीकरण भी होता है।

सभी प्रकार के जप के अभ्यास हेतु प्रायः दूसरी आवश्यक वस्तु है, माला। माला में प्रायः 108 दाने होते हैं, जो परस्पर एक विशेष प्रकार की गाँठ द्वारा जुड़े रहते हैं, जिसे ब्रह्म गाँठ कहते हैं। माला में एक अतिरिक्त दाना सुमेरु होता है। माला में जप का प्रारम्भ सुमेरु से ही किया जाता है। जप के आधुनिक अभ्यासी इस सुमेरु की महत्ता को भूल बैठे हैं। सुमेरु के दाने कर महत्त्व यह है कि अक्सर जप करते समय साधक का ध्यान भटक जाता है। नये साधक का ध्यान अनायास ही बाह्य विचारों में भटक जाता है तथा पुराने साधकों का मन अचेतन या अतीन्द्रिय दृश्यों, अनुभूतियों और प्रपंचों में खो जाता है। जब ध्यान मंत्र से हटकर इधर-उधर भटकने लगता है तब भी माला यंत्रवत् घूमती

रहती है। जब अंगुलियाँ सुमेरु पर पहुँचती हैं, तब सुमेरु का स्पर्श होते ही मन सचेत हो उठता है। यहीं सुमेरु की महत्ता प्रकट होती है।

जप में मंत्र पर अवस्थित चेतना का आवर्तन होता रहता है, जिससे मन में एकाग्रता और विश्रान्ति आती है। इससे व्यक्ति की सभी शारीरिक और मानसिक क्षमताएँ अपनी पूर्ण कुशलता के साथ कार्यरत रहती हैं। यह बात हमेशा याद रखें कि मन को बलात् मंत्र पर एकाग्र करने की कोशिश नहीं करनी चाहिए। मंत्र की आवृत्ति सहज रूप से अन्तर्मन से होनी चाहिए। जप करते समय दूसरे विचारों का आना स्वाभाविक है। उन्हें द्रष्टा या साक्षी रूप से देखना चाहिए। वे आयेंगे और चले जायेंगे। साधक का मन उनसे प्रभावित नहीं होना चाहिए। ऐसी अवस्था में जप बन्द नहीं होना चाहिए। बाह्य विचारों को तटस्थ भाव से देखते हुए जप चलते रहना चाहिए।

## जप के प्रकार

जप के सम्पूर्ण अभ्यास को चार भागों में बाँटा जा सकता है। इनका विवरण इस प्रकार है–

1. *बैखरी जप*– प्रारम्भ में सस्वर मंत्र-पाठ करना ठीक है। इस तरह बोलकर मंत्र का जप करने से उसकी ध्वनि तरंगें मस्तिष्क में पूर्णतः भरती जायेंगी, जिसके फलस्वरूप कुछ सप्ताहों के अभ्यास के पश्चात् मन शान्त और स्थिर हो जायेगा। जप करने से मन में एक वातावरण तैयार होता है, जिसके द्वारा अतीन्द्रिय प्रतीकों का दर्शन आसान हो जाता है। यदि आप किसी विशेष वस्तु पर ध्यान एकाग्र करने में कठिनाई अनुभव करते हों, तब एक घण्टे तक बैखरी जप का अभ्यास करें। इसके बाद ध्यान में बैठें।
2. *उपांशु जप*– इसमें मन्त्र का उच्चारण इतना धीमा होता है कि केवल साधक स्वयं उसे सुन सकता है। केवल होंठ हिलते हैं और कोई ध्वनि नहीं निकलती। यह क्रिया बैखरी से ज्यादा सूक्ष्म है तथा इसके द्वारा मानसिक जप की तैयारी की जाती है। उपांशु जप का अभ्यास उन साधकों द्वारा किया जाता है जो किसी विशेष उद्‌देश्य की पूर्ति के लिए आठ-दस घंटे बैठकर जप साधना किया करते हैं। मंत्र शास्त्र के अनुसार भाग्य के दोष को मिटाने के लिए भी मंत्र का जप किया जा सकता है। यह सत्य हो या न हो, कुछ व्यक्ति इसमें विश्वास रखते हैं। साथ ही शारीरिक स्वास्थ्य प्राप्त करने के उद्‌देश्य से भी कुछ मंत्रों का जप किया जाता है।

3. *मानसिक जप*– जब तक बैखरी और उपांशु का अभ्यास अच्छी तरह से नहीं हो जाये, तब तक मानसिक जप का अभ्यास सम्भव नहीं है। विशेष रूप से अस्थिर मन वाले लोग बैखरी और उपांशु जप का अभ्यास किये बिना मानसिक जप में जल्दी प्रगति नहीं कर सकते। जप का सबसे प्रचलित और सूक्ष्म रूप मानसिक जप है। जो लोग इसका अभ्यास कर सकते हैं, उनके लिए यह जप का एक बहुत शक्तिशाली तरीका है। ऋषियों और शास्त्रों का कहना है कि मानसिक जप के निष्ठापूर्ण अभ्यास से मनुष्य को आत्म-साक्षात्कार हो सकता है।
4. *लिखित जप*– इस तरह का जप उन साधकों के लिए है जो जप के अन्य साधनों के अभ्यास द्वारा उच्च एकाग्रता की स्थिति को प्राप्त कर चुके हैं। लिखित जप के लिए एक कॉपी लेनी चाहिये। उसमें हरे, नीले या लाल रंग से मंत्र को छोटे-छोटे सुन्दर अक्षरों में करीब सौ या उससे अधिक बार लिखना चाहिए। मंत्र के अक्षर छोटे, सुन्दर, स्वच्छ, स्पष्ट आकार में हों तथा उन्हें जितना सम्भव हो, एकाग्रतापूर्वक तथा सावधानी के साथ लिखना चाहिए। अक्षर जितना ही छोटा होगा, उतनी ही एकाग्रता बढ़ेगी। लिखित जप तथा मानसिक जप एक-दूसरे से सम्बद्ध हैं, क्योंकि मंत्र लिखते समय उसकी मानसिक पुनरावृत्ति भी होती है।

यदि आपने मंत्र लिया हुआ है तो उसका अभ्यास इस प्रकार करें– तीन भाग बैखरी, दो भाग उपांशु और एक भाग मानसिक। हिन्दू परम्परा के अनुसार एक बार कोई किसी मंत्र में दीक्षित हो गया हो तो आजीवन उसे उसी मंत्र का अभ्यास करना चाहिए। जप योग का रास्ता भले ही लम्बा हो, पर वास्तव में यह निश्चित और सुरक्षित है। यह आध्यात्मिक जीवन के सन्तुलित विकास का प्रमुख साधन है।

## जप अनुष्ठान

अनुष्ठान का अर्थ होता है, किसी कार्य को अनुशासन के साथ पूरा करने का संकल्प लेना। यदि जप के लिए अनुष्ठान किया जाय तो जप अनुष्ठान कहलाएगा। जप अनुष्ठान के दो मुख्य उद्देश्य होते हैं– पहला, आध्यात्मिक जीवन में उन्नति तथा विकास हेतु आत्मशुद्धि, अर्थात् शारीरिक, मानसिक तथा अतीन्द्रिय अनुशासन के द्वारा शुद्धि की प्राप्ति तथा दूसरा, भौतिक स्वार्थपरक उपलब्धि एवं सफलता प्राप्ति हेतु।

बैखरी जप के अनुष्ठान प्राय: साधकों द्वारा सामूहिक रूप से किये जाते हैं। भारतवर्ष में कहीं-कहीं एक ही मंत्र का अभ्यास वर्षों तक किया जाता है। ऋषिकेश में सन् 1943 से 'हरे राम हरे कृष्ण' महामंत्र का जप चौबीसों घंटे लगातार चल रहा है। इसमें एक क्षण भी व्यतिरेक नहीं हुआ है। मंत्रोच्चारण से वातावरण में दिव्य, सशक्त लहरें फैलती रहती हैं।

भारत में 'जप अनुष्ठान' बहुत लोकप्रिय है। यह उन लोगों के लिए सर्वोत्तम है, जिनका मन इधर-उधर भटकता रहता है। श्रावण महीने में कई स्थानों में बेल के पत्तों पर मंत्र लिखने की हिन्दू परम्परा है। प्रत्येक बेल-पत्र में तीन दल होते हैं। उस पर कुंकुम के घोल से 'ॐ नम: शिवाय' मंत्र लिखते हैं। फिर उन पत्रों को एकत्र कर के इष्ट देव को अर्पित करते हैं। यह अभ्यास पूरे श्रावण महीने चला करता है।

मानसिक जप-अनुष्ठान के अन्तर्गत गुरु द्वारा प्राप्त मंत्र का अनुष्ठान अधिक लोकप्रिय है। आध्यात्मिक साधकों के लिए यह सर्वोत्तम है। इस अभ्यास का प्रारम्भ करने के पूर्व साधक को जप अनुष्ठान सम्बन्धी लक्ष्य निश्चित कर लेना चाहिए। मान लीजिये, साधक ने दस दिनों तक प्रत्येक दिन 10,800 बार मंत्र जपने का लक्ष्य निर्धारित किया है। प्रतिदिन उसे दृढ़ता के साथ इसी लक्ष्य को ध्यान में रख कर अनुष्ठान करना चाहिये। निश्चित लक्ष्य के पूरा होने तक जप करते रहना आवश्यक है।

सुमिरनी जप 27 दानों की माला सुमिरनी पर किया जाने वाला अभ्यास है। सुमिरनी माला में सुमेरु नहीं होता। यह एक महत्त्वपूर्ण अभ्यास है। यह एक निश्चित अवधि तक चौबीसों घंटे चलने वाला अनुष्ठान है, जिसमें एक भी क्षण के लिए साधक के हाथ से माला नहीं छूटती। इस तरह के अनुष्ठान में मंत्र की बार-बार आवृत्ति करना उद्देश्य नहीं होता। इसमें मंत्र स्वत: प्रस्फुटित होते हैं। निद्रा में भी माला घूमती रहनी चाहिए।

## मंत्र

विश्वभर में विभिन्न धर्मों में प्रयुक्त मंत्रों की सूची इस पुस्तक के अन्त में दी गयी है।

## जप के नियम और निर्देश

- किसी एक मंत्र या देवता का नाम चुन लें। अच्छा होगा यदि मंत्र गुरु द्वारा दिया गया हो। यदि आपने गुरु मंत्र न लिया हो तो ॐ मंत्र का, जो कि

एक ब्रह्माण्डीय मंत्र है तथा सभी के लिए उपयुक्त है, प्रयोग किया जा सकता है। एक सौ आठ दानों वाली माला से प्रतिदिन इसका जप एक से दस माला तक करें।

- तुलसी या रुद्राक्ष की माला का प्रयोग करें। माला में सुमेरु के अतिरिक्त एक सौ आठ दाने हों। तांत्रिक अभ्यास के लिए स्फटिक की माला का प्रयोग किया जाता है।
- दाहिने हाथ की मध्यमा अंगुली और अँगूठे से दानों को घुमायें। तर्जनी और कनिष्ठा का स्पर्श माला से नहीं होना चाहिए।
- जप का अभ्यास ध्यान के किसी आसन, जैसे, पद्मासन, सिद्धासन या सिद्धयोनि आसन में बैठकर करना चाहिए। या तो दाहिना हाथ माला के साथ घुटने पर टिका रहे तथा माला भूमि को छूती रहेगी अथवा माला को पकड़े हुए दाहिना हाथ वक्षस्थल के केन्द्र में भी रह सकता है। इस स्थिति में माला को कपड़े के झोले में भी रखकर घुमाया जा सकता है। यह झोला गले या कलाई में झूलता रहेगा। कलाई को कंधे से झूलती हुई पट्टी के अन्दर डाल कर भी रखा जा सकता है।
- माला पर दूसरों की दृष्टि न पड़े। जब इसका उपयोग न हो रहा हो तब उस समय उसे कपड़े में बाँध कर या किसी रेशमी थैले के अन्दर रखें।
- जप की माला को पहनना नहीं चाहिए। सुमेरु को पार करके माला न घुमायें। सुमेरु पर पहुँच कर वहीं से माला को उलटा घुमा कर जपें।
- कुछ समय के लिए मानसिक जप करें। यदि मन इधर-उधर भागने लगे तो बैखरी जप शुरू कर दें। फिर जितनी जल्दी सम्भव हो, पुन: मानसिक जप प्रारंभ कर दें।
- मंत्र के प्रत्येक अक्षर का शुद्ध और स्पष्ट उच्चारण करें।
- जप न तो बहुत द्रुत गति से करें और न बहुत मन्द गति से। जब मन इधर-उधर भटकने लगे, तो जप की गति अवश्य बढ़ा दें।
- जप करते समय किसी सांसारिक वस्तु की कामना न करें। इस बात का अनुभव करें कि मंत्र शक्ति के प्रभाव से आपका हृदय और मन शान्त और स्थिर हो रहे हैं।
- अपने गुरु मन्त्र को गुप्त रखें। उसे किसी के सामने प्रकट न करें।
- किसी भी काम में क्यों न लगे हों, मंत्र की धारा प्रतिपल अन्तर्मन में प्रवाहित होती रहे।

- साधकों को यथासम्भव उत्तर या पूर्व दिशा की ओर मुँह करके मंत्र-जप करना चाहिए।
- जप करते समय अवचेतन मन के छिपे हुए संस्कार विभिन्न प्रतिबिम्बों, चित्रों, दृश्यों और विचारों के रूप में चेतन मन के तल पर आयेंगे। एक तटस्थ दर्शक की तरह उन्हें देखें, लेकिन उनसे प्रभावित होकर जप करना न भूल जायें।

जप करने से चित्त शुद्धि होती है, मन पवित्र होता है, वासनाओं और संस्कारों का क्षय होता है। आध्यात्मिक जीवन के विकास तथा चित्त-शुद्धि के लिए संस्कारों और वासनाओं का क्षय होना आवश्यक है, अन्यथा वे आध्यात्मिक जीवन की उच्च अवस्थाओं में बड़ी बाधायें खड़ी कर देते हैं।

शास्त्रों में कहा गया है कि योग में ध्यान के पथ पर मुख्य तीन प्रकार की बाधाएँ आती हैं – मल, आवरण और विक्षेप। इन तीनों प्रकार की बाधाओं को जप के प्रति अखण्ड सजगता से हटाया जा सकता है। मंत्र-जप के अभ्यास में बलपूर्वक चित्त को एकाग्र करने की आवश्यकता नहीं है। पूर्णत: विश्रामपूर्ण स्थिति में सहज रूप से, अपने इष्ट मंत्र के प्रति अखण्ड और तैलधारावत् सजगता रहनी चाहिए। यह स्थिति ही मन की बहिर्मुखी वृत्ति से साधक को उबार सकती है।

चिन्ता, उत्तेजना और तनाव हमारी वास्तविक प्रकृति नहीं है। हमारी असली प्रकृति है – शुद्ध चेतना, शान्ति, नीरवता, समत्व और समाधिस्थ चित्त की स्थिति। हम इसकी तुलना एक धुँधले आईने से कर सकते हैं, जिस पर धूल की परतें जम गई हैं। यदि हम आईने को साफ कर दें, तो वस्तु को प्रतिबिम्बित करने का उसका वास्तविक गुण सहज ही उजागर हो जायेगा। मन की अशान्ति ही सारे दु:खों, तनावों एवं जटिलताओं की जड़ है। लेकिन ये सारी चीजें हम पर आरोपित की गई हैं। साधना द्वारा मन को शान्त और शुद्ध करें। आपको ध्यान, समाधि तथा आत्मा के शुद्ध स्वरूप का बोध होगा।

ध्यान करने के लिए मन पर तनाव या दबाव नहीं डाला जाता। आवश्यकता होती है, सहज एकाग्रता की, तनावरहित सजगता की। एकाग्रता की उतनी आवश्यकता नहीं है, जितनी सहज सजगता की। अर्थात् हमारी सजगता उस स्थिति तक पहुँच जाये, जहाँ हम न तो विचारों से संघर्ष करते हैं, न उन्हें दबाते हैं, केवल साक्षी या द्रष्टा भाव से उन्हें देखते रहते हैं।

कभी-कभी ऐसे सरल संस्कार उभरते हैं कि आपको स्वयं आश्चर्य होता है कि आखिर ये सामने क्यों आये? इससे यह समझना चाहिए कि मंत्र के प्रति आपकी सजगता केवल ऊपरी सतह तक सीमित है। जब यह जागरूकता गहन-गम्भीर होकर सम्पूर्ण चेतना पर छा जायेगी तब अधिक महत्त्वपूर्ण विचार उभर कर आयेंगे। इसके पूर्व कभी-कभी क्षणभर के लिए विचारशून्यता की स्थिति आयेगी। यह स्थिति चेतना की एकाग्रता के कारण होती है। जप करते समय आप अपने आपको तनाव रहित स्थिति में रखें। शेष स्वत: घटित होगा। चित्त-विक्षेप के सम्बन्ध में चिन्तित न हों। सब कुछ अपने नियत समय पर होगा। आप केवल मंत्र जप के प्रति जागरूक रहकर जप करते जायें।

# 14

# मंत्र सिद्धि योग

निम्नांकित अभ्यास वस्तुतः कुण्डलिनी योग की क्रियाओं की तैयारी करने के लिए हैं। इन अभ्यासों के द्वारा साधक को अपने अन्दर स्थित सूक्ष्म चक्रों की सही स्थिति का पता चलता है तथा उनके प्रति सजगता बनी रहती है।

इन अभ्यासों का आधार मूलतः जप योग ही है। योग साधना के उच्च साधक एक सप्ताह से लेकर महीनेभर तक नियमित रूप से अनुष्ठान के रूप में इन्हें करें, तो वे निश्चित ही लाभान्वित होंगे। उपर्युक्त साधनाओं का अभ्यास जब निश्चित कार्यक्रम के अनुसार किया जाता है तब उसे मंत्र सिद्धि योग कहा जाता है। चक्रों को जगाने और सामंजस्यपूर्ण बनाने में इन अभ्यासों की भूमिका महत्त्वपूर्ण है।

## विधि 1– मणिपुर शुद्धि

### प्रथम चरण – मणिपुर चक्र की सजगता

ध्यान के किसी आसन में बैठ जायें।

अपना ध्यान मणिपुर चक्र पर केन्द्रित करें।

मणिपुर क्षेत्र में होने वाली श्वास-प्रश्वास क्रिया के प्रति सजग रहें।

नाभि केन्द्र में श्वास-प्रश्वास के द्वारा होने वाली प्रसारण और संकुचन क्रिया का अनुभव करें। अधिक एकाग्र होने की आवश्यकता नहीं है। केवल सजगता बनाये रखें। यह अभ्यास दस मिनट तक करें।

### द्वितीय चरण – मंत्र की सजगता

मणिपुर चक्र में सहज श्वास की चेतना बनाये रखें और साथ-ही-साथ मानसिक रूप से ॐ मंत्र को दुहराते रहें। यह अभ्यास भी दस मिनट तक करें।

## विधि 2 – अनाहत शुद्धि

**प्रथम चरण – अनाहत की सजगता**

ध्यान के किसी आसन में बैठ जायें और अनाहत चक्र के प्रति सजग बन जायें।
अनाहत क्षेत्र से अन्दर आने और बाहर जाने वाली श्वास-प्रश्वास के प्रति सजग हो जायें।
ऐसा दस मिनट तक करें।

**द्वितीय चरण – मंत्र की सजगता**

सहज श्वास के साथ वक्षस्थल पर होने वाले आकुंचन और प्रसारण का अनुभव करें।
हर श्वास-प्रश्वास के साथ ॐ मंत्र का मानसिक जप करें।

## विधि 3 – विशुद्धि शुद्धि

**प्रथम चरण – अतीन्द्रीय श्वास में ॐ के प्रति सजगता**

ध्यान के किसी आसन में बैठ जायें।
अपने शरीर के अन्दर आने और बाहर जाने वाली अतीन्द्रिय श्वास-प्रश्वास के प्रति सजग बन जायें।
आपकी अतीन्द्रिय श्वास अन्दर जाते समय स्वत: ऊर्ध्वगामी हो जायेगी तथा बाहर आते समय उसकी गति ऊपर से नीचे की ओर होगी।
कण्ठ के क्षेत्र में श्वास-प्रश्वास की इस गति के प्रति सजग हो जाएँ तथा श्वास के साथ उत्पन्न ॐकार की ध्वनि को सुनने का प्रयास करें।
पाँच मिनट तक अभ्यास करें।

**द्वितीय चरण – मंत्र की सजगता**

अब ऐसा अनुभव करें कि श्वास लेते समय श्वास और मंत्र नाभि से कण्ठ की तरफ जा रहे हैं तथा श्वास छोड़ते समय कण्ठ से नाभि की तरफ आ रहे हैं।

**तृतीय चरण – विशुद्धि से भ्रूमध्य की सजगता**

अब सजग बनें कि श्वास लेते समय मंत्र श्वास के साथ विशुद्धि क्षेत्र से उठते हुए नाक के ऊपरी बिन्दु के ठीक पीछे मस्तिष्क के आधार में स्थित किसी अज्ञात स्थान तक ऊपर जाता है।
फिर श्वास छोड़ते समय मंत्र श्वास के साथ पुन: विशुद्धि चक्र तक वापस आता है। उसके पश्चात् पुन: उस अज्ञात क्षेत्र की ओर अपनी वापसी की यात्रा प्रारम्भ करता है।

### चतुर्थ चरण – नाभि से भ्रूमध्य की सजगता

अब श्वास लेते हुए आप मंत्र को श्वास के साथ नाभि से उठकर विशुद्धि चक्र होते हुए मस्तिष्क के आधार में स्थित उपर्युक्त अज्ञात बिन्दु की ओर जाते हुए देखें।

फिर इसी प्रकार श्वास छोड़ते समय पुनः विशुद्धि चक्र होते हुए नाभि में वापस आते हुए देखें।

दस मिनट तक इस क्रिया का अभ्यास करें।

### विधि 4 – पिंगला और इड़ा शुद्धि

ध्यान के किसी आसन में बैठें।

मानसिक रूप से श्वास को दाहिने नासिकाछिद्र या पिंगला से प्रवाहित करें।

दाहिने नासिकाछिद्र से प्रवाहित होने वाली श्वास के प्रति सजग बन जायें और श्वास-प्रश्वास के साथ ॐ मंत्र जोड़ दें।

अपनी श्वास को गिनते जायें।

एक सौ पचास से गिनती शुरू करें और उल्टा गिनते हुए अन्त में शून्य तक पहुँच जायें।

इसी क्रिया को अब बायें नासिकाछिद्र या इड़ा से दुहराएँ।

### विधि 5 – अनुलोम-विलोम

ध्यान के किसी आसन में बैठकर सहज रूप से गहरी श्वसन क्रिया प्रारम्भ करें।

बायें नासिकाछिद्र या इड़ा से श्वास लें।

दाहिने नासिकाछिद्र या पिंगला से छोड़ें।

श्वास की यह अनुलोम-विलोम क्रिया, अर्थात् बायें नासिका छिद्र से श्वास लेना और दाहिने से छोड़ना, अपनी इच्छाशक्ति से ही सम्पन्न हो पाती है। यह अतीन्द्रिय अनुलोम-विलोम है।

अब इसी प्रकार दाहिने नासिकाछिद्र से श्वास लें और बायें से छोड़ें।

फिर बायें नासिकाछिद्र या इड़ा से श्वास लें और दाहिने नासिकाछिद्र या पिंगला से छोड़ें।

इसी प्रकार अनुलोम-विलोम क्रम से श्वास-प्रश्वास क्रिया जारी रखें।

साथ ही श्वास के साथ निकलने वाली ॐ मंत्र की ध्वनि के प्रति सजग बने।

यह अभ्यास एक सौ आठ श्वासों तक जारी रखें।
श्वास गिनने के लिए 108 दाने वाली माला का उपयोग कर सकते हैं।

## विधि 6 – प्राण शुद्धि

ध्यान के किसी आसन में बैठें।
दोनों नासिकाछिद्रों से सहज रूप से धीमी श्वास लें।
श्वास लेते समय ऐसा महसूस करें कि दोनों नासिकाछिद्रों से श्वास की दो धारायें प्रवाहित होते हुए भ्रूमध्य यानि त्रिकुटि में आकर एक साथ मिल रही हैं।
श्वास की गति अंग्रेजी के उल्टे V अक्षर के समान हो जाती है। इसका विवरण 'योग का अतीन्द्रिय शरीर विज्ञान' नामक अध्याय में दिया जा चुका है।
इसी प्रकार त्रिकुटि से श्वास छोड़ें। अब दोनों नासिका छिद्रों से '^' आकृति बनाते हुए श्वास की धारायें निकलेंगी।
कुछ समय तक यह क्रिया करते जायें।
अब ॐ मन्त्र की सजगता को श्वास के साथ जोड़ दें।

## विधि 7 – वाक् शुद्धि

### प्रथम अवस्था – मणिपुर से ॐ का उच्चारण

पूरे अभ्यास की अवधि तक ध्यान के किसी आसन में स्थिर होकर बैठे रहें।
सहज ढंग से गहरी श्वास लें।
लम्बी श्वास छोड़ते हुए अधिकाधिक मंद स्वर में ॐ मन्त्र का उच्चारण देर तक करें।
ॐ मन्त्र की शक्ति मणिपुर से ऊपर और बाहर की ओर विकीर्ण होगी।
इस अभ्यास को पन्द्रह मिनट तक सजगता के साथ करें।

### द्वितीय चरण – सतत् ॐ उच्चारण

गहरी श्वास लेकर एक सैकण्ड तक उसे रोक कर रखें।
फिर श्वास छोड़ते हुए जितनी बार सम्भव हो 'ॐ' उच्चारण करें।
'ॐ', 'ॐ', 'ॐ', 'ॐ' का उच्चारण एक लय के साथ करें।
श्वास अन्दर लेते समय भी ॐ का मानसिक उच्चारण करते रहें, ताकि मंत्र की लय भंग न हो।
इसका अभ्यास पन्द्रह मिनट करें।

**विधि 8 – त्रिकुटि सन्धानम्**

दोनों भौंहों के मध्य का स्थान त्रिकुटि कहलाता है, जिसे भ्रूमध्य के नाम से भी जाना जाता है। त्रिकुटी में नाड़ी के प्रत्येक स्पन्दन के साथ ॐ मंत्र के विकिरण का अनुभव करें।

त्रिकुटी, वहाँ स्थित स्पन्दनशील नाड़ी और मन्त्र के प्रति निरंतर, अप्रतिहत सजगता बनाये रखें।

यह अभ्यास पन्द्रह मिनट तक करें।

**विधि 9 – चक्र शुद्धि**

दो माला तैयार करें, एक ग्यारह दाने की और दूसरी इक्कीस दाने की। इक्कीस दाने वाली दो सुमरिनी मालाओं में गाँठ लगाकर उपयोग में लाया जा सकता है।

ध्यान के किसी आसन में बैठ जायें।

इक्कीस दाने वाली माला को दाहिने हाथ में और ग्यारह दाने वाली माला बायें हाथ में रखें।

मूलाधार चक्र पर अपना ध्यान केन्द्रित करें।

ऐसा अनुभव करें कि उस स्थान पर ॐ मंत्र का स्पन्दन धीरे-धीरे हो रहा है। यह स्पन्दन ऐसा लगेगा मानो उस चक्र पर आन्तरिक रूप से चोट की जा रही हो।

अब मूलाधार चक्र पर ॐ मंत्र के स्पन्दन का इक्कीस बार अनुभव करें। प्रत्येक स्पन्दन के साथ एक-एक दाने को खिसकाते जायें।

इक्कीस स्पन्दन के पूरा होने पर चेतना को स्वाधिष्ठान चक्र में ले जायें। वहाँ पर भी मंत्र का स्पन्दन 21 बार अनुभव करें।

इसी प्रकार से मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि, आज्ञा, बिन्दु, सहस्रार – सभी चक्रों में मन्त्र का स्पन्दन अनुभव करते हुए ॐ की ओर आगे बढ़ते जायें।

सहस्रार में जब इक्कीस स्पन्दन पूरे हो जायें, तब बायें हाथ के एक दाने को आगे खिसकायें और फिर मूलाधार चक्र में वापस आ जायें। यह एक चक्र हुआ।

इस प्रकार ग्यारह चक्र पूरे करें, ग्यारहवाँ चक्र पूर्ण करते-करते आप बायें हाथ में पकड़ी माला के अंतिम दाने पर पहुँच जायेंगे। इस पूरी क्रिया में कम-से-कम पैंतालिस मिनट का समय लगना चाहिये।

# 15

# अजपा जप

किसी मंत्र को बारम्बार दुहराने को जप कहते हैं। जब मंत्र की सहज ही आवृत्ति होने लगती है तब जप अजपा बन जाता है। कहा जाता है कि अजपा का प्रस्फुटन हृदय से होता है, जब कि जप केवल मुख से निःसृत होता है।

अजपा जप अपने आप में एक पूर्ण साधना है। यह साधक को शारीरिक एवं परिवेशगत चेतना के निम्न स्तर से ध्यान की उच्चतम अवस्था तक ले जा सकता है। यदि पूरी सजगता से इसका क्रमिक अभ्यास किया जाए तो यह चेतना की गहराई में छुपे हुए विकारों, वासनाओं, भय, आदि को मानसिक सतह पर ला कर रख देगा। जब ऐसा होने लगे, तब कुछ महीनों में साधक को थोड़ा-थोड़ा करके अपने पुराने संस्कारों एवं छुपी वासनाओं को साक्षी-भाव से देखने का प्रयास करना चाहिए। इस तरह अजपा जप उन मानसिक तनावों से मन को मुक्त कर देता है, जो अधिकांश शारीरिक एवं मानसिक रोगों के मूल कारण होते हैं।

अजपा जप का सीधा प्रभाव स्नायु संस्थान के उस जालवत केन्द्र पर पड़ता है जो मस्तिष्क के मध्य में स्थित है। अजपा जप ध्यान के किसी भी आसन में किया जा सकता है। कुर्सी पर बैठ कर या शवासन में भी इसका अभ्यास हो सकता है, लेकिन ध्यान का कोई आसन ही इसके लिए अधिक उपयुक्त होगा। अभ्यास शुरू करने के बाद शरीर हिलना-डुलना नहीं चाहिए।

यद्यपि अजपा जप का अभ्यास करते समय किसी भी मंत्र को उपयोग में लाया जा सकता है, परन्तु परम्परा से 'सोऽहं' मंत्र का ही प्रयोग होता आ रहा है, क्योंकि श्वास की स्वाभाविक ध्वनि इस मंत्र की ध्वनि से मिलती-जुलती

है। बहुत से साधक अजपा जप में गुरु मंत्र का ही प्रयोग करते हैं तथा इसी से इन्हें उपलब्धियाँ भी हुई हैं। हम ऐसे साधकों को भी जानते हैं जो अजपा जप में गायत्री मंत्र का अभ्यास करते हैं। वे मंत्र के पूर्वार्द्ध को श्वास के साथ और उत्तरार्द्ध को प्रश्वास के साथ पूरा करते हैं।

## प्रारम्भिक अजपा जप – अग्र पथ में परिभ्रमण

अजपा जप की प्रारम्भिक विधियों में साधक को प्राण-प्रवाह का अनुभव नाभि और कण्ठ के बीच अग्र भाग में स्थित अतीन्द्रिय पथ में होना चाहिए। उसे श्वास लेने की क्रिया में नाभि से कण्ठ तक प्राण के आरोहण और प्रश्वास की क्रिया में कण्ठ से नाभि तक प्राण के अवरोहण का अनुभव करना चाहिए। प्रारम्भ में साधक को कल्पना का ही सहारा लेना पड़ेगा। एक तरीका यह है कि नाभि और कण्ठ के बीच के मार्ग को एक काँच की नली माने। ऐसा सोचें कि जिस प्रकार नली में ऊपर से पानी डालने पर नीचे से पानी का स्तर ऊपर उठने लगता है, उसी प्रकार श्वास लेते समय श्वास नाभि से ऊपर की ओर आने लगती है अथवा यह कल्पना करें कि श्वास लेते समय श्वास नाभि से उठ कर कण्ठ की ओर जा रही है और श्वास छोड़ते समय कण्ठ से नाभि में उतर रही है।

## विधि 1 – अग्र पथ और 'सोऽहम्' की सजगता

किसी सुविधाजनक आसन में बैठ जाएँ।
आँखें बन्द कर लें तथा हाथों को ज्ञान मुद्रा या चिन्मुद्रा में रखें।
मेरुदण्ड सीधा रखें।
कुछ क्षणों के लिए स्वयं को शारीरिक और मानसिक विश्राम की स्थिति में ले आएँ।
कम-से-कम अभ्यास की अवधि तक अपनी चिन्ताओं को भूल जाएँ। सुख, शान्ति और आनन्द का अनुभव करें।
स्वाभाविक श्वास-प्रश्वास के प्रति सजग बन जाएँ।
नाभि और कण्ठ के बीच अग्र-पथ में श्वास के संचरण का अनुभव करें। श्वास लेने की क्रिया में यह नाभि से कण्ठ तक जाती है और प्रश्वास में कण्ठ से नाभि तक वापस आती है।
श्वास-प्रश्वास की प्रक्रिया के प्रति पूर्णतः सजग हो जाएँ।

एक भी श्वास आपकी जानकारी के बिना अन्दर या बाहर न जाने पाये।
आपकी श्वसन क्रिया गहरी और तनावरहित रहे।
इस अभ्यास को कुछ मिनट तक जारी रखें।
अब 'सोऽहं' मंत्र को श्वास-प्रश्वास के साथ जोड़ दें।
श्वास लेते समय तथा अतीन्द्रिय पथ में प्राण के आरोहण के समय 'सो' की ध्वनि निकलती है।
प्रश्वास के साथ अतीन्द्रिय पथ में प्राण के अवरोहण के समय 'हं' की ध्वनि निकलती है।
प्राण और मंत्र, दोनों की गतियों के प्रति पूर्णतः सजग रहें।
प्रतिदिन इसी प्रकार अभ्यास करते रहें।
लगभग एक सप्ताह का अभ्यास कर लेने के बाद द्वितीय चरण की ओर बढ़ें।

**विधि 2 – 'हं-सो' की सजगता**

प्रथम चरण का अभ्यास दुहराएँ, किन्तु श्वास-प्रश्वास के साथ मंत्र के क्रम को बदल दें।
श्वसन क्रिया का प्रारम्भ प्रश्वास के साथ 'हं' ध्वनि से होगा। इसके बाद श्वास लेते समय 'सो' का मानसिक जप किया जायेगा।
इस तरह मंत्र हो जाएगा, 'हं-सो'।
प्रत्येक 'हं-सो'के पश्चात् क्षणिक विराम होना चाहिए।
याद रखें, पूरी प्रक्रिया में सजग रहना है। पूर्ण सजगता बनी रहे।
इसका अभ्यास प्रतिदिन एक सप्ताह तक करें। फिर तृतीय चरण की ओर बढ़ें।

**विधि 3 – सोऽहम्-हंसो का परिभ्रमण**

सुविधाजनक आसन में बैठ जायें।
आँखें बन्द कर लें और ज्ञान अथवा चिन्मुद्रा लगायें।
स्वयं को शारीरिक तथा मानसिक विश्राम की स्थिति में ले आएँ।
नाभि और कण्ठ के बीच श्वास-प्रश्वास की क्रिया चलने दें।
इस क्रिया के प्रति कुछ क्षणों तक पूर्ण रूप से सजग रहें।
अब श्वास के साथ 'सो' को और प्रश्वास के साथ 'हं' को संयुक्त कर दें।

इस स्थिति में आपकी चेतना मंत्र के साथ एकाकार होकर इस सीमा तक अविच्छिन्न बन जायेगी कि 'सो' 'हं' में, और 'हं' 'सो' में विलीन होता दिखाई देगा।

इस तरह सो-हं-सो-हं का अनन्त वृत्त बन जायेगा।

'हं' मंत्र के स्पन्दन को बढ़ायें और उसे 'सो' के साथ मिल जाने दें।

'सो' मंत्र के स्पन्दन को बढ़ायें और उसे 'हं' के साथ मिल जाने दें।

इस प्रकार के अभ्यास की अवधि में बिना बाधा के 'सो-हं' और 'हं-सो' की अनवरत आवृत्ति होती रहे।

## विधि 4 – सोऽहम्-हंसो का सहज क्रम-परिवर्तन

इस चरण में पहले, दूसरे और तीसरे चरणों की सारी विधियाँ एक के बाद एक सहज रूप में दुहराई जाती हैं।

सुविधाजनक आसन में बैठकर अपनी स्वाभाविक श्वास के प्रति पूर्णरूप से सजग हो जायें।

स्वयं को पूरी तरह विश्राम की स्थिति में ले आएँ।

ऐसा अनुभव करें कि श्वास लेते समय प्राण अग्र-पथ में 'सो' के साथ नाभि से कंठ तक ऊपर की ओर तथा श्वास छोड़ते समय 'हम्' के साथ कंठ से नाभि की ओर नीचे प्रवाहित हो रहा है।

सबसे पहले, श्वास द्वारा 'सो-हं' का वृत्त बनाने के प्रति सजग रहें।

इसका अभ्यास कुछ मिनटों तक करें और तब अपनी सजगता को 'हं-सो' की निरन्तरता की ओर मोड़ दें।

कुछ देर बाद आप देखेंगे कि 'सो' और 'हं', दोनों जुड़ गये हैं।

सो-हं-सो-हं-सो-हं के मानसिक जप के साथ लगातार श्वास-प्रश्वास करते रहें।

थोड़े देर के बाद आप अनुभव करेंगे कि 'सो-हं' स्वाभाविक रूप से 'हं-सो' में बदल गया है।

इन मंत्रों के बदलाव को सहज तथा स्वाभाविक क्रम से होने दें।

आप केवल साक्षी-भाव से अपनी चेतना में इन मंत्रों के सहज एवं स्वाभाविक परिवर्तन को देखते रहें।

अपनी साधना के लिए निश्चित समय तक इस अभ्यास को करते रहें।

कुछ दिनों तक यह अभ्यास जारी रखें, तब पाँचवें चरण की ओर बढ़ें।

## विधि 5, 6, 7 एवं 8 – उज्जायी और खेचरी के साथ

ये सभी अभ्यास पूर्व वर्णित विधि 1 से 4 के समान ही हैं, इन अभ्यासों में हम केवल खेचरी मुद्रा और उज्जायी प्राणायाम को संयुक्त कर देते हैं। जब इस चरण के अभ्यास में दक्षता प्राप्त हो जाए, तब अजपा जप के मध्यम अभ्यास की ओर बढ़ें।

## कक्षा-प्रतिलेखन

### प्रारम्भिक अजपा जप

### प्रथम चरण – तैयारी

पद्मासन, सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन या सुखासन में बैठ जाएँ।
आज अजपा जप के अभ्यास का शुभारम्भ है।
जप का अर्थ है – आवृत्ति।
अजपा जप का अर्थ है, सहज आवृत्ति।
मंत्र 'ॐ' हो या 'सो-हं', इसके साथ मन को जोड़े रखने की अनेक विधियाँ हैं।
हम लोग इस अभ्यास में 'सो-हं' मंत्र का उपयोग करेंगे।
'सः' का अर्थ है, 'वह' परमात्मा; 'अहं' का अर्थ है, 'मैं' जो आत्मा है।
यह मंत्र इस बात की याद दिलाने के लिए है कि 'मैं' 'वह' हूँ।
यह मंत्र श्वास की आवाज में भी सुनाई पड़ता है, 'सो' श्वास लेते समय और 'हं' श्वास छोड़ते समय।
यह अभ्यास क्रिया योग तथा कुण्डलिनी योग के अन्य अंगों की आधारशिला है।
इस प्रथम चरण पर ध्यान देने की आवश्यकता है।
अपनी श्वास के प्रति सजग हो जाएँ और इस बात के प्रति भी सजग रहें कि कुछ काल के लिए आप अपनी श्वास के प्रति सजग नहीं थे।
रातभर आप इसके प्रति सजग नहीं थे।
आपकी सजगता का केन्द्र कण्ठ या विशुद्धि क्षेत्र है।
श्वास स्वाभाविक होनी चाहिए, परन्तु नासीय नहीं।
कण्ठच्छद से वैसी ही श्वास लेनी है, जैसी गहरी नींद में खर्राटे लेते समय होती है।

श्वास की ध्वनि न्यूनतम होनी चाहिये। श्वास सूक्ष्म है।
आँखें बन्द करके सभी शारीरिक गतियाँ रोक दें।
सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजगता।
सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजग हो जाइये, ऐसा करने से शरीर स्थिर हो जायेगा।
कण्ठ में विशुद्धि के स्थान पर मन को एकाग्र करें।
आप अपनी श्वास का अनुभव करें जो इतनी स्थूल नहीं है कि सुनाई दे सके।
अपनी अनवरत सजगता का केन्द्र कण्ठ को बना लें।
श्वास को स्वत: स्वाभाविक गति से प्रवाहित होने दीजिए।
श्वास के प्रति सजग बने रहिये।
आपकी सजगता का विषय है, कण्ठ में श्वास प्रवाह की अनुभूति।
एक ही विचार रखें, 'मैं जानता हूँ कि मैं श्वास ले रहा हूँ'; 'मैं जानता हूँ कि मैं श्वास छोड़ रहा हूँ।'
श्वास का प्रत्येक चक्र आपकी जानकारी में रहे।
चेतना की अधिक गहराई में जाने की चेष्टा न करें।
यदि आपका मन भटकता है तो उसे भटकने दें, पर इस भटकाव के प्रति भी सजग रहें।
याद रखें, 'मैं यह जानता हूँ कि मैं श्वास ले रहा हूँ', 'मैं यह जानता हूँ कि मैं श्वास छोड़ रहा हूँ'।
आपकी एकाग्रता का केन्द्र विशुद्धि है।

**द्वितीय चरण – अतीन्द्रिय पथ में श्वसन क्रिया**

अभी तक आप सोच रहे थे, 'मैं श्वास ले रहा हूँ', 'मैं श्वास छोड़ रहा हूँ'।
इसके स्थान पर अपने को सुझाव दें, 'मैं श्वास के आरोहण-अवरोहण का अनुभव कर रहा हूँ। मैं इसके प्रति सजग हूँ।
अपनी चेतना को बहिर्मुखी बनाए रखें, अन्तर्मुखी नहीं।
सामने की ओर या बगल की तरफ न झुकें।
मन खाली न रहे। बाह्य स्तर पर इसे गतिशील रखें।
श्वास के आरोहण-अवरोहण के प्रति और 'मैं जानता हूँ', इसके प्रति भी सजगता बनाए रखें।
आप जानते हैं कि आप श्वास के प्रति सजग हैं।
इस अभ्यास की दूसरी अवस्था है, श्वास के आरोहण-अवरोहण के प्रति सजगता।

शरीर को हिलाएँ नहीं।
सजगता के प्रति परम सजगता।
मानसिक रूप से शरीर में कड़ेपन का अनुभव करें।
विकसित मन से ऐसा करें, मानो आप पूर्णत: सजग हैं।
आप जानते हैं कि आप सजग हैं।
ध्यान और एकाग्रता की गहराई में सजगता ही है।
'हाँ, निश्चित रूप से मैं सो नहीं रहा हूँ, मैं जाग्रत अवस्था में हूँ'।
नाभि, मणिपुर क्षेत्रम् और कण्ठ, विशुद्धि क्षेत्रम् के बीच श्वास का आरोहण-अवरोहण हो रहा है।
इन दोनों बिन्दुओं के बीच के मार्ग में एक क्षण के लिये भी चेतना खण्डित नहीं होनी चाहिये।
श्वास के आरोहण-अवरोहण के प्रति सजगता।
सूत्र है, श्वास के प्रति सजगता।
श्वास के प्रति पूर्ण सजगता।
नाभि से श्वास के आरोहण और कण्ठ से उसके अवरोहण के प्रति सजगता।
मार्ग अतीन्द्रिय है।
जिस प्रकार हवा के झोंके से रहित स्थान में दीप-शिखा स्थिर रहती है उसी प्रकार अपनी सजगता को स्थिर बनाये रखें।
चढ़ती-उतरती अतीन्द्रिय श्वास के प्रति सजगता।
अभ्यास के साथ ही इसकी ध्वनि को सुनते भी जायें। यह बहुत महत्त्वपूर्ण है।

**तृतीय चरण – सोऽहम् की सजगता**

यह तीसरी अवस्था है।
नाभि से कंठ के बीच श्वास के प्रति आपकी सजगता बनी हुई है।
यह अतीन्द्रिय मार्ग है।
और आप जानते हैं कि आप श्वास के आरोहण-अवरोहण के प्रति सजग हैं।
अन्तश्चेतना विकसित होनी चाहिये।
आपको आंतरिक रूप से सजग रहना है।
मैं जानता हूँ... मणिपुर की ओर अवरोहण हो रहा है।
मैं जानता हूँ... विशुद्धि की ओर आरोहण हो रहा है।
सजगता के प्रति सजगता।

यदि आप पाँच मिनट तक यह अभ्यास ठीक-ठीक करें, तो इच्छाशक्ति द्वारा शरीर पर नियंत्रण हो जायेगा। सजगता अन्तर्मुख हो जाएगी, सतर्कता के साथ, मानो आप सिक्के गिन रहे हैं या भीड़ भरी सड़क पर मोटर चला रहे हैं।

आप अपनी चेतना की गतिविधियों के प्रति सजग रहें।

यदि आप मेरी बात समझ रहे हैं तो अपने व्यक्तित्व के प्रति आपकी सजगता और विकसित हो रही है।

आप सजगता के साक्षी हैं।

मूर्तिवत्, शिलावत् अडिग बन जाएँ।

नाभि और कण्ठ के बीच के अतीन्द्रिय पथ का ख्याल एकदम स्पष्ट हो जाना चाहिये।

इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि आप इस पथ के प्रति सजग हैं।

इस आरोहण-अवरोहण की प्रक्रिया में 'सोऽहं' की ध्वनि के प्रति अपनी सजगता विकसित करें।

ऊर्ध्वगामी सूक्ष्म श्वास है, 'सो'।

और अधोगामी श्वास चेतना है, 'हं'।

इसी प्रकार दुहराते जाएँ ...'सोऽहं'।

यदि आपका मन भटकता है, तो इसे भी जाने।

सत्य को छिपाएँ नहीं।

आप अपने मन के व्यवहार के प्रति सजग होने का अभ्यास कर रहे हैं।

जानिये कि आप क्या कर रहे हैं।

शरीर को हिलाएँ नहीं। आप इस समय मूर्तिवत् हैं।

मन को शान्ति प्रदान करने वाला 'सोऽहं' मंत्र अत्यन्त शक्तिशाली है, पर इससे नींद भी आती है।

**चतुर्थ चरण – हंसो की सजगता**

अब इस सजगता को 'हं-सो' में बदल दें।

कण्ठ से नाभि तक 'हं' के प्रति सजगता।

नाभि से कण्ठ तक 'सो' के प्रति सजगता।

इस प्रकार 'हं-सो' के प्रति अनवरत् सजगता बनी रहे।

'मैं जानता हूँ', 'मैं जानता हूँ' की पूर्ण सजगता के साथ प्रत्येक बार 'हं-सो' का अभ्यास करें।

'हं-सो' के सम्पूर्ण बोध का विस्तार करते जाएँ।
'हंसो' के रूप में गति के प्रति सजगता ही महत्त्वपूर्ण है।
अपनी चेतना और अपने मन पर लगातार निगरानी रखें।
अन्यमनस्क न बनें।
मैं जानता हूँ कि आप सब 'हं-सो' की सजगता से भागने की कगार पर हैं।
गहरे कुएँ में डुबाई जाने वाली बाल्टी को जैसे रस्सी से कसकर बाँध दिया जाता है, उसी तरह अगर आपका मन 'हं-सो' के साथ मजबूती से बँधा नहीं है तो उसके छिटक जाने का खतरा रहेगा।
केन्द्र बिन्दु 'हं-सो' के प्रति सजगता खूब मजबूत होनी चाहिए।
अपने शरीर का क्या होता है, यह महत्त्वपूर्ण बात नहीं है। मन की पकड़ ठीक रहनी चाहिए।
जितना ही आत्म-नियन्त्रण बढ़ता है तथा केन्द्र बिन्दु की पकड़ मजबूत होती जाती है, बाद के अनुभव उतने ही अच्छे होते हैं।
संपूर्ण प्रक्रिया में यह प्रश्न अपने आप से करते रहें। क्या मैं 'हं-सो' के प्रति सजग हूँ?
क्या विकसित तथा विस्तृत चेतना अन्तर में विद्यमान है?
क्या वह विस्तृत, आनन्दमय और शान्त है?
क्या मैं आन्तरिक रूप से सजग हूँ?

**पंचम चरण – सोऽहम्-हं-सो की सजगता**

यह अगली अवस्था है। इसमें कोई नियम नहीं है। चाहे जितनी बार 'सो-हं' की आवृत्ति करें। फिर जब बदलना चाहें इसे 'हं-सो' में बदल कर इच्छानुसार आवृत्ति करें।
इसमें कोई नियम नहीं है, लेकिन आपको किसी-न-किसी वस्तु के प्रति सजग होना पड़ेगा।
सीधे और स्थिर रहें।
आप बदल-बदल कर अभ्यास कर सकते हैं। परन्तु ऐसा करना अनिवार्य नहीं है।
चिदाकाश के दृश्य को ध्यान से देखें।
वस्तु चाहे कोई भी हो, एक तिनका या आम का पेड़ या एक सुन्दर नाव या पशु या मात्र शून्य ही क्यों न हो, आप उसे जाने, सतर्कतापूर्वक उसका ध्यान रखें या देखें।

साथ-साथ 'सो-हं' या 'हं-सो' के साथ अपने को लगातार जोड़े रखें।
चाहे जिस तरह आपको रुचे, मन को कार्यरत व तनावरहित रखें।
यह आवश्यक नहीं है कि आप किसी विशेष विधि का ही अनुसरण करें।
यह आपकी सजगता का एक पक्ष है।
और दूसरा पक्ष है – क्या मैं चिदाकाश में देख रहा हूँ?
चिड़िया, घास या नाव...आप अपनी चेतना को 'सोऽहं' का तनावरहित अनुसरण करने में भी लगाये रखें।
आप दृश्य-दर्शन की भी चेष्टा कर रहे हैं।
विचार नहीं करें, बल्कि मानसिक चित्रों का दर्शन करने की चेष्टा करें।
इच्छाशक्ति द्वारा शरीर को दृढ़ रखें।
'सो' और 'हं' के साथ विचरण करें, पर बिम्बों पर दृष्टि रखें।
इस अभ्यास में निपुण हो जाने पर अन्तर्मौन और ध्यान का अभ्यास करना आपके लिए आसान हो जाएगा।
आप मानसिक रूपों को देखने की क्षमता विकसित करने की चेष्टा कर रहे हैं।
इसलिए जब आप ज्वाला या गुलाब के विषय में सोचते हैं तब उसे देख लेते हैं।
मंत्र के प्रति सजगता बनाए रखें।
आन्तरिक बिम्बों पर अपनी निगाह रखें – मैंने क्या देखा? मैं क्या देख रहा हूँ?

**षष्ठम् चरण – श्वासों की गणना**

अब श्वास-प्रश्वास को एक से बीस या तीस तक गिने।
श्वास के आरोहण-अवरोहण की गति का ध्यान रखें।
अनवरत सजगता बनाए रखना अवश्यक है।
श्वास-प्रश्वास को पूरी सजगता से गिने।
सजगतापूर्वक सही-सही गिनती करें।
सावधानी से गिने।
शरीर के ऊपर नियंत्रण रखें।
शरीर, अतीन्द्रिय पथ और गिनती, सबको याद रखें।
यदि आप गिन चुके हों तो याद रखें, मैं गिन रहा था।
मन को ढीला न छोड़ें।
अब श्वास-प्रश्वास के साथ 'सोऽहं' को जोड़ दें।
'सो' श्वास है, 'हं' प्रश्वास।
श्वास क्रिया और 'सोऽहं' की सजगता नाभि और कण्ठ के बीच हो।

केन्द्र बिन्दु को याद रखें।
ऊपर जाती हुई श्वास 'सो' और नीचे आती हुई श्वास 'हं' है।
अब मेरे साथ तीन बार ॐ का उच्चारण करें, ॐ... ॐ... ॐ...।
अब आँखें खोलकर शरीर को विश्राम दें।

*हरि ॐ तत्सत्*

## मध्यम अजपा जप – मेरुदण्डीय-पथ परिभ्रमण

अजपा जप के इस सम्पूर्ण अभ्यास में दृढ़ कल्पना शक्ति की आवश्यकता है। जो भी क्रिया चल रही हो, उसे ठीक-ठीक याद रखें। यह बहुत महत्त्वपूर्ण बात है। यदि आप ध्यान करें और भूल जायें कि ध्यान कर रहे हैं तो सफल ध्यान कर ही न पायेंगे। इसलिए अपनी समस्त क्रियाओं के प्रति सजग रहें। आप मानस-दर्शन कर रहे हैं, श्वास ले रहे हैं, आपका मन भटक रहा है तो सजग रहें कि आपका मन भटक रहा है। इसी तरह अगर आप मन को एकाग्र कर रहे हैं, तो इस बात के प्रति सजग रहें कि आप अपने मन को एकाग्र कर रहे हैं।

इस अभ्यास में प्राण प्रवाह का अनुभव नाभि से कंठ तक के क्षेत्र में करने की बजाय सुषुम्ना नाड़ी में करें। प्रत्येक चक्र से होते हुए प्राण प्रवाहित हो रहा है, ऐसा अनुभव करें। ये चक्र हैं – मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि और आज्ञा।

## विधि 1– मेरुदण्डीय पथ की सजगता

किसी सुविधाजनक आसन में बैठकर आँखें बन्द कर लीजिए। स्वयं को शारीरिक एवं मानसिक रूप से कुछ मिनट के लिए तनावरहित बना लीजिए। खेचरी मुद्रा लगाकर उज्जायी प्राणायाम कीजिए। लयबद्ध धीमी श्वास-प्रश्वास के प्रति सजग रहिए।
पूर्ण रूप से सजग रहिए।
प्रश्वास के साथ प्राण आज्ञा से मूलाधार की ओर दूसरे चक्रों को पार करते हुए नीचे उतर रहा है, ऐसा अनुभव कीजिए।
प्रारम्भ में आपको चक्रों की स्थिति की कल्पना करनी चाहिए।
श्वास अन्दर लेते समय प्राण का प्रवाह मूलाधार से आज्ञा की ओर हो रहा है, ऐसा अनुभव कीजिये।

जब श्वास आज्ञा या मूलाधार में पहुँचे, तो उसे कुछ क्षण के लिए रोक लीजिए। उस चक्र पर थोड़ी देर तक मन को एकाग्र कीजिए।

लगभग 5 मिनट तक इस क्रिया को दुहराइये।

तब अपने मंत्र को अपने प्राणों की गति के साथ संयुक्त कर दीजिए।

प्राण के आरोहण के साथ 'सो' का कम्पन अनुभव कीजिए तथा अवरोहण के साथ 'हं' का।

मेरुदण्ड में चक्रों से होकर बढ़ते हुए ऊपर से नीचे की ओर और नीचे से ऊपर की ओर इस कम्पन की गति का अनुभव कीजिए।

प्रत्येक आरोहण तथा अवरोहण के अन्त में कुछ देर तक मूलाधार और आज्ञा चक्रों के प्रति अपनी सजगता बनाये रखिये।

अपने द्वारा की गई प्रत्येक क्रिया के प्रति सजगता बनाए रखिए।

जब अभ्यास दक्षता प्राप्त हो जाये, तब दूसरी विधि का अभ्यास शुरू कीजिए।

### विधि 2 – सोऽहम् का परिभ्रमण

यह अभ्यास प्रथम विधि की तरह ही है। अन्तर केवल इतना है कि इसमें श्वास-प्रश्वास के बीच एक निरन्तरता है, पर प्रश्वास-श्वास के बीच नहीं।

मंत्र का अभ्यास इस प्रकार चलेगा, 'सो-हं', 'सो-हं'।

कुछ दिनों के पश्चात् विधि 3 का अभ्यास आरम्भ करें।

### विधि 3 – हंसो का परिभ्रमण

इस विधि में श्वास-प्रश्वास के बीच हल्का व्यतिरेक है। परन्तु प्रश्वास और अगली श्वास एक दूसरे से जुड़े रहते हैं।

इस तरह मंत्र हो जाता है, 'हं-सो', 'हं-सो', 'हं-सो'।

जब इस विधि का अभ्यास ठीक से होने लग जाए, तो विधि 4 का अभ्यास आरम्भ करें।

### विधि 4 – सतत् परिभ्रमण

अब श्वास-प्रश्वास-श्वास में निरन्तरता होगी और इस क्रम से मंत्र बनेगा, 'सो-हं'-'सो-हं'-'सो-हं'।

कुछ दिनों के बाद विधि 5 का अभ्यास करें।

### विधि 5 – सोऽहम्-हंसो का सहज क्रम-परिवर्तन

इस विधि में 'सो-हं'से 'हं-सो' और फिर 'सो-हं' 'हं-सो' में बदलने की क्रिया सहज हो जायेगी।

इस विधि में दक्षता प्राप्त हो जाने पर अजपा जप के उच्च अभ्यास की ओर बढ़ें।

*हरि ॐ तत्सत्*

### उच्च अजपा जप

यह अभ्यास मध्यम अजपा जप के अभ्यास से मिलता-जुलता है। इसके भी पाँच चरण हैं। मुख्य अन्तर यह है कि इसमें श्वास लम्बी और गहरी होती है तथा प्राण-प्रवाह का अतीन्द्रिय मार्ग मूलाधार से सहस्रार तक जाता है। अन्य सभी प्रकार से इसका अभ्यास मध्यम अजपा जप के पाँच चरणों की तरह ही करना चाहिए।

## कक्षा-प्रतिलेखन

### उच्च अजपाजप

### प्रथम चरण – तैयारी

ध्यान के किसी भी आसन में बैठें। हाथों को ज्ञानमुद्रा या चिन्मुद्रा में रखें। आँखें बन्द करें। शरीर स्थिर रखें।

शरीर सीधा रखें। अजपा-जप के निर्देशों को सुनें।

खेचरी माँ है। जैसे बच्चा अपनी माँ की गोद में रहता है, उसी तरह योगी भी जब तक चाहे खेचरी में रह सकता है।

खेचरी के साथ आपका सम्बन्ध अवश्य स्थापित हो जाना चाहिए। यह आपके अस्तित्व का एक अनिवार्य अंग बन जाना चाहिए।

अब आपको जिह्वा, जिह्वाग्र और तालू पर अपना ध्यान केन्द्रित करना है।

खेचरी के अभ्यास के प्रारम्भ में शरीर की सीमाओं का ख्याल रखें।

आप चाहते हुए भी सारे दिन खेचरी का अभ्यास नहीं कर सकते, लेकिन धीरे-धीरे करके आप दीर्घ काल तक इसका अभ्यास कर सकते हैं।

उज्जायी प्राणायाम के साथ इस तरह इसका अभ्यास करें कि आप नीचे मूलाधार और ऊपर सहस्रार के बीच श्वास-प्रश्वास का अनुभव मेरुदण्ड में कर सकें।
उज्जायी में उसी तरह की आवाज निकलनी चाहिए जैसी गहरी नींद में निकलती है।
आवाज में सम-स्वरता हो; उतार-चढ़ाव नहीं।
उबलते पानी के बर्त्तन से निकलने वाली भाप के स्वर की तरह आवाज होनी चाहिए।
मूलाधार से श्वास के आरोहण और सहस्रार से श्वास के अवरोहण की कल्पना मेरुदण्ड में एक सूक्ष्म प्रकाश-पथ के रूप में करें।
मुँह और ओंठ बन्द करके उज्जायी का अभ्यास प्रारम्भ करें।

**द्वितीय चरण – मेरुदण्डीय पथ में श्वसन**

मेरुदण्ड के भीतर उज्जायी श्वसन क्रिया के प्रति सजग हो जाएँ।
सहस्रार से मूलाधार तक और मूलाधार से सहस्रार तक।
इस पथ में आपकी श्वास गहरी नींद में चलने वाली श्वास के सदृश होगी।
कुछ समय के बाद यह सूक्ष्म और विरल हो जाएगी, लेकिन अब आपको सजग होकर आवाज निकालनी होगी।
खेचरी मुद्रा में लगातार रहना जरूरी नहीं है। बीच-बीच में खेचरी माँ की गोद छोड़ दें, परन्तु वापस वहीं पहुँच जायें।
अब श्वास का वेग न बढ़ायें, नहीं तो ऐसा करने से कण्ठ अधिक सूखेगा।
खेचरी लगाए रखने से कुछ समय के बाद रस-स्राव होगा, जो कण्ठ को सिंचित करता रहेगा; उसकी शुष्कता दूर हो जायेगी।
मेरुदण्ड में मेरुरज्जु, सुषुम्ना नाड़ी है।
जब तक सुषुम्ना सुषुप्तावस्था में है तब तक यह नाड़ी से अधिक कुछ नहीं है, लेकिन जाग्रत हो जाने पर यह तरंगों से भरा प्रकाश-पथ बन जाती है।
उज्जायी श्वसन जारी रखते हुए श्वास के प्रति सजगता को कल्पना की सहायता से सुषुम्ना नाड़ी से होकर प्रवाहित होने दें। सहस्रार की ओर चढ़ती हुई और मूलाधार की ओर उतरती हुई श्वास को स्पष्ट रूप से अनुभव करने का प्रयास करें।
आपको अभी इसी अभ्यास में दक्ष होना है।

### तृतीय चरण – सोऽहम् की सजगता

उज्जायी के इसी अभ्यास में 'सो-हं' मंत्र की सजगता जोड़ देनी है।

श्वास के आरोहण में 'सो' तथा प्रश्वास के अवरोहण में 'हं'।

केवल पाँच मिनट अभ्यास करें।

इसी प्रकार आप श्वास की 'सो-हं' धुन के प्रति जागरूक होते हैं।

'सो-हं' के प्रति निरन्तर सजगता ही सुषुम्ना में उज्जायी श्वसन-क्रिया का रूप है।

'सो-हं' के प्रति सजगता चेतना का अत्यन्त सशक्त रूप है।

दिन या रात में आप जब कभी अवकाश में हों, सुषुम्ना में 'सो-हं' के प्रति सजग हो सकते हैं।

इससे आपकी चेतना पर एक सशक्त प्रभाव पड़ेगा।

'सो-हं' की सजगता निरन्तर बनी रहनी चाहिए, खेचरी इसके साथ रहे या न रहे।

योगी को अहर्निश 'सो-हं' के प्रति अपनी सजगता बनाए रखने का प्रयत्न करना चाहिए ताकि उसकी चेतना की गहराइयों का शुद्धिकरण हो सके।

उसे किसी भी समय ध्यान के आसन में स्थिर बैठ कर, आँखें बन्द करके 'सो-हं' के प्रति सजग हो जाना चाहिये।

### चतुर्थ चरण – हंसो की सजगता

इसके बाद 'सो-हं' की बजाय वह 'हं-सो' के प्रति सजग हो सकता है।

यह क्रिया जप में मंत्र के प्रति सजगता की तरह ही है। पर यह माला के बिना 'सो-हं' के प्रति सजगता है।

यह सजगता माला के प्रति नहीं, श्वास के प्रति है और हाथ में नहीं, बल्कि मेरुदण्ड में है।

यदि आप इस अतीन्द्रिय सजगता की स्थिति प्राप्त कर लें तो आन्तरिक स्तर पर अनेक कार्य सम्पन्न हो जाएँगे।

### पंचम चरण – सोऽहम् – हंसो का सहज क्रम परिवर्तन

'सो-हं'...'हं-सो', मूलाधार से सहस्रार – आरोहण और अवरोहण।

जब आप 'हं' कहते हैं तो पूरा शरीर शिथिल हो जाता है।

जब आप 'सो' कहते हैं तो चेतना शीर्ष पर पहुँच जाती है।

'हं' गहराई में मूलाधार तक जाता है और कभी-कभी विलक्षण अनुभव प्राप्त होते हैं।

'सो' आकाश की ऊँचाइयों तक जाता है।

दिन में कभी भी स्वयं अभ्यास करके देखें। आप पायेंगे कि दिन के अलग-अलग प्रहर के अनुभव भिन्न-भिन्न होते हैं—प्रातः काल, अपराह्न और संध्या के अनुभव एक-दूसरे से भिन्न होंगे।

इसका अभ्यास कम-से-कम पाँच मिनट और अधिक-से-अधिक आधे घण्टे तक करना चाहिए।

इसका अभ्यास भिन्न-भिन्न स्थितियों में करें—भोजन के पहले और भोजनोपरान्त, स्नान के बाद, स्नान के पूर्व बेहद गर्मी में, बेहद सर्दी में, इच्छा और अनिच्छा की स्थिति में, आप थके हुए हों या तरो-ताजा हों।

संस्कारों का क्षेत्र विकसित करने के लिए इसका अभ्यास करना चाहिए।

यदि योगी सतर्क हो तो उसे दिनभर में 20 बार पाँच मिनट का समय मिल सकता है, यानि कुल मिलाकर कम-से-कम दो घण्टे तो मिल ही जाएँगे।

यदि आप 'सो-हं' और 'हं-सो' का अभ्यास करते हैं, तो सचमुच आप विभिन्न संस्कारों और कर्मों को प्रकट होने का अवसर प्रदान करते हैं।

कृपया आँखें खोल दें और शरीर को शिथिल करें।

अब अजपा जप का अभ्यास पूरा हुआ।

*हरि ॐ तत्सत्*

# 16

# योगनिद्रा

योगनिद्रा का मतलब होता है अतीन्द्रिय निद्रा। यह वह नींद है जिसमें जागते हुए सोना है। यह निद्रा और जागृति के मध्य की स्थिति है। यह हमारी आन्तरिक जागरूकता की स्थिति है। इसमें हम चेतना, अवचेतन मन और उच्च चेतना से सम्बन्ध स्थापित करते हैं। अभ्यास की प्रारम्भिक स्थिति में किसी बोलने वाले का होना आवश्यक है। इसके लिए यदि सम्भव हो तो टेप रिकार्डर का इस्तेमाल किया जा सकता है। आगे चलकर जब आपको निर्देश याद हो जायेंगे तो आप स्वयं ही अकेले में अभ्यास कर सकते हैं।

योगनिद्रा में अभ्यासी गहन शिथिलन की स्थिति में पहुँच जाता है। नींद की प्रारम्भिक तैयारी के रूप में भी इसका अभ्यास किया जाता है। बहुत से लोग यह नहीं जानते कि किस तरह सोना चाहिए। वे अनेक प्रकार की चिन्ताओं का बोझ लिए हुए अपनी समस्याओं पर विचार करते हुए सो जाते हैं। नींद में भी उनका मन सक्रिय तथा शरीर तनावपूर्ण रहता है। जब वे सोकर उठते हैं, तो उन्हें थकान लगती है। नींद के द्वारा उन्हें विश्राम नहीं मिल पाता। बहुत मुश्किल से कोशिश करते-करते वे आधे घण्टे के बाद बिस्तर से उठते हैं। अत: हर व्यक्ति को वैज्ञानिक ढंग से सोने की कला सीखनी चाहिए। सोने के पहले योगनिद्रा का अभ्यास करें। इससे सम्पूर्ण शरीर और मन शिथिल हो जायेगा। नींद गहरी आयेगी और कम समय में पूरी हो जायेगी और जागने पर आप ताजगी एवं स्फूर्ति का अनुभव करेंगे।

योगनिद्रा के अभ्यास में शारीरिक केन्द्रों की स्थिति अन्तर्मुखी हो जाती है। इसी को प्रत्याहार कहते हैं। जब मन किसी केन्द्र पर एकाग्र हो जाता है, तब रक्त, प्राणशक्ति आदि भी उसी स्थान पर केन्द्रित हो जाते हैं। सभी इन्द्रियाँ

उस केन्द्र पर वापस लौट जाती हैं। तब गहन शिथिलता की स्थिति प्राप्त होती है। फलस्वरूप तनाव समाप्त हो जाते हैं तथा मन साफ हो जाता है। विचार अधिक शक्तिशाली हो जाते हैं। योगनिद्रा की स्थिति में हम अपने आन्तरिक व्यक्तित्व के साथ सम्बन्ध स्थापित करते हैं ताकि अपने तथा दूसरों के प्रति अपनी अभिवृत्तियों में उचित परिवर्तन ला सकें। यह आत्मनिरीक्षण की एक विधि है। इस विधि का प्रयोग अनेक योगियों द्वारा बहुत प्राचीनकाल से अपने आत्मा से सम्पर्क करने हेतु किया जाता रहा हैं।

अभ्यास के दौरान एक संकल्प लिया जाता है। यह संकल्प ऐसा होना चाहिए, जो आपके लिए बहुत महत्त्व रखता हो। वस्तुतः संकल्प वे छोटे-छोटे नीति वाक्य होते हैं, जिन्हें आप अपने अवचेतन मन में आरोपित करना चाहते हैं। योगनिद्रा की निष्क्रिय अवस्था में इस प्रकार के आत्म-सुझाव बड़े शक्तिशाली प्रमाणित होते हैं। इस तरह के संकल्प आपके सम्पूर्ण जीवन की दिशा परिवर्तित कर सकते हैं। यदि आप पूर्ण विश्वास के साथ अपने संकल्प की पुनरावृत्ति करें तो वे अवश्य पूरे होंगे। इस तरीके से आप अपनी आदतें बदल सकते हैं और अनेक प्रकार के मानसिक रोगों से मुक्त हो सकते हैं। संकल्पों के आध्यात्मिक उद्देश्य भी हो सकते हैं जैसे 'मैं अधिक सजग बनूँगा।' अभ्यास करते समय संकल्प को बार-बार तथा नियमित रूप से कई सप्ताहों तक दुहराना चाहिए। योगनिद्रा समाप्त होने के बाद आँखें खोलने के पहले अपने संकल्प का पुनः चिन्तन करें।

योगनिद्रा के समय द्रुतगति से दिये गए निर्देशों को सावधानी के साथ सुनते हुए उनका अनुसरण करना चाहिए। यदि आप योगनिद्रा का अभ्यास सोने के उद्देश्य से नहीं कर रहे हैं तो अभ्यास की पूरी अवधि तक आपको पूर्ण रूप से सजग रहना होगा। अभ्यास करते समय सोयें नहीं। निर्देशों के अर्थ का बौद्धिक विश्लेषण भी न करें। उन्हें याद करने की भी कोशिश न करें, नहीं तो आपका मन थक जाएगा और नींद आ जाएगी।

योगनिद्रा का अभ्यास शवासन में लेटकर करें, आपका सिर समतल फर्श पर हो। सिर और शरीर एक सीध में हों। पैरों के बीच थोड़ी दूरी हो। हाथ धड़ के पास हों। हथेलियाँ ऊपर की ओर खुली हुई हों। बिल्कुल स्थिर होकर लेटे रहें। शरीर पूरी तरह विश्रान्त और वस्त्र ढीले हों। योगनिद्रा शुरू होने के पश्चात् किसी प्रकार की शारीरिक हलचल नहीं होनी चाहिए। अभ्यास के समय पेट भरा नहीं होना चाहिए। आँखें अभ्यास की पूरी अवधि में बन्द रहेंगी।

## योगनिद्रा की अवस्थाएँ

योगनिद्रा की साधारणत: निम्नलिखित अवस्थायें होती हैं, यद्यपि इनके क्रम तथा विषय-वस्तु को बदला भी जा सकता है –

1. एक संकल्प लिया जाता है।
2. श्वास की सजगता
3. शरीर के 76 अंगों में चेतना को घुमाया जाता है। मन को एक अंग से दूसरे अंग की ओर तेजी से दौड़ना चाहिये। इस अभ्यास की एक से पाँच आवृत्तियाँ होती हैं। चेतना को शरीर के विभिन्न अंगों में घुमाते समय क्रम को बदलना नहीं चाहिये, क्योंकि हमारा अवचेतन मन एक निश्चित क्रम का आदी बन जाता है।
4. भारीपन, हल्केपन, गर्मी, सर्दी, कष्ट और आनन्द की अनुभूतियों का स्मरण अथवा उन्हें जाग्रत करना।
5. चक्रों के केन्द्रों तथा उनके अतीन्द्रिय प्रतीकों के प्रति सजग रहना होता है। जब उनके सही स्थानों का मानसिक स्पर्श किया जाए तो बिम्ब दिखाई पड़ सकते हैं या कुछ विशिष्ट अनुभव हो सकते हैं।
6. अभ्यास के अन्त में संकल्प को दुहराया जाता है। आत्म-चेतना तथा परमात्म-चेतना की एकता के प्रति सजग रहा जाता है।
7. धीरे-धीरे सामान्य चेतना में वापस आया जाता है और अपने अंगों को धीरे-धीरे हिलाया जाता है। ऐसा झटके के साथ नहीं किया जाता।

## कक्षा प्रतिलेखन

### 1 – संक्षिप्त अभ्यास

**तैयारी –** योगनिद्रा की तैयारी के लिए समस्त शारीरिक हलचल बन्द कर दें।
**संकल्प –** अपना संकल्प निश्चित करें और उसे तीन बार दुहरायें। *(विराम)*
**विश्रान्ति –** अब शरीर को शिथिल करें, परन्तु सजग रहें।

शरीर के प्रत्येक अंग को शिथिल करें तथा शिथिलता की अनुभूति के प्रति सजग रहें।

शिथिलीकरण पूर्ण तथा समांगी होना चाहिए।

आपका शरीर, मन, इन्द्रियाँ, भावनाएँ, बुद्धि, और व्यक्तित्व के सभी पक्ष, आपका सम्पूर्ण अस्तित्व पूर्णरूप से शिथिल तथा विश्राम की स्थिति में होना चाहिए, जैसा कि गहरी नींद में सोते समय होता है।

सजग रहें और अगले निर्देशों का पालन करने के लिए तैयार हो जाएँ।
पूरे शरीर पर चित्त को एकाग्र करें तथा उसके प्रति निर्बाध रूप से सतत् तथा समांगी सजगता बनाए रखें।

**शरीर/भूमि सम्पर्क –** जमीन पर लेटे हुए शरीर पर मन को एकाग्र करें और उन सभी अंगों का ख्याल करें जो जमीन को छू रहे हैं।

उस स्थान पर मन को एकाग्र करें जहाँ दाहिने पैर की एड़ी जमीन को छू रही है।
इसी तरह उन सभी बिन्दुओं पर अपनी चेतना घुमाते जायें जहाँ विभिन्न अंग धरती को छू रहे हैं।

बायीं एड़ी, दाहिने पैर की पिंडली, बायें पैर की पिंडली, दाहिनी जाँघ, बायीं जाँघ, दाहिना नितम्ब, बायाँ नितम्ब, दाहिनी स्कंधास्थि, बायीं स्कंधास्थि, दाहिना हाथ, बायाँ हाथ, दाहिनी कोहनी, बायीं कोहनी, सिर का पिछला भाग, सिर का पिछला भाग।

अब केवल शरीर के उन अंगों पर मन को ले जाएँ जो जमीन को स्पर्श कर रहे हैं।

इस क्रिया का अभ्यास लगातार करते जाएँ।

जहाँ-जहाँ आपके अंग धरती को स्पर्श कर रहे हैं, उनका आप अच्छी तरह अनुभव करें।

यह अभ्यास जारी रखें, जारी रखें, जारी रखें।

अंगों और धरती के बीच के स्पर्श-बिन्दुओं के प्रति पूर्ण रूप से सजग रहें।

अभ्यास करते जाएँ; अभ्यास करते जाएँ।

इन स्पर्श-बिन्दुओं के प्रति पूर्ण रूप से सजग रहें, अपनी सजगता को तीव्र तथा गहन बनाते जाएँ।

पूर्ण सजगता के साथ इन स्पर्श-बिन्दुओं का अनुभव करें।

इस अभ्यास को गहन करते जाएँ और अधिकाधिक स्पष्टता के साथ इन स्पर्श-बिन्दुओं का अनुभव करें।

यह गुरुत्व-रेखा है।

अब अपने शरीर के उन बिन्दुओं का ख्याल करें जहाँ दोनों आँखों की पलकें मिलती हैं। चेतना को गहन बनाएँ तथा इन बिन्दुओं को स्पष्टता से अनुभव करें।

अब अपनी चेतना के गुरुत्व केन्द्र को पलकों से हटाकर दोनों ओंठों के स्पर्श-बिन्दुओं पर ले आएँ।

दोनों ओंठों के स्पर्श-बिन्दुओं के प्रति सजग हो जाएँ।
सजगता बनाये रखें।
सजगता को गहन बनाएँ और ओंठों के स्पर्श-बिन्दुओं का अनुभव करें।

**श्वसन** – अब अपनी श्वास का ख्याल करें और मानसिक नाड़ी शोधन प्राणायाम करें तथा श्वासों को इस प्रकार गिनें।
बायीं नासिका से श्वास ली; दाहिनी नासिका से छोड़ी – एक
दाहिनी से ली; बायीं से छोड़ी – दो
बायीं से ली; दाहिनी से छोड़ी – तीन
दाहिनी से ली; बायीं से छोड़ी – चार।
दोनों से ली; दोनों से छोड़ी – पाँच।
इसी प्रकार दाहिनी-बायीं नासिकाओं से श्वास लेते-छोड़ते हुए नौ तक गिने।
फिर दोनों नासिकाओं से श्वास लेते-छोड़ते हुए – दस।
इस क्रम से तीस तक गिने।
एक – एक, दो – दो, तीन – तीन, चार – चार, पाँच – पाँच, छः – छः, सात – सात, आठ– आठ, नौ – नौ, दस – दस, ग्यारह – ग्याारह, बारह – बारह, तेरह – तेरह, चौदह – चौदह, पन्द्रह – पन्द्रह, सोलह – सोलह, सत्रह – सत्रह, अट्‌ठारह – अट्‌ठारह, उन्नीस – उन्नीस, बीस – बीस, इक्कीस – इक्कीस, बाईस – बाईस, तेईस – तेईस, चौबीस – चौबीस पच्चीस – पच्चीस, छब्बीस – छब्बीस, सत्ताईस – सताईस, अट्‌ठाईस – अट्‌ठाईस, उनतीस – उनतीस, तीस – तीस।
इस अभ्यास को पूरी सजगता के साथ दो मिनट तक करें। *(विराम)*

**संकल्प** – फिर अन्त में अपने संकल्प को तीन बार दुहरायें।

**समापन** – अब अपने चेहरे का मानस-दर्शन करें – उसी प्रकार जिस प्रकार आप दर्पण में अपना चेहरा देखते हैं।
अपने पूरे शरीर को जमीन पर लेटा हुआ देखें।
कुछ देर तक अपने को देखते जाएँ।
धीरे से आँखें खोल दें और उठकर बैठ जाएँ।
योगनिद्रा का अभ्यास पूरा हुआ।

*हरि ॐ तत्सत्*

## 2 – योगनिद्रा का विस्तृत अभ्यास

**तैयारी –** अब मानसिक शिथिलीकरण का अभ्यास प्रारम्भ होता है। कृपया अपने शरीर को विश्राम की स्थिति में ले आएँ।

आप चाहें तो अपनी शारीरिक स्थिति को अभी व्यवस्थित कर सकते हैं।

जब तक अभ्यास समाप्त न हो जाए तब तक आँखें न खोलें।

सभी निर्देशों का मानसिक रूप से ही अनुसरण करें। शरीर बिल्कुल न हिलायें।

जो निर्देश दिये जाते हैं, उनका बौद्धिक विश्लेषण न करें।

आदेशों का सहज ढंग से पालन करें।

आपको शारीरिक, मानसिक और अतीन्द्रिय विश्राम मिलेगा।

अभ्यास की पूरी अवधि में जागते रहें। सोएँ नहीं।

अपने आपको पूर्णत: जाग्रत रखें। जब शिथिलीकरण गहन हो जाता है, तब नींद अवश्य आती है, परन्तु बीच-बीच में अपने-आप से मन-ही-मन कहते रहें – 'मैं जाग रहा हूँ, मैं जाग रहा हूँ, मैं जाग रहा हूँ।'

अभ्यास के बीच-बीच में पूर्ण रूप से जाग कर अपनी चेतना की स्थिति का निरीक्षण करें।

अभ्यास करते समय आपको कुछ बातें समझ में आएँगी और कुछ नहीं। चाहे आप उन्हें समझें या न समझें, कोई अन्तर नहीं पड़ता है। केवल निर्देशों का पालन करते जाएँ।

अभ्यास अचानक शुरू न करें। प्रतिदिन लगभग 7 से 10 मिनट तक शरीर को विश्रान्त तथा स्थिर करें और अपने मन में चेतना को इस प्रकार विकसित करें, 'अब मैं योगनिद्रा का अभ्यास करने जा रहा हूँ।'

'पूरे अभ्यास की अवधि तक मैं पूर्ण रूप से जागता रहूँगा।'

उस अनुभव की याद करें जब रात्रि में पूर्ण शिथिलता की स्थिति में आप सोने जा रहे होते हैं।

इन बातों को मन-ही-मन दुहरायें।

'मेरा मन स्वतंत्र है। मेरा शरीर स्वतंत्र है। मैं शिथिलीकरण के लिए तैयार हो रहा हूँ। मैं आदेशों को सुन रहा हूँ।'

इसी तरीके से आपको प्रतिदिन दस मिनट तक अपने-आपको मानसिक विश्राम प्राप्त करने के लिए तैयार करना होगा।

यदि समय-समय पर अन्य विचार आकर आपको तंग करें, तो घबराएँ नहीं।

अब सिर से लेकर पैर तक अपने सम्पूर्ण शरीर का ख्याल करते जायें और मानसिक रूप से ॐ का उच्चारण करें।

सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजगता।

सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजगता।

सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजगता।

सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजगता।

**संकल्प –** इस क्षण में एक संकल्प करें।

आपको एक संकल्प निश्चित करना है।

आपको अपने संकल्प के बारे में निर्णय लेना है।

आपको अपने लिए एक संकल्प निश्चित करना है। अपने लिए संकल्प निश्चित करने में जल्दबाजी न करें, बल्कि पर्याप्त समय देकर उपयुक्त संकल्प खोजें।

संकल्प के वाक्य सरल होने चाहिए।

सरल संकल्प, सरल संकल्प, सरल संकल्प।

अपने लिए एक संकल्प चुनें।

अपने लिए एक उपयुक्त संकल्प चुनें।

आप योगनिद्रा के अभ्यास के समय जो संकल्प करेंगे, वह पूरा होगा। जब बौद्धिक विश्लेषण अनुपस्थित होता है और सहज सजगता का प्राकट्य होता है, तब मन संकल्पों के प्रति बहुत ग्रहणशील रहता है, तब संकल्प प्रभावकारी सिद्ध होता है।

अपने लिए जो संकल्प आप निश्चित करते हैं, वह बहुत ज्यादा लम्बा या अस्पष्ट नहीं होना चाहिये। संकल्प के वाक्य सरल, छोटे और स्पष्ट हों।

जैसे आप जमीन तैयार करते हैं और बीज बोते हैं, उसी प्रकार मन रूपी खेत में संकल्प के बीज बोएँ।

यह आवश्यक नहीं है कि आप अपने लिए आज ही से संकल्प निश्चित कर लें।

किन्तु आपको अपने लिए संकल्प निश्चित अवश्य करना है।

संकल्प को सरल और व्यावहारिक होना चाहिये।

जब एक बार अपना संकल्प निश्चित कर लें, तब उसे प्रतिदिन दुहरायें जब तक वह फलित न हो जाए।

योगनिद्रा का अभ्यास करते समय दो बार संकल्प दुहरायें – एक बार प्रारम्भ में और दूसरी बार अन्त में।

योगनिद्रा का अभ्यास करते समय जो संकल्प किया जाता है, वह अवश्य ही पूरा होता है, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

यदि आप अपने मन को अपने विश्वास में ले लेंगे तो आप कुछ भी कर सकते हैं। जब हमारी तार्किक बुद्धि तथा व्यक्तित्व का प्रभाव कम होने लगता है, उस समय अवचेतन मन को अपना स्वरूप प्रकट करने का अवसर मिलता है, तथा आप जो संकल्प करते हैं, वह अवश्य ही पूरा होता है।

अभ्यास में अपने संकल्प को दुहरा लेने के बाद पुनः अपने भौतिक शरीर के प्रति सजग हो जाएँ।

सिर से पैर तक संपूर्ण शरीर के प्रति इस प्रकार सजग हो जाएँ – कहें – 'मैं हूँ, मैं हूँ।' या 'मेरा शरीर, मेरा शरीर'। एक बार में ही पूरे शरीर के बारे में सोचें। एक बार में ही पूरे शरीर के बारे में सोचें।

एक ही क्षण में अपने पूरे शरीर के प्रति सजग हो जाएँ।

'मैं अपना शरीर हूँ। मैं अपना शरीर हूँ।' इस प्रकार सोचते हुए सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजगता बनाये रखें।

अब सोचें – 'मैं निर्देशों को सुन रहा हूँ। मैं सजग हूँ। मैं सो नहीं रहा हूँ। मुझे बाहर की आवाजें सुनाई पड़ रही हैं, पर मैं पूर्णतः शिथिल हूँ। मैं किसी भी क्षण सो सकता हूँ, लेकिन मुझको जागते रहना है।'

अब योगनिद्रा का प्रथम अभ्यास शुरू होता है।

**चेतना को घुमाना** – शरीर के विभिन्न अंगों पर अपनी चेतना को घुमाना।

अपने मन में शरीर के अंगों के नाम लें और केवल कुछ क्षणों के लिए, लेकिन अधिक देर तक नहीं, उनके प्रति अपनी सजगता विकसित करें।

उदाहरण के लिए यदि मैं कहूँ – दाहिने हाथ का अँगूठा, तो आपको भी अपने मन में कहना होगा, 'दाहिने हाथ का अँगूठा।

लेकिन इस समय इस अंग को हिलाएँ नहीं। इसी तरह दूसरे अंगों के साथ करें।

मैं आपकी चेतना को शरीर के विभिन्न अंगों में ले जाऊँगा। मेरी गति थोड़ी तेज होगी। अपने को सजग रखें। बहुत ज्यादा एकाग्र नहीं। केवल अपनी सजगता को बढ़ाएँ। अपने मन की गति को मेरी गति के अनुसार तेज रखें।

यदि आप मेरी गति के अनुसार नहीं चल सकें, तो कोई बात नहीं; मेरी अगली बातें सुनें।

पहले मैं थोड़ा धीरे-धीरे चलूँगा। तब इसके बाद अपनी गति थोड़ी तेज करूँगा।

जिस अंग का मैं नाम लूँ, मन-ही-मन उसका नाम दुहराएँ।

आपको अंग विशेष का नाम मानसिक रूप से लेना है, इस बात को समझ लें।

***दाहिना भाग***– मन-ही-मन कहिए – दाहिने हाथ का अँगूठा, पहली अंगुली, दूसरी, तीसरी, चौथी, हथेली, कलाई, कोहनी, कंधा, काँख, कमर, जाँघ, घुटना, पिंडली, टखना, एड़ी, तलवा, दाहिने पैर का अँगूठा, पहली अंगुली, दूसरी, तीसरी, चौथी।

***बायाँ भाग***– अब बायें भाग में आइये – बायें हाथ का अँगूठा, पहली अंगुली, दूसरी, तीसरी, चौथी, हथेली, कलाई, कोहनी, कंधा, काँख, कमर, जाँघ, घुटना, पिंडली, टखना, एड़ी, तलवा, बाएँ पैर का अँगूठा, पहली अंगुली, दूसरी, तीसरी, चौथी।

***दाहिने भाग में नीचे से ऊपर***– अब नीचे से शुरू कीजिए – दाहिने पैर का अँगूठा, पहली अंगुली, दूसरी अंगुली, तीसरी, चौथी, तलवा, एड़ी, टखना, पिंडली, घुटना, जाँघ, कमर, काँख, कंधा, कोहनी, कलाई, हथेली, दाहिने हाथ का अँगूठा, पहली अंगुली, दूसरी, तीसरी, चौथी।

***बायें भाग में नीचे से ऊपर***– बायें पैर का अँगूठा, पहली अंगुली, दूसरी, तीसरी, चौथी, तलवा, एड़ी, टखना, पिंडली, घुटना, जाँघ, कमर, काँख, कंधा, कोहनी, कलाई, हथेली, बायें हाथ का अँगूठा, पहली अंगुली, दूसरी, तीसरी और चौथी अंगुली।

***दाहिना भाग***– फिर दाहिने तरफ ऊपर से नीचे की ओर चलेंगे। दाहिने हाथ का अँगूठा, पहली अंगुली, दूसरी, तीसरी, चौथी, हथेली, कलाई, कोहनी, कंधा, काँख, कमर, जाँघ, घुटना, पिंडली, टखना, एड़ी, तलवा, दाहिने पैर का अँगूठा, पहली अंगुली, दूसरी, तीसरी, चौथी, तलवा, एड़ी, टखना, पिंडली, घुटना, जाँघ, कमर, काँख, कंधा, कोहनी, कलाई, दाहिने हाथ का अँगूठा, पहली अंगुली, दूसरी, तीसरी चौथी अंगुली।

***बायाँ भाग***– फिर बायीं तरफ ऊपर से नीचे की ओर – बायें हाथ का अँगूठा, पहली अंगुली, दूसरी, तीसरी, चौथी, हथेली, कलाई, कोहनी, कंधा, काँख, कमर, जाँघ, घुटना, पिंडली, टखना, एड़ी, तलवा, बायें पैर का

अँगूठा, पहली अंगुली, दूसरी, तीसरी, चौथी, तलवा, एड़ी, टखना, पिंडली, घुटना, जाँघ, कमर, काँख, कंधा, कोहनी, कलाई, हथेली, बायें हाथ का अँगूठा, पहली अंगुली, दूसरी, तीसरी, चौथी।

***सम्पूर्ण पृष्ठ भाग***– और अब पीछे के अंग, पीछे के अंग। अपना ध्यान सिर के पिछले हिस्से में ले जाएँ, जो जमीन को स्पर्श कर रहा है।

सिर का पिछला हिस्सा जो जमीन को स्पर्श कर रहा है।

सिर का पिछला हिस्सा जो जमीन को स्पर्श कर रहा है।

दाहिनी स्कन्धास्थि, बायीं स्कन्धास्थि, रीढ़ की हड्डी, दाहिना कूल्हा, बायाँ कूल्हा, दाहिना नितम्ब, बायाँ नितम्ब, दाहिनी जाँघ के नीचे का भाग, बायीं जाँघ के नीचे का भाग, दाहिनी पिंडली, बायीं पिंडली, दाहिना टखना, बायाँ टखना, दाहिनी एड़ी, बायीं एड़ी।

***नीचे से ऊपर***– दाहिना टखना, बायाँ टखना, दाहिनी पिंडली, बायीं पिंडली, दाहिनी जाँघ के नीचे का भाग, बायीं जाँघ के नीचे का भाग, दाहिना नितम्ब, बायाँ नितम्ब, दाहिना कूल्हा, बायाँ कूल्हा, रीढ़ की हड्डी, दाहिनी स्कन्धास्थि, बायीं स्कन्धास्थि, सिर का पिछला भाग।

दाहिनी स्कन्धास्थि, बायीं स्कन्धास्थि, रीढ़ की हड्डी, दाहिना कूल्हा, बायाँ कूल्हा, दाहिना नितम्ब, बायाँ नितम्ब, दाहिनी जाँघ के नीचे का भाग, बायीं जाँघ के नीचे का भाग, दाहिनी पिंडली, बायीं पिंडली, दाहिना टखना, बायाँ टखना, दाहिनी एडी, बाँयीं एड़ी, दाहिना टखना, बायाँ टखना, दाहिनी पिंडली, बायीं पिंडली, दाहिनी जाँघ के नीचे का भाग, बायीं जाँघ के नीचे का भाग, दाहिना नितम्ब, बायाँ नितम्ब, दाहिना कूल्हा, बायाँ कूल्हा, रीढ़ की हड्डी, दाहिनी स्कन्धास्थि, बायीं स्कन्धास्थि, सिर का पिछला भाग।

***सम्पूर्ण अग्र भाग***– सिर के ऊपरी हिस्से में सामने की ओर जाएँ। सिर के ऊपरी हिस्से में जाएँ– सिर का ऊपरी हिस्सा, सिर का ऊपरी हिस्सा, ललाट, दाहिनी भौंह, बायीं भौंह, भ्रूमध्य, दाहिनी आँख, बायीं आँख, दाहिना नासिका छिद्र, बायाँ नासिका छिद्र, दाहिना गाल, बायाँ गाल, दाहिना कान, बायाँ कान, ऊपरी ओंठ, नीचे का ओंठ, ठुड्ढी, गला, छाती का दाहिना हिस्सा, छाती का बायाँ हिस्सा, पूरी छाती, नाभि, पेट का ऊपरी भाग, पेट का निचला भाग, दाहिना श्रोणि-प्रदेश, बायाँ श्रोणि-प्रदेश, ऊरुमूल (पेट और जाँघ के बीच का भाग) का दाहिना हिस्सा, ऊरुमूल

का बायाँ हिस्सा, दाहिनी जाँघ, बायीं जाँघ, दाहिना घुटना, बायाँ घुटना, दाहिने पैर की अंगुलियाँ, बायें पैर की अंगुलियाँ ।

***नीचे से ऊपर*** – बायें पैर की अंगुलियाँ, दाहिने पैर की अंगुलियाँ, बायाँ घुटना, दाहिना घुटना, बायीं जाँघ, दाहिनी जाँघ, ऊरुमूल का दाहिना हिस्सा, ऊरुमूल का बायाँ हिस्सा, बायाँ श्रोणि-प्रदेश, दाहिना श्रोणि-प्रदेश, पेट का बायाँ भाग, पेट का दाहिना भाग, पेट का निचला भाग, पेट का ऊपरी भाग, नाभि, पूरी छाती, छाती का बायाँ हिस्सा, छाती का दाहिना हिस्सा, गला, ठुड्डी, नीचे का ओंठ, ऊपर का ओंठ, बायाँ कान, दाहिना कान, बायाँ गाल, दाहिना गाल, बायाँ नासा छिद्र, दाहिना नासा छिद्र, बायीं आँख, दाहिनी आँख, भ्रूमध्य, बायीं भौंह, दाहिनी भौंह, ललाट, सिर का ऊपरी हिस्सा, सामने से दिखाई पड़ने वाला सिर का ऊपरी हिस्सा, भ्रूमध्य, भ्रूमध्य, भ्रूमध्य।

मन-ही-मन कहें – मैं सो नहीं रहा हूँ, जाग रहा हूँ। मैं सो नहीं रहा हूँ, जाग रहा हूँ। मैं सो नहीं रहा हूँ जाग रहा हूँ। मैं सो नहीं रहा हूँ जाग रहा हूँ।

***आन्तरिक अंग*** – अब शरीर के आन्तरिक अंगों की ओर चलें – ध्यान को जीभ, दाँत, तालु पर ले जाएँ। इसे श्वास के साथ नाक के अन्दर ले जाएँ फिर मस्तिष्क के अन्दर का भाग, बड़ा मस्तिष्क, आन्तरिक नासिकारन्ध्र जो गले में खुलता है, गले का वह भाग जिसे होकर वायु अन्दर जाती है, दाहिना फेफड़ा, बायाँ फेफड़ा।

श्वास के साथ फेफड़े का अनुभव करें। फेफड़ों को श्वास से भरकर उसका अनुभव करें। दाहिना फेफड़ा, बायाँ फेफड़ा।

हृदय, हृदय की धड़कन पर ध्यान देकर हृदय का अनुभव करें। हृदय की धड़कन पर चित्त एकाग्र करें। यह आसान होगा। अपना ध्यान हृदय की धड़कन पर लगाएँ। हृदय के प्रति सजग हों।

अब अन्ननाल में प्रवेश करें। यह वह भाग है जो भोजन को मुँह से पेट तक पहुँचाता है। इसको श्वास के द्वारा अनुभव करें।

पेट, यकृत, यकृत, पेट, गुर्दा, गुर्दा, गुर्दा, उदर के अन्दर का पूरा भाग। फिर ऊपर से शुरू करें।

मस्तिष्क, मस्तिष्क, मस्तिष्क, आन्तरिक नासिकारन्ध्र, जीभ, दाँत, तालु, दाहिने कान का पर्दा, बायें कान का पर्दा, गला, अन्ननाल, दाहिना फेफड़ा, बायाँ फेफड़ा, हृदय, पेट, यकृत, गुर्दा, उदर के अन्दर का पूरा भाग।

फिर ऊपर से चलें – सोचने की कोशिश करें। सोचने की कोशिश करें। सोचने की कोशिश करें। अपने आंतरिक अंगों के बारे में सोचें। मस्तिष्क, आन्तरिक नासिका रन्ध्र, दाहिने कान का पर्दा, बायें कान का पर्दा, जीभ, दाँत, तालु, गला, अन्ननाल, दाहिना फेफड़ा, बायाँ फेफड़ा, हृदय, पेट, यकृत, गुर्दा, उदर का आन्तरिक भाग, उदर का आन्तरिक भाग।

***मुख्य अंग*** – अब शरीर के मुख्य अंग – दाहिना पैर, बायाँ पैर, दोनों पैर एक साथ, दाहिनी भुजा, बायीं भुजा, दोनों भुजायें एक साथ। पीठ का पूरा भाग, सामने का पूरा भाग, सिर, पूरा शरीर।

कहें – पूरा शरीर। अब पूरे शरीर का मानस-दर्शन करें। कहें – पूरा शरीर। अब पूरे शरीर का मानस-दर्शन करें। अपनी सजगता को और तीव्र तथा गहन बनायें। पूरा शरीर, पूरा शरीर, पूरा शरीर।

***मेरुदण्ड*** – अब अपने ध्यान को मेरुदण्ड में नीचे ले जाएँ, अब अपने ध्यान को मेरुदण्ड में नीचे ले जायें।

अपनी अवस्था का परीक्षण करें – क्या आप जाग रहे हैं या सो रहे हैं? या ऊँघ रहे हैं अथवा आपका मन भटक रहा है? और अपने आपसे कहें – 'मैं जाग रहा हूँ।'

अब मेरुदण्ड में नीचे की ओर जायें, जहाँ मूलाधार है। अपने मन को वहाँ ले जायें तथा मन में कहें – 'मूलाधार' और उसके बारे में सोचें। मेरुदण्ड के अन्दर उसके निचले हिस्से से थोड़ा ऊपर, अब उस बिन्दु पर जायें जहाँ मेरुदण्ड समाप्त होता है। अब नाभि के पीछे जाएँ। मेरुदण्ड में ठीक नाभि के पीछे।

फिर मेरुदण्ड में अन्दर-ही-अन्दर हृदय के पीछे तक आयें। अब इसी मार्ग से गर्दन तक जायें। अब रीढ़ की हड्डी के ऊपरी हिस्से पर आयें जहाँ लघु मस्तिष्क है, अब यहाँ से सिर के सबसे ऊपरी भाग में चलें। अब फिर वापस चलें – सिर का ऊपरी भाग, सिर का पिछला भाग, गर्दन, हृदय के पीछे, नाभि के पीछे, रीढ़ का निचला भाग, मूलाधार।

फिर मूलाधार, रीढ़ का निचला भाग, रीढ़ में नाभि के पीछे का भाग, नाभि के पीछे का भाग, हृदय के पीछे का भाग, गर्दन, गर्दन, सिर का पिछला भाग, सिर का पिछला भाग, सिर का ऊपरी भाग, सिर का ऊपरी भाग, ऊपरी भाग, ऊपरी भाग, ऊपरी भाग।

सिर के पीछे, गर्दन, हृदय के पीछे, हृदय के पीछे, हृदय के पीछे, नाभि के पीछे, नाभि के पीछे, नाभि के पीछे, रीढ़ के नीचे, रीढ़ के नीचे, मूलाधार, मूलाधार, मूलाधार।

'मैं जाग रहा हूँ, 'मैं जाग रहा हूँ, 'मैं जाग रहा हूँ, 'मैं सजग हूँ, मैं सजग हूँ, मैं सजग हूँ।'

***शरीर/दर्पण सजगता–*** अपने पूरे शरीर को उसी प्रकार देखें, जिस प्रकार आप किसी दर्पण में अपने आपको देखते हैं।

मानो आपके ऊपर एक बहुत बड़ा दर्पण टँगा हुआ है, और आप उसमें अपने प्रतिबिम्ब को देख रहे हैं।

दर्पण में अपने प्रतिबिम्ब के समान अपने शरीर को देखें।

अपने शरीर को एक वस्तु के रूप में देखें, अपना सिर, अपनी भुजाएँ, अपनी छाती, अपने पैर, अपने कपड़े, जैसे मैं आपको देख रहा हूँ। जैसे मैं आपको देख रहा हूँ, वैसे ही आप अपने आपको किसी वस्तु के रूप में देखें। मानसिक दर्पण में अपने आपको देखें और कहें, 'मेरा प्रतिबिम्ब, मेरा शरीर, मेरा प्रतिबिम्ब, मेरा शरीर।'

***मानस दर्शन–*** अब मैं जिन वस्तुओं के नाम लूँगा, उन पर मन को एकाग्र करें। सजग रहें। मैं बहुत-सी चीजों के नाम लूँगा। आप भी उनके नाम मानसिक रूप से लेंगे और उनका मानस-दर्शन करेंगे। यदि आप उनका मानस-दर्शन कर लेते हैं, तो इसका मतलब है कि आप पूर्ण रूप से शिथिल हो गये। यदि आप ऐसा नहीं कर पाते हैं, तो इसका अर्थ है कि आपको और अधिक अभ्यास करना चाहिये।

एक झील में नीलकमल, एक झील में नीलकमल, एक झील में नीलकमल।

जलती हुई एक मोमबत्ती, जलती हुई एक मोमबत्ती, जलती हुई एक मोमबत्ती।

ऊँघने का अनुभव, ऊँघने का अनुभव करें।

गर्मी का अनुभव, गर्मी का अनुभव, गर्मी का अनुभव करें।

भारीपन का अनुभव, भारीपन का अनुभव, भारीपन का अनुभव करें।

लाल रंग का उलटा त्रिकोण, लाल रंग का उलटा त्रिकोण, लाल रंग का उलटा त्रिकोण।

जलती हुई आग की लौ, जलती हुई आग की लौ, जलती हुई आग की लौ।

गर्मी का अनुभव, गर्मी का अनुभव, गर्मी का अनुभव।

बर्फ से आच्छादित पर्वतों की चोटियाँ, बर्फ से आच्छादित पर्वतों की चोटियाँ, बर्फ से आच्छादित पर्वतों की चोटियाँ।
फैला हुआ भू-खण्ड, फैला हुआ भू-खण्ड, फैला हुआ भू-खण्ड।
एक सितारा, आसमान में एक सितारा, एक तारे का छोटा बिन्दु।
एक लाल गुलाब का फूल।
एक मधुमक्खी, एक मधुमक्खी, एक मधुमक्खी।
आसमान में उड़ता हुआ एक बड़ा पक्षी, आसमान में उड़ता हुआ एक बड़ा पक्षी, आसमान में उड़ता हुआ एक बड़ा पक्षी।
झील में तैरती हुई नाव, तैरती हुई नाव, तैरती हुई नाव।
तारों से भरा हुआ आकाश, तारों से भरा हुआ आकाश, तारों से भरा हुआ आकाश।
भारीपन का अनुभव, भारीपन का अनुभव, भारीपन का अनुभव।
आपकी अपनी श्वास, आपकी अपनी श्वास, आपकी अपनी श्वास।
अंधेरी रात, अंधेरी रात।
एक झील में नीलकमल, एक झील में नीलकमल।
वर्षा की झड़ी, मूसलाधार वर्षा, मूसलाधार वर्षा।
हरी पत्ती, हरी पत्ती।
बगीचा, बगीचा, पीले फूल, पीले फूल, लाल गुलाब, लाल गुलाब, हरी घास, हरी घास, स्विमिंग पूल, स्विमिंग पूल, हरी घास, एक बड़ा बगीचा।
उलटा त्रिकोण, एक चीता, एक चीता, एक चीता।
पूरा शरीर, पूरा शरीर, पूरा शरीर।
अपने पूरे शरीर को मानसिक दर्पण में देखें।
अब सारे प्रयत्नों को छोड़ दें।
अपने मन को बहिर्मुखी बनायें, अपने मन को बहिर्मुखी बनायें।
आसपास के वातावरण के प्रति सजग हो जायें।
मैं योग निद्रा का अभ्यास कर रहा हूँ।
मैं योग निद्रा का अभ्यास कर रहा हूँ।
मैं शान्त लेटा हुआ हूँ।

**संकल्प** – अब फिर आपको अपने संकल्प को दुहराना होगा।
संकल्प करें – वही संकल्प जो आपने अभ्यास के प्रारम्भ में किया था।
संकल्प एक ही होना चाहिये।

उसे बदलें नहीं। वही संकल्प।
आपका अवचेतन मन आपके संकल्प को ग्रहण कर रहा है।
**समापन –** आँखें बन्द रखते हुए शरीर को हिलायें।
उठने की तैयारी करें।
उठ जायें और आँखें खोल लें।

*हरि ॐ तत्सत्*

## 3 – सम्पूर्ण अभ्यास

**तैयारी –** योगनिद्रा के लिए तैयार हो जायें। अपने कम्बल आदि को अच्छी तरह से ठीक कर लें ताकि आप निश्चिन्त हो जायें कि बिना किसी शारीरिक कष्ट का अनुभव किये आप योगनिद्रा का अभ्यास कर सकेंगे।
हर चीज को सुव्यवस्थित ढंग से ठीक कर लें। शरीर की स्थिति कम्बल आदि सबको अच्छी तरह से ठीक कर लें। इन्हें व्यवस्थित करने के लिए जो कुछ उपयुक्त शारीरिक हलचल करनी हो, आप अभी कर सकते हैं।
परन्तु एक बार जब इन्हें ठीक से व्यवस्थित कर लिया जाए, तब शरीर को नहीं हिलाना चाहिये।
जब तक योगनिद्रा का पूरा अभ्यास समाप्त न हो जाए, तब तक आपको हिलना नहीं है।
बिल्कुल स्थिर हो जाएँ।
अब अन्तिम रूप से अच्छी तरह व्यवस्थित हो जायें।
अपने सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजग हो जायें।
अपने सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजग हो जायें।
अपने सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजग हो जायें।
अपने सम्पूर्ण भौतिक शरीर के अस्तित्व के प्रति सजग हो जायें।
अपने भौतिक अस्तित्व के प्रति सजग हो जायें।
सिर से पैर तक सम्पूर्ण शरीर के प्रति अपनी सजगता विकसित करें।
सिर से पैर तक सम्पूर्ण शरीर के प्रति अपनी सजगता विकसित करें।
आपका सम्पूर्ण शरीर आपकी सजगता का केन्द्र बने।
आपका सम्पूर्ण शरीर आपकी सजगता का रूप बन जाए।

आप अपने सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजग हैं – सिर से पैर के अँगूठे तक पूरे भौतिक शरीर के प्रति, न कि केवल पैरों या हाथों, या सीने या सिर के प्रति। आप सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजग हैं, सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजग। सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजगता। सम्पूर्ण शरीर के प्रति समग्र, पूर्ण तथा सतत् सजगता।

आप योगनिद्रा का अभ्यास करने जा रहे हैं, इसके प्रति सचेत हो जाएँ और मानसिक रूप से कहें – मैं इसके प्रति सजग हूँ कि मैं योगनिद्रा का अभ्यास करने जा रहा हूँ। मुझे पता है कि मैं योगनिद्रा का अभ्यास करने जा रहा हूँ। मुझे पता है कि मैं योगनिद्रा का अभ्यास करने जा रहा हूँ। मुझे पता है कि मैं योगनिद्रा का अभ्यास करने जा रहा हूँ।

मुझे पता है कि मैं योगनिद्रा का अभ्यास करने जा रहा हूँ।

इस तरह सोचते जाएँ और यह सुनिश्चित कर लें कि आपको पता है कि आप अभ्यास करने जा रहे हैं।

अब यही आपकी सजगता का स्वरूप रहेगा।

**शिथिलीकरण –** अपने शरीर को मानसिक रूप से शिथिल करें।

अपने को मानसिक रूप से शिथिल करें।

मन को शिथिल करें।

अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व को सामान्य ढंग से श्वास लेते हुए तथा मानसिक नाड़ी शोधन प्राणायाम करते-करते सामान्य श्वसन-क्रिया पर ध्यान देते हुए शिथिल करें।

नासिकाछिद्रों को बदलते हुए श्वास लें और छोड़ें, यानी बाएँ से श्वास लें और दाहिने से छोड़ें; फिर दाहिने से लें और बायें से छोड़ें।

सामान्य ढंग से ही श्वास लेते रहें।

नासिकाछिद्रों के प्रति समग्र सजगता के साथ श्वास लेते रहें और छोड़ते रहें। बायें नासिकाछिद्र से श्वास लें और दाहिने से छोड़ें। पुनः दाहिने नासिकाछिद्र से श्वास लें और बायें से छोड़ें।

श्वास को शिथिल करें। सामान्य ढंग से श्वास लें। सजगतापूर्वक श्वास लें। मानसिक नाड़ी शोधन का अभ्यास करते जायें।

इस विधि से आपके व्यक्तित्व को पूर्ण विश्रांति का अनुभव होगा। इसके द्वारा केवल स्थूल शरीर नहीं, केवल चिन्तन-प्रणाली नहीं, वरन् शरीर, श्वास, इन्द्रियाँ, मन, चेतना, आदि सभी को पूर्ण विश्राम मिलेगा। श्वास की सहायता से आपकी चेतना और मन को अन्दर और बाहर आना-जाना चाहिए।

जब इस तरीके से आप अपने शरीर और मन को विश्राम देंगे तो आपकी भौतिक चेतना और सजगता में एक बड़ा परिवर्तन आएगा। किसी भी समय यदि आप इस प्रकार श्वास लें और छोड़ें तथा बारी-बारी से पहले बायें और फिर दाहिने नासिकाछिद्र से सहज श्वास लेते और छोड़ते रहें और उसके प्रति सजग रहें तो पूरा व्यक्तित्व तनावरहित हो जाएगा।

एक बार जाँच करके देख लें कि आप पूरी तरह से जाग रहे हैं तथा मेरे निर्देशों को सुन रहे हैं और सो नहीं रहे हैं।

**संकल्प –** अब आप संकल्प को दुहरायें।

आपका संकल्प सरल, संक्षिप्त और स्पष्ट होना चाहिए। संकल्पों को पूरे विश्वास के साथ दुहराना चाहिए।

योगनिद्रा के प्रारम्भ और अन्त में जो संकल्प लिया जाता है वह जीवन में अवश्य ही पूरा होता है।

वह कभी निष्फल नहीं होता।

अभ्यास में नित्य वही संकल्प दुहरायें। उसकी भाषा न बदलें।

संकल्प के संदर्भ भी न बदलें।

प्रतिदिन अभ्यास के प्रारम्भ और अन्त में उसी संकल्प को दुहरायें।

याद रखें कि योगनिद्रा के प्रारम्भ और अन्त में आँखें खोलने के पहले संकल्प को दुहराना जरूरी है।

प्रारम्भ और अन्त में संकल्प तीन-तीन बार दुहराया जाता है।

संकल्प दुहराते जायें।

संकल्प दुहराते जायें।

संकल्प दुहराते जायें।

**चेतना को घुमाना –** अब योगनिद्रा का अभ्यास प्रारम्भ होता है।

शरीर के विभिन्न अंगों में तेजी से चेतना को घुमायें।

अपनी सजगता को तेजी से एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाते रहें।

आपको मानसिक रूप से इन अंगों का नाम लेकर इनके प्रति सजग होना है।

***दायाँ भाग –*** दाहिने हाथ का अँगूठा, अँगूठे का अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, अँगूठे की जड़।

पहली अंगुली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, अंगुली की जड़।

दूसरी अंगुली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, अंगुली की जड़।

तीसरी अंगुली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, अँगुली की जड़।

चौथी अंगुली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, इस अँगुली की जड़।

हाथ के पीछे का भाग, हथेली, हथेली के उभार या पर्वत। शुक्र, चन्द्रमा, बुध, सूर्य, शनि, वृहस्पति और मंगल पर्वत, हथेली के मध्य का भाग।

कलाई, नीचे की भुजा, इस भुजा के अन्दर का भाग, कोहनी, कोहनी के अन्दर का भाग, ऊपरी भुजा। कंधा, काँख, छाती का दाहिना हिस्सा, कमर, कूल्हा, जाँघ, घुटना, घुटने के पीछे की नस, घुटने के पीछे का भाग, पिंडली, अग्र जंघा।

दाहिना पैर, टखना, एड़ी, तलवे का मध्य भाग, तलवे का ऊपरी हिस्सा, पैर का ऊपरी भाग, पैर की अंगुलियाँ।

पैर का अँगूठा, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, अँगूठे की जड़।

दाहिने पैर की पहली अंगुली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, अँगुली की जड़।

दाहिने पैर की दूसरी अंगुली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, अँगुली की जड़।

दाहिने पैर की तीसरी अंगुली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, अँगुली की जड़।

दाहिने पैर की चौथी अंगुली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, अँगुली की जड़।

***बायाँ भाग–*** बायें हाथ का अँगूठा, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, अँगूठे की जड़।

पहली अँगुली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, अंगुली की जड़। दूसरी अंगुली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, अंगुली की जड़।

तीसरी अंगुली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, अंगुली की जड़।

चौथी अंगुली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, अंगुली की जड़।

हाथ के पीछे का भाग, हथेली, हथेली के उभार या पर्वत। शुक्र, चन्द्रमा, बुध, सूर्य, शनि, वृहस्पति, मंगल पर्वत, हथेली के मध्य का भाग। कलाई, नीचे की भुजा, इस भुजा के अन्दर का भाग, ऊपरी भुजा, कंधा, काँख, छाती का बायाँ हिस्सा, कमर, कूल्हा, जाँघ, घुटना, घुटने के पीछे की नस, घुटने के पीछे का भाग, पिंडली, अग्र जंघा।

बायें पैर का टखना, एड़ी, तलवे का मध्य भाग, तलवे का ऊपरी भाग, पैर का ऊपरी भाग, पैर की अंगुलियाँ।

पैर का अँगूठा, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, अँगूठे की जड़।

बायें पैर की पहली उँगली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, अंगुली की जड़।

बायें पैर की दूसरी अंगुली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, अंगुली की जड़।

बायें पैर की तीसरी अंगुली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, अंगुली की जड़

बायें पैर की चौथी उँगली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़ अँगुली की जड़।

***पीठ–*** दाहिनी स्कंधास्थि, बायीं स्कंधास्थि, दाहिना नितम्ब, बायाँ नितम्ब, पीठ का दाहिना हिस्सा, बायाँ हिस्सा, रीढ़ की हड्डी, गर्दन, पूरी पीठ एक साथ।

***अग्रभाग–*** सहस्त्रार, माथा, दाहिनी भौंह, बायीं भौंह, दोनों भौंहों के बीच का भाग, दाहिनी कनपटी, बायीं कनपटी, दाहिनी आँख, बायीं आँख, दाहिनी आँख की पलक, बायीं आँख की पलक, दाहिना गाल, बायाँ गाल, दाहिना कान, बायाँ कान, नाक, नासिकाग्र, ऊपर का ओंठ, नीचे का ओंठ, दोनों ओंठ एक साथ, जीभ, ठुड्डी, गला। दाहिनी छाती, बायीं छाती, दोनों छाती एक साथ, दोनों छाती के बीच का गड्ढा, हृदय, पेट, नाभि, उदर, दाहिनी भुजा, बायीं भुजा, दाहिना पैर, बायाँ पैर, सिर, धड़।

सम्पूर्ण शरीर, सम्पूर्ण शरीर, सम्पूर्ण शरीर, सम्पूर्ण शरीर, सम्पूर्ण शरीर, सम्पूर्ण शरीर, सम्पूर्ण शरीर।

अपनी चेतना की जाँच करें।

यह सुनिश्चित कर लें कि आप मेरे निर्देशों को सुन रहे हैं।

आप सो नहीं रहे हैं। आप जाग रहे हैं।

**संवेदनाओं की सजगता**

***भारीपन–*** अब भारीपन का अनुभव करें, भारीपन का अनुभव करें।

दाहिने हाथ के अँगूठे में भारीपन का अनुभव करें, फिर पहली अंगुली में, दूसरी अंगुली में, तीसरी अंगुली में, चौथी अंगुली में, हथेली में, कलाई में, कोहनी में, कंधे में, बगल में, कमर में, कूल्हे में, घुटने के पीछे की नस में, जाँघ में, घुटने में, पिंडली में, टखने में, एड़ी में, तलवे में, दाहिने पैर

के अँगूठे में, पहली अंगुली में, दूसरी अंगुली में, तीसरी अंगुली में चौथी अंगुली में भारीपन का अनुभव करें। भारीपन का अनुभव करें।

बायें हाथ के अँगूठे में, पहली अंगुली में, दूसरी अंगुली में, तीसरी अंगुली में, चौथी अंगुली में, हथेली में, कलाई में, कोहनी में, कंधे में, बगल में, कमर में, कूल्हे में, घुटने के पीछे की नस में, जाँघ में, घुटने में, पिंडली में, टखने में, एड़ी में, तलवे में, बायें पैर के अँगूठे में, पहली अंगुली में, दूसरी अंगुली में, तीसरी अंगुली में, चौथी में भारीपन का अनुभव करें।

भारीपन का अनुभव करें, भारीपन का अनुभव करें।

दाहिनी स्कंधास्थि में भारीपन का अनुभव करें, फिर बाई स्कंधास्थि में भारीपन का अनुभव करें।

दाहिने नितम्ब में, बायें नितम्ब में, दाहिनी पीठ में, बायीं पीठ में, रीढ़ की हड्डी में, पूरी पीठ में भारीपन का अनुभव करें।

भारीपन का अनुभव करें, भारीपन का अनुभव करें।

दाहिने हाथ के अँगूठे में भारीपन का अनुभव करें; फिर पहली अँगुली में, दूसरी में, तीसरी में, चौथी में, हथेली में, कलाई में, कोहनी में, कंधे में, बगल में, कमर में, कूल्हे में, घुटने के पीछे की नस में, जाँघ में, घुटने में, पिंडली में, टखने में, एड़ी में, तलवे में, दाहिने पैर के अँगूठे में, पहली अंगुली में, दूसरी में, तीसरी में और चौथी अंगुली में भारीपन का अनुभव करें।

बायें हाथ के अँगूठे में, पहली अंगुली में, दूसरी में, तीसरी में, चौथी में, हथेली में, कलाई में, कोहनी में, कंधे में, बगल में, कमर में, नितम्ब में, कूल्हे में, घुटने के पीछे की नस में, जाँघ में, घुटने में, पिंडली में, टखने में, एड़ी में, तलवे में, बायें पैर के अँगूठे में, पहली अंगुली में, दूसरी अंगुली में, तीसरी अंगुली में और चौथी अंगुली में, भारीपन का अनुभव करें।

भारीपन का अनुभव करें, भारीपन का अनुभव करें, भारीपन का अनुभव करें।

दाहिनी स्कंधास्थि में, बायीं स्कंधास्थि में, दाहिने नितम्ब में, बायें नितम्ब में, दाहिनी पीठ में, बायीं पीठ में, रीढ़ की हड्डी में, पूरी पीठ में।

भारीपन का अनुभव करें, भारीपन का अनुभव करें, भारीपन का अनुभव करें।

दाहिने पैर में, बायें पैर में, दोनों पैरों में, दाहिनी भुजा में, बायीं भुजा में, दोनों भुजाओं में, सिर में, धड़ में।

भारीपन का अनुभव करें, भारीपन का अनुभव करें।

सम्पूर्ण शरीर में भारीपन का अनुभव करें, सम्पूर्ण शरीर में भारीपन का अनुभव करें, अपने सम्पूर्ण शरीर में भारीपन का अनुभव करें।

अपनी सजगता की जाँच करें। यह सुनिश्चित कर लें कि आप सो नहीं रहे हैं। आप जाग रहे हैं और मेरे निर्देशों को सुन रहे हैं।

***हल्कापन–*** अब शरीर में हल्केपन का अनुभव करें; हल्केपन का अनुभव करें; हल्केपन का अनुभव करें।

अपने दाहिने हाथ के अँगूठे में, पहली अंगुली में, दूसरी में, तीसरी में, चौथी में, हथेली में, कलाई में, कोहनी में, कंधे में, बगल में, कमर में, कूल्हे में, घुटने के पीछे की नस में, जाँघ में, घुटने में, पिंडली में, टखने में, एड़ी में, तलवे में, दाहिने पैर के अँगूठे में, पहली अंगुली में, दूसरी में, तीसरी में, चौथी अंगुली में, हल्केपन का अनुभव करें।

हल्केपन का अनुभव करें; हल्केपन का अनुभव करें; हल्केपन का अनुभव करें।

बायें हाथ के अँगूठे में, पहली अंगुली में, दूसरी अंगुली में, तीसरी अंगुली में, चौथी अंगुली में, हथेली में, कलाई में, कोहनी में, कंधे में, बगल में, कमर में, कूल्हे में, घुटने के पीछे की नस में, जाँघ में, घुटने में, पिंडली में, टखने में, एड़ी में, तलवे में, बायें पैर के अँगूठे में, पहली अंगुली में, दूसरी अंगुली में, तीसरी अंगुली में, चौथी अंगुली में, हल्केपन का अनुभव करें। हल्केपन का अनुभव करें, हल्केपन का अनुभव करें।

दाहिनी स्कंधास्थि में, बायी स्कंधास्थि में, दाहिने नितम्ब में, बायें नितम्ब में, दाहिनी पीठ में, बायीं पीठ में, रीढ़ की हड्डी में, पूरी पीठ में, हल्केपन का अनुभव करें।

हल्केपन का अनुभव करें, हल्केपन का अनुभव करें। हल्केपन की अनुभूति को जगाएँ।

दाहिने हाथ के अँगूठे में हल्केपन का अनुभव करें; फिर पहली अंगुली में, दूसरी में, तीसरी में, चौथी अंगुली में, हथेली में, कलाई में, कोहनी में, कंधे में, बगल में, कमर में, कूल्हे में, घुटने के पीछे की नस में, जाँघ में, घुटने में, पिंडली में, टखने में, एड़ी में, तलवे में, दाहिने पैर के अँगूठे में, पहली अंगुली में, दूसरी अंगुली में, तीसरी में, चौथी अंगुली में हल्केपन का अनुभव करें।

बायें हाथ के अँगूठे में, पहली अंगुली में, दूसरी में, तीसरी में, चौथी में, हथेली में, कलाई में, कोहनी में, कंधे में, बगल में, कमर में, कूल्हे में,

घुटने के पीछे की नस में, जाँघ में, घुटने में, पिंडली में, टखने में, एड़ी में, तलवे में, बायें पैर के अँगूठे में, पहली अंगुली में, दूसरी अंगुली में, तीसरी अंगुली में और चौथी अंगुली में, हल्केपन का अनुभव करें।
हल्केपन का अनुभव करें, हल्केपन का अनुभव करें।
अपनी दाहिनी स्कंधास्थि में हल्केपन का अनुभव करें, फिर बायीं स्कंधास्थि में, दाहिने नितम्ब में, बायें नितम्ब में, दाहिनी पीठ में, बायीं पीठ में, रीढ़ की हड्डी में, पूरी पीठ में, हल्केपन का अनुभव करें।
हल्केपन का अनुभव करें, हल्केपन का अनुभव करें।
दाहिने पैर में, बायें पैर में, दोनों पैरों में एक साथ। दाहिनी भुजा में, बायीं भुजा में, दोनों भुजाओं में, सिर में, धड़ में।
हल्केपन का अनुभव करें, हल्केपन का अनुभव करें।
अपने सम्पूर्ण शरीर में हल्केपन का अनुभव करें। सम्पूर्ण शरीर में। सम्पूर्ण शरीर में।
इसके प्रति सजग हो जाएँ कि आप सो नहीं रहे हैं तथा मेरे निर्देशों को सुन रहे हैं। अपनी सजगता की जाँच कर लें।

***गर्मी –*** अपनी इच्छाशक्ति से अपने अन्दर गर्मी का अनुभव करें, गर्मी का अनुभव करें, गर्मी की कल्पना करें। भूतकाल में कभी इसी तरह का अनुभव हुआ हो तो उसकी याद करें। दाहिने तलवे में गर्मी का अनुभव करें, दाहिने तलवे में गर्मी का अनुभव करें, फिर बाएँ तलवे में, बाएँ तलवे में, फिर दाहिनी हथेली में, दाहिनी हथेली में, बायीं हथेली में, बायीं हथेली में, होंठ में, होंठ में, दाहिनी आँख में, दाहिनी आँख में, बायीं आँख में, बायीं आँख में, दाहिने कान में, दाहिने कान में, बायें कान में, बायें कान में।
सम्पूर्ण शरीर में गर्मी के अनुभव के प्रति सजग रहें।
सम्पूर्ण शरीर में गर्मी का अनुभव करें। यह अनुभव आपके लिए वास्तविक बन जाना चाहिए।
मानसिक रूप से अनुभव करें कि गर्मी क्या है। दाहिने तलवे में गर्मी का अनुभव करें, दाहिने तलवे में गर्मी का अनुभव करें; फिर बायें तलवे में, बायें तलवे में, दाहिनी हथेली में, दाहिनी हथेली में, बायीं हथेली में, बायीं हथेली में, होंठ में, होंठ में, दाहिनी आँख में, दाहिनी आँख में, बायीं आँख में, बायीं आँख में, दाहिने कान में, दाहिने कान में, बायें कान में, बायें कान में।

ऐसा अनुभव करें कि आपका पूरा शरीर गर्म हो गया है। उसमें से पसीना निकल रहा है। अपनी इच्छाशक्ति से गर्मी का अनुभव करें। सम्पूर्ण शरीर में गर्मी का अनुभव करें, सम्पूर्ण शरीर में, सम्पूर्ण शरीर में।

जागते रहें। सोयें नहीं। मेरे निर्देशों को सुनते रहें।

***ठण्ढक*** – अब ठंढक का अनुभव करें, ठंढक का अनुभव करें।

अपने शरीर में ठंढक का अनुभव करें।

अपने शरीर में ठंढक का अनुभव करें।

अब ऐसी कल्पना करें कि आप जाड़े में ठंढी जमीन पर चल रहे हैं।

तब आपके शरीर में कैसा अनुभव होता है? इस अनुभव को जाग्रत करें।

ठंढक का अनुभव करें। ठंढक का अनुभव, ठंढक का अनुभव।

अपने दाहिने तलवे में ठंढक का अनुभव करें, दाहिने तलवे में ठंढक का अनुभव करें, फिर बायें तलवे में, बायें तलवे में, रीढ़ में, रीढ़ में, नासिकाग्र में, नासिकाग्र में, सहस्त्रार में, सहस्त्रार में।

पूरी शरीर में ठंढक का अनुभव करें। मानो पूरा शरीर प्रति क्षण पहले से अधिक ठंढा होता जा रहा है।

ऐसा अनुभव करें कि आप जाड़े की रात्रि में खुले बदन मैदान में सोये हुये हैं। उस स्थिति में आपको कैसा अनुभव होगा?

पुन: ठंढक के किसी पुराने अनुभव की याद करें। उसका अपने शरीर पर अनुभव करें।

मन-ही-मन कहें – मुझे ठंढ लग रही है। मैं ठंढक का अनुभव कर रहा हूँ।

अब पुन: दाहिने तलवे में ठंढक का अनुभव करें, दाहिने तलवे में ठंढक का अनुभव करें, फिर बायें तलवे में, बायें तलवे में, रीढ़ में, रीढ़ में, नासिकाग्र में, नासिकाग्र में, सहस्त्रार में, सहस्त्रार में, सम्पूर्ण शरीर में, सम्पूर्ण शरीर में, सम्पूर्ण शरीर में, सम्पूर्ण शरीर में ठंढक का अनुभव करें, सम्पूर्ण शरीर में ठंढक का अनुभव करें। अब अपने सम्पूर्ण शरीर में ठंढक का अनुभव करें। ठंढक का अनुभव याद करें। ठंढक के किसी पुराने अनुभव को याद करें और उसे अपने मन व शरीर पर आरोपित करें।

***दर्द*** – दर्द के किसी अनुभव की याद करें। दर्द के किसी अनुभव की याद करें।

दर्द को स्पष्ट रूप से याद करें।

अपनी इच्छाशक्ति से दर्द का अनुभव करें। अपनी सम्पूर्ण चेतना को दर्द के स्थान पर ले जाएँ, और वहाँ दर्द का अनुभव करें। दर्द की याद करें और

दर्द का अनुभव करें। अपने अनुभव को गहन करें। इतना गहन करें कि आप उस दर्द से व्याकुल हो जायें। जहाँ दर्द की अनुभूति हो रही है, उस स्थान पर अपने मन को जल्दी से ले जायें। दर्द का अनुभव करें। दर्द के प्रति अपनी सजगता को गहन बनाएँ। मन को अन्तर्मुखी बनाएँ। इच्छाशक्ति और मन की सहायता से दर्द का अनुभव करें।

शरीर के किसी एक अंग या पूरे शरीर में दर्द का अनुभव करें। दर्द के प्रति अपनी सजगता बढ़ाएँ और मन को अन्तर्मुखी बनाएँ।

अपनी सम्पूर्ण इच्छाशक्ति को एकाग्र करके दर्द का अनुभव करें।

***आनन्द–*** अब आनन्द की अनुभूति का चिन्तन करें, आनन्द की अनुभूति का स्मरण करें।

भूतकाल की किसी आनन्ददायक अनुभूति का स्मरण करें, तथा उसे अपने मन पर आरोपित करें।

यह आनन्द आपकी किसी भी ज्ञानेन्द्रिय, स्वाद, श्रवण, दृष्टि, आदि से सम्बन्धित हो सकता है।

आनन्द के किसी भी अनुभव पर विचार करें। आनन्द के किसी भी अनुभव पर विचार करें। इतना अधिक विचार करें कि आनन्द तथा उसकी अनुभूति एक हो जाएँ तथा आप उस आनन्द को वास्तविक रूप से अनुभव कर सकें।

चेतना की गहराई में जाएँ और अपनी इच्छाशक्ति से भूतकाल की किसी आनन्दानुभूति या इच्छित आनन्दानुभूति के प्रति सजग हो जाएँ।

आनन्द की अनुभूति को शीघ्रता से मन के सामने लाएँ और इससे तादात्म्य स्थापित करें। चेतना की गहराई में उतरें और समग्र इच्छाशक्ति से आनन्द की अनुभूति करें। अपनी चेतना की जाँच करें–

क्या आप जाग रहे हैं?

क्या आप सो रहे हैं?

या मेरे निर्देशों को ध्यान से सुन रहे हैं?

**मानस दर्शन**

***चक्र–*** अब अपने शरीर के अतीन्द्रिय केन्द्रों, अर्थात् चक्रों का अनुसन्धान करें।

मूलाधार गुदाद्वार एवं जननेन्द्रिय के बीच या योनि के ठीक नीचे है।

उसके ऊपर रीढ़ की हड्डी के सबसे निचले भाग में स्वाधिष्ठान चक्र है।

उसके ऊपर नाभि के ठीक पीछे मेरुदण्ड में मणिपुर चक्र है।

उसके ऊपर छाती के पीछे मेरुदण्ड में अनाहत चक्र है।

उसके ऊपर गर्दन में विशुद्धि चक्र है, उस जगह जहाँ से प्रमस्तिष्क संरचना का प्रारंभ होता है।
उसके ऊपर भ्रूमध्य के पीछे आज्ञा चक्र है, जहाँ रीढ़ की हड्डी का सबसे ऊपरी सिरा है।
यह ज्ञान का केन्द्र है।
उसके ऊपर सिर के पीछे बिन्दु है, जहाँ शिखा रहती है।
सिर के सबसे ऊपरी भाग में सहस्रार है।
अब इन केन्द्रों में चित्त को एकाग्र करें।
सहस्रार, बिन्दु, आज्ञा, विशुद्धि, अनाहत, मणिपुर, स्वाधिष्ठान, मूलाधार।
मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि, आज्ञा, बिन्दु, सहस्रार।
सहस्रार, बिन्दु, आज्ञा, विशुद्धि, अनाहत, मणिपुर, स्वाधिष्ठान, मूलाधार।
मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि, आज्ञा, बिन्दु, सहस्रार।
सहस्रार, बिन्दु, आज्ञा, विशुद्धि, अनाहत, मणिपुर, स्वाधिष्ठान, मूलाधार।
मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि, आज्ञा, बिन्दु, सहस्रार।
सहस्रार, बिन्दु, आज्ञा, विशुद्धि, अनाहत, मणिपुर, स्वाधिष्ठान, मूलाधार।
मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि, आज्ञा, बिन्दु, सहस्रार।
सहस्रार, बिन्दु, आज्ञा, विशुद्धि, अनाहत, मणिपुर, स्वाधिष्ठान, मूलाधार।
मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि, आज्ञा, बिन्दु, सहस्रार।
सहस्रार, बिन्दु, आज्ञा, विशुद्धि, अनाहत, मणिपुर, स्वाधिष्ठान, मूलाधार।

***चक्रों के प्रतीक***– इन चक्रों के सूक्ष्म प्रतीकों पर मन को एकाग्र करें।
मैं इन प्रतीकों के नाम लूँगा। आप इन केन्द्रों की स्थिति का पता स्वयं लगायेंगे।
एक लाल रंग का उल्टा त्रिकोण। उसके अन्दर एक गुलाबी रंग का साँप है जिसका फन नीचे की ओर त्रिकोण से थोड़ा बाहर निकला हुआ है। वह साढ़े तीन कुण्डली मारे बैठा हुआ है। उसके विषदन्तों से ज्वाला निकल रही है।
फिर, अचेतन अवस्था। एक निद्राजनक भूरी शून्यता।
फिर, पीला चमकीला कमल का फूल जिससे गर्मी निकल रही है।
फिर, एक अकेली, छोटी ज्योति।
फिर, अमृत की बूँदें, शीतलता की अनुभूति।
फिर, अर्द्धनिद्रा और मदहोशी की मन:स्थिति।
फिर, एक बहुत बड़ा कमल का फूल जिसमें असंख्य पंखुड़ियाँ हैं।
मध्य में अंडे की आकृति का शिवलिंग स्थापित है।

इन प्रतीकों को पुनः दुहराएँ–

एक लाल रंग का उल्टा त्रिकोण। गुलाबी रंग का साँप। वह साढ़े तीन कुण्डली मारे हुये बैठा है। अचेतन अवस्था। पीला चमकीला कमल का फूल। एक अकेली छोटी ज्योति।

अमृत की बूँदें और शीतलता की अनुभूति।

अर्द्ध चेतन अवस्था, भालचन्द्र और चाँदनी रात।

एक बहुत बड़ा असंख्य दलों वाला लाल कमल, जिसके अन्दर एक शिवलिंग है। अब मैं इन चक्रों के नाम के साथ इनके बीज मंत्रों को बोलूँगा। आप उनका मानस-दर्शन करने का प्रयत्न करें।

मूलाधार लं, स्वाधिष्ठान वं, मणिपुर रं, अनाहत यं, विशुद्धि हं, आज्ञा ॐ, बिन्दु ॐ, सहस्त्रार ॐ।

सहस्त्रार ॐ, बिन्दु ॐ, आज्ञा ॐ, विशुद्धि हं, अनाहत यं, मणिपुर रं, स्वाधिष्ठान वं, मूलाधार लं।

***द्रुत मानसदर्शन*– अब मैं कुछ प्रतीक तथा चित्रों के नाम लूँगा। उनके प्रति सजग हो जाएँ तथा उन्हें मानसिक रूप से देखने का प्रयास करें। शिवलिंग, खड़े हुए ईसामसीह, टिमटिमाता हुआ एक चिराग, आम का बड़ा पेड़, ताड़ का लम्बा वृक्ष, सड़क पर दौड़ती हुई मोटर गाड़ी, जलती हुई आग, रंग-बिरंगे बादल, पीले बादल, सफेद बादल, नीले बादल, तारों से भरा हुआ आकाश, चाँदनी रात, पूर्णिमा का चन्द्रमा, खड़ा हुआ एक कुत्ता, लेटी हुई बिल्ली, दौड़ता हुआ घोड़ा, छलाँग मारता हुआ हिरण, चलता हुआ हाथी, अस्त होता सूर्य, उदय होता हुआ सूर्य, समुद्र की लहरें, गिरजाघर में बजती हुई घण्टियाँ, गिरिजाघर के ऊपर क्रॉस का चिह्न, गिरजाघर के अन्दर घुटने के बल बैठा हुआ पादरी, पूजा करता हुआ एक भक्त, हवाई जहाज, बालू से भरा हुआ समुद्र का किनारा, गरम बालू पर विश्राम करते हुए लोग, एक लाल त्रिकोण, मकड़ी का सुनहला जाला।

***विविध शरीर*– अब अपने शरीर को बिना कपड़े पहने जमीन पर लेटे हुए देखें। अब अपने भौतिक शरीर से बाहर अपना पारदर्शक शरीर देखें।

अपने तीसरे शरीर को देखें जो धूम्र वर्ण का हो गया है।

अब अपने प्रकाशयुक्त चौथे शरीर को देखें।

अब अपने मस्तिष्क के अन्दर जाएँ, मस्तिष्क की गहराई में प्रवेश करें। वहाँ एक छोटे सुनहले अंडे, प्रकाशयुक्त सुनहले अंडे को देखें।

अब देखें – एक सुनहली चिड़िया, नदी का किनारा, नाव, नदी में चलती हुई नाव, स्वच्छ जल, जल की लहरें, एक बड़ी झील में नीला कमल, एक बड़ी झील में लाल कमल, एक बड़ी झील में सफेद कमल, एक बड़ी झील में पीला कमल, एक पुराना घर, चिमनी से निकलता हुआ धुआँ, जाड़े के दिनों में एक घर में जलती हुई आग, एक मगर, एक बड़ा चीता, स्वच्छ जल में तैरती हुई मछली, एक हाथी, एक हिरण, एक भयंकर काला सर्प, एक झील में नील कमल।

***पारदर्शक शरीर*** – अब ऐसा अनुभव करें कि आपकी नाभि से एक स्वर्णिम डोरी निकल रही है। उसके अंतिम छोर पर आपका परदर्शी शरीर स्थित है। अपने भौतिक शरीर से पारदर्शी शरीर को देखने की कोशिश करें। अपने पारदर्शी शरीर से भौतिक शरीर को देखने की कोशिश करें। इसे बार-बार देखें। इसे बार-बार देखें।

अब अपनी रीढ़ की हड्डी के भीतर मेरुरज्जु को देखें।

अनुभव करें कि रीढ़ की हड्डी में कोई चीज रेंगते हुए ऊपर की ओर सरक रही है।

अपने शरीर को देखें जैसे मैं आपके शरीर को बाहर से देखता हूँ।

अपने सम्पूर्ण शरीर को सिर से पैर तक देखें, अपने सम्पूर्ण शरीर को सिर से पैर तक देखें, अपने सम्पूर्ण शरीर को सिर से पैर तक देखें – एक-एक अंग को देखें।

शरीर के प्रत्येक अंग को देखें – सिर, धड़, गर्दन, दाहिनी भुजा, बायीं भुजा, दाहिना पैर, बायाँ पैर, सम्पूर्ण शरीर, सम्पूर्ण शरीर।

अपने सम्पूर्ण शरीर को देखने की कोशिश करें, जैसे मैं आपके शरीर को देख रहा हूँ।

अब पुनः अपने भौतिक शरीर से ऊपर जाती स्वर्णिम डोरी के अन्तिम छोर में स्थित अपने पारदर्शी शरीर को देखें। इस पारदर्शी शरीर में आँख, नाक, कान आदि की स्पष्ट रूपरेखा नहीं है। बस, एक सामान्य रूपरेखा है इस शरीर की।

इस पारदर्शी शरीर में से पीछे का आकाश भी देखा जा सकता है।

अपने पारदर्शी शरीर को इस भौतिक शरीर से देखने का प्रयत्न करें।

अपने इस भौतिक शरीर को पारदर्शी शरीर से देखने का प्रयत्न करें, अपने इस भौतिक शरीर को पारदर्शी शरीर से देखने का प्रयत्न करें।

मानो आप अपने भौतिक शरीर को उससे बाहर रहकर देखने का प्रयत्न कर रहे हैं।

अपने सिर को देखें, छाती को, उदर को, हाथों को, पैरों को देखें। पूरे शरीर को देखें।

अब ऐसा अनुभव करें कि आप अपने भौतिक शरीर को उसके बाहर से, अपने पारदर्शक शरीर से देख रहे हैं। आप अपने भौतिक शरीर को उसके बाहर से, अपने पारदर्शक शरीर से देख रहे हैं।

अब अपने भौतिक शरीर से स्वर्णिम डोरी के अंतिम सिरे को देखें।

अंतिम सिरे पर अपना पारदर्शी शरीर देखने की कोशिश करें।

उसमें आँख, कान आदि की स्पष्ट रूपरेखा नहीं है। शरीर की सामान्य रूपरेखा को देखें।

इस पारदर्शी शरीर के पार आकाश भी देखा जा सकता है।

अब अपने आपको विभिन्न आसनों का अभ्यास करते हुए देखें।

योगमुद्रा, शशांकासन, सुप्तवज्रासन, भुजंगासन, शलभासन, धनुरासन, पश्चिमोत्तानासन, सर्वांगासन, हलासन, मत्स्यासन, अर्द्ध मत्स्येन्द्रासन, शीर्षासन, शवासन, पद्मासन।

अब अपने आपको चिदाकाश पर ध्यान करते हुए देखें।

अब अपने-आपको पद्मासन में बैठे हुए चिदाकाश पर ध्यान करते हुए देखें।

अब देखें एक ध्यानस्थ योगी को, गेरुए वस्त्र पहिने हुए एक संन्यासी को, पद्मासन में बैठे हुए बुद्ध भगवान को, खड़े हुए ईसामसीह को, घुटने के बल बैठी हुई मरियम को, प्रकाशयुक्त क्रॉस को।

अब अपने भौतिक शरीर में आ जाएँ। अब अपने भौतिक शरीर में आ जाएँ।

अब अपनी जीवनशक्ति का पता लगाएँ।

अपनी जीवनशक्ति के प्रति सजग हो जाएँ।

अपने प्राणशक्ति के प्रति सजग रहें।

प्राणशक्ति के प्रति सजग रहें।

प्राणशक्ति का अनुभव ताप के रूप में करें।

गति के रूप में इसका अनुभव करें।

***प्रभामण्डल*** – अपने चेहरे के चारों तरफ अपने प्रभामण्डल को देखें, चाहे शरीर के बाहर से या अन्दर से।

प्रभामण्डल को पहचाने।
इसका रंग पीला है या हरा, बैंगनी, गहरा पीला, सुनहरा पीला, गुलाबी, लाल, भूरा या काला?
अपने प्रभामण्डल को स्पष्ट रूप से देखने की कोशिश करें।
अपने को विभिन्न कोणों से देखें।
मेरुदण्ड और उसके अन्दर इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना को देखें जो लाल, सफेद और नीले रंग में हैं।
अब देखें कि कौन-सी नाड़ी कहाँ है? कौन-सी नाड़ी लाल है? कौन-सी सफेद है और कौन-सी नीली? कौन-सी नाड़ी किस तरफ है?
अब अपने बिन्दु चक्र पर आयें। वहाँ 'नाद' का पता लगायें।
उस नाद को सुनने की कोशिश करें।
अनंत विशाल समुद्र, शान्ति, हरा-भरा जंगल जहाँ काले सर्प, सिंह और बकरियाँ बड़े प्रेम से साथ-साथ रहते हैं। वहीं एक झोपड़ी है। उसके सामने एक ऋषि समाधिस्थ अवस्था में बैठे हुए हैं।

***ॐ*– ॐ का अनुभव करें।
सर्वत्र ॐकार ध्वनि का अनुभव करें।
सर्वत्र ॐकार ध्वनि का अनुभव करें।
ॐ के रूप पर चित्त को एकाग्र करें।
ॐ के रूप पर चित्त को एकाग्र करें।
ॐ के रूप पर चित्त को एकाग्र करें।
ॐकार की ध्वनि सुनें।
अब यज्ञाग्नि का ख्याल करें। अग्निकुण्ड से धुआँ उड़ रहा है; फूल तथा अन्य द्रव्यों की मनमोहक संगुध।
अपने आप के प्रति सजग हो जाएँ और अपने से प्रश्न करें – 'क्या मैं अपने आप के प्रति सजग हूँ?
क्या मैं सो रहा हूँ?
क्या मेरी चेतना स्वामीजी की चेतना के साथ मिली हुई है?'

***शरीर*–** अब अपने शरीर का ख्याल करें। अंग-प्रत्यंग को देखें, सम्पूर्ण शरीर को देखें। दाहिने हाथ का अँगूठा, पहली अंगुली, दूसरी, तीसरी और चौथी अंगुली। हथेली, कलाई, कोहनी, कंधा, बगल, कमर, कूल्हा, घुटने के पीछे की नस, जाँघ, घुटना, पिंडली, टखना, एड़ी,

तलवा, दाएँ पैर का अँगूठा, दाएँ पैर की अंगुलियाँ, पहली, दूसरी, तीसरी, चौथी अंगुली।

बाएँ हाथ का अँगूठा, पहली अंगुली, दूसरी, तीसरी और चौथी अंगुली। हथेली, कलाई, कोहनी, कंधा, बगल, कमर, कूल्हा, घुटने के पीछे की नस, जाँघ, घुटना, पिंडली, टखना, एड़ी, तलवा, बायें पैर का अँगूठा, बाएँ पैर की अंगुलियाँ, पहली, दूसरी, तीसरी, चौथी अंगुली।

अब अपने सम्पूर्ण शरीर को ऊपर से देखें। अपने सम्पूर्ण शरीर को ऊपर से देखें। अपना चेहरा, नाक, आँख, भौंहें, सिर, दाँत, आपका शरीर। शरीर के ऊपर और नीचे का भाग। इन्हें स्पष्टता से देखें जैसे कि मैं स्पष्टता से देख रहा हूँ।

***इन्द्रियाँ*** – अब अपनी इन्द्रियों को देखें।

पाँच कर्मेन्द्रियाँ – दाहिना हाथ, बायाँ हाथ, दाहिना पैर, बायाँ पैर, जिह्वा, गुदा, प्रजनन अंग।

पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ – दाहिनी आँख, बायीं आँख, दाहिना कान, बायाँ कान, नाक, जिह्वा, त्वचा जो पूरे शरीर पर है।

***मन*** – अब अपने मन के प्रति सजग हो जाएँ। मन जिसके द्वारा आप सब कुछ जानते हैं, उसके प्रति सजग हो जाएँ। अपनी सजगता के प्रति सजग हो जाएँ। अपने प्रति सजग हो जाएँ। अपने प्रति सजग हो जाएँ। इस बात के प्रति सजग हो जाएँ कि आप योगनिद्रा का अभ्यास कर रहे हैं। इस बात के प्रति सजग हो जायें कि आप योगनिद्रा का अभ्यास कर रहे हैं।

***प्राण*** – अपने अन्दर देखें तथा अपने शरीर में प्राणशक्ति के अस्तित्व के प्रति सजग हो जाएँ। प्राणशक्ति के रूप हैं, ताप और गति।

***सुनहरा अण्डा*** – फिर अपने अन्दर की ओर देखें और चेतना की सत्ता के प्रति सजग हो जाएँ। चेतना द्वारा ही आप योग निद्रा का अभ्यास कर रहे हैं। अपने अन्दर की ओर देखें और चेतना की सत्ता के प्रति सजग हो जाएँ, जिसके द्वारा आप योग निद्रा का अभ्यास कर रहे हैं।

अपने अन्दर देखें और अपने मस्तिष्क के केन्द्र में एक सुनहरे अण्डे के प्रति सजग हो जाएँ। एक सुनहरा अण्डा जो बहुत छोटा है, बहुत छोटा है तथा जो मानव की सर्वोच्च चेतना का केन्द्र है। सुनहरा अण्डा, अत्यन्त छोटा, बहुत छोटा अण्डा – जो सर्वोच्च चेतना का केन्द्र है। सुनहरा अण्डा – बड़ा नहीं, बहुत छोटा, जो मानव की सर्वोच्च चेतना का केन्द्र है।

अब अपने आपको साक्षी भाव से देखने की कोशिश करें।
अपने आप को साक्षी भाव से देखने की कोशिश करें।
अपने आप से कहें – मैं यह शरीर नहीं हूँ, मैं इन्द्रियाँ नहीं हूँ, मैं मन नहीं हूँ, मैं प्राण नहीं हूँ, मैं विचार नहीं हूँ, मैं सजगता नहीं हूँ, मैं सजगता नहीं हूँ,मैं यह शरीर नहीं हूँ, मैं भारीपन नहीं हूँ, मैं पीड़ा नहीं हूँ, मैं ठंढक नहीं हूँ। मैं मन नहीं हूँ, मैं कर्म नहीं हूँ, मैं शरीर नहीं हूँ, मैं इन्द्रियाँ नहीं हूँ, मैं मन नहीं हूँ, मैं चेतना नहीं हूँ, मैं प्राण नहीं हूँ, मैं भावना नहीं हूँ, मैं अनुभव नहीं हूँ, मैं सजगता नहीं हूँ, शारीरिक, मानसिक, अतीन्द्रिय, अचेतन – कोई भी वस्तु मैं नहीं हूँ।
मैं अमर आत्मा हूँ।
बार-बार अपने मस्तिष्क की गहराई में जायें और अपने अन्दर उस सुनहरे अण्डे को देखें।
अपने को उस अण्डे में देखने का प्रयत्न करें।
बार-बार अपने मस्तिष्क की गहराई में जाने का प्रयत्न करें। उस सुनहरे अण्डे के अन्दर देखें तथा उसके और अपने बीच तादात्म्य स्थापित करें।
अपने अन्दर उस अण्डे को देखें।
अपने को उस अण्डे की तरह देखें।
दुबारा अपने से कहें – मन, शरीर, इन्द्रियाँ, कर्म, प्रकृति और प्रत्येक वस्तु जो शारीरिक, मानसिक, अतीन्द्रिय या अचेतन है – इन सबसे परे मैं इस सुनहरे अण्डे के रूप में हूँ।
अपने भौतिक शरीर के प्रति सजग हो जाएँ। अपने भौतिक शरीर से बाहर होकर, अलग होकर इस भौतिक शरीर को देखें। अपने भौतिक शरीर को इस प्रकार देखें, मानो आप इसे बाहर से देख रहे हैं। अपने मस्तिष्क के अन्दर जाएँ। अपने मस्तिष्क के केन्द्र में जाएँ। चमकदार सुनहरा अण्डा आपके अन्दर की ब्रह्माण्डीय चेतना है। उस पर मन को एकाग्र करें तथा उसके प्रति सजग हो जाएँ।
अपने अस्तित्व के केन्द्र में इस सुनहरे अण्डे को देखें। इसके प्रति सजग हो जाएँ और अपने से कहें – 'मैं वही हूँ', सोऽहम्, तत् त्वम्ऽसि।

***संकल्प*** – अपने संकल्प को तीन बार दुहरायें। *(विराम)*

***समापन*** – योगनिद्रा का अभ्यास समाप्त हुआ।

*हरि ॐ तत्सत्*

# 17

# अन्तर्मौन

संस्कृत में 'अंत:' का अर्थ है, आन्तरिक और 'मौन' का अर्थ है, शान्ति। अन्दर में शान्त रहने की कला का नाम है, अन्तर्मौन। अन्तर्मौन एक उच्च कोटि की साधना है। इसमें साधक आंतरिक शांति प्राप्त करने के साथ-साथ उस आन्तरिक कोलाहल के प्रति भी सजग हो जाता है जो उस शान्ति की प्राप्ति में बाधक होता है।

दैनिक जीवन में हमारा मस्तिष्क निरंतर बहिर्मुखी रहता है। हम अपने से बाहर की ही चीजों को देखने-सुनने में लगे रहते हैं। अपने अन्दर घटित होने वाली बातों को समझ ही नहीं पाते। अन्तर्मौन का अभ्यास इस स्थिति को उलट देता है। तब हम चाहे थोड़े ही समय के लिए ही सही, अपने मन की क्रियाओं को देख-समझ सकते हैं। अन्तर्मौन उन स्थायी साधनाओं में से एक है जिसका अभ्यास आत्मानुसंधान के लिए तत्पर तथा दृढ़ निश्चय वाला साधक सहज ही चौबीसों घंटे कर सकता है। अपने आंतरिक परिवेश, विचार तथा संवेगात्मक क्रिया-प्रतिक्रियाओं के प्रति सजग रहकर मनुष्य अपने व्यक्तिगत विकास की अधिकतम सीमा तक पहुँच सकता है। इससे वह अपने तार्किक और अतार्किक मन की क्रियाओं को भी समझ लेता है। साथ ही उसके भीतर दूसरे लोगों के सोचने-विचारने तथा अन्य क्रियाकलापों की भी एक वास्तविक समझ विकसित हो जाती है।

अन्तर्मौन की साधना अपने आन्तरिक व्यक्तित्व की स्थायी समझ विकसित करने की दिशा में पहला कदम है। यद्यपि यह अभ्यास प्रतिदिन अधिक-से-अधिक एक घण्टे ही किया जाता है, पर अभ्यास के बाद भी इसका प्रभाव बना रहता है और व्यक्ति अपने 'अव्यक्त व्यक्तित्व' को स्वत: जानने लगता है। वह

यह समझ जाता है कि जीवन की विभिन्न परिस्थितियों के प्रति वह ईमानदारी से कौन-कौन सी प्रतिक्रियायें व्यक्त करता है।

अन्तर्मौन के अभ्यास को अनेक चरणों में बाँटा जा सकता है। इस अभ्यास का पहला चरण है, आस-पास की आवाजों और घटनाओं के प्रति सजग होना। दूसरा चरण है, बाह्य वातावरण के उद्दीपनों से अपने को विरक्त करके मन की कार्यप्रणाली को समझना। मन क्या सोच रहा है, किस प्रकार प्रतिक्रियाएँ कर रहा है? अवचेतन मन से किस तरह के प्रतिबिम्ब आ रहे हैं? तीसरा चरण है, इच्छानुसार विचारों का सर्जन करना। चौथा चरण है, सहज स्वाभाविक विचारों की सजगता और विसर्जन। पाँचवाँ चरण है, सभी विचारों का दमन तथा शून्य की अनुभूति। छठा चरण है, सहज ध्यान।

अन्तर्मौन अपनी सजगता को प्रशिक्षित करने की विधि है। इसके द्वारा व्यक्ति मन की प्रक्रियाओं को समझता तथा उन पर नियंत्रण रखना सीखता है। इसका अभ्यास किसी भी समय इन प्रश्नों पर चिन्तन के साथ किया जा सकता है, 'मैं क्या सोच रहा हूँ? मेरे मन:क्षेत्र में क्या घट रहा है? दिन में इसका बार-बार अभ्यास करने पर साधक को साक्षी-भाव से रहने की स्वाभाविक आदत बन जाती है। तब उसे मैं कौन हूँ, मैं क्या कर रहा हूँ, आदि प्रश्नों के उत्तर स्वत: मिलने लगते हैं। इस अभ्यास में साधक अपने आन्तरिक कोलाहल के प्रति सजग हो कर नीरवता की उस वाणी को, ध्वनि को जानने-समझने लगता है जो शाश्वत एवं सनातन तत्त्व के गीत गाती है।

## कक्षा प्रतिलेखन

### सम्पूर्ण अभ्यास (चरण 1– 5)

### प्रथम चरण – बाह्य उद्दीपनों के प्रति सजगता

अन्तर्मौन का अभ्यास प्रारम्भ होता है।

कृपया अपनी आँखें बन्द कर लें और इन्हें पूरे समय तक बन्द रखें। आसन स्थिर, शारीरिक स्थिति स्थिर, आँखें बन्द और मेरुदण्ड सीधा रखें। मैं अन्तर्मौन के लिए तैयार हूँ, ऐसी होनी चाहिए आपकी मन:स्थिति।

प्रारम्भिक अभ्यास में आन्तरिक चीजों के प्रति सजगता नहीं, बल्कि विभिन्न बाह्य ध्वनियों तथा विभिन्न संवेदनाओं, विभिन्न इन्द्रियग्राह्य अनुभवों के प्रति सजगता होगी।

बाह्य ध्वनियों और संवेदनाओं पर एकाग्र होने की कोशिश करें, और यह न सोचें कि ये ध्यान में बाधक हैं।
पूरी एकाग्रता एवं बाह्य सजगता के साथ आप यह अभ्यास तब तक करें जब तक आपको अपने मानसिक वातावरण में परिवर्तन न लगने लगे।
अपनी इन्द्रियों के साथ संघर्ष न करें, अपनी ऐन्द्रिय अभिव्यक्तियों और अनुभवों के साथ भी संघर्ष न करें। सजग होकर उनके द्रष्टा बने रहें। आपको इन बातों के प्रति भी सजग रहना होगा कि 'मैं सजग हूँ, मैं सुन रहा हूँ। मैं स्वामीजी के निर्देशों को सुन रहा हूँ' आदि।
इस प्रकार मन तथा इन्द्रियों को इंद्रियानुभवों से अप्रभावित रहने का प्रशिक्षण देना होगा।
ध्वनि, स्वाद, स्पर्श अथवा कोई भी प्रतिक्रिया किसी भी कीमत पर आपको बाधा नहीं पहुँचाने पाये, चाहे आप बाहरी ध्वनियाँ सुनें या भौतिक शरीर में विभिन्न संवेदनाओं (खुजली, आलस्य आदि) का अनुभव करें। साधना का यह पहलू प्रत्याहार के नाम से जाना जाता है। यह राजयोग की पाँचवीं अवस्था है।
प्रत्याहार का अर्थ है, इन्द्रियों को अन्दर समेट लेना। गीता के दूसरे अध्याय में कहा गया है –
"जैसे कछुआ अपने शरीर को ढाँचे में समेट लेता है, उसी प्रकार अपनी इन्द्रियों को भी समेटना चाहिये।"
इन्द्रियों को बलात् नहीं समेटना है, बल्कि एक विधि द्वारा उन्हें उनके विषयों से हटा लेना चाहिये।
इन्द्रियों का शमन द्रष्टा या साक्षी भाव के साथ किया जाना चाहिए।
इन्द्रियों को इस भाव से शान्त करना चाहिये – "मैं कान और ध्वनि के बीच घट रहे अनुभवों का द्रष्टा मात्र हूँ।"
'मैं' इस प्रक्रिया में एक अन्य व्यक्ति हूँ। पहला व्यक्ति है कान; अनुभव किया जाने वाला पदार्थ (ध्वनि आदि) दूसरा व्यक्ति है और 'मैं' तीसरा व्यक्ति है जो इन्द्रियानुभव की इस प्रक्रिया का साक्षी है।
अन्तर्मौन की इस प्रथम अवस्था में आपको शांतिपूर्वक अत्यन्त स्पष्टता से तीन आयामों वाली इस सजगता को विकसित करना है – अनुभव करने वाला, अनुभव का विषय और दोनों का द्रष्टा।
विषय और विषयी, कान और ध्वनियाँ, आँख और रूप, त्वचा और स्पर्श,

जिह्वा और स्वाद, नासिका और गंध – इनमें अनुभव करने वाले हैं कान, आँख, त्वचा, जिह्वा और नासिका तथा उनके अनुभव के विषय हैं क्रमश: ध्वनि, रूप, स्पर्श, स्वाद और गंध। आपको इन्हें (विषयों को) ठीक-ठीक साक्षी की भाँति देखना है।

यह आपके इन्द्रियानुभव की अंतर्मुखता है और इसे आप किसी भी समय कर सकते हैं। बाह्य अनुभवों से तनिक भी घृणा नहीं करना है। उन्हें सिर्फ द्रष्टा भाव से देखते जाएँ, साक्षी का मनोभाव लेकर।

कुछ क्षणों के भीतर आप सुख, शान्ति और आनन्द का अनुभव करेंगे। ध्यान के लिए आप अपने को तैयार कर लेंगे।

इसका अभ्यास आप रात में करें, शाम को करें, दिन में करें, घर पर करें, कार में बैठे-बैठे करें, रिक्शे में बैठे-बैठे करें, मित्रों के बीच करें या अकेले में करें। इसके अभ्यास के लिए शांति या नीरवता की आवश्यकता नहीं है। शोर होने दें, व्यवधानों को उपस्थित रहने दें। शरीर स्थिर न हो, तब भी कोई बात नहीं – बस, आप मूक साक्षी बने रहें।

**द्वितीय चरण – सहज विचार प्रक्रिया के प्रति सजगता**

अन्तर्मौन की दूसरी अवस्था में आपको अपनी विचार प्रक्रिया के प्रति सजग होना है।

आपको सहज विचार प्रक्रिया, स्वत: स्फूर्त विचारों के प्रति सजग होना चाहिये। आपको कोई विचारधारा निर्मित नहीं करनी है।

उसे स्वत: आने-जाने दें।

आपको अपने मन से होकर गुजरने वाले प्रत्येक विचार का एक मूक साक्षी बने रहना है और जब आप एक विशेष विचार के प्रति सजग होते हैं तो आपको अपने मन से कहना है – 'हाँ, मैं अमुक बात के विषय में सोच रहा हूँ'।

और अगर मस्तिष्क उस विचार से मुक्त हो गया हो तो आपको उस स्थिति से भी अवगत रहने की कोशिश करनी चाहिये।

प्रारम्भिक अभ्यासी भी कभी अचानक विचार-शून्यता की स्थिति का अनुभव कर सकते हैं।

आप अपने विचारों की प्रक्रिया को देख रहे हैं। आपको गुजरते हुए विचारों के प्रति भी निश्चित जानकारी रखनी है।

आपको पूरे समय सतर्क रहना है। इसका उद्देश्य विचारों को रोकना या निरीक्षण करना नहीं, उन्हें जानना है।

यदि कभी आप अन्यमनस्क हो गये हों तो आप अपनी चेतना को पुनर्जाग्रत कर अपने आपसे कहें – 'मैं कुछ समय के लिये अन्यमनस्क हो गया था, इस बीच मैं अमुक बात सोच रहा था।' लेकिन जितने भी विचार स्वत: आ रहे हैं, आपकी चेतना के स्तर पर उभर रहे हैं, उन सबके प्रति सजग रहने की कोशिश करें।

वे विचार अच्छे हो सकते हैं और बुरे भी हो सकते हैं।

परन्तु, वे कहीं बाहर से नहीं आ रहे हैं। वे आपके आंतरिक व्यक्तित्व की ही अभिव्यक्तियाँ हैं, वे आपकी ही अभिव्यक्तियाँ हैं।

पहली क्रिया में, पहले अभ्यास में, इन्द्रियानुभव बाहर से आए थे।

इस क्रिया में विचार आपके ही आन्तरिक व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति हैं।

इसलिये, जब आप अपने ही विचारों को देख पाते हैं, तो आप अपने व्यक्तित्व में अंतर्निहित तथ्यों से भी परिचित हो जाते हैं।

यदि देर तक लगातार बुरे विचार आपके चेतन मस्तिष्क पर नहीं उभरते तब आप या तो जीवनमुक्त संत बन गए हैं, या आप अपने विचारों को शक्ति लगा कर दमित कर रहे हैं। अवचेतन मन के दमन की जंजीरें अभी तक नहीं खुली हैं।

इसलिए याद रखें कि आप एक साधक हैं।

याद रखें कि आप धारणा के अभ्यासी हैं।

याद रखें कि आप प्रत्याहार के अभ्यासी हैं।

बुरे विचार, अच्छे विचार आएँगे ही।

उन्हें आना चाहिये और आपको उन्हें आने देना चाहिये।

यदि विचार आएँ, तो उन्हें उदासीनता से देखें, एक दर्शक या साक्षी की भाँति, पूर्ण तटस्थता के साथ।

यह अन्तर्मौन की दूसरी अवस्था है। यही राजयोग के अन्तर्गत प्रत्याहार का अभ्यास है।

राजयोग का प्रथम चरण है यम, तब नियम, फिर आसन, तब प्राणायाम और बाद में प्रत्याहार।

प्रत्याहार का अर्थ है वापस होना, प्रत्याहार माने निवर्तन, प्रत्याहार का अर्थ हुआ समेटना।

मैं आपसे स्पष्ट कहता हूँ। ध्यान से सुनें।

यदि आपके मन में बुरे विचार आएँ तो उन्हें रोकें नहीं, तुरन्त सतर्क हो

जाएँ। इस बात के प्रति सजग हो जाएँ कि आप हत्या, बदला, डकैती आदि के विषय में सोच रहे हैं।

यदि बुरे विचार आते हैं, और आप उन्हें एक ओर हटा देते हैं, उनका दमन कर देते हैं, तो वे दूसरी बार और अधिक शक्ति के साथ आक्रमण करेंगे।

**तृतीय चरण – इच्छानुसार विचारों का सर्जन और विसर्जन**

जो कुछ भी आप सोचना चाहते हों, सोचें।

अपनी रुचि के विचार को इच्छापूर्वक मन में लाएँ, उसके सहज आगमन की प्रतीक्षा न करें।

उस पर कुछ देर सोचें, फिर उसकी उपेक्षा कर दें।

सहज विचारों को अभिव्यक्त न होने दें।

अपनी इच्छा से किसी विचार को मन में लायें, उसे वहाँ बना रहने दें, उस पर कुछ देर तक सोचें और फिर अचानक एक झटके के साथ उसे अपने से दूर फेंक दें।

अगर कोई सहज विचार – अच्छा या बुरा, मनोरंजक या प्रेरक, अपने को प्रकट करना चाहे तो उसे प्रकट न होने दें। कहें – 'नहीं, मैं तुम्हें अभी नहीं चाहता।'

तब दूसरा विचार इच्छापूर्वक लाएँ, उसे कुछ देर तक रहने दें, उस पर कुछ देर तक सोचें और फिर अचनाक हटा दें।

तब तीसरे विचार को इच्छापूर्वक लाएँ। उसे कुछ देर तक रहने दें। और जब आप इस पर कुछ देर सोच चुके हों, तब इसे हटाकर स्वेच्छा से दूसरे विचार मन में ले आएँ।

मैं व्यक्तिगत रूप से अनुभव करता हूँ कि अच्छे विचारों से मुक्त होना कठिन नहीं है, पर बुरे विचार बड़े हठीले होते हैं।

एक बार दिन में अगर आपके मन में बुरे विचार आ गये तब उनसे पीछा छुड़ा पाना बड़ा कठिन है। इसलिए मानसिक प्रशिक्षण इस प्रकार का होना चाहिए – आप स्वेच्छा से एक बुरा विचार उत्पन्न करें, इस पर एक मिनट तक मनन करें, फिर एकाएक उसे हटा दें।

यदि आप कुछ दिन या एक महीने तक यह अभ्यास करें तो आपका मन निश्चित रूप से, अवचेतन की गहराइयों से उभर कर आने वाले बुरे विचारों को हटा कर फेंक देने का आदी बन जाएगा।

यह बहुत महत्त्वपूर्ण बात है। अन्तर्मौन के इस महत्त्वपूर्ण अभ्यास का ज्ञान कम लोगों को है।

यह वास्तव में बहुत बड़ी बात है, यदि साधक बुरे विचारों के मन में आते ही उन्हें हटा देने की क्षमता प्राप्त कर ले।

निश्चित रूप से यह एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है।

मैं व्यक्तिगत रूप से जानता हूँ कि अच्छे विचारों को जाग्रत करना, नए आध्यात्मिक साधकों के लिए बहुत बड़ी उपलब्धि नहीं है, परन्तु बुरे विचारों को मन की सतह पर उभरते ही हटा देना सचमुच एक बड़ी उपलब्धि है।

**चतुर्थ चरण – सहज विचारों के प्रति सजगता और उनका विसर्जन**

इस आन्तरिक शान्ति की अवस्था में सहज विचारों को जाग्रत करना है। अब आप अपनी इच्छा से विचार नहीं ला रहे हैं। जैसा कि आपने अभ्यास की तीसरी अवस्था में किया था।

अब आप विचारों को सहजतापूर्वक आने दें और उन पर कुछ देर तक सोचें। जब उन्हें दूर करने की बात सामने आए तो उन्हें अपनी इच्छाशक्ति से दूर करें। कोई विचार सहजता से नहीं जाता।

केवल उनका आगमन सहज होगा, किन्तु उनका प्रस्थान अपने आप नहीं, वरन् आपकी इच्छा से होगा।

यह चौथी अवस्था है।

इस अभ्यास में मैं आपसे यह नहीं कह रहा हूँ कि सिर्फ बुरे विचारों को ही आने दें।

अच्छे और बुरे, हर तरह के विचारों को आपके अवचेतन मन की गहराइयों से उभर कर ऊपर, चेतन मन के तल पर सहज ढंग से आने की अनुमति मिलनी चाहिए।

राजयोग में अन्तर्मौन को प्रत्याहार कहते हैं।

और जब आप अन्तर्मौन का अभ्यास भली प्रकार करने लगें तब धारणा का अभ्यास प्रारम्भ कर सकते हैं।

इन्द्रियों को उनके विषयों से समेटे बिना किसी भी व्यक्ति के लिए ध्यान कर पाना असम्भव है।

प्रत्याहार का अभ्यास पूरा किये बिना न तो कोई ध्यान कर सकता है और न ही उसे इसकी चेष्टा करनी चाहिये।

जब प्रत्याहार पूरा हो जाता है तब धारणा शुरू होती है। धारणा के पूरा होने पर ही हम ध्यान की बात सोच सकते हैं। जिस क्षण ध्यान का उदय होता है, समाधि जीवन की देहरी पर ही खड़ी हो जाती है, आपके बहुत निकट।

**पंचम चरण – आन्तरिक आकाश के प्रति सजगता**

यह अन्तर्मौन की पाँचवीं अवस्था है।

अब अपने अन्दर देखें।

आन्तरिक आकाश के प्रति सजगता, आन्तरिक आकाश के प्रति सजगता, आन्तरिक आकाश के प्रति सजगता।

चिदाकाश के प्रति सजग हो जाएँ।

आन्तरिक आकाश के प्रति सजग हो जाएँ जो एक निराकार रंगहीन आकाश है मानस का। अब विचारों के प्रति सजग हो जाएँ।

यदि मन में कोई विचार आये, तो बिना उस पर सोचे हुए उसे तुरन्त हटा दें।

इस बात के प्रति सजग एवं सतर्क रहें कि जैसे ही कोई विचार आये, उसे आप तुरन्त हटा दें।

आप विचार पर मनन न करें, उसे पहचाने ही नहीं।

एक विचार आता है, उसे हटा दें। उसे निकाल फेंकें।

इस चरण में विचार-शून्यता का अभ्यास किया जाता है।

कोई विचार जो आपके चिदाकाश में आता है, कोई विचार जो अन्दर से अभिव्यक्त होता है, उसे हटा दें।

यदि विचारों के स्थान पर बिम्ब आदि आपकी चेतना पर उभरें, तो एक अन्य विधि अपनानी होगी और वह है आकार को आकारहीनता में बदलना।

मान लें कि आप चिदाकाश में देख रहे हैं। वहाँ न रंग है, न रूप।

लेकिन बिम्बों की तरह, स्वप्न की तरह कुछ आकार चेतना की सतह पर स्पष्ट उभरते हैं। निश्चित ही वे आपके विचार नहीं हैं।

मान लें एक पक्षी, स्त्री, पेड़ या भू-खण्ड का दृश्य है, तो उसे तुरंत विलीन करने का प्रयास करें, मानो कैन्वस पर बने हुए एक चित्र पर आपने एक बूँद जल डाल कर पूरे चित्र को मिटा दिया हो, उसी प्रकार इन आकारों को भी मिटा देना है।

इस तरह इस अवस्था में दो तरह की साधनाएँ हैं।

एक तो यह है कि आप चिदाकाश के प्रति सजग हैं, और दूसरी यह कि यदि चिन्तन या कल्पना के रूप में कोई विचार आता है, तो आप उसे तुरन्त हटा दें।

विचार-शून्यता की स्थिति बनाये रखने का प्रयास करें।

विचार-शून्यता की स्थिति बनाये रखें और इस बात के प्रति सजग तथा सतर्क रहें कि 'मैं कुछ नहीं सोचूँगा।'
यह अन्तर्मौन की सच्ची स्थिति है, जिसमें सभी विचार जो मन की सतह पर उभरना चाहते हैं, तुरंत हटा दिये जाते हैं। उन्हें अभिव्यक्त नहीं होने दिया जाता।
और आकार तथा बिम्ब जो चेतना की सतह पर प्रवाहित हो रहे हैं, उन्हें सही ढंग से चिदाकाश, जो आपका अतीन्द्रिय आत्मिक व्यक्तित्व है, उसके निराकार तथा निर्गुण आकाश में विलीन कर दें।
आपको एक ही बात के प्रति सजग रहना है – मैं कोई विचार नहीं चाहता, मैं कोई विचार नहीं चाहता, मैं किसी विचार के बारे में सोचना नहीं चाहता।
आपकी चेतना में मात्र एक विचार रह सकता है – 'मेरे पास कोई विचार नहीं है।'
अन्तर्मौन के प्रथम चरण में सामान्य रूप से, नितान्त उदासीन रहते हुए तथा साक्षी भाव बनाये रखते हुए इन्द्रियानुभवों के प्रति सजग रहना है।
दूसरे चरण में, स्वाभाविक विचारों का आना-जाना।
तीसरे चरण में, इच्छानुसार विचारों को बुलाना और इच्छानुसार हटा देना।
चौथे चरण में, विचारों का सहज तथा स्वाभाविक रूप से आना, परन्तु उन्हें इच्छानुसार हटाना।
पाँचवें चरण में, कोई विचार प्रक्रिया नहीं। अपनी चेतना पर उभरने वाले प्रत्येक विचार को आप शीघ्र ही हटा देते हैं।
आप अपने मन को कुछ भी सोचने की अनुमति नहीं दें।
यदि मन ऐसा करना चाहे तो उसको रोक दें।
यह पूर्ण अन्तर्मौन है।
अपनी आँखें खोलें और शरीर को विश्रान्त रखें।

*हरि ॐ तत्सत्*

## 2 – संक्षिप्त अभ्यास (चरण 2)

आराम से बैठें या लेट जायें।
किसी प्रकार का मानसिक अवरोधन न होने दें।
किसी अनुभव से घृणा न करें, किसी अनुभव के प्रति राग न उत्पन्न होने दें, किसी अनुभव के प्रति प्रतिक्रिया न व्यक्त करें।

किसी प्रिय विचार, अनुभव या भावना के प्रति प्रतिक्रिया न व्यक्त करें।
इन्द्रियों की क्षमताओं को स्वतंत्र रूप से प्रवाहित होने दें।
मन को विघ्नों से खींचें नहीं, बल्कि विचारों, ध्वनियों या अन्य किसी प्रकार के विघ्नों के पीछे मन को ले जाएँ।
आपके मन की गहराइयों से विचार उत्तेजित होकर स्वत: स्फूर्त होते हैं।
बिना उद्दीपन के विचार अथवा बाह्य ध्वनियों से उद्दीपित विचार।
किसी भी बाधक ध्वनि को सजगता और एकाग्रता से सुनें।
प्रत्येक विचार को एक साक्षी की तरह देखें, मानो उन्हें आप अपने मस्तिष्क के एक कोने से देख रहे हों।
'मैं सोच रहा हूँ..., मैं सुन रहा हूँ..., मुझे यह संवेदना हो रही है।'
अपनी एकाग्रता की प्रक्रिया को सुनते और साक्षी भाव से देखते जाएँ।
आप अपने अतीत की पृष्ठभूमि से उद्दीपन तथा उत्तेजना रहित विचारों को उभरते हुए देखेंगे।
विचारों की महत्त्वहीन झाँकियाँ पलक झपकते ही दिखेंगी।
आप अगर सजग, साक्षी नहीं हैं तो आपके लिये अपनी चेतना की द्रुत गति का अनुगमन कर पाना सम्भव नहीं होगा।
आप अपनी चेतना के स्वच्छन्द प्रवाह का अनुगमन करेंगे।
सहज, वांछित, अवांछित।
कभी-कभी मानसिक अवरोध होने के कारण कोई विचार नहीं आता।
इसका यह अर्थ है कि चेतना अपने को अभिव्यक्त नहीं कर रही है।
मन सोचता रहता है।
अभी भी आप सोच रहे हैं, हालाँकि आप यह देख नहीं पाते।
विचार प्रक्रिया पर एक पर्दा पड़ा हुआ है।
उसे हटा दें और एक के बाद दूसरे विचारों को देखते जाएँ।
वे भूत, वर्तमान आदि विभिन्न संदर्भों से सम्बन्धित हैं और बिजली की तरह प्रकट होंगे।
जब कोई विचार आता है तो उसे देखें और अपने मस्तिष्क में अंकित करें।
अनेक ऐसे विचार हैं जिन्हें आप याद नहीं करना चाहते, जिनसे आप दूर भागना चाहते हैं।
यह बहुत स्वाभाविक है।
विचारों से भागना हमारी मनोवैज्ञानिक प्रकृति है।

स्मृति या अतीत; प्रत्येक चीज दमित है।
यदि पर्दा उठा दिया जाय तो वह अपने को प्रकट कर सकती है, और तब हर्ष और आनन्द की स्थिति आती है।
यदि अतीत की अभिव्यक्ति तटस्थ साक्षी भाव के अभ्यास के समय होती है, तब आप कष्ट और लगाव से मुक्त रहते हैं।
सबसे मुख्य बात है अपने को देखना।
पहली बात है स्वतंत्रता को आने देना।
दूसरी बात है स्वयं को देखना।
अभिव्यक्ति की सम्पूर्ण प्रक्रिया।
किसी विचार का विरोध न करें, हिचकें नहीं, संकोच न करें, किसी विचार के प्रति अपराध बोध अथवा ग्लानि की भावना न लाएँ।
स्वतंत्र विचार प्रक्रिया, किन्तु चौकस एवं सतर्क दृष्टि रखें।
आप विचार नहीं, बल्कि विचार के साक्षी हैं।
आपको पूर्ण तटस्थता का अभ्यास करना होगा।
अपने को किसी विचार के साथ संयुक्त न करें, अपने को विचारों के साक्षी तथा अनुभवों के द्रष्टा की तरह अलग रखें।
आप विचार नहीं हैं, आप अपनी चेतना की ऊर्जा नहीं हैं। आप किसी विचार से घृणा नहीं करते। आप किसी विचार से लगाव नहीं रखते, आप किसी विचार को पसंद नहीं करते, आप किसी विचार को नापसंद भी नहीं करते। आप केवल उन्हें अभिव्यक्त होने देते हैं।
आप अपने को सोचते हुए नहीं देखते हैं।
अपने को सोचते हुए देखना कठिन है।
अचेतन विचार प्रक्रिया आसान है। चेतन विचार प्रक्रिया कठिन है।
विचार प्रक्रिया सहज एवं स्वाभाविक होती है।
कभी-कभी यह प्रक्रिया बाह्य प्रभावों से उत्तेजित होती है।
सहज विचार आपके व्यक्तित्व की गहराई से उभर कर आते हैं।
मानसिक अवरोधों का पर्दा उठा दें, तब विचार सहज ही आएँगे।
लेकिन अगर वे सहज ही नहीं आते, तब आप चिन्तन प्रक्रिया को उत्तेजित करें।
जब चेतना उन्मुक्त होकर अपने को प्रकट करती है, जब मानसिक अवरोध का आवरण पूर्णत: या अंशत: उठ जाता है, तब पहले भयानक विचार आते हैं।

अच्छे विचार बाद में आते हैं।
यदि वे प्रारम्भ में ही आएँ तो उसका श्रेय आपके सामाजिक परिवेश और वातावरण को है; इस बात को है कि आपको भला और दयालु बनने की शिक्षा दी गई है। लेकिन यह आपकी चेतना की सच्ची अभिव्यक्ति नहीं है। यह आपकी चेतना, आपके व्यक्तित्व, आपके अतीत का नकारात्मक पक्ष है। इसे तो आना ही है, अगर यह विचारों में न आया तो व्यवहार में उभरेगा। लज्जित या दु:खी न हों। सम्पूर्ण प्रक्रिया के प्रति साक्षी बने रहें।
किसी विचार के साथ तादात्म्य स्थापित न करें। तटस्थ साक्षी बने रहें। चाहे सोने का विचार हो, उनींदेपन का विचार हो या कोई बाहरी विचार या किसी ध्वनि का विचार हो।
हमेशा कहें मैं 'एक साक्षी हूँ – मन में उठने वाले विचारों, आवाजों या इस वर्तमान अभ्यास के विचार का साक्षी हूँ।'
'कहें – 'मैं जो कुछ सोच रहा हूँ, उसका मैं साक्षी हूँ।'
किसी भी विचार, किसी भी मूर्खतापूर्ण विचार के भी साक्षी बनें।
अपने अंदर या बाहर की, आपके चेतन मन या अवचेतन मन की किसी भी बात के प्रति अनवरत सजगता। आपके अंदर साक्षी चेतना है।
आपके अंदर साक्षी चेतना है। आपके अंदर साक्षी होने के प्रति सतत् सजगता है।
जितना ही आप उस आंतरिक चेतना के निकट आते जाएँगे उतना ही आप द्रष्टा बनते जाएँगे।
यदि आप अपनी आन्तरिक चेतना को एक साक्षी के रूप में जाग्रत कर सकने में समर्थ हैं, तब आपके मन की कोई भी चीज आपकी दृष्टि से नहीं बच पाएगी।
यहाँ तक कि पलकों का झपकना, खुजलाहट या ऐसे छोटे-मोटे विचार, सब कुछ आपके द्वारा देखे जा सकेंगे।
यदि आप अपनी आन्तरिक चेतना को सतर्क रख सकेंगे, तब आपसे सम्बन्धित कोई भी दृश्य आपकी दृष्टि से नहीं बच पायेंगे।
आपके चेतन, अचेतन अथवा अवचेतन का कोई विचार, कोई भावना, आपसे छिपी नहीं रहेगी। आपकी सम्पूर्ण चेतना आपके सामने प्रकट हो जाएगी।
सर्वाधिक प्रमुख बातें ये हैं – आंतरिक चेतना को स्थिर रखें। आपको स्वयं अपने विचारों और अनुभवों को प्रकट करना चाहिये।

आपकी आंतरिक चेतना अनवरत रूप से सतर्क रहे। उसे शान्ति-अशान्ति, बाधाओं, वांछित-अवांछित विचारों पर निगाह रखनी चाहिये।
उसे बाहरी-भीतरी सभी अनुभूतियों, विचारों और चेतना के सभी आयामों पर दृष्टि रखनी चाहिये।
आपका मन जिस किसी चीज को सोचे, आपकी आन्तरिक चेतना को उसका द्रष्टा बनना है।
और यदि विचार किसी मानसिक अवरोध के कारण रुक गये हों, या कुछ भी मन में नहीं आता हो, तब भी आप इस बात के प्रति सजग रहें कि विचार नहीं आ रहे हैं।
कोई पीड़ादायक स्थिति सामने आ सकती है, इसके साक्षी बने रहें।
आप जो भी देख-सुन, जान-बूझ रहे हों, उसके प्रति सजग रहें। सोचें, 'मैं जानता हूँ, मैं अनुभव करता हूँ, मैं सुनता हूँ, मैं देखता हूँ', आदि।
यह आत्मशुद्धि, आत्म-निरीक्षण तथा आत्म-विश्लेषण का एक विस्मयकारी अनुभव होगा, जिसमें मन मुक्त होगा और चेतना सजग तथा विस्तृत होगी।
सोचते और देखते जायें। अपने विचारों के द्वार खोल दें।
अपने अवचेतन मन को खोल दें। इसे देखते जाएँ। अब इस स्वतंत्रता के क्षेत्र से अपने मन को हटा लें, क्योंकि अन्तर्मौन का अभ्यास समाप्त हो गया है।

*हरि ॐ तत्सत्*

# 18

# अन्तर्धारणा

एकाग्रता क्या है? अपनी मानसिक सजगता को एक बिन्दु पर पूर्णत: स्थिर करने का नाम एकाग्रता है। इसी की पूर्णता है, ध्यान। एकाग्रता में मन ध्येय वस्तु के अतिरिक्त अन्य चीजों के प्रति सजग नहीं रहता।

एकाग्रता इतनी शक्तिशाली क्यों है? इसे हम एक उदाहरण से समझेंगे। एक साधारण मनुष्य के मस्तिष्क की तुलना हम एक बिजली के बल्ब से करें। बल्ब की किरणें सभी दिशाओं में जाती हैं। उसकी ऊर्जा फैलती है। यदि कोई बल्ब से पाँच फुट की दूरी पर है तो वह प्रकाश देखता है, परन्तु गर्मी महसूस नहीं करता, यद्यपि बल्ब के केन्द्र में स्थित फिलामेंट में प्रचुर ताप है। इसी तरह एक साधारण मस्तिष्क में अपार शक्ति अन्तर्निहित रहती है, परन्तु वह शक्ति सभी दिशाओं में बिखरी हुई होती है। किसी एक विषय पर ठहर कर गहराई से चिन्तन करने के बदले मन एक के बाद दूसरी वस्तु पर दौड़ता रहता है। अधिकतर व्यक्ति इस शक्ति को उपयोग में लाना नहीं जानते। विज्ञान ने एक यन्त्र का आविष्कार किया है, जिसकी चर्चा अब तक विज्ञान की काल्पनिक कहानियों में ही होती रही है। इसे लेज़र कहते हैं। इसमें प्रकाश की किरणें एक साथ एक ही दिशा में जाती हैं। वे सब एक-दूसरे के अनुरूप ही तरंगित होती हैं। इनके प्रकाश का मूल स्रोत किसी बल्ब से अधिक शक्तिशाली नहीं होता। लेकिन अगर हम लेज़र किरणों से तीन मीटर की दूरी पर खड़े हों, तो भी ये किरणें हमारे शरीर के आर-पार छिद्र बना सकती हैं। यह केन्द्रित प्रकाश है।

इसी प्रकार से केन्द्रित विचार में भी बहुत शक्ति होती है, भले ही यह किसी व्यक्ति के शरीर में छिद्र न कर सके। इससे उच्च-स्तरीय बोध होता है। इसमें दृश्य प्रपंचों के भीतर छुपे सत्य को देखने की भी शक्ति होती है। इसमें

असम्भव की सीमा तक कार्य करने की क्षमता होती है। एकाग्र मन से कोई भी कार्य करना सम्भव है। कई लोगों ने, जो अपनी एकाग्रता विकसित कर चुके हैं, इसकी सचाई को व्यक्त किया है। एकाग्र मन तनावों से भी मुक्त रहता है। पाठक स्वयं इसका अनुभव कर चुके होंगे। जब कोई किसी काम में तल्लीन हो जाता है, उदाहरण के लिये किसी रुचिकर पुस्तक के अध्ययन को लें, उसे पूरा करने के बाद मन शान्त और तनावमुक्त हो जाता है।

ध्यान के संदर्भ में एकाग्रता सर्वथा अनिवार्य है, क्योंकि यह मन को अकारण इधर-उधर नहीं भटकने देती। हमारे जीवन के प्रत्येक क्रियाकलाप के लिए एकाग्रता का बहुत महत्व है क्योंकि उसके बिना किसी लक्ष्य पर नहीं पहुँचा जा सकता। इस कथन की सत्यता हम अपने आसपास देखते ही हैं। एकाग्र मन से व्यक्ति सभी कार्यों को पूरी निपुणता के साथ सम्पन्न कर सकता है। केवल यही नहीं, एकाग्र मन से किया गया कोई भी कार्य आनन्ददायक हो जाता है। जिस व्यक्ति में एकाग्रता की कमी है, जो एक कार्य करते समय दूसरी बातों को सोचता है उससे भूलें होती हैं और काम पूरा करने में अधिक समय लगता है और यदि वह काम पूरा कर भी ले तो सदैव मानसिक द्वन्द्व की स्थिति में वह क्षुब्ध रहता है। उसे लगता है कि उससे समय काटे नहीं कट रहा है। वह कभी भोजन के समय के बारे में सोचता है, कभी अपनी दूसरी समस्याओं के बारे में। सारांश यह है कि एकाग्रता की कमी से अप्रासंगिक विषयों पर हमारा समय व्यर्थ नष्ट होता है। अत: दैनिक कार्यकलापों और ध्यान, दोनों में ही एकाग्रता की आवश्यकता है।

अनेक अर्थों में हम साधारण मनुष्य के मन की तुलना बिल्ली के बच्चे से कर सकते हैं। वह ऊन के गोले के पीछे दौड़ेगा, उसे छोड़ देगा, फिर अपनी ही पूँछ पकड़ने की कोशिश करेगा, फिर अकारण ही दूसरी ओर भाग जायेगा और फिर वापस आकर अपने खेल में संलग्न हो जायेगा। हमारा मन सामान्य स्थिति में इसी मनमौजी तरीके से चलता रहता है। अपने को रूपांतरित करने की आवश्यकता अनुभव करने पर प्रयत्न करके ही हम अधिक एकाग्र हो सकते हैं।

किसी भी रूप में एकाग्रता हमें तथ्यों के पीछे छिपी वास्तविकता को अधिक स्पष्टता से देख पाने की शक्ति प्रदान करती है। हमारा मन क्षण-क्षण परिवर्तित घटनाओं के जाल में उलझा हुआ है। यह एक घटना से दूसरी घटना पर बिना देखे-समझे उछलता-कूदता रहता है। जब हम एकाग्र होते हैं तो मन की चिन्तन-शक्ति एक निश्चित क्षेत्र में और एक ही धारा में बहती है। इस

प्रकार दूसरी वस्तुओं से उसका सम्पर्क कट-सा जाता है। (दूसरी वस्तुओं से एक साथ सम्पर्क रखने का बुरा परिणाम यह है कि हम किसी को भी उसके वास्तविक प्रकाश में नहीं देख पाते)। इसके साथ ही मन के शान्त हो जाने से चेतना उसमें परम प्रकाशयुक्त होकर चमकने लगती है। तब व्यक्ति दृश्य जगत के गहरे अर्थों को समझने की योग्यता प्राप्त कर लेता है।

अब हम एकाग्रता को विकसित करने के विभिन्न अभ्यासों की चर्चा करेंगे।

## धारणा

यह सभी धर्मों के असंख्य व्यक्तियों द्वारा किया जाने वाला अत्यन्त प्रचलित ध्यान का अभ्यास है, जिसे साधारणतया धारणा के नाम से जाना जाता है। इसका अभ्यास अनेक प्रकार से किया जा सकता है। जिस वस्तु पर धारणा का अभ्यास करना हो, उसे प्रतीक रूप में शरीर के विभिन्न केन्द्रों, जैसे, चिदाकाश, हृदयाकाश, दहराकाश या किसी चक्र में स्थित देखा जा सकता है अथवा पूर्ण आकार में शरीर के बाहर अपने सामने उसका मानस-दर्शन किया जा सकता है।

साधक अपने ही शरीर के विभिन्न अंगों, शारीरिक प्रक्रियाओं, शरीर की निश्चलता, शिथिलन या तनाव को भी एकाग्रता का विषय बना सकता है। कई साधनाओं में साधक अपनी श्वास को ही एकाग्रता का विषय बना लेते हैं। इसके कुछ उदाहरण हैं, मणिपुर और अनाहत शुद्धि की विधियाँ, जिनका वर्णन मंत्र सिद्धि योग खण्ड में किया गया है।

योग पद्धति की शिक्षा यह है कि कोई भी पदार्थ एकाग्रता का आधार बन सकता है, शर्त केवल इतनी है कि साधक के लिए उस प्रतीक का विशेष अर्थ या महत्त्व होना चाहिए और उसी पर नियमित रूप से ध्यान एकाग्र करना चाहिए। उसका ध्यान सहज रूप से आना चाहिये। वह पदार्थ इष्ट देवता भी हो सकता है, जो साधक के लिए समग्र अस्तित्व का प्रतीक बन जाता है।

## एकाग्रता एवं धारणा के प्रतीक

कुछ लोगों के समक्ष उनके ध्यान का प्रतीक स्वप्न में या अन्तर्दृश्य के रूप में स्वत: प्रकट हो जाता है। यदि ऐसा हो तो यह सर्वोत्तम है। कुछ लोगों को अपने लिए स्वरूप का चुनाव करने में कठिनाई होती है। ऐसे लोगों की सुविधा के लिए प्रतीकों की एक सूची दी जा रही है। निम्नलिखित प्रतीक

उदाहरण मात्र हैं। वास्तव में ऐसी अनगिनत वस्तुएँ, ध्वनियाँ, दृश्य, प्रतीक आदि हैं, जिन्हें धारणा के लिए चुना जा सकता है।

हमारा सुझाव है कि साधक इस सूची को एक सरसरी नजर से देख लें। सम्भव है कि कोई प्रतीक उन्हें अपने लिए उपयुक्त दीख जाए। यदि इस सूची में कोई उपयुक्त प्रतीक नहीं भी दिखाई पड़ता है तो भी इतना निश्चित है कि इसमें अंकित शब्द साधक की स्मृति अथवा कल्पना को जाग्रत कर देंगे। तब मन में उपयुक्त प्रतीक सहज रूप से आयेंगे। यदि ऐसा तुरंत घटित न हो, तो पूर्ण विश्रान्ति के किसी क्षण में ऐसा बोध अवश्य ही होगा।

**देवता, संत, मनुष्य और शरीर के अवयव–** ब्रह्मा, विष्णु, शिव, पार्वती, त्रिमूर्ति, राम, सीता, राधा, वीणा बजाती हुई सरस्वती, रथारूढ़ अर्जुन, शारदा, पंख फैलाये हुए गरुड़, कुन्ती, गणेश, चतुर हनुमान, लक्ष्मी, सिंहारूढ़ दुर्गा, मुण्डमाला धारिणी काली, वरुण, वायु, इन्द्र, महाकाली, जरतुश्त, खड़े हुए ईसा मसीह, जेहोवा, प्रणत जोसेफ, बैठी हुई मेरी, पद्मासन में बैठे हुए बुद्ध, अब्राहम, लाओत्से, कन्फ्यूसियस, पहाड़ पर खड़े हुए मोसेस, मिलारेपा, नरोपा, पोप, संत अम्बरोष, संत तेरेसा, आदिगुरु शंकराचार्य, चैतन्य महाप्रभु, सन्त तुलसीदास, कबीरदास, सूरदास, मीरा, परमहंस रामकृष्ण, स्वामी विवेकानन्द, सन्त तुकाराम, गुरु नानक, सन्त ज्ञ ानेश्वर, स्वामी शिवानन्द, अन्य सभी देवी-देवता और सन्त, आपके गुरु, आपके माता-पिता, पति, पत्नी, पुत्र, पुत्री, सम्बन्धी-मित्र, ज्ञानचक्षु, गुरुजी के पदकमल, किसी मुद्रा में हाथ, नासिकाग्र, मस्तक, ठुड्ढी, भ्रूमध्य केन्द्र।

**पवित्र प्रतीक–** शिवलिंग, शिव का त्रिशूल, शालिग्राम, अखण्ड ज्योति, अनेक रूपों में क्रॉस, एक माला, वेदी, किसी मंदिर का झरोखा जिससे सूरज की किरणें अंदर आ रही हैं, परम प्रसाद यज्ञपात्र, बौद्धों का सस्वर घूमता हुआ प्रार्थना चक्र, जलती हुई मोमबत्ती की लौ, दीपाधार, स्फटिक का दाना, रंगीन वस्त्र में पुजारी, पूजा का आसन, प्रसन्न मुद्रा में बुद्ध, प्रसन्न मुद्रा में देवी-मूर्तियाँ, नतमस्तक भक्तजन, वीनस डी मिलो, लुव में स्थित आर्क एंजेल, माइकेल एंजीलो के मैडोना तथा उसकी संतान, डेविड और मैडिसी, पंखों के साथ परशियस तथा मेड्युसा, गेरु वस्त्र में एक संन्यासी, स्वर्णिम अक्षर से लिखा हुआ 'ॐ', श्री चक्र, शंख, कमल का फूल, स्वस्तिक चिह्न, मस्तक की रेखाएँ, आपके इष्टदेव वरदहस्त मुद्रा में और कुण्डलिनी, मुण्डमाल, अर्द्धचन्द्र और शंख।

**आकृतियाँ और दृश्य** – गिरिजाघर, मठ, आश्रम, सूर्य से प्रकाशित गाँव, मसजिद, सुनहरे लाल रंग का मंदिर, एक पर्ण-कुटीर, विशाल पर्वत, उतार-चढ़ाव वाली पहाड़ी, श्मशान घाट का भयानक वातावरण, जलती हुई चिता, अजन्ता-एलोरा की गुफाएँ, साँची का स्तूप, कोणार्क का सूर्य मंदिर, पुरी में जगन्नाथ का मंदिर, संगमरमर की चट्टान, समुद्री किनारा, रेगिस्तान, हिमाच्छादित चोटियाँ, ढलान, बालू के पहाड़, रजतवर्णी सागर तट, हरा शीतल जंगल, शान्त उपवन, धूप में सूखते धान के खेत, मन्द-मन्द झूमते वृक्ष, घनघोर घटाओं से घिरा आकाश, वर्षा, कुहासा, आँधी, ओला, चक्रवात, भूचाल, बवण्डर, गरजता हुआ अशान्त समुद्र, ज्वार-भाटा, वर्षा की झड़ी, तालाब में खिले हुए कमल, छायादार वनपथ, पेड़ों से छनकर आती हुई धूप, पहाड़ से नीचे का दृश्य, समुद्र में ऊँची उठी भूमि, बहती हुई नाव, गहरा अंधेरा कुआँ, झील की तरंगें, चट्टानों पर बहता हुआ झरना, कमल सरोवर, धरती से फूटा हुआ झरना, जलाशय, हरी-भरी घाटी।

**जीव-जन्तु** – हाथी, एक वानर, अपने साम्राज्य का अवलोकन करता हुआ एक सिंह, मृग, प्रतीक्षा में बैठा हुआ बाघ, बंदर, चरती हुई सफेद गाय, कान खड़े करके आहट लेता हुआ हिरण, बाज, उड़ता हुआ गिद्ध पक्षी, झपट्टा मारता हुआ अबाबील, जल पर मंद-मंद तैरता हुआ हंस, नीलकण्ठ, लोमड़ी, कोमल पत्ती पर बैठी हुई तितली, अभिमान से अपने पंखों का प्रदर्शन करता हुआ मयूर, जलपरी, दरियाई घोड़ा, दौड़ता हुआ खरगोश, गैंडा, धूप में बदन सेंकता हुआ घड़ियाल, कुंडली मारे बैठा हुआ सर्प, पीत कमल, गेंदे का फूल, वैजयन्ती का फूल, पीला कनेर का फूल, लाल कनेर का फूल, केले का पेड़, नारियल का पेड़, ताड़ का पेड़, नव विकसित गुलाब, टेसू का फूल, जंगली सूअर, शुतुर्मुर्ग, कंगारू, ऊँट, वृहदाकार सूर्यमुखीं, हरी पत्तियाँ, बोधिवृक्ष, पीपल का वृक्ष, गीली काई, सफेद लिली के फूल।

**भौतिक जगत्** – भौतिक तत्त्व – भूमि, अग्नि, हवा, जल और आकाश। तामसिक, राजसिक और सात्विक तत्त्व। राशि मंडल--कुम्भ, मीन, कन्या, तुला, मिथुन, मकर, धनु, वृश्चिक, सिंह, वृष, कर्क, मेष, मानिक की ज्योति, सुलेमानी गोमेद, नीलम में प्रतिबिम्बित तारा, हीरे पर चमकती सूर्य किरण, सूर्यकान्त मणि, पुखराज, स्फटिक में छुपे रहस्य, जम्बुमणि, दुधिया की चमक, हरिताश्म की मनमोहक शीतलता, गार्नेट, मोती की मंद आभा, लहसुनियाँ, जस्ता, लोहा, सोने की चमक, टीन, पीतल, चाँदी का

रूपहलापन, ताँबे की द्युतिहीन चमक, पृथ्वी का चक्कर लगाने वाले अनेक ग्रह, मंगल, शुक्र, शनि, वृहस्पति, वरुण, बुध, रहस्यात्मक यूरेनस और एकाकी प्लूटो।

**रंग और आकार**– लाल रंग, स्वच्छ आकाश का नीला रंग, कोमल घास का हरा रंग, पीला, नीला, जोगिया, सफेद, काला, संध्या के आकाश का गुलाबी रंग, बैगनी रंग, गर्मी की धूप का रंग, रात में चाँद का फीका रंग, सूर्योदय और सूर्यास्त के समय आकाश के रंग, पेड़ों से छनकर आती हुई धूप, अंधेरे में चमकती आग, स्थिर जलती मोमबत्ती, विद्युत, रात्रि के आकाश में चमकता एक तारा, एक वृत्त, एक बिन्दु, निम्नमुखीं त्रिकोण, आयत, षट्कोण, अनेक बिन्दुओं वाला तारा, मानव हृदय के आकार की गुलाब की पंखुड़ी, पुष्प पंखुड़ी, पेड़ की पत्ती, सुनहरा छोटा अण्डा, पीपल का पत्ता, संस्कृत के अनेक बीज मंत्र, चक्र, प्राणों से ओत-प्रोत इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना नाड़ियाँ विभिन्न चक्रों पर एक-दूसरे को काटती हुईं।

## त्राटक

त्राटक पर आगे इस पुस्तक में चर्चा की जायेगी। एकाग्रता विकसित करने की यह एक सशक्त विधि है। इसमें मन को किसी आंतरिक या बाह्य पदार्थ पर केन्द्रित किया जाता है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि यह अन्तर्धारणा विकसित करने की एक उत्तम विधि है। बन्द आँखों के आगे किसी वस्तु को देख सकना और उसके बिम्ब को बनाए रखना ध्यान के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है।

## सामान्य सुझाव

इन अभ्यासों को कष्टसाध्य समझकर पाठक को निराश नहीं होना चाहिए। यह असामान्य बात नहीं है। हममें से अधिकतर लोगों को शब्दों में सोचने की इतनी आदत हो जाती है कि हम अपनी अन्तर्दर्शन की योग्यता खो देते हैं। अपने जीवन की इस सीमा को समाप्त करना भी इन विधियों का आंशिक लक्ष्य है। दूसरी बात यह है कि हमारे बीच ऐसे लोग भी हैं जो जीवन को एक दिवास्वप्न की तरह जीते हैं। हम अपने आस-पास की वस्तुओं को देखते हुए भी अनदेखा कर देते हैं। उदाहरण के लिए, हम एक वृक्ष को देखते हैं, किन्तु हमारे मस्तिष्क में न तो यह तथ्य अंकित होता है कि हम वृक्ष को देख रहे हैं, और न ही उस वृक्ष का सूक्ष्म विवरण अंकित होता है। जब हम किसी ऐसी वस्तु को देखते हैं,

जो हमारे जीवन में गहरा अर्थ रखती है, तभी हम वस्तुत: उसके रूप, आकार और विशिष्टताओं का अपने मस्तिष्क में अभिलेखन करते हैं।

एकाग्रता साधने में किसी प्रकार का तनाव नहीं होना चाहिए। कई लोगों को इसमें विरोधाभास मालूम पड़ता है, क्योंकि वे एकाग्रता के अभ्यास को सामान्यत: किसी दृढ़ प्रयत्न से जोड़ने लगते हैं। वे समझते हैं कि जब कोई व्यक्ति गहन एकाग्रता की अवस्था में होता है तब वह घुर-घुराकर दाँत पीसता है, अपने नाखून कुतरता है अथवा भौंहें तरेर रहा होता है। उनके सामने पसीने से तर-बतर एक मेहनती मजदूर की आकृति आ खड़ी होती है। वास्तव में ये शारीरिक अभिव्यक्तियाँ किसी-न-किसी प्रकार के मानसिक द्वन्द्व अथवा तनाव की सूचक हैं। ये एकाग्रता की गहनता की सूचक कदापि नहीं हैं।

इस पुस्तक में चर्चित गहन ध्यान की अवस्था, जिसकी प्राप्ति के लिए ही मुख्यत: एकाग्रता को विकसित किया जाता है, एक विश्रान्त मन में स्वत: घटित होती है। इसके लिए मन से संघर्ष न करें। ध्यान की अवस्था तो उन्मुक्तता, आनन्द और उल्लास की अवस्था है, जो कि तनावग्रस्त और बोझिल मन में उत्पन्न नहीं हो सकती। अत: आप मन को प्रशिक्षित करें, उसे समझा-बुझा कर तैयार करें, उसके साथ जोर-जबरदस्ती नहीं करें।

जब आप ये अभ्यास करते हैं तो प्रथम प्रयास में ही सफलता प्राप्त करने की उम्मीद न करें। वैसे यदि आपको प्रथम प्रयास में ही सफलता प्राप्त हो जाय तो आप भाग्यशाली हैं। अधिकतर लोगों के लिए यह आवश्यक है कि अचेतन क्रियाकलापों को उत्तेजित कर छवियों के निर्माण हेतु उसे प्रशिक्षित किया जाए। इसमें समय लगता है, लेकिन कुछ दिनों अथवा सप्ताहों के बाद अचेतन मन आपके अनुरोध पर सहज छवियों का निर्माण कर देगा। यदि आपके अभ्यासों में गहनता है तो छवियों का निर्माण और जल्दी होगा। अतएव धैर्य से काम लें। आपको सफलता अवश्य मिलेगी।

## धारणा के कुछ सरल अभ्यास

### विधि 1– विचारों का साहचर्य

एक मनमोहक पदार्थ लीजिये – कोई सुन्दर चित्र या पशु। इस पर मन को एकाग्र करने का प्रयत्न कीजिये। उदाहरण के लिए, कुत्ते को लीजिये। कुत्ते के ही विचार में मन को मत डूबने दीजिये, बल्कि उससे सम्बन्धित विचार भी मन में लाइये। मन को इनसे भिन्न बातों पर न जाने दीजिये।

कुत्ते के रूप और आकार को याद कीजिये। विचार कीजिए कि कुत्ता क्या खाता है। मनुष्य और कुत्ते के सम्बन्ध के बारे में सोचिए। पुन: कुत्ते को अपने विचारों के केन्द्र में रखिये। फिर कुत्ते के बारे में सोचिये। इसी तरह विभिन्न सम्बन्धित बातें सोचते हुए कुत्ते को विचारों का केन्द्र बनाये रखिए। कुत्ते से असम्बद्ध कोई बात मत सोचिये।

**समय –** प्रतिदिन दस मिनट का अभ्यास पर्याप्त होगा।

**लाभ –** विचारों को इच्छानुसार नियंत्रित कर सकने तथा मानसिक शक्ति बढ़ाने के लिए यह अत्युत्तम पद्धति है। मन को एक निश्चित पथ का अनुसरण करने की शिक्षा देने की यह अमूल्य विधि है। इससे मन की एक पदार्थ से दूसरे असम्बद्ध पदार्थों पर कूद पड़ने की आदत समाप्त हो जाती है। यह मन को ध्यान का अभ्यास करने तथा साथ-ही दैनिक कार्यों को एकाग्रतापूर्वक सम्पन्न करने का भी प्रशिक्षण देता है।

**अभ्यास टिप्पणी –** विभिन्न वस्तुओं को इसी तरह चुनकर उन पर अभ्यास किया जा सकता है।

## विधि 2 – मानस-दर्शन द्वारा अतीत का स्मरण

मित्र के घर के मार्ग की सैर को याद कीजिये। उस सैर के दौरान जितनी घटनायें घटीं, उन्हें बन्द आँखों से देखिये।

उस मार्ग पर कैसे मकान थे? प्रत्येक मकान को मन की आँखों से देखिये। रास्ते में खड़ी गाड़ियाँ, लोग... सबको देखिये।

एक-एक चीज की याद कीजिए और उसका मानस-दर्शन कीजिये तथा उन क्षणों को पुन: जीने का प्रयास कीजिए।

वैकल्पिक रूप से, जब आप किसी कमरे में हों तब चारों ओर दृष्टि दौड़ाइये।

फिर आँखें बन्द कर देखीं हुई प्रत्येक चीज का पुन: मानस-दर्शन करने की चेष्टा कीजिये।

किसी किताब को पढ़ते समय आँखें बन्द कर किताब में वर्णित विषय-वस्तु को चित्र की तरह स्पष्ट देखने का प्रयत्न कीजिये।

एक से बीस तक गिनती गिनिये। आँखें बन्द करके गिनतियों को दुहराइये और हर गिनती को तस्वीर की तरह देखिये। यह पद्धति आंतरिक सजगता को बढ़ाकर स्मरण शक्ति को तीव्र बनाती है।

**समय –** इस अभ्यास को प्रतिदिन दस मिनट तक दुहराया जा सकता है।

**लाभ –** यह अभ्यास एकाग्रता, स्मृति और अंतर्धारणा को विकसित करता है।

**अभ्यास टिप्पणी –** जब मन में इधर-उधर के विचार न हों तब किसी भी स्थिति में, यात्रा आदि में इसका अभ्यास किया जा सकता है। इसमें सिर्फ फुर्सत से बैठने की जरूरत है। इसकी सम्भावनायें अपरिमित हैं। कुछ सुझाव निम्नलिखित हैं – इस प्रणाली पर आधारित विधि का कक्षा प्रतिलेखन, जिसे मानस-दर्शन परीक्षण नाम दिया गया है, इस अध्याय के अंत में दे दिया गया है।

## विधि 3 – चित्र का संकुचन तथा विस्तार

एक सुन्दर दृश्य की तस्वीर लीजिये, जिसके केन्द्र में कोई प्रमुख वस्तु हो। चित्र के बदले वास्तविक दृश्य हो तो और भी अच्छा है। इस दृश्य का तब तक अवलोकन कीजिए जब तक आप इसके प्रत्येक विवरण से परिचित न हो जाएँ।

अब आँखें बन्द कर इसी दृश्य का मानस-दर्शन कीजिये। साफ-साफ देखने की कोशिश कीजिये। क्रमश: पृष्ठभूमि से एक-एक करके दृश्यों को हटाते जाइये। उदाहरणार्थ, आकाश की घटायें, वृक्ष या जो भी दृश्य दिखाई दे रहे हों उन्हें एक-एक करके हटा दीजिये। उन चीजों को भी हटा दीजिये जो दृश्य की प्रमुख वस्तु को घेरे हुए हैं। फलत: अब आप मात्र उस प्रमुख वस्तु को ही देखेंगे। चेतना को कुछ देर तक उसी वस्तु पर केन्द्रित कीजिये। फिर जिस क्रम में दृश्यों को हटाते गये थे, उसी क्रम से जोड़ते जाइये। अब पुन: सम्पूर्ण चित्र का मानस-दर्शन कीजिये।

**लाभ –** यह विधि अंतर्धारणा और स्मृति को विकसित करने के लिए बहुत उपयोगी है।

## विधि 4 – इच्छानुसार पदार्थ का मानस-दर्शन

आँखें बंद कर लीजिये और अपनी बंद आँखों के सामने के शून्य क्षेत्र को देखिए।

किसी वस्तु के विषय में सोचिये और उसे एक बिम्ब की तरह चित्रित करने की कोशिश कीजिये। लगभग आधे मिनट बाद दूसरी वस्तु के विषय में सोचिए और उसके भी चित्र की कल्पना कीजिये।

इसे समयानुसार लम्बी अवधि तक करते जाइये।

कोई भी वस्तु, हंस, मोमबत्ती, वृक्ष, कमल या फूल इसके लिए चुनी जा सकती है।

**समय** – यह सरल अभ्यास दिन में कभी भी किया जा सकता है।

**लाभ** – यह भी अंतर्दर्शन की क्षमता का विकास करता है।

### विधि 5 – दृष्टि का संकुचन तथा विस्तार

किसी खोखले पदार्थ को चुन लीजिये, जैसे, कार्डबोर्ड, दियासलाई, पेंसिल बॉक्स, घड़ा आदि।

पहले कल्पना कीजिये कि आप उसके अंदर हैं। आपने अपना आकार इतना छोटा बना लिया है कि उसके अंदर बीचों-बीच बैठे हुए हैं।

अब अंदर की वस्तुओं को वहीं बैठे-बैठे देखिये। दृष्टि के इस कोण से क्या दिखाई पड़ता है? इस दृष्टिकोण से जो भी दृश्य दिखाई पड़े उसका मानस-दर्शन कीजिए।

इस अभ्यास को कुछ मिनटों तक कीजिये। अब अपने दृष्टिकोण का विस्तार कीजिये। अब अपने आकार को उस वस्तु से बहुत बड़ा मान लीजिये।

फिर उस वस्तु को एकाग्रतापूर्वक विभिन्न कोणों से – ऊपर-नीचे, आगे-पीछे, अगल-बगल, हर ओर से देखिये। अपनी दृष्टि को पुन: को संकुचित कर लीजिए, ताकि अपने को एक बार पुन: बंद जगह के केन्द्र में बिठा सकें। इस क्रिया को कई बार दुहराइये।

जब किसी एक वस्तु के साथ यह क्रिया भली प्रकार होने लगे तब दूसरी वस्तु चुन लीजिये।

**लाभ** – इससे कल्पना शक्ति और मानस-दर्शन की क्षमता का विकास होता है।

## कक्षा प्रतिलेखन

### मानस दर्शन परीक्षा (मानसिक लेखन)

### प्रथम चरण – तैयारी

किसी सुविधाजनक ध्यान के आसन में बैठ अपनी आँखें बन्द कर लीजिए।

शारीरिक हलचल बन्द करके निर्देशों की प्रतीक्षा कीजिए।

चिदाकाश के प्रति सजग हो जाइए, बन्द आँखों के सामने का काला पर्दा।

**द्वितीय चरण – चिदाकाश में मानसिक लेखन**

एक श्यामपट का मानस-दर्शन कीजिए, और उस श्यामपट पर चॉक से स्पष्ट रूप से मानसिक लेख लिखिये।

मेरे निर्देशों का सावधानीपूर्वक अनुसरण कीजिए।

ऐसा होना चाहिए कि आप जो भी लिखें उसे आप मेरे बताये हुए चॉक के रंग में लिखा हुआ देख सकें।

***गिनतियाँ–*** सजग हो जाइए और श्यामपट पर देखिये। चॉक पकड़ लीजिए और मैं जो गिनतियाँ कहता हूँ, उन्हें लिखना शुरू कीजिये।

1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9, 10 चॉक से लिखिये।

आपको लिखना है, इनका मानस-दर्शन नहीं करना है। श्यामपट पर जैसी क्रिया आप करते हैं, वैसी ही क्रिया करनी है।

अब इस पंक्ति को कपड़े से साफ कर दीजिए।

फिर चॉक से लिखिये, 11, 12, 13, 14, 15, 16, 17, 18, 19, 20

फिर इस पंक्ति को भी कपड़े से साफ कर दीजिए।

अब दूसरी पंक्ति लिखने के लिए तैयार हो जाइए।

***शब्द–*** पहले सबसे ऊपर लिखिये, सो–ना–न–हीं, सोना नहीं।

अब अपने हाथ की चॉक से दूसरी पंक्ति लिखिए।

मैं–सो–न–हीं–र–हा–हूँ, मैं सो नहीं रहा हूँ।

एक-एक अक्षर को पूरी सावधानी से लिखिए।

दोनों पंक्तियाँ साफ कर दीजिये।

***गिनतियाँ–*** फिर गिनतियाँ लिखने के लिये तैयार हो जाइये।

लिखिए 21, 22, 23, 24, 25, 26, 27, 28, 29, 30

इस पंक्ति को कपड़े से साफ करके श्यामपट की ओर देखिये।

***रेखाएँ–*** याद रखिये, आपको चॉक से श्यामपट पर लिखना है।

आप श्यामपट के सामने खड़े हैं और श्यामपट के इस छोर से उस छोर तक एक लहरदार रेखा खींचना शुरू कर रहे हैं।

लहरदार रेखा एक तरफ से दूसरी तरफ सरकती जाती है, एक तरफ से दूसरी तरफ।

जब आप एक रेखा खींच चुके हों तो दूसरी लहरदार रेखा खींचिए।

इसी तरह लहरदार रेखायें खींचते जाइये। अपनी चॉक से श्यामपट पर लहरदार रेखायें खींचते जाइये।

***गिनतियाँ–*** अब उन रेखाओं को कपड़े से साफ कर दीजिये। जो भी रेखायें आपने खींचीं हैं, उन सबको कपड़े से साफ कर दीजिये, अब पुन: गिनतियों को साफ-साफ लिखिये।

हाथ में चॉक लेकर श्यामपट पर सुन्दरता से लिखिये, 41, 42, 43, 44, 45, 46, 47, 48, 49, 50

अब कपड़े से इस पंक्ति को साफ कर दीजिये।

अब गुलाबी चॉक लेकर श्यामपट पर लिखिये,

51– डैश, यह एक लम्बा चिह्न है। यह एक हाइफन का दुगुना होता है।

फिर से लिखिये, 52, 53, 54, 55, 56, 57, 58, 59, 60

इस पंक्ति को कपड़े से साफ कर फिर से गुलाबी चॉक लीजिये।

***शब्द–*** श्यामपट पर गुलाबी चॉक से महत्त्वपूर्ण वाक्य लिखिये, सो-ना-न-हीं, सोना नहीं।

गुलाबी चॉक से दूसरी पंक्ति लिखिये, मैं–, रिक्त स्थान, सो–, रिक्त स्थान, न-हीं–, रिक्त स्थान, र-हा–, रिक्त स्थान, हूँ, पूर्ण विराम का चिह्न। मैं सो नहीं रहा हूँ।

गुलाबी चॉक से लिखीं हुई पंक्ति पढ़िये, मैं सो नहीं रहा हूँ।

इन दोनों पंक्तियों को कपड़े से साफ कर दीजिये।

***गिनतियाँ–*** जिस श्यामपट पर आप लिख रहें हैं, उसे देखिये।

इस श्यामपट पर गुलाबी चॉक से लिख रहे हैं, 61, 62, 63, 64, 65, 66, 67, 68, 69, 70

इस पंक्ति को कपड़े से साफ कर दीजिये।

***शून्य–*** पुन: लिखने के लिए तैयार हो जाइए, पीली चॉक लेकर शून्य 0, 0, 0, लिखते जाइये 0, 0, 0, 0, 0, 0, 0 पंक्ति बदलिये 0 पीली चाक से लिखिये, 0, 0, 0, 0, 0, 0, 0, 0, 0 पंक्ति बदलिये, 0, 0, 0, 0 पंक्ति बदलिए, मन को स्थिर रखिये और श्यामपट को देखिये।

पीली चॉक लीजिये 0, 0, 0, 0, 0, 0, 0, 0, 0, 0, 0

कपड़े से सभी शून्यों को साफ कर दीजिए।

***त्रिकोण–*** पुन: पीली चॉक लीजिये, और श्यामपट पर रेखागणित वाला एक छोटा-सा त्रिकोण बनाइये, एक त्रिकोण बनाइये, एक और त्रिकोण बनाइये, एक और त्रिकोण बनाइये, एक और त्रिकोण बनाइये, एक और त्रिकोण बनाइये, एक और त्रिकोण बनाइये, एक और त्रिकोण बनाइये।

पंक्ति बदल दीजिए और एक त्रिकोण बनाइये, पीले रंग का, एक और त्रिकोण बनाइये, दूसरा त्रिकोण बनाइये।

कपड़े से सभी पंक्तियाँ साफ कर दीजिये और फिर से सफेद चॉक लीजिए।

***गुणा का चिहन–*** अब श्यामपट पर सफेद चॉक से एक गुणा का चिह्न बनाइये, गणित वाला गुणन का चिह्न, एक और गुणा का चिह्न बनाइये सफेद चॉक से, और एक गुणा का चिह्न बनाइये, ऐसा ही एक और गुणा का चिह्न बनाइये, गुणा का चिह्न बनाइये, और एक गुणा का चिह्न बनाइये।

पंक्ति बदलिये, गुणा का एक और चिह्न बनाइये, एक और गुणा का चिह्न बनाइए, एक और गुणा का चिह्न बनाइए, एक और गुणा का चिह्न बनाइए, गुणा का चिह्न एक और बनाइए।

इन दोनों पंक्तियों को कपड़े से साफ कर दीजिए।

***गिनतियाँ–*** सफेद चॉक लीजिए, अपने सामने के श्यामपट पर लिखने के लिए तैयार हो जाइए।

श्यामपट याद रखिए, चॉक का रंग याद रखिए। आप श्यामपट पर सफेद चॉक से गिनतियाँ लिख रहे हैं, 90, 89, 88, 87, 86, 85, 84, 83, 82, 81

पंक्ति बदलिये, 80, 79, 78, 77, 76, 75, 74, 73, 72, 71

इस पंक्ति को कपड़े से साफ कर दीजिए।

***सीधी रेखायें–*** सफेद चॉक लीजिए, और श्यामपट के एक छोर से दूसरे छोर तक सीधी रेखायें खींच लीजिए, एक रेखा के नीचे दूसरी रेखा खींचिये।

रेखायें खींचते जाइए, एक रेखा के बाद दूसरी रेखा, सफेद चॉक से एक छोर से दूसरे छोर तक खींचते जाइए।

जब एक रेखा पूरी हो जाए, तो दूसरी खींचिए।

सफेद चॉक लीजिए। और सीधी रेखायें खींचिए, रेखायें खींचिए।

कपड़े से रेखाओं को साफ कर दीजिए।

***लहरदार रेखाएँ–*** सफेद चॉक लीजिए और लहरदार रेखायें खींचिए।

रेखाओं को कपड़े से साफ कर दीजिए।

***शून्य–*** गुलाबी चॉक लेकर श्यामपट पर लिखिए 0, 0, 0, 0, 0, 0, 0, 0

***सात की गिनती–*** दूसरी पंक्ति में गुलाबी चॉक से लिखिए 7, 7, 7, 7, 7

***बिन्दु–*** अब पंक्ति बदल कर एक बिन्दु अंकित कीजिये, एक और बिन्दु, एक और बिन्दु, एक और बिन्दु, एक और बिन्दु, एक और बिन्दु, एक और बिन्दु, एक और बिन्दु, एक और बिन्दु। पंक्ति बदलिये।

***तारे–*** गुलाबी चॉक से एक तारा बनाइये। एक कोण वाला तारा, एक और तारा, एक तारा अंकित करें, एक और तारा, एक और तारा, एक और तारा, एक और तारा, एक तारा और अंकित करें।

पंक्ति को कपड़े से साफ कर दीजिये।

***नाम–*** गुलाबी चॉक से श्यामपट पर अपना नाम लिखिए। स्पष्ट अक्षरों में श्यामपट पर अपना नाम लिखिए।

***ॐ–*** कपड़े से पंक्ति को साफ कर दीजिये और गुलाबी चॉक से ॐ लिखिये, एक और ॐ, शीघ्रता से, एक और ॐ, एक और ॐ, एक और ॐ, एक और ॐ, पंक्ति बदलें, एक और ॐ, शरीर और मन स्थिर करिये, एक और ॐ, आप एक दूसरा ॐ लिख रहे हैं, एक और ॐ, एक और ॐ, एक और ॐ, एक और ॐ।

पंक्तियों को कपड़े से साफ कर दीजिये।

***त्रिकोण–*** पीली चॉक लेकर एक बड़ा-सा त्रिकोण बनाइए, उसका आधार श्यामपट की चौड़ाई के बराबर हो, और श्यामपट का ऊपरी भाग त्रिकोण का ऊपरी बिन्दु हो।

अब एक उलटा त्रिकोण बनाइए, इसका आधार श्यामपट का ऊपरी सिरा हो। इस तरह आप देखते हैं कि दोनों त्रिकोण एक-दूसरे को काट रहे हैं, प्रत्येक त्रिकोण का ऊपरी भाग दूसरे त्रिकोण के आधार को मध्य में काट रहा है।

इन त्रिकोणों को कपड़े से साफ कर दीजिये।

पीली चॉक हटा दीजिये।

सफेद चॉक लीजिये और एक त्रिकोण खींचिये। इसका आधार श्यामपट का आधार है। एक दूसरा उलटा त्रिकोण खींचिये जिसका आधार ऊपर की ओर है। ये दोनों त्रिकोण एक-दूसरे को काटते हैं, एक त्रिकोण का सिरा दूसरे त्रिकोण के आधार पर रहेगा।

इन्हें कपड़े से साफ कर दीजिये।

***लम्ब रेखायें–*** सफेद चॉक लीजिये और श्यामपट पर लम्ब रेखायें खींचिये, यथासंभव सीधी रेखाएँ खींचिये।

अब श्यामपट के सिरे से उसके आधार तक लम्ब रेखायें, एक छोर से दूसरे छोर तक, खींचिये।

जब एक रेखा पूरी हो जाये, तब दूसरी खींचिये, एक रेखा से दूसरी रेखा के बीच की दूरी लगभग एक इंच रहे।

रेखायें खींचते जाइये।

लम्ब रेखाओं को कपड़े से मिटा दीजिये।

***नाम*–** श्यामपट पर सफेद चॉक से किसी भी भाषा में, किसी भी वर्णमाला में अपना नाम लिखिये। एक-एक अक्षर लिखिये।

***ॐ*–** सफदे चॉक से 'ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ' लिखिये।

***शून्य*–** दूसरी पंक्ति में सफेद चॉक से लिखिए, 0, 0, 0, 0, 0, 0, 0 पंक्ति बदल लीजिये, 0, 0, 0, 0, 0, पंक्ति बदल लीजिये, 0, 0, 0, 0, 0, 0, 0

इन पंक्तियों को कपड़े से साफ कर दीजिये।

मन और शरीर को स्थिर कीजिये और श्यामपट की ओर देखिये।

***गिनतियाँ*–** सफेद चॉक लेकर फिर लिखिये 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9, 10. पंक्ति बदल दीजिये और लिखिये, 11, मन की गहराई में जाइए और स्पष्ट रूप से लिखिए 12, 13, 14, 15, 15, 16, 17, 18, 19, 20.

पंक्ति बदलिये और लिखिए 21, 22, 23, 24, 25, 26, 27, 28, 29, 30

पंक्तियों को कपड़े से साफ कर दीजिए।

***नाम*–** श्यामपट की ओर देखिये। सफेद चॉक हटा दीजिये और पीली चॉक लीजिये। पीली चॉक से श्यामपट पर अपना नाम लिखिये।

***ॐ*–** दूसरी पंक्ति पर ॐ के प्रतीक को लिखिए, ॐ का प्रतीक, ॐ का प्रतीक, ॐ का प्रतीक। इन पंक्तियों को कपड़े से मिटा दीजिये।

***वृत्त*–** गुलाबी चॉक लीजिये और एक छोटा-सा वृत्त बनाइये। इसे इस प्रकार बढ़ाते जाइये कि यह बड़ा होता जाए और श्यामपट को पूरी तरह घेर लें। छोटे वृत्त से शुरू करके स्पष्टता से वृत्त को गुलाबी चॉक से बड़ा करते जाइये, ताकि वृत्त सारे श्यामपट को घेर लें, ताकि यह बहुत बड़ा कार्य बन जाए। वृत्तों को कपड़े से साफ कर दीजिये।

***त्रिकोण*–** अब सफेद चॉक लीजिये, और श्यामपट पर अनेक छोटे-छोटे त्रिकोण खींचिये। कुछ उल्टे त्रिकोण भी खींचिये।

त्रिकोणों को कपड़े से साफ कर दीजिये।

***गिनतियाँ–*** अब हरी चॉक लीजिये और श्यामपट पर गिनतियाँ लिखते जाइये।
बीच में अर्द्ध विराम का चिह्न (,) रहेगा।
स्वतंत्र रूप से अभ्यास जारी रखिये।
चॉक हरी है, श्यामपट काला है। आप 'एक' से गिनती का स्पष्ट अंकन कर रहे हैं, स्वयं से स्पष्टता से गिनतियों को कहिये, बीच में अर्द्ध विराम चिह्न (,) देते हुए यथा स्थान पंक्ति बदलते जाइये।
हरी चॉक से श्यामपट पर गिनतियाँ लिखने का अभ्यास जारी रखिये, बीच में अर्द्ध विराम चिह्न अंकित करते हुए यथा स्थान पंक्ति बदलते जाइये।
पंक्तियों को कपड़े से साफ कर दीजिए और सफेद चॉक लीजिए।

***त्रिकोण–*** सफेद चॉक से एक त्रिकोण बनाइये, उस त्रिकोण को कपड़े से मिटा दीजिये।
अब पीली चॉक लेकर श्यामपट पर मोटी पंक्तियों में त्रिकोण खींचिए।
कपड़े से त्रिकोण को मिटा दीजिए और नीली चॉक लीजिये, नीली चॉक, और श्यामपट पर मोटी पंक्तियों में नीली चॉक में एक त्रिकोण खींचिये।
कपड़े से त्रिकोण को मिटा दीजिये।
हरी चॉक लीजिये और श्यामपट पर एक त्रिकोण बनाइये।
त्रिकोण को कपड़े से साफ कर दीजिये, और अब गहरे लाल रंग की चॉक लीजिये, और इससे श्यामपट पर गहरी रेखाओं में एक त्रिकोण खींचिये, मोटी पंक्तियाँ गहरे लाल रंग की चॉक से।
त्रिकोण को कपड़े से मिटा दीजिए, और अब एक बैंगनी रंग की चॉक लीजिये, श्यामपट पर मोटी रेखाओं में बैंगनी चॉक से एक त्रिकोण बनाइये।
कपड़े से त्रिकोण को साफ कर दीजिये, और अब गेरू रंग की एक चॉक लीजिये, इस चॉक से श्यामपट पर मोटी रेखाओं में एक त्रिकोण बनाइये।
त्रिकोण को कपड़े से साफ कर दीजिये।

***डैश–*** श्यामपट पर एक छोटा डैश खींचिये।
डैश क्या है?
दो हाइफनों से एक डैश बनता है।
सफेद चॉक से एक डैश खींचिये। दूसरा डैश भी सफेद चॉक से बनाइये।
और तीसरा डैश सफेद चॉक से बनाइये।
अब, नई पंक्ति शुरू कीजिए।

गुलाबी चॉक लीजिये, डैश, डैश, डैश, पीली चॉक लीजिये और खींचिए, डैश, डैश, डैश, हरी चॉक लीजिए और खींचिये, डैश, डैश, डैश, लाल चॉक लीजिए और खींचिये, डैश, डैश, डैश, नीली चॉक लीजिए और खींचिये, डैश, डैश, डैश, गेरु रंग की चाक लीजिए और खींचिये, डैश, डैश, डैश, बैंगनी चॉक लीजिए और खींचिये, डैश, डैश, डैश।

इसे ऊपर से देखने की कोशिश कीजिये। पहली लाइन सफेद डैशों की, फिर दूसरी लाइन गुलाबी डैशों की, तीसरी लाइन पीले डैशों की, फिर हरे डैश, लाल डैश, नीले डैश, गेरु डैश और बैंगनी डैश।

फिर ऊपर सिर्फ पहली पंक्ति को देखिये, सफेद रंग के डैश, दूसरी पंक्ति जिसे आपने गुलाबी रंग से खींचा है, तीसरी पंक्ति पीली, चौथी पंक्ति हरी, पाँचवीं लाल, छठवीं नीली, सातवीं गेरु और आठवीं बैंगनी।

***सीधी रेखाएँ–*** सभी रेखाओं को कपड़े से साफ करके तुरंत एक सफेद चॉक लीजिये और एक सीधी रेखा खींचिये।

फिर एक गुलाबी चॉक लीजिये और एक गुलाबी सीधी रेखा खींचिये। फिर एक पीली चॉक लीजिये और सीधी पीली रेखा खींचिए। फिर एक हरी चॉक लीजिए और सीधी हरी रेखा खींचिये। अब एक लाल चॉक लेकर सीधी लाल रेखा खींचिए, रेखा मोटी होनी चाहिए। फिर एक नीली चॉक लीजिए और सीधी नीली रेखा खींचिए। एक बैगनी चॉक लीजिए और एक बैगनी रंग की सीधी रेखा खींचिये।

श्यामपट की ओर देखिये। उन सभी पंक्तियों को कपड़े से साफ कर दीजिये।

***शून्य–*** सफेद चॉक से लिखिये 0, 0, सफेद चॉक से लिखते जाइये 0, 0, जब आवश्यक समझें, पंक्ति बदल दीजिये, सफेद चॉक से लिखते जाइये 0, 0, 0, 0, उपयुक्त स्थानों पर पंक्ति बदलते जाइये।

**तृतीय चरण – अभ्यास की समाप्ति**

कपड़े से सभी पंक्तियाँ साफ कर दीजिये। मानसिक दर्शन के सभी प्रयासों को बन्द कर दीजिए। अपने शरीर व वातावरण के प्रति सजग बनिए। अभ्यास अब समाप्त होता है।

# 19

# चिदाकाश धारणा

यद्यपि चिदाकाश धारणा एक प्रकार की विशुद्ध मानस-दर्शन करने की विधि है, पर साथ ही यह अपने आप में एक महत्त्वपूर्ण ध्यान की विधि भी है। चिदाकाश का अर्थ है – चेतना का आकाश। चिदाकाश आज्ञा चक्र का चित्र-पट है, अंध-कक्ष है जहाँ भौतिक मन के लिए लाभदायक विभिन्न प्रकार के अतीन्द्रिय दृश्य प्रकट होते हैं। मनुष्य के चेतन, अर्द्धचेतन तथा उच्च चेतना के बीच की कड़ी यही है। यह वह बिन्दु है जहाँ साधकों को ध्येय वस्तु का दर्शन अत्यन्त ही सुगमता से होता है।

चिदाकाश का मानस-दर्शन एक अंधकारमय कमरे के रूप में किया जाता है जिसकी चार दीवारें हैं, छत हैं और फर्श है। चिदाकाश के फर्श में पीछे की दीवार के केन्द्र के पास में एक छेद है, जिससे होकर एक रास्ता नीचे की तरफ गया हुआ है। यह रास्ता सुषुम्ना नाड़ी है, जो निम्न चक्रों से होकर नीचे की ओर जाती है। सामने की दीवार में एक पर्दा है। यदि आप अपनी चेतना के तनावों तथा कुण्ठाओं को शांत कर सकें तो आपको उस पर्दे पर कुछ बिम्ब दृष्टिगोचर होंगे।

चिदाकाश धारणा सजगता के रहस्यमय सूक्ष्म आयामों के द्वार खोल देती है। इसके माध्यम से चेतना तथा मन की उन विभिन्न अवस्थाओं का भी पता चलता है जो हमारी भौतिक दृष्टि से परे हैं तथा जिनके बारे में हम ज्यादा नहीं जानते। इस क्रिया में पारंगत व्यक्ति को भौतिक दृष्टि की सीमाओं से अप्रभावित विशुद्ध प्रज्ञा तथा ज्ञानालोक की प्राप्ति होती है, जो साधक के लिए एक बड़ी उपलब्धि है।

## कक्षा प्रतिलेखन

### 1 – ध्यान के आसन में बैठकर

**प्रथम चरण – शरीर की सजगता**

ध्यान के किसी सुविधाजनक आसन में बैठ जाइये।

मेरुदण्ड तथा सिर सीधा रखिये, हाथ गोद में बंधे हुए या ज्ञानमुद्रा अथवा चिन्मुद्रा में रखिये।

अपने आपको व्यवस्थित कर लीजिये ताकि आप शरीर में बिना कोई तनाव अनुभव किये हुए कुछ देर तक स्थिर बैठ सकें।

अपने आसपास की ध्वनियों के प्रति सजग बनिये, जैसे – घड़ी की टिक-टिक, घूमते हुए पंखे की आवाज, निर्देश के रूप में आप तक पहुँचती हुई मेरी आवाज, चिड़ियों के गीत और मधुर संगीत का गूंजता हुआ लयबद्ध स्वर।

अब अपने शरीर के प्रति सजग बन जाइये, सम्पूर्ण शरीर, सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजग बनिए।

अपनी शारीरिक स्थिति के प्रति पूर्ण तथा अनवरत सजगता बनाए रखिये।

भौतिक शरीर के प्रति सजगता का सतत् प्रवाह बनाए रखिये, किसी विशेष अंग के प्रति नहीं, बल्कि सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजग रहिये।

जितना आप अपने भौतिक शरीर के प्रति सजग होते जाएँगे, उतना आपका मन स्थिर होता जाएगा।

**द्वितीय चरण – श्वास की सजगता**

अब अपनी श्वसन प्रक्रिया के प्रति सजग होइये, लेकिन साथ-ही-साथ शारीरिक सजगता भी बनाए रखिए।

शरीर के प्रति सजगता का सतत् प्रवाह बना रहे। साथ ही सहज और प्रयास रहित श्वसन प्रक्रिया के प्रति भी सजगता रहे, यह तभी सम्भव है जब आप अपने भीतर देखें और अपनी श्वास के प्रति सजग बने।

आपको श्वास लेने का प्रयास नहीं करना है, श्वसन प्रक्रिया सहज एवं स्वाभाविक है, कभी गहरी, कभी लम्बी, कभी स्थूल, कभी छोटी, और इसी प्रकार श्वसन प्रक्रिया चलती जाती है।

श्वास के प्रति सजग रहिये और साथ-ही-साथ अपने भौतिक शरीर के प्रति भी।

**तृतीय चरण – चिदाकाश का ध्यान**

अब तुरन्त अपनी चेतना को अपने अपने अस्तित्व के सार की ओर ले आइये, चिदाकाश का आकाश, जो आपके अन्दर स्थित है। चिदाकाश वह आकाश है जो आपके अस्तित्व के भौतिक एवं मानसिक आयामों के प्रत्येक अणु में व्याप्त है। वह मात्र आपके अंदर या बाहर नहीं, बल्कि हर जगह है।

वह आपके ललाट के सम्मुख का आकाश नहीं है,

आपके मस्तक के पीछे का आकाश नहीं है,

वह हृदयाकाश नहीं,

वह पेट या नाभि का आकाश नहीं,

वह शरीर के अधोभाग का आकाश नहीं,

बल्कि यह एक समग्र आकाश है, जिसमें आपका सम्पूर्ण भौतिक अस्तित्व समाहित है।

जब आप चिदाकाश के प्रति सजग होते हैं, तब आप उस आकाश के प्रति सजग हैं जो शरीर में है, सारे शरीर में है, सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त हो रहा है, सारा शरीर जिसमें समाहित है। इसका सम्बन्ध शरीर के किसी विशेष हिस्से से नहीं है।

**चतुर्थ चरण – रंगों की सजगता**

चिदाकाश के प्रति सजग हो जाइये, जो आपके निराकार अस्तित्व का पूर्ण स्वरूप है, वह आकाश जिसमें आपका शरीर अवस्थित है।

यह काले रंग का है, यह निराकार है।

चिदाकाश के रंग की सजगता बनाए रखने का प्रयास कीजिये।

चिदाकाश के रंग का स्वरूप क्या है?

यह काला है, हल्का काला या और कोई रंग है?

इसका रंग क्षण-क्षण बदलता है।

चिदाकाश का रंग परिवर्तित होता रहता है।

यदि आप सूक्ष्मता से इसका अवलोकन करें तो आप देखेंगे कि ये रंग बड़ी तीव्र गति से बदलते रहते हैं।

कभी-कभी तो बदलते हुए रंगों और उनके स्पन्दनों की गति का अनुसरण कर पाना कठिन हो जाता है।

कभी वे सुस्पष्ट होते हैं, और कभी स्पष्ट नहीं होते हैं।

इन्हें आप न तो समझ सकतें हैं, न तो देख सकते हैं, और न पढ़ सकते हैं।

उनके निहित अर्थों को समझ पाना कठिन है। कभी तो रंग स्पष्ट होते हैं और कभी अस्पष्ट।

प्रतिदिन ये रंग एक से नहीं रहते।

इस क्षण, कल, आपके आकाश का रंग, भीतर का रंग वह नहीं रहेगा जो अभी इस क्षण है।

इन परिवर्तनशील रंगों के प्रति सजग बनिए, जबरदस्त रंग, ये अभिभूत कर देने वाले रंग, जो आपके चिदाकाश के सामने से गुजर रहे हैं।

चिदाकाश निराकार है, जो आपके भौतिक अस्तित्व को आधार प्रदान करता है, पर इसमें रंग है।

यदि आप इसे ध्यान से देखें, यदि आप इसके प्रति सजग रहेंगे तो आप रंग परिवर्तनों की द्रुतगति का अनुभव कर सकेंगे।

ये रंग आपकी जीवनीशक्ति के प्रतीक हैं।

इन रंगों के प्रति सजग होने का प्रयत्न कीजिये।

चिदाकाश आपकी भौतिक सत्ता की निराकार स्थिति, आकारहीन सार वस्तु तथा आपके भौतिक शरीर की निराकार वास्तविकता है।

अपने ललाट के सम्मुख आप जो देखते हैं, वह चिदाकाश नहीं है।

अपने सिर के ऊपर जो आप देख रहे हैं वह चिदाकाश नहीं है।

सिर के पीछे चिदाकाश नहीं है।

हृदय क्षेत्र, नाभि या पीठ पर चिदाकाश नहीं है।

आपके शरीर के अधोभाग में चिदाकाश नहीं है, यह प्रत्येक केन्द्र का चिदाकाश है, सम्पूर्ण चिदाकाश।

अपनी सजगता को तीव्र बनाइए।

अब रंग के प्रति सजग हो जाइये और कहिये, 'मैं रंगों का अन्वेषण कर रहा हूँ, उन्हें देख रहा हूँ, उन्हें रिकार्ड कर रहा हूँ।'

यदि आप रंगों को स्पष्ट अनुभव कर सकते हैं तो मानसिक रूप से कहिये – लाल, नीला, बैंगनी, इत्यादि।

यदि आप रंगों को समझ नहीं सकते हैं तो कहिये – 'मैं नहीं समझ सकता हूँ।'

कभी-कभी रंग इतने जटिल होते हैं कि उन्हें समझना असंभव होता है, परन्तु रंगों को आप समझ सकते हों या नहीं, उनके प्रति आपको सजग रहना हैं।

चिदाकाश के प्रति अपनी सजगता को सतत्, अटूट, अबाध और अनवरत बनाये रखने की कोशिश कीजिये।

सतत्, अबाध, अटूट और अनवरत सजगता उस चिदाकाश के प्रति जिसके अन्दर अब तक अज्ञात के सभी पक्ष समाये हुए हैं। अपनी मानसिक सजगता को बीच में टूटने मत दीजिये।

इस निराकार आकाश में आपका भौतिक शरीर अवस्थित है।

चिदाकाश शरीर में नहीं है, बल्कि शरीर चिदाकाश में है।

चिदाकाश के अभ्यास के दौरान आप अनेक प्रकार के प्रकाशों, प्रकाश पुंजों एवं प्रकाश के समूह को देखेंगे, पदार्थों, विचारों या वस्तुओं को देखेंगे। लेकिन इन सारी चीजों के साथ सम्पूर्ण चिदाकाश की सजगता आपको बनाये रखनी चाहिये।

यदि ललाट के सम्मुख के आकाश में मन उलझता हो तो आप उसे कहें, 'मैं सम्पूर्ण चिदाकाश के प्रति सजग होना चाहता हूँ।'

सर्वप्रथम आपको चिदाकाश को समझ लेना है।

इसके बाद आप रंगों को देखते जायेंगे।

जब आप रंगों को पढ़ लेंगे, तब आप अपनी सजगता को भ्रूमध्य केन्द्र में ले जाइये और वहाँ एक गुफा के प्रति सजग बनिए, एक वृत्ताकार गुफा, एक वृत्ताकार द्वार (अन्दर में)। आप इस बात के प्रति सजग हैं कि एक गुफा है परन्तु आप उसमें प्रवेश नहीं कर पा रहे हैं।

**पंचम चरण – चरण 1 से 4 की पुनरावृत्ति**

सम्पूर्ण अभ्यास को पुनः दुहराइये।

अपने भौतिक शरीर के प्रति सजग बनिये, अपने शरीर के प्रति सजगता को और अधिक तीव्र बनाइए, अपने भौतिक शरीर के प्रति अपनी सजगता को तब तक गहन कीजिए जब तक आप अपनी समग्र शारीरिक सत्ता के प्रति पूर्णतः सजग न हो जाएँ।

अब सामान्य सहज श्वास प्रक्रिया के प्रति सजग बनिये।

इसे अटूट सजगता से देखिये, श्वास क्रिया के प्रति अटूट सजगता होनी चाहिये।

लेकिन साथ-ही-साथ शरीर के प्रति सम्पूर्ण सजगता रहनी चाहिए।

आपको अपने श्वास के प्रति सजग रहने का अभ्यास पूर्ण ध्यान व सावधानी के साथ करना है।

अब एक झटके के साथ चिदाकाश के प्रति सजग हो जाइए – अंदर का आकाश, बाहर का आकाश, निराकार आकाश, जो अनिर्वचनीय है।

आप उसी आकाश के अन्दर हैं।

रंगों के प्रति सजग बनिये। यदि आप तेजी से बदलते हुए रंगों का ख्याल नहीं कर पाते हैं तो कोई हर्ज नहीं है।

परन्तु इस बात के प्रति सजग रहिये कि रंग बहुत तेज गति से क्षण-क्षण परिवर्तित हो रहे हैं।

शरीर के प्रत्येक भाग में रंगों को परिवर्तित होते देखिए, उन्हें ध्यान व सावधानी से देखिए।

रंगों का प्रत्यक्ष ज्ञान, उन्हें द्रष्टा भाव से देखिए, रंगों के प्रति अपनी सजगता जारी रखना, रंगों को अंकित करना, उन्हें ध्यान से पढ़ना। आपकी चेतना का मुख्य विषय केवल चिदाकाश दर्शन है।

याद रखिये, जब मैं चिदाकाश कहता हूँ तो इसका तात्पर्य ललाट के सम्मुख या सिर के ऊपर या सिर के पीछे या पीठ या सामने या नीचे के अंधकारमय क्षेत्र से नहीं है।

मेरा संकेत चिदाकाश की सभी रूपों में समग्र सजगता की ओर है।

यदि आप चिदाकाश समझ सकते हैं, तब आप अपने शरीर का सार समझ सकते हैं।

यदि आप इसका अनुभव कर सकते हैं, तब आप मानव व्यक्तित्व के अतीन्द्रिय सिद्धान्त का अनुभव कर सकते हैं।

अब भ्रूमध्य पर जाइये। इसमें एक वृत्ताकार गुफा का मानसिक रूप से निर्माण कीजिये और कुछ दूर से इस पर दृष्टिपात कीजिए।

आपको यह अंधकारपूर्ण दिखाई देता है।

आप उस द्वार के निकट जाकर अंदर देखते हैं। बहुत अन्धेरा है, न कुछ देखा जा सकता है, न समझा जा सकता है।

और यदि संयोग से आप इसमें चले भी जायें, तो अपने आप को भी नहीं देख सकेंगे, यही चिदाकाश का गूढ़ पक्ष है।

**षष्ठम् चरण – अभ्यास की समाप्ति**

अब ‘ॐ’ का सात बार उच्चारण कीजिये।

‘ॐ’ का उच्चारण करते समय शरीर के प्रति सजग होने के स्थान पर चिदाकाश में अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व के प्रति सजग बने रहिये, और इस प्रकार ॐ की ध्वनि-लहरियों को सूक्ष्म अतीन्द्रिय तरंगों में बदल दीजिये।

चिदाकाश के अंधकारपूर्ण तथा निराकार स्वरूप के प्रति सजगता बनाए रखें।
इस बीच अपने शरीर के अस्तित्व की सजगता की झाँकी भी मिलती रहेगी।
इसकी कल्पना इस प्रकार कीजिए– चारों ओर, हर जगह, अन्दर-बाहर चिदाकाश है।
शरीर सजगता का ही स्वरूप ले लेता है।
इसी सजगता के साथ ॐ का उच्चारण कीजिये, लेकिन निराकार तथा अंधकारमय चिदाकाश की सजगता को टूटने मत दीजिए।
'ॐकार' के अभ्यास के साथ यह करना चाहिये–
ॐ...ॐ...ॐ...ॐ...ॐ...ॐ...ॐ...
धीरे-धीरे अपने मन को बाहर लाइए।
अपने भौतिक शरीर के प्रति सजग बनिये।
अपनी सजगता को बाहर की ओर प्रसारित कीजिए, बाहरी आवाजों के प्रति सजग बनिये, अपने आस-पास बैठे लोगों की हलचलों और मेरे निर्देशों के प्रति सजग बनिये।
अच्छी तरह अनुभव कीजिये कि आप बहिर्मुखीं हो रहे हैं, और आप बाह्य वस्तुओं के प्रति सजग हैं।
क्या आप संगीत, पंखे की आवाज, मेरी आवाज, पास बैठे हुए अन्य साधकों और स्वयं अपनी बैठी हुई शारीरिक स्थिति के प्रति सजग हैं?
अब तक आप चिदाकाश की सजगता का अभ्यास कर रहे थे।
अब आप अपने शरीर को तनाव रहित कर आँखें खोल दीजिये।

*हरि ॐ तत्सत्*

### 2–शवासन में लेटकर

### प्रथम चरण–तैयारी

अब मेरी ओर सिर करके लेट जाइये।
आँखें बन्द कर लीजिए और शरीर को स्थिर करने का प्रयास कीजिये।
अपने शरीर की स्थिति ठीक कर लीजिये ताकि आपको अगले तीस मिनटों तक हिलना-डुलना न पड़े।
ध्यान में मुख्य बात यह है कि आप अपने को इस प्रकार रखिये कि ध्यान करते समय बाहरी वातावरण आपको बाधा न पहुँचा सके।

एक बार विश्रामदायक स्थिति में आने के बाद बिल्कुल स्थिर हो जाइये। ध्यान के अभ्यास की पूरी अवधि में इस बात का ध्यान रखें कि आप सो नहीं रहे हैं, आप जाग रहे हैं।

**द्वितीय चरण – शारीरिक स्थिरता**

अपने भौतिक शरीर का ख्याल कीजिये।

सिर से पैर तक सम्पूर्ण शरीर का ख्याल कीजिये।

सजगता किसी विशेष अंग के प्रति नहीं, बल्कि सिर से पैर तक सम्पूर्ण शरीर के प्रति। पूरा शरीर भूमि पर लेटा हुआ है।

आपकी समांगी सजगता सम्पूर्ण शरीर के प्रति है।

यह सिर, भुजा, पैर, पीठ या अंगुलियों के प्रति सजगता नहीं है, यह समांगी सजगता है जो पूरे शरीर को एक झलक में समेट लेती है।

जब आप अपने पूरे शरीर के प्रति एकाग्र होते हैं तो अपने आप को यह सुझाव भी देते जाइये – 'सम्पूर्ण शरीर, सम्पूर्ण शरीर, सम्पूर्ण शरीर', साथ-ही-साथ आप इस बात के प्रति भी सजग हैं कि मैं भूमि पर लेटा हुआ हूँ।

भौतिक शरीर पर चित्त को केन्द्रित कीजिए, और साथ-साथ शारीरिक स्थिरता के प्रति भी सजग रहिये।

यदि कोई शारीरिक गति हो भी जाए तो उस गति के प्रति भी आपको सजग होना चाहिये, न कि गति अचेतन में हो।

वह गति आपकी जानकारी के बिना नहीं होनी चाहिये।

आप अपनी ओर से कोशिश कीजिये कि आपका शरीर तनिक भी न हिले।

यह आंतरिक योग का पहला पाठ है।

यह बात महत्त्वपूर्ण नहीं है कि आप अपने मन को एकाग्र नहीं कर पाते।

परन्तु यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बात है कि आप अपने पूरे शरीर को स्थिर रखते हुए उसके प्रति सजग हैं।

जब आप पूरे शरीर के प्रति सजग होते हैं और अपने शरीर को स्थिर रखते हैं, तब एक अनुभव प्राप्त होता है, इस अनुभव को आकाशगामिता कहते हैं।

आपको ऐसा अनुभव होना चाहिए कि आपका पूरा शरीर धरती से ऊपर उठ रहा है, वास्तव में ऐसा होता नहीं है, पर यह एक सूक्ष्म अनुभव है।

आपको किसी वस्तु पर अपने मन को एकाग्र नहीं करना है, आपको बस अपने शरीर के प्रति सजग रहना है।

यह ध्यान की सर्वप्रमुख मूल बात है।

आप धार्मिक दृष्टिकोण से या पद्मासन में, वज्रासन में या लेटकर – किसी भी तरह ध्यान करें, अधिक अन्तर नहीं पड़ता, परन्तु इन सब में एक सामान्य नियम यह है कि शरीर को तनिक भी हिलने-डुलने मत दीजिए।
प्रत्येक व्यक्ति के साथ एक आदत जुड़ी हुई है, अनजाने में शरीर को हिलाना, परन्तु चेतन प्रयोजन से इसका नियंत्रण होना चाहिए।
शरीर द्वारा अनजाने में की गई अंगुलियों, सिर, आँखों आदि की गति को सजगता के अंकुश से नियंत्रित करना है।
जब आप पूरे शरीर के प्रति सजग होंगे, तब आपको शरीर के मूर्तिवत् स्थिर होने का अनुभव होगा।
यदि आप अपनी शारीरिक हलचल को नियंत्रित करने में समर्थ हैं तो वास्तव में आप अपने मस्तिष्क के कुछ भागों और कुछ हद तक मन को भी नियंत्रित करने में समर्थ हैं।
आप शरीर को हिलाना चाहते हैं, पर आप इसके प्रति सजग हो जाते हैं और अपने से कहते हैं, 'शरीर को हिलाना नहीं है।'
जब आप पूरे शरीर के प्रति सजग होते हैं, शरीर में होने वाली प्रत्येक गति के प्रति सजग रहते हैं, तब शरीर मूर्तिवत् हो जाता है और चेतना बदल जाती है।
जब आप पूरे शरीर के प्रति सजग होते हैं तथा शारीरिक एवं स्नायविक गतियों को सजगतापूर्वक नियंत्रित करते हैं तब आपका मस्तिष्क तनावमुक्त और शिथिल होने लगता है।
अब किसी तरह की कोई गति नहीं होनी चाहिए, अपने शरीर को गतिहीन होने के लिए बाध्य कीजिए।
एक ही तथ्य के प्रति सजग रहिये, 'मैं स्थिर हूँ या हिल रहा हूँ?'
अब आपको अपनी आँखों, नाक, होंठों, अंगुलियों या किसी भी अंग को थोड़ा-सा भी नहीं हिलाना है।
इस आवेग को नियंत्रित कीजिए।
जब आप इसके प्रति सजग रहेंगे, तभी यह सरल हो पायेगा।
यह योग का सर्वप्रमुख मूल अभ्यास है।
मन को नियंत्रित करने के पूर्व आपमें अपने शरीर को नियंत्रित करने की क्षमता होनी चाहिए।
सूक्ष्म वस्तुओं पर एकाग्र होने की चेष्टा करने के पूर्व आपको अपने स्थूल शरीर पर पूर्ण रूप से एकाग्र होना चाहिए।

यह आपके लिए सरल होना चाहिये, क्योंकि आप अपने शरीर को जानते हैं, आप अपने शरीर का अनुभव कर सकते हैं, आप अपने पूरे शरीर के प्रति सजगता को विकसित कर सकते हैं।

इसलिए आपके लिए अपने शरीर पर एकाग्र होना आसान होना चाहिये, क्योंकि शरीर स्थूल है, इसे देखा जा सकता है और इसका अनुभव किया जा सकता है।

**तृतीय चरण – श्वास की सजगता**

शरीर की अपेक्षा सूक्ष्म है, श्वास।

अपने नासिकाछिद्रों में प्रवाहित होने वाली स्वाभाविक श्वास के प्रति सजग हो जाइये।

जब आप अपनी श्वास के प्रति सजग होते हैं तो स्वयं से कहिये, 'मैं श्वास ले रहा हूँ, मैं श्वास छोड़ रहा हूँ।'

अपनी स्वाभाविक श्वास का ख्याल कीजिये।

सोचिये, मेरी श्वास सहज है। मेरी श्वास स्वाभाविक है।

जब आप श्वास लें, तब आपको पता होना चाहिये कि आप श्वास ले रहे हैं।

जब आप श्वास छोड़ें, तब आपको पता होना चाहिये कि आप श्वास छोड़ रहे हैं।

श्वसन क्रिया अचेतन नहीं होनी चाहिये।

श्वसन क्रिया के प्रति सतत् सजगता।

प्रत्येक बार आप श्वास अन्दर लेते हैं या बाहर छोड़ते हैं। इस बात के प्रति सजगता बनाये रखिये कि आप श्वास अन्दर ले रहें हैं अथवा बाहर छोड़ रहें हैं और कहिये, 'मैं श्वास ले रहा हूँ, मैं श्वास छोड़ रहा हूँ।'

श्वसन प्रक्रिया के प्रति अटूट एवं अविच्छिन्न सजगता।

आपकी श्वास सहज और स्वाभाविक है तथा आपके नासिकाछिद्रों में होकर प्रवाहित हो रही है।

यह दोनों नासिकाछिद्रों से प्रवेश करती है तथा भ्रूमध्य केन्द्र में पहुँच कर एक हो जाती है।

श्वास एक त्रिकोण बनाती है, और उस त्रिकोण का ऊपरी सिरा है भ्रूमध्य केन्द्र।

त्रिकोण की शक्ल में श्वास नासिकाछिद्रों से अन्दर जाती है और बाहर आती है।

दोनों नासिकाछिद्रों तथा भ्रूमध्य केन्द्र के बीच के श्वास-प्रवाह-पथ में श्वास के आवागमन के प्रति सजग होना है।

त्रिकोण की शक्ल में श्वास के प्रति सतत् सजगता का विकास कीजिये।
श्वास का ख्याल करते जाइये।
अपने आपको श्वास के निकट ले आइये।

**चतुर्थ चरण – मंत्र की सजगता**

अब आप श्वास-प्रश्वास के साथ ॐ मंत्र का अनुभव कीजिये। श्वास-प्रश्वास के साथ 'ॐ' का अनुभव करना है।
इस बात के प्रति सजग रहिये कि आप नासिकाछिद्रों से भ्रूमध्य केन्द्र तक श्वास ले रहे हैं और छोड़ रहे हैं, साथ-ही-साथ मंत्र के प्रति सजग बनिये।
इस अभ्यास को दो मिनट तक कीजिये।
श्वास और ॐ एक साथ।
आपकी श्वसन-क्रिया और ॐ एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं।
स्वयं को श्वास एवं मंत्र के निकट लाइये। पूर्ण सजगता। सोना नहीं है।
श्वास की प्रक्रिया और मंत्र को इस तरह से जोड़ें कि उनसे एक त्रिकोण की आकृति बने।

**पंचम चरण – आन्तरिक आकाश**

अपने मन को हटा लीजिए और ललाट का अन्दर से ख्याल कीजिये, मानो आप किसी दीवार के आंतरिक भाग को देख रहे हैं।
पूरा मस्तिष्क, पूरा कपाल एक कमरे की तरह प्रतीत हो रहा है। ललाट सामने की दीवार की तरह है और आप इस दीवार के अन्दर का पक्ष देखना चाहते हैं।
ललाट के भीतरी भाग का ख्याल कीजिये।
जब आप ललाट के भीतरी भाग का ख्याल करते हैं तब आप एक आंतरिक शून्य आकाश या आन्तरिक आकाश के प्रति सजग होते हैं।
यही चिदाकाश है।
आन्तरिक शून्य के प्रति सजगता तनावमुक्त और शिथिल होनी चाहिए।
आपका मस्तिष्क, आपका कपाल एक घर के समान है, एक कमरे के समान है और ललाट सामने की दीवार है।
दाहिनी कनपटी दाहिनी दीवार है।
बायीं कनपटी बायीं दीवार है।
सिर का पिछला हिस्सा पीछे की दीवार है।
सिर का ऊपरी हिस्सा कमरे की छत है।
अब इस कमरे की भीतरी दीवारों को देखने की कोशिश कीजिये।

सामने की दीवार के भीतरी हिस्से का ख्याल कीजिये।

अब अपने मन को दाहिनी दीवार की ओर ले आइये और इस दीवार को अन्दर से देखने की कोशिश कीजिये।

अब अपने मन को बायीं दीवार की ओर ले जाइये और इस दीवार को अन्दर से देखने की कोशिश कीजिये।

अपने मन को पिछले हिस्से की दीवार की ओर ले आइये और इस दीवार को अन्दर से देखने की कोशिश कीजिये।

अपने मन को ललाट के ऊपरी हिस्से की ओर ले जाइये और इस छत को भीतर से देखने की कोशिश कीजिए।

ललाट सामने की दीवार है।

दाहिनी कनपटी दाहिनी दीवार है।

बायीं कनपटी बायीं दीवार है।

पृष्ठ भाग पिछली दीवार और ऊपरी हिस्सा छत है।

आपको इस आकाश का अन्दर से ख्याल करना है, मानो आप एक कमरे के बीच बैठे हों और वहाँ बैठकर दीवारों को अन्दर से देखने की कोशिश कर रहे हों।

जैसा मैं कह रहा हूँ, उसका अनुसरण कीजिए, सामने, सामने, सामने, दायें, दायें, दायें, बायें, बायें, बायें, पीछे, पीछे, पीछे, ऊपर, ऊपर, ऊपर, सामने, सामने, सामने, दायें, दायें, दायें, बायें, बायें, बायें, पीछे, पीछे, पीछे।

अंदर से छत को देखिये, ऊपर, ऊपर, ऊपर, सामने, सामने, सामने, दायें, दायें, दायें, बायें, बायें, बायें, पीछे, पीछे, पीछे, ऊपर, ऊपर, ऊपर।

**षष्ठम् चरण – अभ्यास की समाप्ति**

अब पूरे आकाश के प्रति सजग हो जाइये, जो चार दीवारों और अन्दरूनी छत से घिरा हुआ है।

अब आप अपने अंदर के समांगी आकाश के प्रति सजग बनिये।

इस आकाश को देखिये और अपने को इसके अन्दर अनुभव कीजिए।

अपने भौतिक शरीर के प्रति सजग बनिये। अपनी श्वास के प्रति सजग बनिये। अपने वातावरण के प्रति सजग बनिये।

चिदाकाश धारणा का अभ्यास पूरा हुआ।

*हरि ॐ तत्सत्*

# 20

# त्राटक एवं अन्तर्त्राटक

त्राटक का अर्थ होता है, लगातार टकटकी लगाकर देखना। त्राटक के अभ्यास से एकाग्रता बढ़ती है। मन बहुत शक्तिशाली है, लेकिन इच्छाओं और ऊर्जा को नष्ट करने वाले खेल-तमाशों आदि के माध्यम से मन की यह शक्ति चारों ओर बिखर गई है। यदि हम इस बिखरी हुई मानसिक शक्ति को आध्यात्मिक या भौतिक किसी भी एक उद्देश्य की पूर्ति के लिये उपयोग में लायें तो हमें निश्चित रूप से सफलता मिलेगी। हम निरन्तर ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त सूचनाओं के विस्फोट की चपेट में रहते हैं। अनगिनत विचार हमारे मन से होकर गुजरते रहते हैं और उनके प्रति हम अनभिज्ञ ही रहते हैं। अपनी मानसिक क्रियाशीलता के प्रति हम तभी जागरूक होते हैं जब हम विश्रांत होकर कुछ हद तक इन्द्रियों के प्रति अपनी जागरूकता या उन्मुखता को कम कर देते हैं।

आंतरिक या बाह्य किसी एक वस्तु पर एकाग्र होने के लिए मन को नियंत्रण में रखना होगा ताकि वह विभ्रान्त न हो सके। इसका एक उपाय यह है कि एकाग्रता के लिए किसी ऐसी चीज का चुनाव कर लें जो मन को शान्ति दे और उसे स्थिर बनाये। इस उद्देश्य से 'ॐ' मंत्र, फूल, गुरु का चित्र, कोई देवी-देवता या मोमबत्ती की लौ में से कुछ भी चुना जा सकता है। त्राटक का अभ्यास प्रारम्भ करने के लिए मोमबत्ती की लौ सर्वाधिक आसान और व्यावहारिक है।

त्राटक की दो अवस्थायें हैं, बाह्य त्राटक और अन्तर्त्राटक। बाह्य त्राटक में मन को बाह्य पदार्थ पर एकाग्र किया जाता है। अप्रशिक्षित मन के लिये यही आसान है, क्योंकि मन बाह्य पदार्थों से जुड़ा रहना अधिक पसन्द करता है।

जब हम किसी आंतरिक प्रतीक या बिन्दु पर ध्यानस्थ होते हैं तब मन तुरन्त ऊब कर विचलित होने लगता है।

अन्तर्त्राटक में मन को अन्तर्मुख होने का प्रशिक्षण दिया जाता है। इन्द्रियों के माध्यम से कार्य करते रहने पर मन की शक्ति व्यय होती है। लेकिन जब इन्द्रियों से हटाकर आंतरिक वस्तु पर उसे केन्द्रित किया जाय तब उसे शक्ति प्राप्त होती है।

त्राटक के अभ्यास से अनेक लाभदायक प्रभाव होते हैं। त्राटक का नियमित अभ्यास ध्यान और स्मरण शक्ति बढ़ाने में मदद करता है। यह आँखों की मांसपेशियों को सुदृढ़ बनाकर दृष्टि-शक्ति बढ़ाता है। त्राटक से आंतरिक ऊर्जा का भंडार खुल जाता है। भारत में रहस्यमयी गुप्त शक्तियाँ प्राप्त करने के लिये त्राटक सबसे महत्त्वपूर्ण अभ्यास माना जाता है। ईसाइयों में भी प्रतिमाओं, पवित्र चित्रों और धार्मिक प्रतीकों पर त्राटक किया जाता है, यद्यपि वे इस तथ्य के प्रति जागरूक नहीं हैं।

त्राटक से एकाग्रता बढ़ती है, क्योंकि इससे चेतन ऊर्जा को एक बिन्दु, ध्यान के केन्द्र बिन्दु की ओर उन्मुख किया जाता है। यह अभ्यास स्वत: ध्यान की ओर ले जाता है। प्रारम्भिक अभ्यासियों को भी कम समय में ही इस प्रकार के अनुभव होने लगते हैं। त्राटक का अभ्यास अधिकतम स्थिर आसन में करना चाहिये। यद्यपि कुर्सी पर बैठकर या सुखासन में भी यह अभ्यास किया जा सकता है परन्तु अधिकाधिक स्थिर होकर सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन या पद्मासन में ही इसका अभ्यास करना श्रेयस्कर है।

त्राटक बाह्य हो या आंतरिक, इसका अभ्यास करते समय पलकों को झपकाना नहीं चाहिए। दृष्टि भी बिल्कुल स्थिर रहनी चाहिए। प्रारम्भ में यह भले ही कठिन प्रतीत हो, पर अभ्यास के साथ बहुत सरल हो जाता है। इसमें महत्त्वपूर्ण बात है कि आँखों को तनावरहित रहना चाहिये। आंतरिक बिम्बों को देखने के लिये यह आवश्यक है। मन को सिर्फ वस्तु या बिम्ब पर ही टिकाये रखना है। यदि मन अन्य बातें सोचता हो तो धीरे से उसे खींच कर एकाग्रता की वस्तु पर ले आना चाहिये।

## एकाग्रता की वस्तुएँ

कोई भी वस्तु एकाग्रता के लिये उपयोग में लाई जा सकती है। निम्नांकित चीजों का उल्लेख सुझाव के तौर पर किया जा रहा है–

मोमबत्ती की लौ, काला बिन्दु, स्फटिक, नासिकाग्र, भ्रूमध्य बिन्दु, शिवलिंग, आकाश, जल, चाँद, तारा, अपनी ही छाया, अन्धकार, शून्य, आईना, यन्त्र या मण्डल। इष्टदेवता या आपका अतीन्द्रिक प्रतीक।

इस पुस्तक में जो विधि दी गई है, उसमें त्राटक के लिए मोमबत्ती का उपयोग किया जाएगा। इसे कई कारणों से उपयोगी मानते हैं। यह विशेष रूप से प्रभावकारी होती है, क्योंकि यह आँखों और मन के लिए चुम्बक का काम करती है। इसमें चमक होती है, अत: अन्तर्त्राटक का अभ्यास करते समय आँखें बन्द करने के बाद इसका बिम्ब बहुत स्पष्ट दिखलाई पड़ता है। पहले बाह्य त्राटक किया जाता है, इसके बाद अंतर्त्राटक। बाह्य त्राटक का अभ्यास करते समय खुली आँखों से जो लौ दिखाई पड़ती है, उसी के बिम्ब का अंतर्त्राटक में उपयोग किया जाता है।

त्राटक में एकाग्रता के लिए आप जो भी चीज चुने यथा मोमबत्ती, उसे आँखों की सीध में एक हाथ की दूरी पर रखिए। अगर दृष्टिदोष हो तो मोमबत्ती को ऐसी जगह पर रखिये कि वहाँ दो न दिखाई पड़ें। अभ्यास करते समय आँखें बन्द करने के बाद बिम्ब इधर-उधर, ऊपर-नीचे भागेगा, इसे किसी एक स्थान पर या अधिकांशत: भ्रूमध्य बिन्दु पर केन्द्रित करने का प्रयास करें।

## मोमबत्ती की लौ पर त्राटक

### प्रथम चरण – तैयारी

जलती हुई मोमबत्ती को लगभग एक हाथ की दूरी पर आँखों की सीध में रखिये।
पीठ, गर्दन और सिर को सुविधाजनक स्थिति में सीधा रखिये।
आँखें बन्द कर लीजिये।
अपने सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजग हो जाइये।
अपने शरीर को इस तरह व्यवस्थित कर लीजिये कि अभ्यास के बीच में हिलना न पड़े।
शरीर की दृढ़ता का अनुभव कीजिये।
इस स्थिति में दो-तीन मिनट रहिये।
सात बार ॐ का उच्चारण कीजिए, और अपने पूरे शरीर तथा मस्तिष्क में इसकी स्वर-लहरियों को हिलोरें लेते हुए अनुभव कीजिये।

**द्वितीय चरण – बाह्य त्राटक**

अपनी आँखें खोलकर सिर्फ मोमबत्ती की वर्तिका के शीर्ष को देखिये।
आँखें पूरी तरह से खुली हुई हों, पर उन्हें खोलने के लिए अनावश्यक जोर मत लगाइये।
आँखों के स्नायुओं को तनावरहित रखने की कोशिश कीजिये।
आँखों को यथासंभव खुला रखिये, पलकें झपकने न पावें।
यदि कष्ट हो रहा हो तो पलकें झपका कर, अभ्यास फिर जारी कीजिये।
आँखों की पुतलियों को मत हिलाइये।
अपने मन को मोमबत्ती की वर्तिका पर केन्द्रित कीजिए।
यदि आपका मन भटकता है, तो उसे धीरे-से वापस ले आइये।
इसे तीन मिनट तक या जितनी देर सहजता से कर सकते हों कीजिये, फिर आँखें बन्द कर लीजिये।

**तृतीय चरण – अन्तर त्राटक**

मोमबत्ती की लौ के बिम्ब का भ्रूमध्य में मानसिक दर्शन कीजिये, प्रतिबिम्ब को स्थिर रखने का प्रयास कीजिए।
अपने मन को उसी प्रतिबिम्ब पर टिकाइये।
यदि कोई अनुभव हो रहा हो तो साक्षी-भाव से देखिये।
जब तक प्रतिबिम्ब स्पष्ट रहे, इसी प्रकार उसका मानसिक दर्शन करते रहिये।

**चतुर्थ चरण – चरण 2 और 3 की पुनरावृत्ति**

पुनः आँखें खोलकर वर्तिका के शीर्ष को देखिये।
आपकी सम्पूर्ण सजगता इसी बिन्दु पर केन्द्रित होनी चाहिये।
इस अभ्यास को तीन मिनट या सुविधानुसार कुछ अधिक समय तक जारी रखिये, फिर आँखें बन्द कर के बिम्ब पर ध्यान एकाग्र कीजिये।
जब तक बिम्ब स्पष्ट रहे तब तक ऐसा करते रहिये।
इस क्रिया को दस से तीस मिनट तक, आपके पास जितना समय हो उसके अनुसार दुहराइये। तत्पश्चात् सात बार ॐ का उच्चारण कीजिए।

**पंचम चरण – अभ्यास की समाप्ति**

कुछ देर आँखें बन्द कर मन की क्रियाओं या मन की निष्क्रियता को देखिये।
जो अनुभव घट रहे हैं, उन्हें द्रष्टा भाव से देखिए।
अन्त में आँखें खोलकर मोमबत्ती बुझा दीजिये।

# कक्षा-प्रतिलेखन

## मोमबत्ती की लौ पर त्राटक

### प्रथम चरण – तैयारी

अपनी शारीरिक स्थिति को इस प्रकार व्यवस्थित कर लीजिये कि आप मोमबत्ती की लौ से लगभग एक हाथ की दूरी पर हों।

लौ आपकी आँख की सीध में रहनी चाहिये।

यदि यह नीची है, तो अभ्यास करते समय आपकी आँखों पर जोर पड़ेगा, और अगर ऊँची होगी तो इससे भी जोर पड़ेगा।

इसका उचित स्तर आपकी आँख की सीध है।

आँखें बन्द करिये, और सुनिश्चित कीजिए कि आप विश्रामदायक स्थिति में हैं।

तीन बार 'ॐ' का उच्चारण कीजिये, पूरक कीजिये, ॐ...ॐ...ॐ...।

अपनी आँखें बन्द रखिये।

### द्वितीय चरण – शरीर की सजगता

अपने शरीर के प्रति सजग हो जाइये।

अपने पूरे शरीर का मानसिक दर्शन अथवा अनुभव कीजिये, पूरे शरीर के प्रति सजग बनिये।

अनुभव कीजिये कि आपका शरीर पेड़ की तरह धरती से उग रहा है। आपका पूरा शरीर एक वृक्ष की तरह दृढ़ है जो धरती से उग रहा है।

आपके पैर जड़ हैं, और शरीर का बाकी हिस्सा तना है।

आप अपने शरीर की दृढ़ता का अनुभव करें।

आपका सम्पूर्ण शरीर धरती में गड़ा हुआ है, यह धरती का ही एक हिस्सा है।

आपके शरीर और धरती में कोई अन्तर नहीं है।

आपका शरीर पृथ्वी से उग रहा है।

इसका अनुभव करने की कोशिश कीजिये।

अपने पूरे शरीर और धरती पर उसकी दृढ़ता के प्रति सजग हो जाइये।

आपका सम्पूर्ण शरीर धरती में दृढ़ता से गड़ा हुआ है।

पूर्ण रूप से अपने शरीर के प्रति सजग बनिए।

अपने दाहिने पैर के प्रति सजग हो जाइये, अपने बायें पैर के प्रति सजग हो जाइये। आप इसका मानसिक दर्शन कर सकते हैं या अनुभव कर सकते हैं अथवा दोनों भी कर सकते हैं।

आपका दायाँ घुटना – पूर्ण सजगता। आपका बायाँ घुटना। आपकी दायीं जाँघ, बायीं जाँघ। आपका दाहिना नितम्ब, आपका बायाँ नितम्ब। आपकी पूरी पीठ – सजग रहिए। आपका उदर, आपकी छाती। आपकी दाहिनी भुजा – पूर्ण सजगता। आपकी बायीं भुजा। आपका सिर। आपका सम्पूर्ण शरीर।

अपने सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजग रहिये – अन्य किसी चीज के प्रति नहीं।

अब अपनी आँखें खोल लीजिए।

**तृतीय चरण – बाह्य त्राटक**

अब आप सीधे लौ के बीच में, वर्तिका के शीर्ष को देखें।

प्रयास कीजिये कि आपकी पलकें नहीं झपकें।

आप जितना कम प्रयास करेंगे यह उतना ही सहज होगा, अत: अनावश्यक जोर न लगायें।

आँखों को तनावरहित रखिये।

अब आप लौ के बीच में वर्तिका के ऊपरी बिन्दु पर दृष्टि जमाइये।

आप अपना पूरा ध्यान वर्तिका के ऊपरी बिन्दु पर लगाएँ।

इस ऊपरी बिन्दु के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है।

यदि पलकें झपकने लगें तो झपका लीजिए, जोर मत लगाइए, परन्तु जितनी देर तक हो सके, वर्तिका के ऊपरी बिन्दु को आप बिना पलकें झपकाये देखते जाइए।

आपकी पूरी दृष्टि वर्तिका के ऊपरी बिन्दु पर केन्द्रित रहनी चाहिये। *(दीर्घ विराम)*

अपनी दृष्टि द्वारा इस ऊपरी बिन्दु को भेदने की कोशिश कीजिये।

पूर्ण एकाग्रता। *(दीर्घ विराम)*

अपनी दृष्टि वर्तिका के ऊपरी बिन्दु पर केन्द्रित कीजिये।

इस बिन्दु के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।

यह बिन्दु आपकी दृष्टि को इस तरह खींचता है जैसे लोहा चुम्बक की ओर आकृष्ट होता है।

अनुभव कीजिए कि आपकी दृष्टि, आपका ध्यान वर्तिका के ऊपरी बिन्दु की ओर खींचा जा रहा है।

**चतुर्थ चरण – अन्तर त्राटक**

अब अपनी आँखें बन्द कर लीजिये।

यदि सम्भव हो तो अब आप मोमबत्ती के बिम्ब को देखिये।

यदि आप इसे देख सकते हैं, तो इसे साक्षी भाव से देखिये।
यदि आप इसे नहीं देख सकते हैं तो चिन्ता न कीजिये। जो कुछ आपकी बन्द आँखों के सामने घटित हो रहा है, उसके मूक-द्रष्टा बने रहिए।
आप केवल साक्षी की तरह रहिये। बन्द आँखों के आगे घटित होने वाली घटनाओं के साथ अपने को मत जोड़िये।
आपकी बन्द आँखों के आगे जो घटित हो रहा है, मानो वह सब आपके बाहर घट रहा है, उससे अपने आप को भिन्न समझिये। सजग रहिये। *(दीर्घ विराम)*
आपकी बन्द आँखों के आगे जो कुछ हो रहा है, उसे होने दीजिये। उसका दमन मत कीजिए। *(दीर्घ विराम)*

**पंचम चरण – चरण 3 एवं 4 की पुनरावृत्ति**

अब अपनी आँखें खोलकर मोमबत्ती को देखिये।
आप फिर लौ के बीच में, वर्तिका के ऊपरी बिन्दु को देखिये।
आँखों को आराम की स्थिति में रखिये, परन्तु प्रयास कीजिए कि आप अपनी आँखें झपकायें नहीं।
लौ के बीच में वर्तिका के ऊपर अपने चित्त को केन्द्रित करने की कोशिश कीजिये।
वर्तिका के ऊपरी बिन्दु का चुम्बकीय आकर्षण अनुभव कीजिए। *(दीर्घ विराम)*
इस बिन्दु के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।
लौ के बीच में वर्तिका को देखते रहने में अपने को पूर्णत: लीन कर दीजिए।
अपनी दृष्टि द्वारा वर्तिका के ऊपरी बिन्दु का भेदन कीजिए।
अब अपनी आँखें बन्द कर लीजिये।
पुन: मोमबत्ती का बिम्ब अगर आपको दिखता है, तो देखिये।
यदि आप उसे नहीं देख सकते हों तो अपनी बन्द आँखों के सामने के आकाश को देखिये।
वहाँ जो कुछ घट रहा है उसे देखिए।
आपको सिर्फ एक प्रेक्षक, एक साक्षी की तरह रहना है।
जो कुछ घट रहा है उसके साथ भावनात्मक सम्बन्ध मत बनाइये।
सिर्फ देखिये, और कुछ नहीं। *(दीर्घ विराम)*
यदि आप अभी भी मोमबत्ती का स्पष्ट बिम्ब देख सकते हैं तो आप अपना ध्यान वर्तिका पर केन्द्रित कीजिए, यदि आप कर पाए तो।

यदि आपकी आँखों के आगे दृश्य आयें, सुन्दर चित्र उपस्थित हों तो उन्हें इस तरह देखिये मानो आप टेलीविजन देख रहे हैं, परन्तु कार्यक्रम में हस्तक्षेप मत करिये। सिर्फ देखिए। *(दीर्घ विराम)*

अब अन्तिम आवृत्ति के लिए आँखें खोलिये।

पुन: अपना पूरा ध्यान वर्तिका के ऊपरी बिन्दु पर लगाइये।

लौ के केन्द्र में देखिए, लौ के बीच में देखिए, लौ के सबसे भीतरी परत को देखिए।

प्रयत्न कीजिये कि आपकी आँखें न झपकें।

आपका प्रयास जितना ही कम होगा, यह उतना ही सरल हो जायेगा।

आप जितना कठिन प्रयास करेंगे, यह उतना ही कठिन हो जाएगा।

आप जितना शिथिल रहेंगे, अपलक देखना उतना ही आसान हो जाएगा।

अत: प्रयत्न कीजिए, परन्तु अधिक नहीं।

अपना ध्यान वर्तिका के ऊपरी बिन्दु पर केन्द्रित कीजिये, किसी और वस्तु पर नहीं। *(दीर्घ विराम)*

लौ के केन्द्र में देखिए, वर्तिका को देखिये।

अब अपनी आँखें बन्द कर लीजिये।

यही विधि दुहराइये।

मोमबत्ती का प्रतिबिम्ब अगर आप देख सकते हैं तो देखिये।

अन्यथा चिदाकाश को देखिये और जो घटता है, उसे केवल द्रष्टा-भाव से देखिए।

साक्षी भाव से देखिये।

साक्षी बनिये, कुछ भी हो आप मात्र साक्षी बने रहिए।

हस्तक्षेप मत कीजिये, केवल अवलोकन कीजिए। *(दीर्घ विराम)*

**षष्ठम् चरण – अभ्यास की समाप्ति**

अब पाँच बार 'ॐ' का उच्चारण कीजिये। ॐ की स्वर लहरियों का अनुभव अपने पूरे शरीर में, पूरे मस्तिष्क में, पूरे कमरे में, हर जगह कीजिये।

अनुभव कीजिये कि आप 'ॐ' के स्पन्दन प्रसारित कर रहे हैं। आप ही उन स्पन्दनों को ग्रहण कर रहे हैं।

ॐ के स्पन्दन का अनुभव कीजिए, तीव्र होते ॐ के ध्वनि स्पन्दन तथा उसकी प्रतिध्वनि को चारों तरफ सुनिए।

श्वास लीजिए, ॐ…ॐ…ॐ।

एक मिनट तक आँखें बन्द रखिए और अपनी अनुभूतियों, मानसिक स्थिति तथा बाहर से आ रही आवाजों के प्रति सजग बनिए, परन्तु एक मिनट तक शान्त बैठे रहिये। *(विराम)*

*हरि ॐ तत्सत्*

## अन्तर्त्राटक

अब हम लोग पूर्णत: अतीन्द्रिय अभ्यास की चर्चा करेंगे, जिसमें हमारी चेतना किसी बाह्य पदार्थ पर नहीं, बल्कि एक आन्तरिक वस्तु या बिन्दु पर टिकती है। इस अभ्यास के लिए मन की शान्ति और शारीरिक स्थिरता की आवश्यकता होती है।

## विधि

**प्रथम चरण – कायास्थैर्यम्**

सर्वप्रथम कायास्थैर्यम् का अभ्यास कीजिये, पूर्ण शारीरिक स्थिरता।
मेरुदण्ड सीधा, सिर सीधा और आँखें बंद।
मानसिक रूप से सभी मांसपेशियों एवं जोड़ों को तनावरहित करके सम्पूर्ण शरीर के प्रति जागरूक हो जाइये।
शरीर को मूर्तिवत् स्थिर बना लीजिये।
धीरे-धीरे शरीर हल्का होता जायेगा, और सूक्ष्म रूप से शरीर में कड़ापन आता जायेगा।
मन को शान्त करने के लिए कायास्थैर्यम् एक सशक्त साधन है।

**द्वितीय चरण – सूक्ष्म श्वसन क्रिया की सजगता**

अब अतीन्द्रिय श्वसन क्रिया के प्रति सजग हो जाइए, इसे देखिए, इसे अन्दर जाते और बाहर आते हुए अनुभव कीजिए।
शरीर के किसी भी बिन्दु में तनाव न रहे।
उन्हें शिथिल कीजिए, ऐसा करने से श्वास की गति मन्द हो जाएगी और फिर यह बिल्कुल कम हो जाएगी। धीरे-धीरे आप अनुभव करेंगे कि केवल सूक्ष्म श्वास कण्ठ-क्षेत्र में से बह रही है।
अब सात बार 'ॐ' का उच्चारण कीजिये। यह उच्चारण दीर्घ और स्पष्ट होना चाहिये और 'म्' की ध्वनि धीरे-धीरे कम होती जानी चाहिये।

**तृतीय चरण – अन्तर्त्राटक**

अपनी चेतना को दोनों भौंहों के मध्य, भ्रूमध्य पर केन्द्रित कीजिये।

चेतना को सजगतापूर्वक धीरे-धीरे वहाँ ले जाइये, तनावपूर्ण प्रयत्न करके नहीं।

अपनी चेतना को भ्रूमध्य में केन्द्रित कीजिए।

यदि यह कठिन लगे तो अपनी अनामिका अंगुली को मुँह में डालकर थूक से भिगो लीजिये, और भ्रूमध्य में उससे एक टीका लगाइये। इस अंगुली को थोड़ी देर तक भ्रूमध्य पर टिका रहने दीजिये, फिर उसे वहाँ से हटा लीजिये।

अपनी सजगता को भ्रूमध्य केन्द्र पर टिकाकर रखिए, और यदि संभव हो तो वहाँ एक छोटा-सा तारा देखने की कोशिश कीजिए। यदि नहीं दिखे तो उसकी कल्पना कीजिये।

हो सकता है कि यह कुछ देर के लिए प्रकट होकर फिर लुप्त हो जाए। परन्तु इसमें चिन्ता की कोई बात नहीं है।

बस उस तारे को देखते जाइए।

यदि यह नहीं दिखाई पड़े तो आप इसकी कल्पना कर सकते हैं।

आकाश में तारे की कल्पना कीजिये, सीमाहीन आकाश के बीच एक छोटे से तारे की कल्पना कीजिये। यह अचानक टिमटिमाने लगा है।

लम्बे अभ्यास के पश्चात् यह आंतरिक तारा स्वाभाविक रूप से प्रकट होने लगेगा। यह आपकी आध्यात्मिक कल्पना का विकास है।

अगर आप भ्रूमध्य में तारे को देख सकते हैं तो यह एक सूक्ष्म अतीन्द्रिय घटना है।

इसका मतलब है कि आपमें एक नई दृष्टि का विकास हुआ है।

एक और बिन्दु है। भ्रूमध्य में आप एक नेत्र के प्रति सजग होंगे।

यह तीसरा नेत्र है।

इस तीसरे नेत्र के प्रति अपनी सजगता को विकसित कीजिए, यह मनुष्य में ब्रह्माण्डीय चेतना का प्रतीक है।

भ्रूमध्य के प्रति अनवरत और सघन सजगता को बनाए रखिये।

यही अन्तर्त्राटक है, जिसमें आन्तरिक बिन्दु पर मन को एकाग्र करते हैं।

*हरि ॐ तत्सत्*

## कक्षा-प्रतिलेखन

### अन्तर्त्राटक

**प्रथम चरण – तैयारी**

ध्यान के किसी आसन में बैठ कर अपनी शरीरिक स्थिति को व्यवस्थित कर लीजिए और इसके अतिरिक्त सबकुछ भूल जाइये।

किसी प्रकार की शारीरिक हलचल मत कीजिये।

ॐ...(साथ-साथ उच्चारण करते हुए।)

ॐ का उच्चारण करते हुए ऐसा अनुभव कीजिये कि इसकी ध्वनि तरंगें आपके सम्पूर्ण अस्तित्व में व्याप्त हो गई हैं। ॐ... ॐ...(दो बार साथ-साथ उच्चारण करते हुए।)

जब आप ॐ का उच्चारण करें तो यह अनुभव करें कि इसकी ध्वनि आपके मुँह से नहीं निकल रही है, बल्कि इसकी ध्वनि-तरंगें आपके सम्पूर्ण अस्तित्व में व्याप्त हो रही हैं। मानो आप ही अपने को उनमें विलीन कर रहे हैं।

ॐ... ॐ... ॐ... ॐ... ॐ... (एक साथ उच्चारण करते हुए।)

अपने शरीर के प्रति सजग हो जाइये।

शरीर को स्थिर रखिये।

अपने भौतिक शरीर का ध्यान कीजिये, ताकि आप अपने शरीर को स्थिर रख सकें।

**द्वितीय चरण – भ्रूमध्य की सजगता**

चिदाकाश के प्रति सजग बनिये।

भ्रूमध्य केन्द्र का ध्यान कीजिये, चाहे बाह्य रूप से या आन्तिरिक रूप से।

अगर आप भ्रूमध्य केन्द्र का अनुभव नहीं कर पाते हैं तो इसका अनुभव करने के लिए अपनी अंगुली से अपनी थूक का टीका इस बिन्दु पर लगाइये तथा इस बिन्दु पर ध्यान केन्द्रित कीजिए।

**तृतीय चरण – अन्तर्दर्शन**

***तारा*** – एक छोटे तारे का मानस-दर्शन या कल्पना कीजिए।

कभी-कभी वर्षा ऋतु में सारा आकाश बादलों से घिरा रहता है, लेकिन किसी स्थान विशेष में कोई एक तारा चमकता रहता है।

इसी तरह के तारे का मानस-दर्शन या कल्पना आपको करनी है।

आप उस बीज तारे का भी मानस-दर्शन कर सकते हैं जिसे आपने त्राटक

के अभ्यास के पश्चात् देखा था।

एक तारे का मानस-दर्शन अथवा कल्पना कीजिये।

यदि यह सम्भव न हो तो इस छोटे से प्रकाश-पुँज का मानस-दर्शन अथवा कल्पना करने का प्रयास कीजिए।

इस छोटे से आंतरिक बिन्दु का मानस-दर्शन अथवा कल्पना कीजिए।

***मोमबत्ती की लौ–*** अन्तर्त्राटक का अभ्यास कीजिये।

मानसिक रूप से त्राटक स्टैंड को अपने सामने रखिये।

इसके प्रत्येक भाग का सूक्ष्मता से मानस-दर्शन कीजिए।

मानसिक रूप से इस पर मोमबत्ती रखिये।

मोमबत्ती सफेद रंग की है।

अपनी कल्पना में मोमबत्ती की लौ और वर्तिका के ऊपरी प्रदीप्त बिन्दु को सम्मिलित कीजिये।

इस हॉल में त्राटक का अभ्यास करते हुए प्रत्येक व्यक्ति का मानस-दर्शन कीजिये।

आप भी त्राटक का अभ्यास कर रहे हैं। स्टैंड आपके सामने है।

इसके प्रत्येक भाग का मानस-दर्शन अथवा कल्पना कीजिये।

इसके ऊपर मोमबत्ती रखिये और मोमबत्ती की लौ को देखिये, प्रदीप्त वर्तिका के ऊपरी बिन्दु को देखिये।

लौ को देखिए, लौ सुनहली है।

यह झिलमिला रही है।

अपनी ही मोमबत्ती के प्रति नहीं, बल्कि जितने लोग त्राटक का अभ्यास कर रहे हैं, उन सभी की मोमबत्तियों के प्रति सजग बनिये।

अन्तर्त्राटक का अभ्यास कीजिये।

स्टैंड, मोमबत्ती, जलती हुई वर्तिका का ऊपरी बिन्दु, लौ तथा दोनों भौहों के मध्य एक छोटे से तारे का मानस-दर्शन कीजिये।

अन्तर्त्राटक की प्रक्रिया की सजगता।

***शिवलिंग–*** अपना ध्यान दोनों भौंहों के बीच के बिन्दु पर एकाग्र कीजिए।

शिवलिंग, एक अण्डाकार सफेद पत्थर, अण्डाकार सफेद सपाट आकार का मानसिक दर्शन कीजिये, जो आपकी सूक्ष्म चेतना का प्रतीक है।

शिवलिंग के दर्शन को विकसित करिये, यह आपकी सूक्ष्म चेतना का प्रतीक है।

***मानव चक्षु–*** दोनों भौहों के बीच के बिन्दु का ध्यान कीजिये तथा दबाव बिन्दु के प्रति सजग होइये।
मानव चक्षु के दृश्य को विकसित कीजिये।
सजीव मानव चक्षु, खुला हुआ नेत्र।
मानव चक्षु का उसके सम्पूर्ण विवरण के साथ अवलोकन कीजिये।
द्युतिमान् मानव चक्षु।

***तीसरी आँख–*** दोनों भौंहों के बीच में, भ्रूमध्य के थोड़ा पीछे मन को एकाग्र कीजिए।
गुलाबी रंग की एक छोटी-सी ग्रन्थि की कल्पना कीजिये।
यह एक मांसल अंग है, जो बन्द आँख के सदृश है। आँख खुली नहीं है।
उस आँख को खोलने का सूक्ष्म, अतीन्द्रिय प्रयास कीजिये।
यह भ्रूमध्य के ठीक पीछे अवस्थित है।
आँख के सदृश, लेकिन बन्द आँख।
लहसुन की छोटी कली के सदृश है।
इसे खोलने के लिए आप सूक्ष्म, अतीन्द्रिय प्रयास कर रहे हैं।
भ्रूमध्य के पीछे तीसरी आँख का ध्यान कीजिये।
एक मानसिक सूक्ष्म क्रिया कीजिये, मानो आप इस आँख को खोलने का भरसक प्रयत्न कर रहे हैं।
आप खोलने का प्रयास करते जाइये पर उसके बारे में अधिक सोचिये मत।
अपने खोलने के प्रयास को जारी रखिए।
दोनों भौहों के बीच के बिन्दु पर अपना ध्यान केन्द्रित कीजिये।
वहाँ एक छोटा-सा तारा है।
उस जगह पर एक छोटे से तारे का विचार या उसके बिम्ब को अध्यारोपित कीजिये।
मानव-चक्षु के दृश्य को विकसित कीजिए।
खुले हुए मानव-चक्षु का मानस-दर्शन कीजिए।
दोनों भौंहों के मध्य थोड़ी गहराई में, तीसरी आँख है।
तीसरी आँख के अवलोकन को विकसित कीजिए, यह एक मांसल अंग की तरह है, जो बन्द आँख के सदृश है, इसे खोलने का प्रयास कीजिए।

***स्फटिक का दाना–*** दोनों भौहों के बीच के बिन्दु पर अपना ध्यान केन्द्रित कीजिये।

अपने सामने एक स्फटिक के दाने का मानस-दर्शन कीजिये, मानो आप इस पर त्राटक का अभ्यास कर रहे हों।

स्फटिक की गहराई में देखने का प्रयत्न कीजिये।

अपनी रुचि के किसी प्रतीक का मानस-दर्शन कीजिये।

अपने इष्टदेव के प्रतिबिम्ब को उभारने का प्रयास कीजिये।

यह महत्त्वपूर्ण क्रिया है। इसे करते जाइये।

अन्तर्त्राटक के लिए प्रतिबिम्ब को उभारिये।

**मोमबत्ती की लौ –** याद कीजिये, जब आप प्रात: चार बजे हॉल में त्राटक का अभ्यास कर रहे थे, अपने साथ यह अभ्यास कर रहे सभी लोगों को याद कीजिए।

आपने त्राटक स्टैण्ड को किस प्रकार रखा था?

उस पर मोमबत्ती किस प्रकार रखीं थी? क्या वह जल रही थी?

मोमबत्ती की लौ को याद कीजिए, मोमबत्ती की सुनहली लौ, प्रदीप्त वर्तिका का ऊपरी बिन्दु, जिस पर आपने त्राटक का अभ्यास किया था।

अन्तर्त्राटक के समांगी प्रतिबिम्ब को विकसित कीजिये।

इस हॉल में बहुत सी मोमबत्तियाँ जल रही हैं। आपके सामने अनेकोनेक मोमबत्तियाँ जल रही हैं और आप उन्हें देख रहे हैं।

आप मोमबत्ती, उसकी लौ और वर्तिका को सूक्ष्मता से देख रहे हैं।

फिर अन्तर्त्राटक के प्रतिबिम्ब को विकसित कीजिये।

प्रात: चार बजे का समय याद कीजिए।

उस समय आप आये और आसन पर त्राटक स्टैण्ड के सामने बैठ गये।

आपके सामने स्टैण्ड पर मोमबत्ती रखीं गई थी।

उसे जलाकर फिर उसके द्वारा दूसरी मोमबत्ती को जलाया, एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति की।

कुछ देर बाद, पूरे हाल में अनेकानेक मोमबत्तियाँ और अनेकानेक त्राटक अभ्यासार्थी।

प्रत्येक मोमबत्ती एक-एक स्टैण्ड पर रखीं हुई है।

आपके सम्मुख सुनहले रंग की प्रदीप्त वर्तिका का ऊपरी बिन्दु है।

आपके दाहिने-बायें और पीछे अनेकानेक मोमबत्तियाँ हैं और बहुत से लोग स्थिर बैठे हुए खुली आँखों से त्राटक का अभ्यास कर रहे हैं, फिर वे अपनी आँखें बन्द कर लेते हैं।

जब उनकी आँखें बन्द थीं तब वे एक छोटा-सा तारा देख रहे थे।
इस दृश्य की स्मृति को उभारने का प्रयास कीजिए।
मोमबत्ती और लौ, मोमबत्ती और लौ।
दोनों भौंहों के मध्य के बिन्दु का ध्यान कीजिये, और अपने सामने एक स्फटिक का मानस-दर्शन कीजिये।
गहराई में उतरिये।
इसमें अपने इष्ट देवता का ध्यान कीजिये।
यह एक महत्त्वपूर्ण क्रिया है।

***द्रष्टा–*** अपने अस्तित्व की सम्पूर्ण सत्ता का ध्यान कीजिये, जो 'मैं' का प्रतिनिधित्व करती है।
केवल शरीर नहीं, केवल विचार नहीं, बल्कि सम्पूर्ण 'मैं', जो आपकी आत्म-सजगता है।
इस 'मैं' का ध्यान कीजिए जो वर्षों से अपरिवर्तित रहा है और जो भविष्य में भी अपरिवर्तित रहेगा।
शरीर का द्रष्टा 'मैं'।
विचारों का द्रष्टा 'मैं'।
आंतरिक और बाह्य सभी वस्तुओं का द्रष्टा 'मैं'।
'मैं' की समांगी धारणा।
इसे अपने ढंग से, अपने क्रम विकास के अनुकूल कीजिए।
जब आप 'मैं' की समांगी सजगता विकसित कर लेते हैं तब सभी चीजें इसके साथ एकाकार हो जाती हैं।
इससे कुछ भी भिन्न नहीं है।
हर चीज इसमें समायी हुई है।
'मैं' की समांगी धारणा।
आत्म-सजगता का विकास कीजिए, प्रत्येक वस्तु में 'मैं' हूँ।
अपनी सम्पूर्ण चेतना को इस 'मैं' की सजगता से युक्त कर दीजिए।
अपने प्रति सजग बनिए।
अपने सम्पूर्ण अस्तित्व के प्रति सजग बनिये। अपने सम्पूर्ण अस्तित्व के प्रति सजग बनिये। अपने सम्पूर्ण अस्तित्व के प्रति सजग बनिये।
अपनी सजगता के प्रति सजग बनिए।
प्रत्येक वस्तु के प्रति सजगता।

आपके अंदर की प्रत्येक वस्तु के प्रति सजगता के प्रति सजग बनिये।
ॐ... ॐ... ॐ... ॐ... (साथ-साथ इसका उच्चारण करते हुए)
विश्राम नहीं करें।
अपने से पूछिये, 'मैं कौन हूँ?'
इस प्रश्न का अर्थ समझते हुए भाव और सजगता के साथ दुहराइये। 'मैं' कौन हूँ?
'मैं' के बोध से ही प्रत्येक वस्तु को, यहाँ तक कि स्वयं को भी जाना जाता है।
मैं जानता हूँ कि 'मैं हूँ'।
केवल मेरा अस्तित्व हो ऐसी बात नहीं है, बल्कि मैं जानता हूँ कि मेरा अस्तित्व है।
यह 'मैं' शरीर को जानता है।
मैं जानता हूँ कि मेरा शरीर है। मैं इसका अनुभव करता हूँ।
मैं अपने शरीर का अनुभव करता हूँ। मैं इसे देखता हूँ। मैं इसका अनुभव करता हूँ। मैं जानता हूँ कि मेरा शरीर है।
मुझे याद है कि पिछले कई वर्षों से मेरे पास यह शरीर है और मुझे पता है कि मेरा यह शरीर है।
मैं सिर्फ सोचता नहीं हूँ, बल्कि यह जानता भी हूँ कि मैं सोचता हूँ।
मैं सोचने की प्रक्रिया के प्रति सजग हूँ।
मैं अपने विचारों का द्रष्टा हूँ।
मैं अपने भूतकाल के प्रति सजग हूँ।
मैं अपने सम्पूर्ण अस्तित्व के प्रति सजग हूँ।
मैं अपना द्रष्टा हूँ।
अपने में इस सजगता के प्रति व्यावहारिक रूप से सजग हो जाइए।
अपने में इस सजगता के द्वारा ही आप जानते हैं कि आप हैं, आपका अस्तित्व है।
अपने क्रम-विकास के अनुकूल इसका अभ्यास अपने ढंग से कीजिए।
सजगता पर ध्यान कीजिए।
सजगता की प्रक्रिया पर ध्यान कीजिये
ॐ... ॐ... ॐ...(एक साथ उच्चारण करते हुए)
विश्राम नहीं।
किसी भी हालत में शरीर को नहीं हिलाइये।

अपने को द्रष्टा समझिए।
अपने द्रष्टा स्वरूप का ध्यान कीजिये और अपने शरीर के द्रष्टा के रूप में अपना ध्यान कीजिये।
हाँ! मैं शरीर के प्रति सजग हूँ। मैं शरीर को देख रहा हूँ।
इसी तरह द्रष्टा और दृश्य की इस द्वैत सजगता को विकसित करते जाइये।
द्रष्टा, जो अमूर्त है, और दृश्य, एक पार्थिव भौतिक शरीर है।
शरीर को देखते जाइये।
अन्त:करण में आइये और देखने की प्रक्रिया के प्रति, एक मन:शक्ति जो शरीर के प्रति सजग थी, उसके प्रति सजग बनिये।
पुनः अंतर्मुख होइये और उस दूसरे द्रष्टा को देखने की चेष्टा कीजिये जो आपके शरीर को साक्षी के रूप में देख रहा है, जो शरीर दर्शन की पूरी प्रक्रिया के प्रति सजग है।
इसे दुहराइये, अपने आप, एक मिनट के अन्दर। इसे जल्दी से पूरा कीजिये।
शरीर के प्रति सजगता। द्रष्टा को देखिये। द्रष्टा को देखने वाले को भी देखिए।
अब इसे पुनः स्वयं कीजिये। शीघ्रता कीजिये।
अब एक साथ ॐकार का उच्चारण करेंगे।
ॐ...ॐ...ॐ...

*हरि ॐ तत्सत्*

# 21

# नाद योग

'नाद' का व्युत्पत्ति मूलक अर्थ है, चेतना का प्रवाह। इसका सामान्य अर्थ है, ध्वनि। ध्वनि के प्रकटीकरण के चार स्तर हैं, जिनसे नाद योग की तकनीक विकसित होती है। ये निम्नांकित हैं–

1. *परानाद*– इसे अतीन्द्रिय नाद कहते हैं। इसकी स्पंदन आवृत्ति इतनी अधिक होती है कि यह स्वर सीमा के परे चली जाती है, इसकी तरंगदैर्ध्य अनन्त होती है। उपनिषदों में इसे 'ॐ' कहा गया है, इसकी प्रकृति को ज्योति की संज्ञा दी गई है। 'ॐ' शान्ति है। ध्यान में प्रकाश और शान्ति एक ही हैं। 'ॐ' अनहद, सीमाहीन, निर्गुण है, जो इसे सामान्य ध्वनियों तथा स्वरों से भिन्न बनाता है तथा इसकी सहज-स्वाभाविक उत्पत्ति की ओर संकेत करता है। यह आंतरिक शान्ति का स्वर है, सभी स्वरों तथा ध्वनियों का मूल है, स्वरों की सम्भावना है। पैथागोरस के सिद्धान्त को मानने वाले ॐ को शून्य अथवा 'चि' का संगम मानते हैं। परा नाद समाधि से पूर्व की अंतिम स्थिति है।
2. *पश्यन्ति*– यह मानसिक नाद है जो ध्वनि की मानसिक अनुभूति है। स्वप्न में सुना हुआ संगीत या जिस ध्वनि या राग की याद बार-बार आए, वह यही है। यह ध्वनि कान की अपेक्षा मस्तिष्क के अधिक निकट है।
3. *मध्यमा*– परानाद तथा पश्यन्ति से कम तथा बैखरी से अधिक कम्पन-आवृत्ति वाली ध्वनि। यह अश्रव्य फुसफुसाहट की ध्वनि है।
4. *बैखरी*– दो वस्तुओं के घर्षण से उत्पन्न ध्वनि यथा वाणी, संगीत आदि।

नाद योगियों का यह विश्वास है कि यह ब्रह्माण्ड ध्वनि-कम्पनों का प्रक्षेपण मात्र है। यह मत वास्तविक अनुभवों पर आधारित है। भारतीय शास्त्र

में अंतिम अतीन्द्रिय ध्वनि परानाद ब्रह्माण्डीय नाद के समकक्ष है, अर्थात् परा ही ब्रह्म है। मुसलमान संतों ने भी ऐसा कहा है कि शब्द और रूप से ही संसार का उद्भव हुआ है। ईसाई धर्म ग्रन्थ बाईबिल में भी कहा गया है – 'प्रारम्भ में शब्द था, शब्द ईश्वर के साथ था, शब्द ईश्वर था।'

प्राचीनकाल में शास्त्रीय संगीत का विकास नादयोग साधनाओं के अनुरूप ही हुआ था। नाद की विभिन्न तरंगें चेतन सजगता के विभिन्न स्तरों को आकृष्ट करती हैं। कुछ नाद स्पंदन दिन के किसी विशेष काल के लिये अनुकूल होते हैं और कुछ प्रतिकूल। व्यक्ति-व्यक्ति पर भी इनके प्रभाव की भिन्नता होती है। संगीत में इन नाद स्पंदनों को राग तथा सुर-ताल कहते हैं। प्रात:कालीन भारतीय संगीत, जो प्राय: लघु स्पंदन वाले होते हैं, कुछ लोगों को तो बहुत अधिक पसंद आते हैं, और कुछ लोगों पर इनका कोई प्रभाव नहीं होता। संध्या या अर्द्धरात्रि के लिए उपयुक्त रागों की लोकप्रियता अधिक है। कई घंटों तक श्रवण करने पर ही संगीत के प्रभाव का अनुभव हो पाता है।

नाद योग अस्तित्व को पाँच क्षेत्रों में विभाजित करता है – भौतिक, प्राणिक, मानसिक, अधिमानसिक और आत्मिक या आनन्द। प्रत्येक क्षेत्र का नाद एक प्रतीक है, जो मन को चेतना की गहराइयों में ले जाता है। भौतिक शरीर का नाद हृदय, फेफड़े, मस्तिष्क, रक्तसंचार, चयापचय आदि की क्रियाओं में होने वाली कम्पन की ध्वनि है। जब भौतिक स्तर का अतिक्रमण होता है तब प्राणिक चेतना की गतिविधियों के सूक्ष्म स्वर सुनाई पड़ते हैं। नादयोगी सदा ही अपनी आंतरिक सत्ता में एक बिन्दु सदृश केन्द्र तक जाती हुई सूक्ष्मतर ध्वनियों के क्रमबद्ध प्रवाह का अनुभव करते हैं। भक्तों के लिये यह केन्द्र अनाहत चक्र में, वेदान्तियों के लिए सहस्त्रार में और योगियों के लिये आज्ञाचक्र में है। नाद योगी बिन्दु में एक नाद, अर्थात् अनवरत, सहज नीरव ध्वनि का अनुभव करते हैं।

भागवत में नाद योग को एक अन्योक्ति के रूप में इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है – कृष्ण अर्द्धरात्रि में अपना महल त्याग वन में चले गए। शरद पूर्णिमा की रात थी। वे बाँसुरी बजाने लगे। बंसी की ध्वनि शांत वातावरण में व्याप्त हो गई। संगीत की ध्वनि जंगल से उठी जिसे गोपियों ने सुना। बंसी की धुन सुनते ही उन्होंने अपने घर, पति, गृहकार्य सब छोड़ दिये। वे अपना विगत जीवन को ही भूल बैठीं। वे बिना कुछ सोचे उस स्थान को दौड़ पड़ीं जहाँ से ध्वनि आ रही थी। वे बंसी-वादक कृष्ण के चारों ओर नाचने लगीं।

कुछ समय बाद सभी गोपियों को ऐसा प्रतीत हुआ मानो वे एक-एक कृष्ण के साथ नृत्य कर रही हैं।

कृष्ण उच्चतर चेतना के प्रतीक हैं और उनका बाँसुरी-वादन है नाद साधना। गोपियाँ इन्द्रियाँ हैं, जो बाह्य परिस्थितियों, घर-गृहस्थी पति आदि को भूलकर अंतर्मुखीं हो जाती हैं और नाद बंसी-ध्वनि के चारों ओर नाचती हैं। बंसी का स्वर पश्यन्ति अवस्था की ध्वनि है जिसे सुना नहीं जाता, बल्कि उसकी आवृत्तियों का अनुभव किया जाता है।

कुछ लोग 'ॐ' को ही परम स्वर मानते हैं। कुछ लोगों का कहना है कि 'ॐ' का स्वर मधुमक्खियों की अनवरत गूँज की तरह है। नाद योग के अनुसार यह स्वर आनन्दमय कोश के पार से या चेतना के तीसरे आयाम से आता है। यह पूर्ण आनन्द की अवस्था है। यह वह अवस्था है जहाँ व्यक्ति उच्चतम चेतना का अनुभव नाद में करता है तथा सम्पूर्ण जगत् को ध्वनि के रूप में देखता है।

## नादयोग का अभ्यास

इस विधि में मन की गहराइयों तक ध्वनि के माध्यम से पहुँचा जाता है। योग विज्ञान तथा अनेकानेक धर्म तथा दर्शन इस बात को मानते हैं कि बाह्य व्यक्त जगत् का आधार शब्द ही है। विज्ञान भी इस बात से सहमत है कि इस ब्रह्माण्ड में सबकुछ स्पंदन तथा स्पंदित ऊर्जा की अनवरत क्रीड़ा मात्र है। ध्वनि, स्पंदनों के विभिन्न स्वरूपों के अतिरिक्त कुछ नहीं है। योग का यह भी विश्वास है कि मन और शरीर की विभिन्न स्थूल-सूक्ष्म सतहें ध्वनियों के असंख्य स्पंदनों के ही विभिन्न योग-संयोग से अभिव्यक्ति होती हैं। हम यह कह सकते हैं कि शरीर और मन ध्वनि के ही घनीभूत स्वरूप हैं।

यह अभ्यास साधक को उत्तरोत्तर सूक्ष्म होती हुई ध्वनियों से होते हुए एक ऐसे बिन्दु पर पहुँचाता है जहाँ सूक्ष्म तथा स्थूल, दोनों प्रकार की सभी ध्वनियाँ सुनाई पड़ती हैं। प्रत्याहार के लिये यह एक अत्युत्तम अभ्यास है। इससे ध्यान की स्थिति शीघ्र प्राप्त हो जाती है। जिस प्रकार संगीत मन की सूक्ष्म स्थितियों को उत्पन्न करता है, उसी प्रकार नाद भी यही कार्य करता है।

नाद योग साधना के प्रारम्भिक साधकों को अभ्यास के लिये एक शान्त परिवेश का चुनाव करना चाहिये। इससे बाह्य ध्वनियाँ आंतरिक ध्वनियों के प्रत्यक्ष ज्ञान में बाधक नहीं बनेंगी। गहरी रात्रि या भोर का पहला प्रहर इसके

लिए उपयुक्त होगा। जब साधक सूक्ष्म ध्वनियों को सरलता से पहचानने लगे तब नाद योग का अभ्यास किसी भी समय, कहीं भी और बिना कान बन्द किये हुए भी किया जा सकता है। इसके द्वारा महत्त्वपूर्ण अनुभव प्राप्त करने हेतु इसका अभ्यास प्रतिदिन करना चाहिए। प्रारम्भ में पन्द्रह मिनट या उससे कुछ अधिक इसके लिये दीजिए। जब कुछ अनुभव प्राप्त होने लगें, तब अपनी सुविधा के अनुसार इस समय को बढ़ा सकते हैं।

## नाद योग का प्रारम्भिक अभ्यास

### प्रथम चरण – तैयारी

नादानुसन्धान आसन में बैठिये और आँखें बन्द कर लीजिये।
मेरुदण्ड और सिर को सीधा रखिए और कानों को अँगूठों से बन्द कर लीजिए।
पूरे शरीर और मन को शिथिल कीजिये।
अब आप पूर्ण रूप से शान्त हैं।
इस समय आप केवल ध्यान का अभ्यास करने की बात सोच रहे हैं।

### द्वितीय चरण – गुंजन ध्वनि

गहरी श्वास अन्दर लीजिये और श्वास छोड़ते हुए गुंजन-ध्वनि निकालिये।
ऊपर और नीचे के दाँतों को एक-दूसरे से थोड़ा दूर रखिये और मुँह बन्द रखिये।
मधुमक्खीं के गुंजन की तरह आपका गुंजन होना चाहिये।
अनुभव कीजिए कि ये ध्वनि स्पंदन आपके कंठ से उत्पन्न होकर पूरे सिर में व्याप्त हो रहे हैं।
लगभग तीस सैकण्ड तक यह अनुभव कीजिये।
पाँच मिनट तक गुंजन-ध्वनि करते रहिए।
अपने सम्पूर्ण ध्यान को ध्वनि स्पंदनों पर ही लगा रहने दीजिए।

### तृतीय चरण – सूक्ष्म आन्तरिक ध्वनियों को सुनना

अब गुंजन-ध्वनि बन्द कीजिए।
अब इस ध्वनि की सूक्ष्म अभिव्यक्तियों को सुनने का प्रयास कीजिये। किसी एक ध्वनि को पकड़ लीजिए।
इसे सुनते जाइए।
आप देखेंगे कि वह एक ध्वनि स्पष्ट से स्पष्टतर होती जा रही है, इसकी तीव्रता और शुद्धता का अनुभव कीजिए।
केवल इसी ध्वनि पर ध्यान केन्द्रित कीजिए, सावधानी से इस ध्वनि को सुनिये।

यदि आपकी श्रवण-क्रिया अति संवेदनशील है तो आपको पृष्ठभूमि में दूसरी ध्वनि सुनाई पड़ेगी।
यह दूसरी ध्वनि धीमी हो सकती है, परन्तु इसका अनुभव स्पष्ट होगा।
अब पहली ध्वनि पर से ध्यान हटाकर, इस दूसरी ध्वनि पर ध्यान केन्द्रित कीजिए।
पहली ध्वनि से आगे निकलकर अब दूसरी ध्वनि को अपनी पूरी सजगता के साथ अनुभव कीजिये।
ऐसा करते जाइये।
अभ्यास के साथ, और यदि आपकी श्रवण-क्रिया संवेदनशील है तो अब आप एक तीसरी ध्वनि उभरती हुई अनुभव करेंगे।
यह तीसरी ध्वनि दूसरी ध्वनि की अपेक्षा धीमी होगी।
अब अपनी सजगता को इस नई ध्वनि पर केन्द्रित कीजिए।
अब पूरा ध्यान इस नई ध्वनि पर लगाइये।
ऐसा करते जाइये।
एक ध्वनि का अनुभव कीजिये। जब उस ध्वनि से सूक्ष्म अन्य ध्वनि सुनाई दे जाए, तो उस नयी ध्वनि पर अपना ध्यान केन्द्रित कीजिए।
जितना ही सूक्ष्म ध्वनि का अनुभव आप करेंगे, उतना ही मन की गहराइयों तक पहुँचेंगे।
इस अभ्यास को करते-करते आप 'ध्यान' की अवस्था तक पहुँच जाएँगे।
यदि प्रारम्भ में आप किसी सूक्ष्म ध्वनि का अनुभव न कर सकें तो निराश न होइये। अभ्यास करते रहेंगे तो निश्चय ही आपको सफलता मिलेगी।
पहले आप बाह्य ध्वनियों से आगे जाना सीखिये, फिर धीरे-धीरे सूक्ष्म और सूक्ष्मतर ध्वनियों से भी।
सुनाई पड़ने वाली ध्वनियाँ किस प्रकार की होंगी, इसका पता साधक को ही हो सकता है। परन्तु वे ध्वनियाँ घंटी, वीणा, चिड़िया आदि की ध्वनियों की तरह हो सकती हैं।
यह अपने अन्तरमन के अनुभवों को प्रकट करने का एक सहज, किन्तु सशक्त तरीका है।

**चतुर्थ चरण – अभ्यास की समाप्ति**

अब धीरे-धीरे अपनी चेतना को बहिर्मुखी बनाइये।
अपने शरीर तथा वातावरण के प्रति सजग बनिये।
अभ्यास अब समाप्त हुआ।

## कक्षा-प्रतिलेखन

**प्रथम चरण – तैयारी**

ध्यान के किसी सुविधाजनक आसन में बैठ जाइये, सिर और मेरुदण्ड सीधा, आँखें बन्द।

आँखें बन्द किये हुए मेरुदण्ड में उज्जायी का अभ्यास कीजिये।

सब कुछ भूल जाइये। मेरुदण्ड में उज्जायी श्वास लीजिये और छोड़िये।

अधिकाधिक एकाग्रता के साथ उज्जायी का अभ्यास करते जाइए।

**द्वितीय चरण – भ्रामरी प्राणायाम**

अब आप अपनी तर्जनी या अँगूठों से सुविधानुसार कुछ समय के लिये कान बन्द कर लीजिए।

मेरुदण्ड में नीचे से ऊपर उज्जायी श्वास लीजिये, और श्वास छोड़ते समय मधुमक्खीं की तरह लगातार गुंजन कीजिये – हममम्।

इस गुंजन के स्वर के साथ, पृष्ठभूमि में एक लय में मानसिक रूप से ॐ ...ॐ... ॐ... का उच्चारण कीजिये।

यदि आपके हाथ थक गये हों तो कुछ देर के लिये हाथों को घुटनों पर रख सकते हैं। कान खुले रहें तो भी अभ्यास जारी रखिये।

मेरुदण्ड में उज्जायी श्वास लेनी और कान बन्द करके गुंजन ध्वनि के साथ श्वास छोड़नी है, इस गुजंन ध्वनि के साथ ॐ...ॐ...ॐ... के मानसिक जप या अपने मंत्र को जोड़ दीजिए।

ॐ का उच्चारण मानसिक रूप से तथा एक लय में कीजिए।

यदि आपका अपना कोई मंत्र है तो ॐ के बदले उसका उच्चारण कर सकते हैं।

**तृतीय चरण – आन्तरिक सूक्ष्म ध्वनि को सुनना**

अब मंत्रोच्चारण तथा गुंजन ध्वनि बन्द कर दीजिये। आँखें बन्द रखिये।

ध्यान लगाकर सुनिए। यदि कोई भी आन्तरिक या सूक्ष्म ध्वनि स्वत: सहज रूप से उभर रही हो तो उसे सुनने का प्रयास कीजिए। *(दीर्घ विराम)*

कुछ देर बाद, पहली ध्वनि की पृष्ठभूमि में आप दूसरी सूक्ष्म ध्वनि सुन सकते हैं। यह ध्वनि मुधुमक्खी की, मोटर की या समुद्र की हो सकती है। यह दूसरी ध्वनि चाहे जैसी हो, इस दूसरी ध्वनि पर ध्यान दीजिये और केवल इसी को सुनिये।

अब पहली ध्वनि पर से ध्यान हटा लीजिये, सिर्फ इस दूसरी नई आवाज को सुनिये। *(दीर्घ विराम)*

अब फिर एक नयी ध्वनि सुनाई देगी।
सम्भव है यह पहली ध्वनि हो जो लौट आई हो।
यह बिल्कुल नयी ध्वनि भी हो सकती है।
जो हो, हर नई उभरती हुई ध्वनि पर अपना ध्यान केन्द्रित करते जाइए।
इस नयी ध्वनि को सुनते जाइये।
हर बार जब नयी ध्वनि सुनाई दे तो उस पर ध्यान दीजिये। *(दीर्घ विराम)*
इस प्रक्रिया को पाँच मिनट तक करते जाइए।
प्रत्येक नयी ध्वनि के साथ तादात्म्य स्थापित करते जाइए।

**चतुर्थ चरण – चिदाकाश की सजगता**

अब अपने हाथों को घुटने पर ले आइये।
शरीर स्थिर रखिये और आँखें बन्द।
इस विधि को नाद योग कहते हैं। यह स्नायविक उत्तेजना को कम करती है ताकि आप किसी भी चीज पर ध्यानस्थ हो सकते हैं।
आपको ललाट की भीतरी दीवार पर ध्यानस्थ होना है।
आप जिस प्रतिमा पर ध्यानस्थ होना चाहें, उसे अपने ललाट की भीतरी दीवार पर अंकित कीजिए, मानो ललाट की वह दीवार श्यामपट हो और आप उस पर उस प्रतिमा का चित्र खींच रहे हों।
प्रतिमा का मानसिक चित्रण कीजिये, और एक ही प्रतिमा पर ध्यानस्थ होइये।
तीन मिनट के लिए इसका अभ्यास कीजिए, बिना किसी तनाव या श्रम के, केवल गहन एकाग्रता हो।

**पंचम चरण – अभ्यास की समाप्ति**

अब अभ्यास समाप्त करने के लिए तैयार हो जाइए।
अपनी चेतना को पुनः अपने भौतिक शरीर पर ले आइये।
अपनी चेतना को धीमी और एक सम गति से प्रवाहित श्वास पर ले आइये।
अपने सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजग बनिये जो जमीन पर बैठा हुआ है।
अपने भौतिक शरीर में किसी भी प्रकार के संवेदनाओं के प्रति सजग बनिये।
बाह्य वातावरण के ध्वनियों को सुनिये।
अभ्यास अब समाप्त हुआ।

*हरि ॐ तत्सत्*

# 22

# निराकार ध्यान

ध्यान किसी भी वस्तु का किया जा सकता है। इसकी कोई सीमा नहीं है। ध्यान पद्धति को समझने के लिए नीचे कुछ उदाहरण दिये जा रहे हैं। इनका अभ्यास करने के पूर्व इन्हें सावधानी से पढ़ें। पहले इन वाक्यों की गहराई को समझने का प्रयास करें, इनमें निहित गूढ़ अर्थ एवं संदेश को समझें, फिर इस समझ के साथ इनके अर्थ को अनुभूत करने का प्रयास करें। पाठक को अपनी स्वाभाविक आंतरिक रुचि के अनुरूप ध्यान-विधि चुनने का प्रयास करना होगा, जो उसके आन्तरिक भावों के अनुरूप हो। यह अच्छा होगा कि वे विभिन्न ध्यान-विधियों का अध्ययन करके अपने लिए एक या विभिन्न विधियों का मिला-जुला रूप तय कर लें तथा आवश्यकतानुसार उसमें अपने विचार जोड़ लें ताकि वह उनके लिए बिल्कुल अनुकूल बन सके।

**प्राणधारा (रवीन्द्रनाथ ठाकुर)**
मेरी नस-नस में अहर्निश प्रवाहित होने वाली
प्राणधारा
वही तो है
जो संसार के एक छोर से दूसरे छोर तक
थिरक-थिरक कर नाच रही है।
इस धरा के प्रत्येक धूलि-कण में,
प्रत्येक तिनके में,
एक-एक फूल और पत्ती में,

जन्म-मरण के पालनोदधि में,
ज्वार-भाटा सदृश जीवन के उतार-चढ़ावों में,
मेरा ही प्राण तो है।
मेरे अंग-प्रत्यंग
इस सर्वव्यापी प्राण के स्पन्दन से
गौरवान्वित हो रहे हैं।
युगों-युगों से प्रवाहित प्राणों के स्पन्दन की यह धारा
मेरे रक्त के साथ मिल कर
प्रसन्न हो नृत्य कर रही है।

**आनन्दोदधि**

तुष्ट हूँ मैं, मुस्कुराता हूँ,
क्योंकि, सुर, रंग, भाव,
जिन्हें सुन-देख पाता हूँ
अपने कानों से,
अपनी आँखों से,
जिन्हें अनुभव कर पाता हूँ,
अपने हृदय से,
तब भी रहेंगे
जब मेरी आँखें, कान, हृदय,
सब नष्ट हो जायेंगे।

**सम्पूर्ण प्रकृति के साथ**

चन्द्रमा को देखो
कितना ज्योतित, कितना शान्त, कितना सुकोमल!
इसके अनगिनत प्रकाश-कण
तुम्हारे शरीर का आलिंगन कर रहे हैं,
इसका अनुभव करो।
पर्वतों पर जाओ, गाँवों में जाओ।
प्रकृति के साथ अपने को सुमेलित करो।
शान्त हो जाओ।

अनुभव करो कि तुम, प्रत्येक वस्तु के एक अंग हो।
सांसारिक प्रपंचों को भूल कर, अपने को तनावमुक्त करो।
प्रकृति और अपने बीच के सुमेल को,
सामंजस्य को अनुभव करो।
यह भी अनुभव करो
कि एक असीमित शक्ति ने तुम्हें आवृत्त कर लिया है।
अपने को, अपनी चिन्ताओं को
इस शक्ति में तिरोहत कर दो।
यही तुम्हारी प्रेरणा का स्रोत है
यही जीवन है।
यही अस्तित्व है।
तुम और 'वह' एक ही तो हो।

**पूर्ण एकात्मता (विलियम ब्लैक)**

धूल के एक-एक कण में दर्शन करो ब्रह्माण्ड का।
जंगल के हर फूल में देखो स्वर्ग को।
तुम्हारी मुट्ठी में बन्द है अनन्तता;
और मात्र एक क्षण में समाहित है शाश्वतत्व।

**जीवन स्पन्दन**

हृदय के स्पन्दनों का अनुभव करो,
तुम्हारे शरीर की धमनी-शिराओं को
यही तो अनुप्राणित कर रहे हैं।
और यही तो शरीर के प्रत्येक कोश को,
जीवन-ऊर्जा प्रदान कर रहे हैं।
लेकिन यह हृदय तो सब में,
चाहे वह भारतीय हो, मंगोलियन हो, अंग्रेज हो,
एक ही सा है
जीवन का स्पन्दन भी सब में एक-जैसा है।
पशुओं के बारे में सोचो।
उनके हृदय तुम्हारे हृदय से थोड़े ही भिन्न हैं।

जीवन का स्पन्द, जो तुम्हारे शरीर में है,
उनके शरीर में भी है, तुम्हारा जीवन,
समस्त जीव-जन्तुओं का जीवन
उसी प्राण-ऊर्जा के प्रकटीकरण हैं,
जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त है।

**सत्ता का सार**

प्रत्येक वस्तु एक दैवी ऊर्जा है,
जो सर्वव्यापी, असीमित, कम्पायमान और सतत् गतिशील है।
सम्पूर्ण शरीर विश्व के साथ सुमेलित होकर प्रदोलित होता है।
पूरे विश्व से सुमेलित रहता है।
असीमित ऊर्जा, प्रकाश ऊर्जा, जीव ऊर्जा,
विद्युत, स्वर, के उदधि में डुबकी लगाओ।
नीरवता, शान्ति और कालातीतत्व की लहरों के साथ बहो।
सभी कुछ ऊर्जा है।

**श्रेणियाँ (चुआंग त्से)**

मान लें एक वक्तव्य है।
पता नहीं , यह किस कोटि में आयेगा।
पर यदि हम विभिन्न कोटियों को एक में मिला दें,
कोटियों का विभेद तब समाप्त हो जाता है।
अर्थात्, यदि कोई आदि है,
तब उस आदि से पूर्व भी कोई काल था।
इतना ही नहीं , उस काल से भी पूर्व कोई काल था।
यदि कोई सत्ता है,
तब सत्ता-विहीनता भी रही होगी।
और यदि कोई ऐसा समय था।
जब कोई सत्ता न थी,
तब वह समय भी रहा होगा,
जब असत्ता भी न रही हो।
सत्ता का होना आकस्मिक बात नहीं है।

क्या कोई बता सकता है
कि यह सत्ता की श्रेणी में आता है
अथवा असत्ता की?
ये शब्द भी, जो मैं लिख रहा हूँ,
पता नहीं ,
इनसे कोई अर्थ-बोध होता भी है कि नहीं ।

**मैं कौन हूँ**

पूछो अपने से, मैं कौन हूँ?
शरीर?
न-न, यह नहीं हो सकता।
अनवरत रूप से परिवर्तित हो रहा है यह।
पिछले वर्ष जो मेरा शरीर था वह इस वर्ष नहीं है।
जब बालक था मैं,
तब मेरा शरीर वह नहीं था, जो अब है।
मेरा शरीर लगातार परिवर्तित हो रहा है
यह मेरा आंतरिक स्वभाव नहीं है।
क्या मैं अपना मन हूँ?
नहीं , मेरा आंतरिक स्वभाव मन नहीं हो सकता।
क्योंकि यह भी लगातार बदल रहा है।
एक क्षण यह रुष्ट हो जाता है,
दूसरे क्षण तुष्ट हो जाता है।
मन:स्थितियाँ प्रतिक्षण बदलती रहती हैं।
मन भी मेरा वास्तविक स्वभाव नहीं हो सकता।
क्या मैं हिन्दू हूँ? या मुसलमान? या ईसाई?
नहीं ये तो अधूरा परिचय देते हैं मेरा।
इनको मेरे आंतरिक स्वभाव से कोई लेना-देना नहीं ।
सतत् अपने से यह प्रश्न पूछो।
कौन हूँ मैं?
मैं साक्षी हूँ।
वैश्व-दृश्य प्रपंचों का साक्षी।

मैं सत्ता हूँ, अपरिवर्तनीय सत्ता।
मैं चेतना हूँ, शुद्ध चेतना हूँ।
मैं अविनाशी हूँ।
मेरा स्वभाव है 'होना'।
मैं 'हूँ'।

**दैवी स्वरसंगति (इनायत खाँ)**

दृष्टि मेरी बहर्मुख जब भी हुई
स्वयं को लघु बूँद सा अनुभव किया
संसार पारावार में;
किन्तु अंतर्मुख हुआ जब
और अपने नेत्र मूँदे
यह अखिल ब्रह्माण्ड
मेरे हृद-जलधि में
बुलबुले-सा
उभर कर, उतरा गया।

**पूर्णता (ईशावास्योपनिषद्)**

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥

# 23

# विविध प्रकार के ध्यान

इस अध्याय के अन्तर्गत ध्यान को विभिन्न विधियों का मिला-जुला रूप दिया गया है। निम्नलिखित ध्यान की विधियाँ प्रत्याहार की अवस्था प्राप्त करने के लिए बहुत ही उपयोगी हैं। प्रत्येक विधि पुरोगामी यौगिक क्रियाओं पर बल देते हुए मन को जागरूकता के विशिष्ट स्तरों का अनुभव कराती है।

पाठक देखेंगे कि इस पुस्तक में दिये गये विविध अभ्यासों तथा कक्षा प्रतिलेखनों में विभिन्न साधना-विधियों को जोड़ दिया गया है, ताकि वे अपने अनुकूल उपयुक्त मिश्रित अभ्यासों का चुनाव कर सकें।

## मंत्र योग

### प्रथम अवस्था – तैयारी

ध्यान के किसी आरामदायक आसन में बैठ जाइए।
हाथ घुटने पर, चिन्मुद्रा अथवा ज्ञान मुद्रा में।
मेरुदण्ड सीधा रहे।
पूरे अभ्यास की अवधि में अपनी आँखें बन्द रखिये।
कोशिश कीजिये कि आपका शरीर स्थिर रहे।
यदि मन इधर-उधर भागे, विद्रोह करे, तब भी चिन्ता मत कीजिये।
ध्यान की यह पद्धति, विश्रान्ति की यह पद्धति मंत्र और जप पर आधारित है।
इस अभ्यास में आपको एक विशेष ध्वनि को मानसिक रूप से देखना है।
वह ध्वनि आपके मानसिक आयाम में गति का आधार बनेगी।
वह ध्वनि, शब्द या मंत्र आपकी चेतना का केन्द्र बनेगा।
यह केन्द्र भ्रूमध्य में स्थित है।

यह पद्धति सरल है, तनिक भी जटिल नहीं है, लेकिन इस अभ्यास में अध्यवसाय और धैर्य की आवश्यकता है।

मान लीजिये आप अपने लिए 'राम' मंत्र चुनते हैं, इसे आपको भ्रूमध्य में मानसिक रूप से लयबद्धता के साथ उत्पन्न करना है।

लय न तो बहुत द्रुत हो, न बहुत मन्द, इस लयबद्ध गति को कम-से-कम बीस मिनट तक चलना चाहिये।

इसके बाद भ्रूमध्य में आप इस गति को स्थगित कर सकते हैं और वहाँ स्वर के बदले एक कमरे की जागरूकता विकसित कर सकते हैं।

मान लीजिये कि वह ध्वनि 'राम' है, आपको भ्रूमध्य में बीस मिनट तक अनवरत, अविरल 'राम-राम-राम-राम' के मानस-स्पंदन का अनुभव करना होगा।

विभिन्न प्रकार के विचार बीच में बाधा पहुँचाने आयेंगे।

इसकी चिन्ता मत कीजिये।

इस बाधा पर कोई प्रतिक्रिया न होने दीजिये।

इस बीस मिनट की अवधि में, कभी-कभी ये विचार प्रबल हो उठेंगे।

तब फिर से मंत्र की लयबद्ध गति की सजगता इन विचारों से अधिक प्रबल हो जायेगी।

फिर विचार बाधा पहुँचायेंगे।

इसी तरह सारी प्रक्रिया चलती रहेगी।

और अगर बाधक विचार बीच में आ जायें, तो आपको तनिक भी चिन्ता नहीं करनी चाहिये और न कोई प्रतिक्रिया ही।

स्वर की लयबद्ध गति के साथ एक बने रहिये।

इसलिए, उदाहरणार्थ, हम एक लयबद्ध मंत्रोच्चारण करेंगे ताकि आपको यह बात स्पष्ट हो जाये।

**द्वितीय अवस्था – मन्त्र उच्चारण**

अब हम 'ॐ' का मंत्रोच्चारण करेंगे।

मैं गति और लय निश्चित कर दूँगा। आप सब मेरा अनुसरण करेंगे।

यह मंत्रोच्चारण सिर्फ उदाहरण के लिए है ताकि आप जान जाएँ कि किस प्रकार आपको मानसिक रूप से अभ्यास करना है।

बाह्य स्तर पर जिस प्रकार यह अभ्यास किया जा रहा है, इसी प्रकार आपको मानसिक स्तर पर अभ्यास करना है।

अन्तर यह है कि यहाँ हम समझाने के लिए स्वर उत्पन्न करते हैं और मंत्रों का उच्चारण करते हैं, जबकि वास्तविक अभ्यास में इस प्रकार का मंत्रोच्चारण नहीं होगा, सिर्फ मानसिक बोध और अनुभूति होगी।

और जब आप बीस मिनटों तक इसका अभ्यास करते हैं, तब चेतना बहुत हद तक केन्द्रित हो जाती है।

अब उस प्रतीक या रूप को लीजिये जिस पर आप ध्यानस्थ होने की चेष्टा कर रहे हैं।

अब, जब मैं 'ॐ ॐ ॐ' का मंत्रोच्चारण करूँ, तब आप मेरा अनुकरण कीजिए। मानसिक रूप से लय के साथ मंत्रोच्चारण शुरू कीजिए।

जिनका अपना मंत्र है, वे अपने मंत्र का प्रयोग कर सकते हैं।

जिनका अपना कोई मंत्र नहीं है वे 'ॐ' का प्रयोग कर सकते हैं।

अब लयबद्ध मन्त्रोच्चारण में मेरा अनुकरण कीजिये।

(ॐ, ॐ, ॐ का लयबद्ध उच्चारण पचास बार किया जायेगा।)

क्रमश: अपने मन को भ्रूमध्य में लाइये और मानसिक रूप से इसी तरह मंत्रोच्चारण कीजिये।

मंत्र का लयबद्ध अनवरत पाठ। मानसिक उपद्रवों की चिन्ता मत कीजिये। अपनी चेतना को भ्रूमध्य में केन्द्रित कीजिये।

हम लोग सिर्फ पाँच मिनटों तक अभ्यास करेंगे। इसलिए एकाग्रता से अभ्यास कीजिये।

(पाँच मिनट तक अभ्यास)

**तृतीय अवस्था – अभ्यास की समाप्ति**

मेरे साथ तीन बार ॐ का उच्चारण कीजिये। ॐ... ॐ...ॐ...।

अब अपने मन को तनावमुक्त करके बहिर्मुखी हो जाइये।

आसन बदलते हुए आँखें खोल लीजिये।

*हरि ॐ तत्सत्*

## उन्मनी क्रिया

### प्रथम अवस्था – तैयारी

किसी स्थिर आसन में बैठ जाइए। मेरुदण्ड तना हुआ, सीधा रहे।

हाथों को घुटनों पर रख लीजिए।

पहले हम कपालभाति प्राणायाम का अभ्यास करेंगे, जिसका सर्वप्रथम मैं प्रदर्शन करूँगा।

(कपालभाति प्राणायाम का प्रदर्शन)

इस प्रकार आपको एक सौ प्रश्वास पूरे करने हैं।

अपने प्रश्वास को इस प्रकार साधें कि आप बिना किसी कठिनाई के एक सौ आवृत्ति पूरी कर लें।

यदि अभ्यास के बीच में किसी कठिनाई का अनुभव हो तो आप निश्चित रूप से रुक जाइए।

सौवाँ प्रश्वास पूरा करने के बाद जालंधर बंध लगा लीजिए। हथेलियों से घुटनों में दबाव डालिये, कँधों को ऊपर करते हुए ठुड्डी को छाती से दबाये रखिये।

फिर उदर को संकुचित करते हुए उड्डियान बन्ध लगाइये, और इसके बाद मूलाधार या गर्भाशय ग्रीवा को संकुचित कर मूलबन्ध लगा लीजिए।

क्रमशः मूलबन्ध, उड्डियान बन्ध तथा जालंधर बंध खोल दीजिये और श्वास लीजिये।

जब कपालभाति का सौवाँ प्रश्वास अभ्यास इन तीन बन्धों के साथ पूरा हो जाता है, तत्पश्चात् आप चाहें तो अपना आसन बदल सकते हैं, लेकिन आपको अपनी आँखें नहीं खोलनी हैं।

(कक्षा में सब लोग एक सौ प्रश्वास और महाबन्ध का अभ्यास करते हैं)

**द्वितीय अवस्था – उज्जायी प्राणायाम एवं ॐ का उच्चारण**

मेरुदण्ड के सूक्ष्म पथ पर उज्जायी प्राणायाम का अभ्यास कीजिए। यह पथ मेरुदण्ड के निचले हिस्से से आरम्भ होकर ऊपर की ओर बढ़ता है, मूलाधार से आज्ञा चक्र तक।

अब श्वास अन्दर लेने की प्रक्रिया मेरुदण्ड में मूलाधार से आज्ञा चक्र तक के पथ में कीजिए।

श्वास छोड़ते समय आप ॐ की गुंजन-ध्वनि आज्ञा से मूलाधार तक करेंगे।

जब आप आज्ञा से मूलाधार में 'ॐ' का उच्चारण करते हैं तो 'ओ' लघु और 'म' दीर्घ होता है।

उच्चारण है ओममम्, ओऽऽऽम् नहीं ।

आज्ञा से 'ओ' स्वर आता है, और मूलाधार तक 'ममम्' स्वर चलता है।

मूलाधार से आज्ञा तक श्वास की चेतना।

आज्ञा से मूलाधार तक ॐ की चेतना है।
इस ॐ चेतना का तेरह बार अभ्यास कीजिए।
(कक्षा में सब लोग तेरह बार ॐ का उच्चारण करते हैं।)

**तृतीय अवस्था – श्वास के प्रति सजगता**

तेरह आवृत्तियाँ पूरी हो जाने पर, अपनी उज्जायी श्वास को जारी रखिये।
अपनी आँखें बन्द रखिये, लेकिन आप चाहें तो अपना आसन बदल सकते हैं।
स्थिर बैठने के बाद आप अपनी श्वसन क्रिया को मूलाधार से आज्ञा और आज्ञा से मूलाधार में जारी रख सकते हैं।
सावधानी से उज्जायी श्वास को उनचास बार गिनिये।
सावधानी से गिनते जाइये और श्वास को मेरुदण्ड में अनुभव कीजिए।
इसे श्वास की सजगता का अभ्यास कहते हैं।

**चौथी अवस्था – सोऽहम् की सजगता**

उनचास बार श्वास की सजगता का अभ्यास पूरा कर लेने के बाद, इसके साथ 'सो-हं' मंत्र मिलाएँ।
श्वास लेते समय मूलाधार से आज्ञा में 'सो' और श्वास छोड़ते समय आज्ञा से मूलाधार में 'हम्' मंत्र।
सावधानी से गिनिये।
इसका अभ्यास उनसठ बार होना चाहिये।
आप अभी जो कर रहे हैं और नया जो करना है उसमें सिर्फ मन्त्र का ही फर्क है।
उनसठ बार 'सो-हं' का अभ्यास करने के बाद आप चिदाकाश में जाइये और ललाट के भीतरी भाग में मन को केन्द्रित कीजिये।

**पाँचवीं अवस्था – अभ्यास की समाप्ति**

मेरे साथ तीन बार ॐ का उच्चारण कीजिये।
ॐ... ॐ... ॐ... (एक साथ)।
अपने शरीर को तनाव-मुक्त कीजिये।
अपना आसन बदल लीजिये।
आँखें खोल दीजिये।

*हरि ॐ तत्सत्*

## अचेतन ध्यान

### प्रथम अवस्था – तैयारी

ध्यान के किसी आसन में बैठ जाइये। मेरुदण्ड सीधा रखिये।
ध्यान शुरू करने से पूर्व पाँच से दस मिनट शान्त और स्थिर बैठ जाइये।
ध्यान का पहला नियम है कि बैठते ही कभी ध्यान शुरू न कर दें।
स्थिर हो जाइये। तुरन्त ध्यान शुरू करना आवश्यक नहीं है।
शारीरिक उत्तेजना को शान्त होने दीजिये। अपने विचारों पर ध्यान दीजिये।
इस बीच अपने आसन को व्यवस्थित कर लीजिये और अपने को सुविधाजनक स्थिति में ले आइये। लेकिन अपनी आँखें बन्द रखिये।

### द्वितीय अवस्था – विचारों के प्रति सजगता

अपने से पूछिये, 'मैं क्या सोच रहा हूँ?'
अपने विचारों को देखिये, अपने विचारों को रोकिये नहीं और न ही किसी विचार का दमन कीजिए, विचारों को आने दीजिये और उन्हें देखिये।
आप क्या सोच रहे हैं, यह जानने के लिए विशेष प्रयास कीजिये।
अपने आप से प्रश्न कीजिए, 'मैं इस समय क्या विचार कर रहा हूँ?'
प्रत्येक विचार को देखिये। विचारक नहीं , बल्कि साक्षी बनिये।
विचारों में खो न जाइये, बल्कि विचार-प्रक्रिया से अपने को अलग रखिये।
अपने विचारों के साथ तादात्म्य स्थापित मत कीजिये, सिर्फ अपने विचारों के तटस्थ द्रष्टा बने रहिये।
किसी विचार को घृणा की दृष्टि से मत देखिये और न उसे राग का विषय ही बनाइये। उसके पीछे भागिये नहीं। उसका दमन मत कीजिए। उससे बचने की कोशिश मत कीजिये। उसे आने दीजिये।
प्रत्येक विचार को पूरी सतर्कता से देखते जाइये, देखते जाइये, और अगर कोई विचार न हो तो उस अवस्था को भी देखिये।
अगर मानसिक बाधायें हों तो उन्हें भी दबाइये नहीं, उन्हें तटस्थ द्रष्टा की तरह देखने की कोशिश कीजिये।
विचार खुशी के हों या दु:ख के, उन्हें तटस्थ भाव से देखिये।
सभी विचारों को अपनी चेतना के सम्मुख अनावृत्त कर दीजिये।
अगर कोई विचार न हो, तो इस स्थिति के प्रति भी सजग बनिए।
अगर कोई चिन्ता हो तो उसे देखिये।
अगर बेचैनी हो, तो साक्षी बने रहने की कोशिश कीजिये।

अगर शान्ति हो, तो उसे जानिये।
उस शान्ति के साथ तादात्म्य मत स्थापित कीजिए। बेचैनी के साथ भी नहीं, दु:ख और चिन्ता के साथ भी नहीं ।
तटस्थ बनिये और कहिये, 'मैं सोचने वाला नहीं हूँ, मैं अपने विचारों का द्रष्टा हूँ, मैं श्रोता नहीं हूँ, मैं श्रवण-क्रिया का साक्षी हूँ।'
आप मेरे निर्देशों को सुन रहे हैं, इसके प्रति सजग होइये।
यदि बाहर से कोई ध्वनि बाधा पहुँचाये, तो उस पर कोई प्रतिक्रिया मत कीजिये।
उन बाधक ध्वनियों पर ध्यान दीजिए और उन्हें पराभूत करने की कोशिश कीजिये। अब उन विचारों के प्रति सजग बनिये जो बाधा पहुँचाते हों, उन विचारों पर ध्यान दीजिये और उन्हें पराभूत कीजिये। बुरे विचारों के प्रति ध्यान दीजिए और उन्हें भी पराभूत करने की कोशिश कीजिये।
विचार के हर पहलू पर ध्यान देकर उसे जीतने की कोशिश कीजिये।
किसी विचार का दमन नहीं कीजिये।
अगर मन में कोई विचार न उठें तो इस स्थिति को भी जानिये और कहिये, कोई विचार नहीं, सब शून्य है।
सब शून्य है, कोई विचार नहीं, सब शून्य है।
किसी विचार पर प्रतिक्रिया मत कीजिए, किसी बाह्य बाधा या बाह्य अनुभव पर प्रतिक्रिया मत कीजिए।
अपनी विचार प्रक्रिया को इस प्रकार देखने की कोशिश कीजिये जैसे आप टेलीविजन के पर्दे पर कुछ देख रहे हों।
पूरे समय सजग बने रहिये।
'मैं चिन्तक नहीं हूँ, मैं दर्शक हूँ।

**तृतीय अवस्था – मेरुदण्ड में ॐ का उच्चारण**

अब 'ॐ' का उच्चारण करना है।
उज्जायी में मेरुदण्ड के नीचे से ऊपर श्वास लीजिये, जोर से ॐ का उच्चारण करते हुए श्वास तथा चेतना को नीचे ले जाइए।
श्वास के साथ मेरुदण्ड के पथ में चेतना का आरोहण तथा प्रश्वास के समय ॐ मंत्र के उच्चारण के साथ चेतना का अवरोहण।
मेरुदण्ड से श्वास लीजिए और 'ॐ' का उच्चारण कीजिए।
ऐसा आठ बार कीजिए।

**चौथी अवस्था – मेरुदण्ड में श्वास के प्रति सजगता**

अब मेरुदण्ड में उज्जायी का अभ्यास।

श्वास-प्रश्वास के साथ मेरुदण्ड में सजगता का आरोहण तथा अवरोहण।

यह अनुभव करने का प्रयास कीजिए कि मेरुदण्ड में श्वास का परिसंचरण हो रहा है, वह नीचे से ऊपर जा रही है।

पूरी सजगता के साथ अनुभव कीजिए।

अपने स्वर को जितना धीमा तथा मन्द रख सकें, रखिए।

जो भी आवाज हो वह लोगों को सुनाई न पड़े।

इस तरह श्वास लीजिये और छोड़िए कि उसके स्वर केवल आपको स्पष्ट सुनायी पड़ें।

श्वास दीर्घ कीजिए, श्वास को गहरा बनाइये, श्वास को विरल और लम्बा बनाइए।

श्वास की अवधि और नीचे से ऊपर तक मेरुदण्ड की दूरी के बीच तालमेल होना चाहिये।

आपको श्वास की स्पष्ट अनुभूति होनी चाहिये।

आपमें यह क्षमता होनी चाहिये कि अपनी उज्जायी श्वास को सुन सकें।

यह श्वास ही जीवन है।

आपकी इच्छाशक्ति के द्वारा श्वास मेरुदण्ड में ऊपर-नीचे जाएगी।

आप श्वास के आधार पर ऊपर-नीचे जाएँगे।

अपनी चेतना को केवल मेरुदण्ड में श्वास के आधार पर ऊपर ले जाइये और नीचे ले आइये।

श्वास का अनुभव आपको होना चाहिये, इसे तनावरहित होना चाहिये, इसे दीर्घ होना चाहिए, इसका अनुभव मेरुदण्ड के अन्दर होना चाहिये।

यह एक पतली धारा है, यह स्वर का अत्यन्त सूक्ष्म तथा विरल प्रवाह है और इसका मेरुदण्ड में आरोहण-अवरोहण होता है।

इसका अनुभव कीजिए, नीचे से ऊपर, और ऊपर से नीचे।

चेतना ऊपर-नीचे जाती है, मेरुदण्ड एक मार्ग है और श्वास है आधार।

श्वास को सूक्ष्म और पवित्र होना चाहिये और दूसरों को इसका बोध नही होना चाहिये और पूरे समय श्वास के प्रति सजग बने रहिये।

श्वास-प्रश्वास की अनवरत सजगता, 'मैं श्वास को ऊपर चढ़ा रहा हूँ, मैं श्वास को नीचे उतार रहा हूँ।'

आपको लगातार सोचना है कि मेरुदण्ड एक मार्ग है, यह नीचे से आरम्भ होता है, और शीर्ष पर समाप्त होता है।

नीचे से शीर्ष तक आप श्वास ले रहे हैं, शीर्ष से नीचे तक आप श्वास छोड़ रहे हैं, श्वास जितनी ही सूक्ष्म होगी, अनुभूति उतनी ही गहरी होगी।

'मैं श्वास ले रहा हूँ, मैं श्वास ले रहा हूँ।'

इसी तरह प्रक्रिया जारी रखिये।

गहरी एकाग्रता, सिर्फ तीन मिनट के लिये।

अपनी चेतना को सब ओर से खींचकर मेरुदण्ड में ले आइये।

**पाँचवीं अवस्था – मेरुदण्ड में मंत्र के प्रति सजगता**

अब पूरक और रेचक के साथ मंत्र को मिला दीजिये।

यदि आपका कोई मंत्र नहीं है, तो 'सो-हं' मंत्र का प्रयोग कीजिये, श्वास के साथ 'सो' और प्रश्वास के साथ 'हं' को मिला दीजिये।

मेरुदण्ड एक मार्ग है, श्वास है आधार, और आपको मंत्र का साक्षात्कार करना है।

श्वसन क्रिया पर एकाग्र होइये, मंत्र पर एकाग्र होइये।

दो मिनट गहन एकाग्रता के साथ यह अभ्यास कीजिए।

**छठी अवस्था – आन्तरिक आकाश**

मेरुदण्ड और चारों ओर से अपने मन को समेट लीजिए और ललाट के अन्दर की तरफ मन को ले आइये।

अन्दर से ललाट की भीतरी दीवाल को देखने की कोशिश कीजिये, मानो ललाट का भीतरी भाग किसी कमरे के सामने की दीवाल हो। ललाट की भीतरी दीवाल को भीतर से देखिये। अपने मन को भीतर की ओर से सिर के सबसे ऊपरी भाग पर ले जाइये, मानो वह भाग एक कमरे की छत हो। इस भाग पर भीतर से एकाग्र होइये, यह भाग कमरे की छत है।

कमरे के भीतरी भाग को देखिये। सिर के भीतरी भाग से उसके ऊपर जाइये। अन्दर से छत की ओर देखिये, भीतर से सिर के इस ऊपरी हिस्से को देखिये। अपने मन को पीछे की ओर ले जाइये।

सिर के पिछले हिस्से को भीतर से देखने की कोशिश कीजिये, लघु मस्तिष्क की अंदरूनी दीवाल।

अब फिर ललाट की भीतरी दीवाल को देखिये,

ऊपरी हिस्से की छत, पीछे की ओर भीतरी दीवाल,

दाहिनी कनपटी की भीतरी दीवाल,
बायीं कनपटी की भीतरी दीवाल,
ललाट की भीतरी दीवाल,
सिर के सबसे ऊपरी भाग की छत, शीर्ष की छत,
पीछे की भीतरी दीवाल,
दाहिनी कनपटी की भीतरी दीवाल,
बायीं कनपटी की भीतरी दीवाल।
और अब फर्श को देखिये।
तब फिर सामने, शीर्ष, छत, दाहिनी दीवाल, बायीं दीवाल, मानो आप एक कमरे में हों।
अब कमरे की सभी दीवालों को देखिये।
सामने की दीवाल को ध्यान से देखिये, सिर के सबसे ऊपरी भाग की छत, शीर्ष की छत, दीवार का पिछला हिस्सा, दाहिनी दीवाल, बायीं दीवाल, फर्श, सामने, सिर का सबसे ऊपरी भाग, शीर्ष, दाहिने पीछे, दाहिने, बायें पीछे, बायें, नीचे, फर्श।
फिर सामने देखिये, सिर के सबसे ऊपरी भाग की छत, शीर्ष की छत, पीछे की दीवाल, दाहिनी दीवाल, बायीं दीवाल, पीछे का फर्श।
फर्श के पिछले हिस्से से मेरुदण्ड में नीचे की ओर जाने वाला एक छोटा सा मार्ग है। इसको देखिये। इससे होकर चेतना मेरुदण्ड में जाती है।
यह एक कमरा है, कमरे में फर्श है। पिछले हिस्से में नीचे की ओर एक छोटा-सा छिद्र है।
पुनः दुहराहये।
आप कमरे में हैं, सामने देखिये, ऊपरी छत, पिछला हिस्सा, दाहिनी दीवाल, बायीं दीवाल, नीचे का फर्श, पिछले हिस्से का छिद्र।

**सातवीं अवस्था – अभ्यास की समाप्ति**

बाह्य परिवेश के प्रति सजग हो जाइये।
अपनी आँखें खोलिये नहीं , लेकिन शारीरिक स्थिति बदल कर विश्रांति की अवस्था में आ जाइये।
अपने को पूरी तरह तनावरहित कर दीजिये, लेकिन सोइये नहीं ।
अभी भी आँखें मत खोलिये, लेकिन अपनी शारीरिक स्थिति को बदलना चाहें तो बदल सकते हैं।

अब याद कीजिये कि आपने क्या-क्या किया? सबसे पहले आपने अपने को ध्यान के लिये तैयार किया, तब विचार के प्रति सजग हुए, फिर 'ॐ' का उच्चारण किया, मेरुदण्ड में श्वास पर एकाग्र हुए, फिर इसके बाद मेरुदण्ड में मंत्र का अभ्यास किया, फिर आप आंतरिक आकाश पर एकाग्र हुए।
अब आप आँखें खोल सकते हैं।

*हरि ॐ तत्सत्*

## अतीन्द्रिय पटल

### प्रथम अवस्था – तैयारी

शवासन में लेट जाइये, पैर थोड़ी दूरी पर रहें, दोनों भुजाओं को शरीर के पास, दोनों तरफ रखिये, हथेलियाँ ऊपर की ओर।
आँखें बन्द कर लीजिये।
यह ध्यान का अभ्यास नहीं है, यह विश्रांति का अभ्यास है, एकाग्रता का नहीं।
यह अभ्यास काफी सरल है, पर अत्यन्त महत्वपूर्ण और प्रभावशाली है।
अभ्यास के बीच में आँखें मत खोलिये, अभ्यास करते समय यथासंभव स्थिर रहिये।

### द्वितीय अवस्था – बाह्य उद्दीपकों के प्रति सजगता

इस अभ्यास में आप अपने इन्द्रियजनित अनुभवों के प्रति सजग बनेंगे।
मन को एकाग्र मत कीजिये, उसे उसके इच्छानुसार जाने दीजिए।
अपने मन को पूर्णत: बहिर्मुख होने दीजिए, और उन चीजों के प्रति सजग होइये जो बाह्य हैं, मानसिक नहीं ।
अपने मन को बाह्य वस्तुओं से हटाने का प्रयास मत कीजिए। इसे इसकी इच्छा के अनुसार किसी भी दिशा में विचरण करने दीजिए।
तनाव रहित बने रहिए।
अपने को वैसा ही तनावरहित बना लीजिये जैसे आप दिन के सारे काम समाप्त करने के बाद रात्रि को सोने के समय होते हैं।
मन बाह्य आवाजों के प्रति आकृष्ट होता है।
मन बाह्य संस्पर्शों के प्रति आकृष्ट होता है।
मन बाह्य परिवेशों के प्रति आकृष्ट होता है। तो इसे ऐसा ही करने दीजिये।

आपको रेडियो, कार, चिड़िया, कुत्ते या किसी की भी आवाज सुनाई पड़ सकती है।
इस अभ्यास विशेष में आपको अपने मन को बाह्य ऐन्द्रिक अनुभवों के साथ-साथ विचरने के लिये छोड़ देना है।
रिकार्डर के माइक्रोफोन की तरह अपनी परिधि में आने वाले प्रत्येक स्वर को अपनी चेतना में दर्ज कर लीजिये।
अथवा रडार की तरह सभी प्रकार के बाह्य प्रभावों को ग्रहण कर लीजिये।
याद रखिये कि आप न तो एकाग्रता सीख रहे हैं और न मन को नियंत्रित करने का अभ्यास कर रहे हैं।
अपने मन को तनावरहित कीजिये।
दिनभर के कार्य समाप्त करके सोने के लिए जाते समय मन की जो विश्रान्त स्थिति होती है, उसी स्थिति में रहिये।
बाह्य पदार्थों के प्रति सजग होइये।
इसे किस प्रकार किया जाय?
क्या आपको बाह्य वस्तुओं के प्रति सजग रहने की चेष्टा करनी चाहिये?
यह बहुत महत्त्वपूर्ण बात है।
याद रखिये, सजगता के दो प्रकार होते हैं – पहली, ऐच्छिक सजगता और दूसरी है अनैच्छिक सजगता।
अगर आप यह सोचें कि इतने लोग इस कमरे में लेटे हुए एक विशेष अभ्यास कर रहे हैं और मैं कुछ निर्देश दे रहा हूँ, टेपरिकार्डर चल रहा है, तो यह ऐच्छिक सजगता कही जाएगी, जिसको आप अपने अन्दर विकसित करना चाहते हैं।
लेकिन यदि आपकी चेतना की सजगता को कोई स्वर या अनुभव अपनी ओर आकृष्ट कर लेता हो तो यह अनैच्छिक सजगता है।
इस अभ्यास में आपको स्वयं पूर्णत: खाली रहना है।
अगर आपको बाहर से कोई ध्वनि सुनायी दे, तो उसे स्वीकार कीजिये। या यदि इस कमरे के लोगों के प्रति आप सजग हो जायें, तो इसे स्वीकार कीजिये।
या आप किसी संवेदना के प्रति सजग हों तो इसे स्वीकार कीजिये।
अब इस अभ्यास को तीन मिनट तक स्वयं कीजिये।
किसी बात की चिन्ता मत कीजिये। मन को जो भाता है उसे उसी को ग्रहण करने दीजिये।

हो सकता है वह मेरी आवाज हो।
या कोई दूसरी आवाज आपका ध्यान आकृष्ट करे।
अब तीन मिनट तक इस तरह की सजगता का अभ्यास कीजिये।
बाह्य जगत् में विचरण करते रहिये।
बाह्य जगत् में हो रही प्रत्येक घटना, उठ रहे प्रत्येक स्वर के प्रति सजग रहने का प्रयास कीजिये, अन्तर्मुखी मत होइये।
बाह्य जगत् के साक्षी बने रहिये।
अन्तर्मुखी मत होइये।
नींद मत आने दीजिये।
अपने मन को बाहर ही बाहर दौड़ने दीजिये और बाह्य जगत् में घट रही सभी बातों के प्रति सजग रहिये।
यह प्रथम अभ्यास है।

**तृतीय अवस्था – विचारों के प्रति सजगता**

अब दूसरे अभ्यास में, आप स्वयं को विचार करने की अनुमति दीजिये, परन्तु अपने मन के विचारों के प्रति एक तटस्थ द्रष्टा बने रहने का प्रयास कीजिये।
विचार अच्छे हों या बुरे, उससे कुछ फर्क नहीं पड़ता।
महत्त्वपूर्ण बात यह है कि आप विचार एवं अनुभव कर रहे हैं।
अपने से पूछिये, 'मैं क्या सोच रहा हूँ?'
विचार प्रक्रिया के प्रति सजग बनिये।
विचार नियंत्रित मत कीजिये।
विचार अच्छे हों या बुरे, अथवा दोनों हों, अपने मन को विचारों को विकसित करने दीजिये।
किसी भी विचार से प्रभावित मत होइये, चाहे सकारात्मक विचार हों या नकारात्मक विचार हों।
मन को जो चाहे सोचने दीजिये, बीच में मत पड़िये।
लेकिन आपको पूर्ण सजगता रखनी है कि कौन से विचार आपके मन में आ रहे हैं।
'मैं क्या सोच रहा हूँ?'
प्रत्येक क्षण सजग रहें कि 'मैं क्या सोच रहा हूँ?'
'मैं क्या सोच रहा हूँ?'

अगर आप अपनी इस विचार प्रक्रिया को नहीं देख पा रहे हैं तो इस स्थिति में आप कुछ समय के लिये विचारों को स्वत: आने दें, और जब वे कुछ समय तक आ जाते हैं, तब अचानक आप अपने विचारों के प्रति सजग बनिये।
इसका अभ्यास तीन मिनट तक कीजिये।
किसी मानसिक विक्षेप की चिन्ता मत कीजिये।
किसी चिन्तन की चिन्ता मत कीजिये।
यदि आपका मन भीतर-बाहर दौड़ रहा हो, तब भी चिन्ता मत कीजिये।
मन को नियंत्रित मत कीजिये। सिर्फ अपने विचारों को देखिये।
साक्षी एवं द्रष्टा बने रहिए।
'मैं क्या सोच रहा हूँ? मैं क्या सोच रहा हूँ?'

**चौथी अवस्था – चिदाकाश की सजगता**

चिदाकाश पर एकाग्र होइये।
ललाट के अंत:पुर में चिदाकाश पर एकाग्र होइये।
यदि आप ललाट की भीतरी दीवाल को देखने का प्रयास करेंगे तो चिदाकाश दिखाई देगा।
यह चिदाकाश एक पर्दे के सदृश है, इस पर आप यह देखने की चेष्टा कीजिये कि किस प्रकार के विचार आप के मन में आते हैं।
यदि आप चिदाकाश देखते रहेंगे तो आप विभिन्न आकृतियों और बिम्बों को इसकी पृष्ठभूमि पर उभरते देखेंगे।
चिदाकाश की पृष्ठभूमि पर किसी भी बिम्ब, आकृति, फूल या विचारों को उभरते हुए देखते रहिये।
आप चाहे विचारों का मानस-दर्शन करें या बिम्बों का, या किसी वस्तु का, या किसी प्रतीक का, लेकिन लगातार चिदाकाश को देखते रहिये।
अगर आप इसी प्रकार लगातार देखते रहेंगे तो विभिन्न प्रकार के ज्ञात-अज्ञात बिन्दु उस पर प्रकट होंगे।
चिदाकाश को देखते रहिये, कोई दृश्य उभरे, या न उभरे, उसे देखते रहिये।
किसी प्रकार का तनाव न हो, चिदाकाश की स्थिति तनावरहित होनी चाहिये।
चिदाकाश में क्या आता है? मैं चिदाकाश में क्या देखता हूँ?
हो सकता है कि जब आप चिदाकाश में देख रहे हों तो अचानक किसी किताब, मित्र, आध्यात्मिक विचार, सांसारिक चिन्ता, फुलवारी या फूल या किसी भी चीज का दृश्य या कोई आकृति स्वत: उभर आए।

चिदाकाश में देखते रहिये।
आप जो कुछ देखते हैं, उसके प्रति पूर्ण सजग बने रहिए।
यदि आप कुछ नहीं भी देखते हैं, तब भी अपनी सजगता न खोएँ।
चिदाकाश में जो कुछ घटित हो रहा है, आप उसके साक्षी हैं।
चिदाकाश में जो कुछ हो रहा है, आप उसके साक्षी हैं।
दृश्य या आकृतियाँ दिखलाई पड़ सकती हैं और शायद कुछ भी दिखलाई न पड़े।
सम्भव है कि मध्य रात्रि का दृश्य दिखलाई पड़े।
दृश्य दर्शन की यह प्रक्रिया सजगतापूर्ण होनी चाहिये, स्वप्न की अचेतन क्रिया की तरह नहीं ।
कोई भी चीज दिखाई पड़ सकती है, आकृति, त्रिकोण, फूल, चिड़िया, फुलवारी, मकान, लोग, जानवर, नदियाँ, मध्यरात्रि, अंधकार, तारों का प्रकाश, पूर्णिमा की रात, दिन का प्रकाश, कुछ भी।
कुछ भी हो सकता है।
सिर्फ इसके प्रति सजग रहिये।
ध्यान रखिये कि आप सो न जायें।
यह बहुत महत्त्वपूर्ण है।
आप चिदाकाश देख रहे हैं।
यह चिदाकाश-दर्शन की विश्रान्तिपूर्ण विधि है।
चिदाकाश में आप कुछ देख पाते हैं या नहीं , हर स्थिति में साक्षी बने रहिये।
जागरूक रहिये और चिदाकाश दर्शन करते रहिये।

**पाँचवीं अवस्था – अभ्यास की समाप्ति**

अपने मन को बहिर्मुख बनाते हुए बाह्य वातावरण के प्रति सजग होइये।
अपनी आँखें खोल लीजिए और शरीर को तनावरहित कीजिये।

*हरि ॐ तत्सत्*

# 24

# प्राण विद्या

प्राण विद्या अतीन्द्रिय (सूक्ष्म) शक्ति को नियंत्रित करके उपचार करने की एक यौगिक विधि है। संसार में यह विधि अनेक नामों से प्रसिद्ध हुई है। इस विधि में प्राण उज्जायी प्राणायाम में (खेचरी में भी, अगर सुविधापूर्वक किया जा सके) अपने मार्ग पर प्रवाहित होता है। बैठकर, करवट, पेट या पीठ के बल लेटकर शरीर को किसी भी अवस्था में रखा जा सकता है, परन्तु मेरुदण्ड एकदम सीधा रहे।

दो मूल अवस्थाएँ हैं। इनमें से प्रत्येक के अनेक प्रकारान्तर हैं। पहली अवस्था में प्राण को आज्ञा चक्र में लाकर संचित किया जाता है। प्राण मणिपुर चक्र से पहुँचता है या त्वचा के द्वारा श्वास लेते हुए शरीर के बाहर से ग्रहण किया जा सकता है। प्राण चाहे किसी तरह से ग्रहण किया जाये, इस प्रथम अवस्था में श्वास लेते हुए वह आज्ञा चक्र की ओर ही प्रवाहित होता है।

दूसरी अवस्था में आज्ञा चक्र से प्राण को भेजा जाता है। इस अवस्था में प्राण का वितरण पूरे शरीर में या शरीर के किसी बीमार हिस्से में या हाथों में किया जा सकता है। हाथों के द्वारा यह प्राण दूसरे व्यक्ति के शरीर में पहुँचाया जा सकता है। इस स्थिति में सदैव प्राण को श्वास लेते हुए आज्ञा चक्र से निर्दिष्ट स्थान की ओर प्रवाहित किया जाता है।

ये दो अवस्थायें भिन्न हैं, और अभ्यास के दौरान अभ्यासी को यह अन्तर स्पष्ट होना चाहिए। सामान्यत: एक से दूसरी अवस्था की ओर जाते हुए अन्तर स्पष्ट नहीं दिखाई पड़ता तथा पहले के बाद दूसरा अभ्यास बारी-बारी से होता रहता है। परन्तु दोनों अवस्थाओं के बीच का अन्तर अभ्यास के दौरान स्पष्ट होना चाहिये।

इस यौगिक विधि में पिंगला के सूक्ष्म अतीन्द्रिय मार्ग का ही उपयोग किया जाता है। इस मार्ग का वर्णन इस पुस्तक के चतुर्थ अध्याय में किया जा चुका है। इसका अभ्यास इड़ा नाड़ी का उपयोग करते हुए कदापि नहीं करना चाहिए। इससे बहुत हानि हो सकती है। प्राण विद्या रोगोपचार की एक गुप्त यौगिक अतीन्द्रिय विधि है।

दूसरे व्यक्ति का उपचार करने हेतु प्राण को आज्ञा चक्र से अपने दाहिने हाथ की ओर प्रेषित करना होता है। उसी हाथ से बीमार व्यक्ति के रोगी अंग का स्पर्श किया जाता है। यदि बीमार व्यक्ति भी अपने शरीर में हाथ के स्पर्श से प्राप्त उस प्राण प्रवाह की उष्णता का अनुभव करे, तो इससे उपचार करने में सहायता मिलती है।

## कक्षा प्रतिलेखन

**प्राण का आन्तरिक वितरण**

**प्रथम अवस्था – तैयारी**

अपनी आँखों को यथासम्भव हल्के से बन्द कर लीजिए, आप प्राण विद्या का अभ्यास करने जा रहे हैं।

ध्यान भंग न हो, इसलिए यह आवश्यक है कि आप अपनी आँखें बन्द रखें। आप किसी भी सुविधाजनक आसन में रह सकते हैं, अर्थात् दाहिनी या बायीं करवट अथवा पीठ के बल लेट सकते हैं, आरामकुर्सी पर बैठ सकते हैं या अपने बिछावन पर लेट सकते हैं। लेकिन याद रखिये कि आपका आसन किसी प्रकार की असुविधा उत्पन्न न करे।

**द्वितीय अवस्था – प्राणशक्ति का आज्ञा चक्र तक आरोहण**

जहाँ तक प्राणों को जाग्रत करने का सम्बन्ध है, मुझे विश्वास है कि आपको अपने पूर्व के अभ्यासों से स्पष्ट रूप से मूलाधार से आज्ञा चक्र की ओर प्राण की सर्पिल गति का स्मरण होगा।

दाहिनी ओर से शुरू और धीरे-धीरे लेकिन फुरती से श्वास की गति के साथ तालमेल बैठाते हुए आगे बढ़िये।

मूलाधार से दाहिनी ओर मुड़िये। गोलाई में चढ़ते हुए स्वाधिष्ठान में पहुँचिये।

स्वाधिष्ठान से बायीं ओर मुड़कर गोलाई में ऊपर उठते हुए मणिपुर की ओर।

मणिपुर से दाहिना मोड़ लेते हुए गोलाई में ऊपर अनाहत की ओर।

अनाहत से बायाँ मोड़ लेते हुए गोलाई में विशुद्धि की ओर ऊपर बढ़िये।

विशुद्धि से दाहिने मुड़कर ऊपर की ओर उठते हुए आज्ञा की ओर बढ़िये। यह मूलाधार से आज्ञा चक्र की ओर प्राण की सर्पिल ऊर्ध्वगामी गति है। इस प्रकार प्राण जाग्रत होता है।

आप अभ्यास जारी रखिये।

प्रारम्भ में आपको उनचास आवृत्तियाँ पूरी करनी हैं।

लेकिन जब आप इसके अभ्यस्त हो जायें तब गिनने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि आप सहज ही प्राण की जागृति का अनुभव कर लेंगे।

जब प्राणशक्ति मूलाधार से आज्ञा में जाग्रत होने लगती है और आप इसकी गति का अनुभव करने लगते हैं, तभी आगे की यात्रा शुरू होती है।

मूलाधार से प्रारम्भ करते हुए प्राण को आज्ञा चक्र की ओर जाग्रत करना आरम्भ कीजिए, जिस प्रकार आप पिछले कुछ दिनों से करते आ रहे हैं।

प्राण को आज्ञा चक्र में ही छोड़ दें, मूलाधार में उसे वापस मत लाइये।

पूर्ण सजगता के साथ मूलाधार से आज्ञा चक्र की यात्रा पूरी कीजिये। अपने मन और चेतना को अतीन्द्रिय (सूक्ष्म) और प्राणिक शक्तियों के साथ मेरुदण्ड में आरोहण करते रहने दीजिये।

सजगतापूर्वक अभ्यास जारी रखिये और स्पंदन-रहित नाद को सुनते जाइये।

मूलाधार में कुण्डलिनी को जाग्रत करना है।

इसे शनैः-शनैः आज्ञा चक्र तक ले जाइये, आज्ञा चक्र पर थोड़ा ठहरिये, उसी प्रकार जैसे आप कुम्भक में रुकते हैं।

यहाँ पहली आवृत्ति समाप्त होती है। अब हम दूसरी आवृत्ति प्रारम्भ करेंगे।

पुनः मूलाधार से यात्रा आरम्भ कीजिये। आज्ञा में लघु कुम्भक के साथ रुकिये। पूर्ण एकाग्रता होनी चाहिये। पूर्ण एकाग्रता के साथ प्राण की गति का अनुभव कीजिये।

बतलाए गए मार्ग पर प्राणशक्ति को जगाते रहिये। आप भूलियेगा नहीं कि अतीन्द्रिय (सूक्ष्म) पथ मूलाधार से आज्ञा तक है।

जब आप आज्ञा चक्र पर पहुँचें तब कृपया याद रखिये कि वहाँ आपको थोड़ी देर तक कुम्भक में रहना है।

### तृतीय अवस्था – सम्पूर्ण शरीर का विस्तार एवं विश्रान्ति

अब मैं जो कहता हूँ, उसे ध्यान से सुनिये।

आज्ञा चक्र पर कुम्भक के पश्चात् आपको श्वास छोड़ते हुए अपने पूरे शरीर को तनावरहित (शिथिल) कर देना है।

ध्यान दीजिये, आप मेरुदण्ड से श्वास नहीं छोड़ रहे हैं, बल्कि पूरे शरीर से श्वास छोड़ रहे हैं, मानो एक गुब्बारे से सारी हवा निकल रही है।
श्वास भरने के साथ शरीर फूलता है। शरीर के प्रत्येक रन्ध्र से आप श्वास ले रहे हैं।
प्रत्येक प्रश्वास के साथ एक शिथिलता (विश्रांति) की स्थिति आती है और प्रत्येक बार श्वास लेते समय शरीर फैलता है।
इस नियम को न भूलें।
उज्जायी में श्वास लीजिये। पूर्व अभ्यासों की तरह इसे मेरुदण्ड में अनुभव मत कीजिये, बल्कि शरीर में अनुभव कीजिये।
यह उज्जायी वायु पूरे शरीर में व्याप्त है, मानो शरीर का प्रत्येक रन्ध्र उज्जायी में श्वास ले रहा हो।
जब आप श्वास लेते हैं, तब शरीर का प्रत्येक रन्ध्र आपको श्वास भरने में मदद करता है और आपका शरीर एक गुब्बारे की तरह फूल उठता है।
जब आप श्वास छोड़ते हैं तो आपका पूरा शरीर श्वास छोड़ता है और रुई की तरह हल्का बन जाता है। यह विश्रान्ति का समय है।
शरीर के प्रति सम्पूर्ण सजगता। श्वास चेतना और शरीर के प्रति चेतना को समक्रमिक बनाइये।
शरीर के प्रति पूर्ण सजगता।
अब श्वास लीजिए। श्वास लेते समय पूरा शरीर रन्ध्रों से, त्वचा से, प्रत्येक अंग से श्वास ले रहा है। श्वास लेने के समय आपका शरीर फैल रहा है।
अब श्वास छोड़िये। श्वास छोड़ते समय शरीर का प्रत्येक रन्ध्र श्वास छोड़ रहा है।
अब शरीर तनावरहित हो रहा है।
याद रखिये कि श्वास लेने और छोड़ने की सम्पूर्ण प्रक्रिया भ्रूमध्य केन्द्र के पीछे आज्ञा चक्र में हो रही है। आज्ञा मुख्य बिन्दु है, पूरे श्वसन संस्थान का मुख्य वितरक केन्द्र यही है। अन्दर भरी गई श्वास आज्ञा चक्र से ही पूरे शरीर में विचरण करने के लिए आगे बढ़ती है। छोड़ी हुई श्वास आज्ञा चक्र में वापस आ जाती है और वहीं से बाहर छोड़ दी जाती है।
श्वास लेते समय शरीर फूलता है, और श्वास छोड़ने में शरीर में विश्रान्ति की स्थिति उत्पन्न होती है।

जब आप आज्ञा चक्र से श्वास लेते हैं और पूरे शरीर को फैलाते हैं, तब यह अनुभव कीजिये कि प्राण के भंडार आज्ञा चक्र से पूरे शरीर में प्राण का वितरण हो रहा है।

श्वास छोड़ते समय छोड़ी हुई श्वास आज्ञा चक्र में वापस पहुँचती है, सीधे ही, मेरुदण्ड से होकर नहीं ।

वह सीधे ही आज्ञा चक्र पहुँचती है।

याद रखिये कि उज्जायी में श्वास लेनी-छोड़नी है।

निम्नलिखित विधि से अभ्यास कीजिये।

आप आज्ञा चक्र से श्वास लेते हैं, फिर इस श्वास को पैर के अँगूठे तक पूरे शरीर में वितरित कर देते हैं।

श्वास छोड़ते समय आप प्राण को आज्ञा चक्र में वापस लाते हैं और विश्रांति की स्थिति में आ जाते हैं। प्रश्वास में स्वाभाविक रूप से विश्रान्ति की स्थिति उत्पन्न होती है।

इसके पहले वाले अभ्यास से यह अपेक्षाकृत अधिक सरल है।

पूर्व के अभ्यास में आप शरीर के रन्ध्रों द्वारा श्वास ले और छोड़ रहे थे, लेकिन अब संपूर्ण श्वसन-क्रिया आज्ञा चक्र के माध्यम से होगी।

आज्ञा चक्र को प्राण का भण्डार कहा जा सकता है, जहाँ से उज्जायी श्वसन की सहायता से प्राण का वितरण सम्पूर्ण शरीर में किया जाता है, और प्रश्वास के समय प्राण को सभी दिशाओं से आज्ञा चक्र में वापस लाया जाता है।

आप यह अवश्य याद रखिये कि प्रश्वास के बाद विश्रान्ति की स्थिति आती है।

विश्रान्ति की स्थिति में चेतना और प्राण, दोनों ही अपने को शरीर से हटा कर आज्ञा चक्र में आ जाते हैं। इसे समझ लीजिये कि शरीर में विश्रान्ति की स्थिति आती है, परन्तु शरीर का संकुचन नहीं होता।

आपको उज्जायी श्वसन का इस तरह अभ्यस्त हो जाना चाहिए कि प्राण विद्या की प्रक्रिया के दौरान आपकी चेतना, कल्पना, चिन्तन और आपका शरीर-यन्त्र भी श्वास लेने के साथ स्वत: ही फैल जाए और श्वास छोड़ते समय विश्रान्ति की स्थिति में आ जाए।

आपको श्वसन क्रिया के प्रति इस प्रकार उदासीन हो जाना चाहिए कि आपकी चेतना का सूक्ष्मातिसूक्ष्म अंश भी इसके प्रति सजग न रहे।

श्वास लेते समय प्राण सूक्ष्म शरीर को फैलाता है।

श्वास छोड़ते समय प्राण सूक्ष्म शरीर को विश्रान्ति की स्थिति में ले आता है।

आपकी सम्पूर्ण चेतना प्रसारण और विश्रान्ति की प्रक्रिया पर केन्द्रित रहनी चाहिए, न कि प्राणों पर।

इसका अर्थ यह हुआ कि आपके गुरुत्व केन्द्र को अब शरीर की श्वसन क्रिया से हट कर प्रसारण और विश्रान्ति की प्रक्रियाओं पर अवस्थित हो जाना चाहिए।

संक्षेप में, आपको श्वसन प्रक्रिया की चेतना के परे हो जाना है।

**चतुर्थ अवस्था – सम्पूर्ण शरीर का विस्तार एवं संकुचन**

अब हम लोग अगली अवस्था की ओर बढ़ेंगे। इसमें थोड़ा परिवर्तन करना है। पूर्व के अभ्यास की तरह श्वास के साथ शरीर का प्रसारण तो होगा, लेकिन प्रश्वास के साथ शरीर विश्रान्ति की स्थिति में नहीं आयेगा, वरन् उसका संकुचन होगा।

इस तरह अब प्रसारण और संकुचन की स्थिति आएगी; प्रसारण और विश्रान्ति की नहीं ।

जब हम अभ्यास करने लगेंगे तब बात और स्पष्ट हो जाएगी।

जब आप श्वास लेते हैं तब आपका शरीर फूलता है, और इस प्रक्रिया के दौरान आज्ञा चक्र से प्राण पूरे शरीर में वितरित होता है।

अर्थात् श्वास लेते समय प्राण आज्ञा चक्र से सारे शरीर में प्रवाहित होता है और साथ-साथ शरीर फूलता भी है।

और जब आप श्वास छोड़ते हैं तो प्राण आज्ञा चक्र की ओर लौटता है जिससे सूक्ष्म शरीर संकुचित होता है।

इसलिए यदि आप इन दो नियमों को समझ लें तो पूरा अभ्यास समझ लेंगे।

पहला नियम है – श्वास अन्दर लेने के साथ प्राण का वितरण तथा शरीर का प्रसारण।

दूसरा है – श्वास छोड़ने के साथ प्राण का आज्ञा चक्र में पुन: सिमटना तथा शरीर का संकुचन।

हम इसे दुहरा रहे हैं।

पहले श्वास लीजिये, फिर प्राण को आज्ञा चक्र से पूरे शरीर में वितरित कीजिये, जिससे शरीर का प्रसारण होगा।

अब श्वास छोड़िये। इससे शरीर में संकुचन आएगा।

शरीर का प्रसारण और संकुचन शारीरिक नहीं, बल्कि मानसिक है। आपको अपनी कल्पना का अधिकाधिक विकास तथा विस्तार करना है।

जब आप अपने प्राण को शरीर के किसी भी अंग की ओर भेजते हैं, (यथा, पैर) तो मानसिक रूप से अनुभव कीजिये कि पैर सभी दिशाओं में फैल रहा है। यह शारीरिक प्रसारण नहीं, बल्कि शारीरिक अनुभव है।

इस तरह जब आप श्वास लेते हैं तब आप अपने प्राण को सभी दिशाओं में भेजते हैं, जो अपने केन्द्र आज्ञा चक्र से विकिरित होकर पूरे शरीर को आवृत्त कर लेता है।

एड़ी से चोटी तक आपका शरीर प्राणशक्ति से संतृप्त हो गया है।

इसका अनुभव तीव्रता से कीजिये।

साथ-ही-साथ आपको अवश्य ही यह कल्पना करनी चाहिए कि आपका सूक्ष्म शरीर सभी दिशाओं में व्यापक रूप से फैल रहा है और इसने ब्रह्माण्डीय रूप धारण कर लिया है।

इसी तरह जब आप श्वास छोड़ें तो सचेत होकर अपने प्राण को शरीर के अन्य भागों से समेटकर आज्ञा चक्र की ओर ले जाइये।

जिस तरह ज्वार के पलटने पर समुद्र का जल पीछे हटता हुआ सा दिखाई पड़ता है, उसी तरह श्वास छोड़ते समय प्राण भी पीछे की ओर हटता है और शरीर सिकुड़ता है।

संकुचन में शरीर-चेतना के परे जाना होता है।

लेकिन याद रखिए कि संकुचन या प्रसारण शरीर के विशिष्ट भागों में नहीं होता। इसका प्रभाव पूरे शरीर में होता है। एक समग्र इकाई के रूप में शरीर का संकुचन या प्रसारण होना चाहिये।

संक्षेप में, जब आप श्वास लेते हैं तो आपका शरीर फैलता है और जब श्वास छोड़ते हैं तब शरीर का संकुचन होता है।

श्वास लेते समय प्राण को आज्ञा चक्र से पूरे शरीर में ले जाते हैं।

जब आप श्वास छोड़ते हैं तो प्राणशक्ति आज्ञा चक्र से होते हुए वापस अपने मूल स्रोत में लौट आती है।

**पाँचवीं अवस्था – प्राणशक्ति का शरीर के अलग-अलग अंगों में वितरण – विस्तार एवं विश्रान्ति**

अब हम इस अभ्यास को दाहिने हाथ से शुरू करते हुए अलग-अलग अंगों में करेंगे।

श्वास अन्दर लेते हुए प्राणशक्ति को आज्ञा चक्र से दाहिने हाथ की ओर भेजिये। अब दाहिने हाथ को फैलाइये-शारीरिक रूप से नहीं , मानसिक रूप से। अब श्वास छोड़िये, प्राण को दाहिने हाथ से खींच कर आज्ञा तक वापस ले आइये और हाथ में विश्रान्ति का अनुभव कीजिये।
जब आप प्राण दाहिने हाथ को भेजें, तब अनुभव कीजिये कि प्राण उस अंग के प्रत्येक रन्ध्र में समा रहा है, अंगुलियों के पोर तक में।
प्राण की गति का अनुभव कीजिये।
प्राण को आज्ञा की ओर लाकर श्वास रोकिये। अब बाएँ हाथ की ओर प्राणों को भेजिए, बाएँ हाथ की अंगुलियों के पोरों तक प्राण को ले जाइये। अब आज्ञा चक्र में प्राण वापस ले आइए।
आज्ञा चक्र से प्राण बाएँ हाथ की ओर जाता है, फिर यह प्राण बाएँ हाथ से आज्ञा की ओर लौटता है।
अपने हाथों की ओर प्राण भेजते और वहाँ से पास लाते समय क्रमश: हाथों का प्रसारण और संकुचन कीजिये।
प्राण को आज्ञा चक्र पर वापस लाइये और श्वास रोकिये।
अब श्वास लीजिये, और साथ-ही-साथ प्राण को पीठ के दाहिने से होकर दाहिने पैर में ले जाइये। मानसिक रूप से अपने दाहिने पैर का प्रसारण अनुभव कीजिये।
अब श्वास छोड़िये, अपने प्राण को दाहिने पैर से समेट कर आज्ञा चक्र में वापस ले आइये। ऐसा करते समय अपने दाहिने पैर को विश्रान्ति की स्थिति में लाइये।
अब बाएँ पैर में प्राण ले जाइये – अंगुलियों के पोरों तक। जब भी प्राण किसी अंग में भेजे जाएँगे, मानसिक रूप से उस अंग का प्रसारण अनुभव किया जायेगा।
बाएँ पैर से प्राण खींचकर उसे विश्रान्ति की स्थिति में लाइये।
अब दुहराइये।
प्राण भरना... प्रसारण; प्राण वापस लाना... विश्रान्ति।
प्राण भरना... प्रसारण; प्राण वापस लाना... विश्रान्ति।
अपने प्राण को वापस आज्ञा चक्र में ले आइये।
आज्ञा चक्र से प्राण को दाहिनी छाती की ओर भेजिये, और श्वास छोड़ते समय प्राण को आज्ञा चक्र की ओर वापस लाइये।

श्वास भरिये... प्राण भरिये... प्रसारण, श्वास छोड़िये... प्राण वापस ले आइये... विश्रान्ति।

अब प्राण को वापस आज्ञा चक्र में लाइये और श्वास रोकिये।

श्वास भरिये, अपनी बायीं छाती में प्राण भरिये और मानसिक रूप से छाती का प्रसारण कीजिये।

श्वास छोड़िये, बायीं छाती से प्राण वापस ले आइए और छाती को शिथिल कीजिए।

प्राण भरना... प्रसारण; प्राण वापस ले आना... विश्रान्ति।

**छठी अवस्था – शरीर के प्रत्येक अंग में प्राण का वितरण, विस्तार एवं संकुचन**

अब प्राण को आज्ञा में वापस लाइए, श्वास रोकिये और मुझे सुनिये। इस बार प्राण को वापस लाते समय विश्रान्ति के स्थान पर संकुचन कीजिये, प्राण भरते समय पूर्ववत् प्रसारण करना है।

सबसे पहले दाहिने हाथ में प्राण भर कर उसका प्रसारण कीजिए।

प्राण को दाहिने हाथ से खींच कर आज्ञा की ओर ले जाइये और संकुचन कीजिए।

आज्ञा चक्र पर वापस लौटने और वहाँ प्राण की उपस्थिति के प्रति सजग रहिए।

श्वास लीजिए। बायें हाथ में प्राण भरिये और बायें हाथ में प्रसारण का अनुभव कीजिये।

श्वास छोड़िए और प्राण खींच कर संकुचन कीजिए।

प्रसारण और संकुचन की दोनों क्रियाएँ मानसिक होंगी।

अपने प्राण को पुनः खींच कर आज्ञा चक्र में ले जाइए। उसे आज्ञा चक्र में कुछ देर तक रोकिए।

मानसिक रूप से बाएँ हाथ को शिथिल कीजिए। अब दाहिने पैर की ओर बढ़िये।

आज्ञा चक्र से प्राण को पीठ के दाहिने भाग से होते हुए पूरे दाहिने पैर में भेजिये – पैर की अंगुलियों के पोरों तक। अब प्रसारण कीजिए।

प्राण को वापस खींचिये, श्वास छोड़िये, और दाहिने पैर का मानसिक रूप से संकुचन कीजिए।

आज्ञा चक्र में लौटिये, श्वास रोकिये, मानसिक रूप से दाहिने पैर को शिथिल कीजिये।

दाहिनी छाती में प्राण भरिये। प्रसारण कीजिये। संकुचन के साथ प्राण को वापस लाइये। दाहिनी छाती को शिथिल कीजिये।

बायीं छाती में प्राण भरिये। मानसिक प्रसारण कीजिये। आज्ञा चक्र में प्राण को खींचिये। संकुचन कीजिये। वहाँ प्राण को कुछ समय तक रोकिये।

**सातवीं अवस्था – प्राणशक्ति का दर्शन**

अब आपको प्राणशक्ति का दर्शन होना चाहिए।

प्राण को सीधे अपने पूरे शरीर में भरिये। फिर आज्ञा चक्र में प्राण को वापस ले आइये। कोई संकुचन नहीं; कोई प्रसारण नहीं; उसे रोक कर भी नहीं रखिये। यदि स्वयं ऐसा हो जाए तो ठीक है। परन्तु यदि ये क्रियायें प्राण भरने या वापस लाने की क्रियाओं के साथ-साथ न घटित हों तो चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है।

प्रमुख बात यह है कि आज्ञा चक्र से शरीर में प्राण भरते समय प्रकाश-रेखाओं का सूक्ष्म दर्शन होना चाहिए।

इसी प्रकार प्राण को वापस लौटाते समय इन प्रकाश रेखाओं को वापस आज्ञा चक्र में लौटने का अनुभव होना चाहिये। यह प्रकाश वेल्डिंग करते समय निकलने वाली चिंगारियों या आतिशबाजी की चिंगारियों की तरह दिखाई देगा।

इसी प्रकार जब शरीर के विभिन्न अंगों में प्राण संचार हो रहा हो तो प्राण का आज्ञा चक्र से निकलने वाली चिंगारियों के रूप में मानस-दर्शन करना चाहिये जो प्रभावित अंग की ओर जा रही होती हैं।

कल्पना कीजिये कि आज्ञा चक्र ज्योति का एक अक्षय भण्डार है।

या वह ज्वालामुखी के तल के सदृश है, जिसके फूटने पर चिंगारियाँ विद्युत गति से विकीर्ण होती हैं।

ये सारे शरीर में व्याप्त हो जाती हैं और जब उद्‍भेदन रुक जाता है तब प्रकाश किरणों के रूप में ऊर्जा अपने स्त्रोत में वापस लौट आती है तथा अगले उद्भेदन के समय पुन: प्रकट होती है।

अब प्राण शक्ति को दाहिने हाथ के अँगूठे में भरिये। उसे वहीं रोकिये।

अब कल्पना कीजिये कि आपका दाहिना अँगूठा पिघल रहा है, आपको इस पिघलने के भाव को तीव्रता से अनुभव करना है।

प्राण शक्ति की उपस्थिति के कारण आपके दाहिने हाथ के अँगूठे के पिघलने की अनुभूति स्व-उपचार की दृष्टि से बहुत ही सहायक होगी।

कल्पना कीजिये कि आप एक अस्पताल में हैं और आपके दाहिने हाथ का अँगूठा बुरी तरह से जख्मी हो गया है और उसमें से रक्त की धारा बह रही है।

उस समय आपकी क्या अनुभूति होगी?

अँगूठे के पिघलने की कल्पना करते समय इस अनुभव को जीवन्त करने का प्रयास कीजिए।

**आठवीं अवस्था – प्राण को मूलाधार में वापस लाना**

अब अभ्यास की समाप्ति शुरू करेंगे।

अब प्राण को आज्ञा चक्र में वापस ले आइये।

श्वास अन्दर लीजिये, रोकिये और आज्ञा चक्र पर प्राणों को केन्द्रित कीजिए।

श्वास छोड़ते समय प्राण को नीचे की ओर सुषुम्ना मार्ग द्वारा मूलाधार में ले जाइए।

इस अभ्यास को करते जाइए जब तक पूरा प्राण मूलाधार वापस नहीं लौट जाता।

**नौवीं अवस्था – अभ्यास की समाप्ति**

अब धीरे-धीरे आराम से बाह्य वातावरण के प्रति सजग हो जाइए।

जब आपकी सजगता पूरी तरह से बहिर्मुखी हो जाए, तब धीरे से अपने शरीर को हिलाइए और अपनी आँखें खोल लीजिए।

*हरि ॐ तत्सत्*

*टिप्पणी*– अधिक जानकारी के लिए योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर द्वारा प्रकाशित *'प्राण एवं प्राणायाम'* का अध्ययन करें।

# 25

# कुण्डलिनी क्रियाएँ

निम्नांकित तांत्रिक क्रियाएँ मानव चेतना के सुनियोजित विकास की अत्यन्त प्रभावकारी विधियाँ हैं। ये विधियाँ मूल रूप से महान् गुरुओं द्वारा तंत्र शास्त्र में अंकित की गई थीं। कहा जाता है कि अनुभवातीत साधना के लिए इन विधियों की शिक्षा भगवान शिव ने अपनी शिष्या एवं पत्नी पार्वती को दी थी।

ये उच्च स्तरीय अभ्यास हैं, अतः सामान्य साधकों के लिए भारी पड़ सकते हैं। इनका अभ्यास करने के पूर्व उन्हें इस पुस्तक में दिये गये प्रारम्भिक अभ्यासों का व्यावहारिक अनुभव प्राप्त कर लेना चाहिए। इसके अतिरिक्त इनका अभ्यास गुरु की ही देखरेख में करना ठीक है। गुरु ही समझ सकता है कि शिष्य इनका अभ्यास करने के लिए तैयार है कि नहीं । साथ ही अभ्यास के दौरान उत्पन्न हुई कठिनाइयों को भी, जो शिष्य को रोगों और मानसिक असंतुलन का शिकार बना सकती हैं, गुरु ही दूर कर सकता है।

परम्परा के अनुसार क्रिया योग में कुल छिहत्तर कुण्डलिनी क्रियाएँ हैं। हम यहाँ बीस मुख्य अभ्यासों का वर्णन कर रहे हैं, जो किसी भी निष्ठावान साधक के दैनिक अभ्यास के लिए पर्याप्त हैं। इन अभ्यासों को तीन भागों में बाँटा गया है –

1. प्रत्याहारजनक
2. धारणापरक
3. ध्यानपरक

वस्तुतः ये तीनों अवस्थायें क्रम विकास की निरन्तरता हैं, अर्थात् चेतना अपने विकास के क्रम में स्वतः इन अवस्थाओं से गुजरती है। इनके बीच विभाजन-रेखा नहीं खींची जा सकती। इसलिए इनका अभ्यास एक विराम-

रहित अनुक्रम में किया जाना चाहिए। यह आवश्यक नहीं है कि प्रारम्भ से ही सजगता की उच्च स्थिति प्राप्त हो जाए। लेकिन यदि कोई सक्षम साधक किसी कुशल गुरु के मार्गनिर्देशन में इनका अभ्यास करे तो निश्चय ही इस प्रकार की उपलब्धि प्राप्त होगी।

यह वह अवस्था है, जहाँ सजगता का निरन्तर अनवरत रूप से विकास आवश्यक हो जाता है। अभ्यासों की अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए योग पब्लिकेशन ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'कुण्डलिनी तंत्र' का अध्ययन करें।

## प्रत्याहार के अभ्यास

### 1. विपरीतकरणी मुद्रा

विपरीतकरणी आसन में आ जाइए।
ठुड्ढी छाती को नहीं छुए।
उज्जायी प्राणायाम का अभ्यास कीजिए।
आपके पैर एकदम सीधे रहें।
आँखें बन्द कीजिए।
उज्जायी में श्वास लीजिए और साथ-ही-साथ अनुभव कीजिए कि अमृत की एक उष्ण धारा मेरुदण्ड में मणिपुर से विशुद्धि तक प्रवाहित हो रही है।
अमृत विशुद्धि में संचित होगा।
कुछ क्षणों तक श्वास रोकिये और इसके प्रति सजग रहिये कि अमृत विशुद्धि में संचित होकर शीतल हो रहा है।
अब उज्जायी में श्वास छोड़िये। इस बात की सजगता रखिये कि अमृत विशुद्धि चक्र से आज्ञा और बिन्दु होते हुए सहस्रार तक प्रवाहित हो रहा है।
अनुभूति इस प्रकार की होनी चाहिए कि अमृत का संचार श्वास की सहायता से हो रहा है।
श्वास छोड़ने के बाद अपनी सजगता को तुरन्त मणिपुर में ले आइये।
इस क्रिया को दुहराते जाइये ताकि और अधिक अमृत विशुद्धि में संचित होकर अंततः सहस्रार तक जाए।
विपरीतकरणी की इक्कीस आवृत्तियाँ कीजिए।

## 2. चक्रानुसन्धान

सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन या पद्मासन में बैठ जाइये।
आँखें बन्द कर लीजिये।
सामान्य श्वास लीजिये।
इस अभ्यास में श्वास और चेतना के बीच कोई सम्बन्ध नहीं है।
अपनी चेतना को मूलाधार चक्र पर लाइये।
आपकी चेतना मूलाधार से स्वाधिष्ठान के अग्रबिन्दु में जघनास्थि तक, मणिपुर में नाभि तक, अनाहत में उरोस्थि तक और विशुद्धि से होते हुए बिन्दु तक शनैः शनैः अग्र भाग के पथ से आरोहण पूरा करेगी।
ऊपर की ओर जाते हुए आप विभिन्न चक्रों से गुजरते हुए मानसिक रूप से यथास्थान 'मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि, बिन्दु' का उच्चारण करते जाइये।
बिन्दु चक्र में पहुँचने के बाद मेरुदण्ड पथ में मूलाधार तक अवरोहण कीजिए। साथ-ही-साथ चक्रों से गुजरते हुए उनके नाम को मानसिक रूप से दुहराइए, जैसे – आज्ञा, विशुद्धि, अनाहत, मणिपुर, स्वाधिष्ठान, मूलाधार।
मूलाधार से तुरन्त अग्र भाग के पथ में आरोहण करना शुरू कर दीजिये।
स्वाधिष्ठान में पहुँचकर मानसिक रूप से चक्रों के नाम लेना शुरू कर दीजिये।
एक के बाद दूसरी आवृत्तियाँ दुहराते हुए अनवरत रूप से अपनी चेतना को घुमाते जाइये।
चक्रों से होकर गुजरते हुए उन्हें पहचानने की चेष्टा में तनावपूर्ण प्रयास मत कीजिये। उनसे होकर गुजरते हुए उन पर उसी तरह निगाह डालिये मानो चलती हुई गाड़ी पर से बाहर का दृश्य देख रहे हों।
इस क्रिया में आप अपनी सजगता को एक रजत वर्णीय पतले सर्प के रूप में देख सकते हैं, जो शरीर में एक दीर्घ वृत्त के भीतर घूम रहा है।
चक्रानुसंधान का अभ्यास की नौ आवृत्तियाँ पूरी कीजिये।

## 3. नाद संचालन

पद्मासन अथवा सिद्धासन/सिद्धयोनि आसन में बैठ जाइये।
पूरी तरह श्वास बाहर निकालिये और अपनी आँखें खुली रखिये।
अपना सिर सामने झुकाइये ताकि यह आराम से नीचे की ओर रह सके।
छाती पर ठुड्ढी का अधिक दबाब नहीं डालिये।

अपनी सजगता को मूलाधार चक्र में लाइये।
मानसिक रूप से दुहराइये – 'मूलाधार, मूलाधार, मूलाधार'।
उज्जायी में श्वास लीजिये तथा इस समय आपकी चेतना आरोहण के अग्र भाग से बिन्दु तक उठनी चाहिये।
बिन्दु की ओर बढ़ते समय स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत और विशुद्धि चक्रों से गुजरते हुए इन चक्रों के प्रति पूर्ण रूप से सजग रहिये और मानसिक रूप से इनके नाम दुहराइये।
जिस समय आपकी चेतना विशुद्धि से बिन्दु की ओर जा रही है। उस समय उज्जायी श्वास के अन्तिम भाग में आपका सिर धीरे-धीरे उठकर सामान्य स्थिति से बीस डिग्री ऊपर आ जायेगा।
इस समय आपके अन्दर श्वास संचित है। बिन्दु पर आपकी सजगता है।
इसी स्थिति में मानसिक रूप से दुहराइये – 'बिन्दु, बिन्दु, बिन्दु'।
आपके द्वारा बिन्दु शब्द दुहराये जाते समय सजगता की शक्ति निर्मित होगी, और यह 'ॐ' के कण्ठोच्चार में प्रकट होगी। इसी ॐ के कण्ठोच्चार के सहारे आप मेरुदण्ड पथ से होते हुए मूलाधार में अवरोहण करेंगे।
'ॐ' की 'ओ' ध्वनि आकस्मिक और विस्फोट के साथ होगी।
'म्' ध्वनि लम्बी और खींची हुई होगी और इसका अन्त मूलाधार में एक गुंजन के साथ होगा।
जैसे-जैसे आपकी सजगता मेरुदण्ड में अवरोहण करेगी, आपके नेत्र धीरे-धीरे उन्मनी मुद्रा में बन्द होने लगेंगे।
जब आप अवरोहण मार्ग से 'ॐ' ध्वनि के साथ उतर रहे हों, तब आपको यथास्थान आज्ञा, विशुद्धि, अनाहत, मणिपुर और स्वाधिष्ठान चक्रों के प्रति मात्र सजग रहना है, उनके नाम को मानसिक रूप से नहीं दुहराना है।
जब आप मूलधार में पहुँच जायें तो अपना सिर आगे की ओर झुका लीजिये और अपनी आँखें खोल लीजिये।
मानसिक रूप से दुहराइये – 'मूलाधार, मूलाधार, मूलाधार'। ऐसा बहिर्कुम्भक के साथ कीजिये, और पहले की तरह उज्जायी में श्वास लेते हुए और चक्रों से गुजरते समय उनके प्रति सजगता के साथ आरोहण कीजिये। मानसिक रूप से उनके नाम दुहराइये।
तेरह आवृत्तियों के अन्त में 'मूलाधार, मूलाधार, मूलाधार' के साथ अभ्यास पूरा कीजिए।

## 4. पवन संचालन

पद्मासन अथवा सिद्धासन/सिद्धयोनि आसन में बैठ जाइये और आँखें खुली रखिये।

इस क्रिया में पूरे समय तक खेचरी मुद्रा का अभ्यास किया जाएगा।

पूरी तरह रेचक कीजिये और नाद संचालन के अभ्यास की तरह ही अपना सिर आगे की ओर झुका लीजिये।

मूलाधार की सजगता के साथ मानसिक रूप से 'मूलाधार, मूलाधार, मूलाधार' दुहराइये।

तब मानसिक रूप से कहिये – आरोहण। फिर अपना आरोहण अग्र भाग के पथ से सूक्ष्म उज्जायी पूरक श्वास के साथ प्रारम्भ कीजिये।

जब आप आरोहण कर रहे हों, चक्रों से होकर गुजरते हुए उनके प्रति सजग रहिये। मानसिक रूप से चक्रों के नाम दुहराइये।

आपकी सजगता जैसे-जैसे विशुद्धि से बिन्दु में आए, अपने सिर को धीरे-धीरे ऊपर उठायें जब तक वह नाद संचालन की तरह पीछे नहीं झुक जाता।

बिन्दु पर मानसिक रूप से दुहराइये, 'बिन्दु-बिन्दु-बिन्दु'।

मानसिक रूप से कहिये – 'अवरोहण'। फिर उज्जायी प्रश्वास के साथ चक्रों से गुजरते समय मानसिक रूप से उनके नाम दुहराते हुए अवरोहण कीजिये।

अवरोहण के समय आपकी आँखें धीरे-धीरे उन्मनी मुद्रा में बन्द हो जाएँगी।

मूलाधार पर पहुँचने पर आपकी आँखें पूरी तरह से बन्द हो जाएँगी।

मानसिक रूप से दुहराइये, 'मूलाधार-मूलाधार-मूलाधार', फिर आँखें खोलकर सिर सामने झुका लीजिये।

फिर उज्जायी श्वास के साथ पूर्ववत् आरोहण शुरू कीजिये।

पूर्ण श्वासों की उनचास आवृत्तियाँ पूरी कीजिये।

अन्तिम 'मूलाधार-मूलाधार-मूलाधार' के साथ आँखें खोलकर अभ्यास समाप्त कर दीजिये।

## 5. शब्द संचालन

सिद्धासन/सिद्धयोनि आसन अथवा पद्मासन में बैठिये।

अपनी आँखें खुली रखिये और अभ्यास की पूरी अवधि में खेचरी मुद्रा कीजिये।

पूर्ण रेचक के साथ अपना सिर सामने झुका दीजिये और मूलाधार चक्र के प्रति कुछ क्षणों तक सजगता रखिये।
उज्जायी में श्वास भर कर अग्र भाग के पथ से आरोहण कीजिये।
आरोहण करते हुए श्वास-ध्वनि के प्रति सजग रहिये। यह ध्वनि 'सो' मंत्र की तरह है। साथ-साथ बिना मानसिक उच्चारण के प्रत्येक क्षेत्रम् के प्रति सजग रहिये।
जब आप विशुद्धि से बिन्दु में आएँगे तो पवन संचालन एवं नाद संचालन आसन के अभ्यास की तरह सिर ऊपर उठेगा।
तब अन्दर श्वास रोकते हुए (अन्तर्कुम्भक) कुछ क्षणों के लिए बिन्दु के प्रति सजग होइये।
तब मेरुदण्ड के पथ से अवरोहण करते हुए प्रश्वास की स्वाभाविक ध्वनि तथा 'हं' मंत्र के प्रति सजग बनिए।
प्रत्येक चक्र के प्रति अपनी सजगता को बनाये रखिये, मानसिक रूप से नाम नहीं दुहराना है।
मूलाधार में पहुँचकर अपनी आँखें खोल लीजिये और तब अपना सिर नीचे झुका लीजिए।
उज्जायी में श्वास लेना प्रारम्भ कीजिए और अग्र भाग के पथ से होते हुए 'सो' मंत्र के प्रति सजगता के साथ आरोहण कीजिए।
इस विधि से श्वास की उनसठ आवृत्तियाँ पूरी कीजिए।

## 6. महामुद्रा

यह क्रिया सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन में की जा सकती है। आसन में बैठकर निचले पैर की एड़ी को मूलाधार चक्र की ओर अच्छी तरह दबाकर रखिये।
खेचरी मुद्रा में पूरी तरह रेचक करके सिर आगे की ओर झुकाइये।
आँखें खुली रखिये।
मानसिक रूप से 'मूलाधार-मूलाधार-मूलाधार' दुहराइये।
अग्र भाग के पथ से आरोहण करते हुए उज्जायी श्वास (पूरक) के साथ उन चक्रों के प्रति सजगता बनाए रखिये जिनसे होकर आप गुजर रहे हों।
विशुद्धि से बिन्दु की ओर जाते हुए अपना सिर उठाइये।
बिन्दु पर मानसिक रूप से दुहराइये, 'बिन्दु-बिन्दु-बिन्दु'।

श्वास को अन्दर रोके रखिये और मूलबन्ध तथा शाम्भवी मुद्रा का अभ्यास कीजिये।

मानसिक रूप से दुहराइये, 'शाम्भवी-खेचरी-मूल'। साथ ही, अपनी सजगता को इन अभ्यासों के केन्द्रों में ले जाइये। प्रारम्भिक साधकों को सजगता के इस प्रकार स्थानान्तरण का अभ्यास तीन बार दुहराना चाहिये। अभ्यस्त साधक यह अभ्यास बारह बार कर सकते हैं।

तब, पहले शाम्भवी मुद्रा और फिर मूलबन्ध खोलिये।

अपनी सजगता को बिन्दु पर वापस ले आइये। उज्जायी प्रश्वास (रेचक) के साथ मेरुदण्ड से होते हुए मूलाधार में वापस आ जाइये। विभिन्न चक्रों से गुजरते समय उनके प्रति सजग रहिये।

मूलाधार पर आकर सिर सामने झुका लीजिये।

फिर, 'मूलाधार-मूलाधार-मूलाधार' कहिये, और पूर्ववत् उज्जायी में श्वास भरते हुए अग्र भाग के पथ से आरोहण कीजिये।

इसकी बारह आवृत्तियाँ कीजिए और अन्तिम 'मूलाधार-मूलाधार-मूलाधार' से अभ्यास पूरा कीजिए।

**वैकल्पिक अभ्यास –** यह क्रिया उत्तानपाद आसन में भी की जा सकती है।

उत्तानपाद आसन में एक पैर सामने सीधा रहता है और दूसरे पैर की एड़ी मूलाधार या योनि मुख पर रखी जाती है।

दोनों हाथों को सीधे किए हुए पैर के घुटने के ऊपर रखिए।

उत्तानपाद आसन में महामुद्रा की अभ्यास-विधि इस प्रकार होगी –

बिन्दु पर पहुँचकर और 'बिन्दु-बिन्दु-बिन्दु' कहने के बाद आगे झुकिये और घुटने से अपना हाथ हटा लीजिये। अपने दोनों हाथों की अंगुलियों से आगे के पैर के अँगूठे को पकड़िये।

सामने फैले हुए पैर का घुटना नहीं मुड़ना चाहिये।

अब शाम्भवी मुद्रा और मूलबन्ध लगाइये।

तीन से बारह बार 'शाम्भवी-खेचरी-मूल' दुहराइये। दुहराते समय इन अभ्यासों के स्थानों पर अपनी सजगता को लाते जाइये।

शाम्भवी मुद्रा, फिर मूलबन्ध और फिर उत्तानपाद आसन को खोलते हुए घुटनों पर अपने हाथ रख लीजिये।

अब अपनी चेतना को बिन्दु पर वापस ले आइये और मेरुदण्ड से उज्जायी प्रश्वास के साथ अवरोहण कीजिए।

यदि महामुद्रा का अभ्यास उत्तानपाद के साथ किया जाए तो इसका अभ्यास चार बार दाहिने पैर को सामने फैलाकर, चार बार बायें पैर को फैलाकर और चार बार दोनों पैर फैलाकर कीजिये।

बाकी सभी बातें दोनों पद्धतियों में एक-सी रहेंगी।

### 7. महाभेद मुद्रा

इस मुद्रा का अभ्यास सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन में किया जा सकता है।

खेचरी मुद्रा में आँखें खुली रखिये, और सिर नीचे की ओर झुका लीजिये।

पूर्ण रेचक के बाद जालन्धर बन्ध लगाइये।

मानसिक रूप से 'मूलाधार-मूलाधार-मूलाधार' दुहराइये, फिर जालन्धर बन्ध खोल दीजिए।

बिन्दु की ओर अग्र भाग के पथ से आरोहण करते हुए उज्जायी श्वास लीजिये (पूरक)।

आरोहण के समय विशुद्धि से बिन्दु की ओर जाते समय अपना सिर सीधा रखिये।

मानसिक रूप से 'बिन्दु-बिन्दु-बिन्दु' दुहराइये और तब मेरुदण्ड से होते हुए मूलाधार तक उज्जायी प्रश्वास तथा उन्मनी मुद्रा के साथ अवरोहण कीजिये।

चक्रों से गुजरते समय उनके प्रति सजग होना न भूलिये।

मानसिक रूप से मूलाधार-मूलाधार-मूलाधार' दुहराइये और तब बहिर्कुम्भक के साथ जालन्धर बन्ध का अभ्यास कीजिए।

मूलबन्ध, उड्डियान बन्ध तथा नासिकाग्र दृष्टि का अभ्यास कीजिए।

मानसिक रूप से 'नासिकाग्र-उड्डियान-मूल' दुहराइये। साथ-ही-साथ इन अभ्यासों के स्थानों के प्रति भी सजग रहिये।

प्रारम्भिक साधक सजगता के इस चक्र को तीन बार दुहरायेंगे।

अनुभवी साधक इसकी बारह आवृत्तियाँ पूरी करेंगे।

नासिकाग्र दृष्टि, मूलबन्ध, उड्डियान बन्ध तथा जालन्धर बन्ध खोल दीजिये। अपनी सजगता को पुनः मूलाधार पर ले आइये।

मानसिक रूप से 'मूलाधार-मूलाधार-मूलाधार' दोहराइए।

तब उज्जायी में श्वास लेते हुए अपना सिर ऊपर स्वाभाविक अवस्था में उठाते हुए अग्र भाग से आरोहण कीजिये।

बारह आवृत्तियाँ पूरी कीजिये।

**वैकल्पिक अभ्यास –** उत्तानपाद आसन में बैठिए (जैसा कि पूर्व के अभ्यास में बताया गया है)।

अपने हाथों को सामने फैले हुए पैर के घुटनों पर रखिये, पूर्ण रेचक कीजिये और सिर को आगे की ओर झुकाइये। आँखें खुली होनी चाहिये।

मानसिक रूप से दुहराइए, 'मूलाधार-मूलाधार-मूलाधार'।

उज्जायी श्वास लेते हुए अग्र भाग के पथ से मूलाधार से बिन्दु तक आरोहण कीजिये। विशुद्धि से बिन्दु तक जाते समय सिर उठा लीजिये।

'बिन्दु-बिन्दु-बिन्दु' दुहराइये। मेरुदण्ड पथ से उज्जायी में श्वास छोड़िये। ऐसा करते समय मार्ग में पड़ने वाले चक्रों के प्रति सजगता बनाये रखिये।

मानसिक रूप से 'मूलाधार-मूलाधार-मूलाधार' दुहराते हुए जालन्धर बन्ध लगाने के लिए अपना सिर आगे झुकाइये।

उत्तानपाद मुद्रा में आने के लिए आगे झुककर अपने फैले हुए पैर के अँगूठे को पकड़िये। मूलबन्ध, उड्डियान बन्ध और नासिकाग्र दृष्टि का अभ्यास बहिर्कुम्भक लगाये हुए ही कीजिये।

मानसिक रूप से 'नासिकाग्र-उड्डियान-मूल' दुहराइये। साथ ही, इन अभ्यासों के स्थानों के प्रति भी सजग रहिये।

सजगता के इस चक्र को प्रारम्भिक साधक तीन बार और अनुभवी साधक बारह बार दुहराएँ।

तब नासिकाग्र दृष्टि, मूलबन्ध, उड्डियान बन्ध और जालन्धर बन्ध को मुक्त कीजिये।

हाथों को घुटनों पर लाइये और उठकर बैठ जाइये।

अपना सिर झुकाये रखिये।

अपनी सजगता को पुनः मूलाधार पर लाइये और तब उज्जायी में श्वास लेते हुए अग्र भाग के पथ से आरोहण कीजिये।

इस प्रकार चार आवृत्तियाँ दाहिने पैर को फैलाकर, चार आवृत्तियाँ बायें पैर को फैलाकर और चार आवृत्तियाँ दोनों पैर फैलाकर पूरी कीजिये।

प्रत्येक आसन में चौथी आवृत्ति के बाद एक बार उज्जायी पूरक के साथ बिन्दु पर आइये, बिन्दु मन्त्र को दोहराइये, मूलाधार में अवरोहण कीजिये, मन्त्र को दोहराइये और फिर विश्रान्ति की स्थिति में आ जाइये।

## 8. माण्डूकी क्रिया

भद्रासन में बैठिये और आँखें खुली रखिये।

आपके शरीर में मूलाधार चक्र के नीचे का बिन्दु धरती का स्पर्श अवश्य करे। यदि ऐसा नहीं है तो इस बिन्दु पर दबाव डालने के लिए एक छोटी गद्दी रखिये।

हाथों को घुटनों पर रखिए और नासिकाग्र दृष्टि का अभ्यास कीजिये।

नासिकाछिद्रों से आती-जाती स्वाभाविक श्वास-प्रश्वास के प्रति सजग बनिए।

श्वास अन्दर लेते समय, श्वास दोनों नासिका छिद्रों से गुजर कर भ्रूमध्य में मिलती है। श्वास छोड़ते समय, दोनों धाराएँ भ्रूमध्य से अपना मार्ग अलग करती हुई नासिका छिद्रों से बाहर निकलती हैं।

श्वास एक शांकवीय या उल्टा V का मार्ग अपनाती है।

इसका अनुभव कीजिये।

साथ-ही-साथ गंधों की अनुभूति पर एकाग्र होइये।

इस क्रिया का उद्देश्य है सूक्ष्म शरीर की सुगंध का अनुभव करना।

इसकी सुगन्ध चन्दन के समान है।

यदि आँखें थक गई हों तो कुछ देर के लिए उन्हें बन्द कर लीजिये।

फिर दुबारा नासिकाग्र दृष्टि का अभ्यास कीजिये।

इस क्रिया का अभ्यास तब तक करते जाइये जब तक कि यह आपको मदोन्मत्त न बना दे।

लेकिन अभ्यास इस सीमा तक न कीजिये कि आप इसी में लीन रह जाएँ और इसे समाप्त करना ही न चाहें।

## 9. ताड़न क्रिया

पद्मासन में बैठकर आँखें खुली रखिए।

अपनी हथेलियों को फर्श पर नितम्बों के बगल में इस तरह रखिये कि अंगुलियाँ सामने की ओर रहें।

सिर किंचित् पीछे की ओर झुकाकर शाम्भवी मुद्रा का अभ्यास कीजिये।

मुँह से सस्वर उज्जायी श्वास लीजिये।

श्वास लेते समय अनुभव कीजिये कि वह शरीर में नीचे उतर रही है, एक नली द्वारा जो आपके मुँह को मूलाधार चक्र से जोड़ रही है।

अपनी श्वास को कुछ देर रोकिये और सजगता मूलाधार में रखिये। अत्यन्त हलके सूक्ष्म मूलबंध का अभ्यास कीजिये।
अपने हाथों को नितम्ब के बगल में टेकते हुए उनके सहारे शरीर को ऊपर उठाइये। फिर शरीर को इस प्रकार हलके से नीचे गिराइये कि मूलाधार पर किंचित् चोट पहुँचे।
इस चोट करने की क्रिया की कुछ आवृत्तियाँ और कीजिये।
इसे तेजी से या कठोरता से मत कीजिये।
तीसरी आवृत्ति के बाद नाक से उज्जायी प्राणायाम में धीरे-धीरे श्वास छोड़िये।
आपको ऐसा प्रतीत होगा कि मूलाधार (जहाँ श्वास एकत्र है) से सभी दिशाओं की ओर श्वास का प्रसारण हो रहा है।
इस क्रिया का अभ्यास कुल सात बार कीजिये।
प्रति आवृत्ति आप जितनी बार ताड़न क्रिया करते हैं उसकी संख्या प्रति महीने एक के हिसाब से बढ़ाते जाइये। इस संख्या को ग्यारह तक बढ़ाइये।

## धारणा के अभ्यास

### 10. नौमुखी मुद्रा (शरीर के नौ द्वारों को बन्द करना)

सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन या पद्मासन में बैठकर आँखें बन्द कर लीजिये। पूरे अभ्यास के दौरान आँखें बन्द रहनी चाहिए।
आवश्यक हो तो मूलाधार पर दबाव डालने के लिए एक छोटी गद्दी रख लीजिये।
खेचरी मुद्रा लगा लीजिए और सिर को आगे झुकाइये। जालन्धर बन्ध का अभ्यास नहीं करना है।
मानसिक रूप से दुहराइए, 'मूलाधार-मूलाधार-मूलाधार'।
उज्जायी श्वास लेते हुए अग्र पथ से बिन्दु तक आरोहण कीजिये, विशुद्धि पार करते समय सिर ऊपर उठाते जाइये।
अँगूठे से कानों, दोनों तर्जनी अंगुलियों से आँखों, मध्यमा अंगुलियों से नासिकाछिद्रों, अनामिका अंगुलियों से ऊपरी होंठों तथा कनिष्ठिका अंगुलियों से निचले होंठों को बन्द कर के षण्मुखी मुद्रा लगाइए।
मूलबंध और वज्रोली/सहजोली मुद्रा लगाइए।

शरीर के नौ दरवाजे अब बन्द हो गये हैं, (आँख, कान, नासिका छिद्र, मुँह, मलद्वार एवं जननेन्द्रिय)।

मेरुदण्डीय-पथ और बिन्दु के प्रति सजग होइए।

अब एक चमकते हुए ताम्र त्रिशूल का मानस-दर्शन कीजिये। इसका सबसे निचला हिस्सा मूलाधार में है। इसका डंडा मेरुदण्ड में है और इसके शूल विशुद्धि से ऊपर की ओर फैले हुए हैं। ये शूल अत्यन्त पैने हैं। बीच का शूल बिन्दु को छू रहा है।

त्रिशूल अनेक बार स्वयं ऊपर उठकर बिन्दु का भेदन करेगा।

जैसे ही त्रिशूल ऊपर उठकर बिन्दु का भेदन करे, प्रत्येक बार 'बिन्दु भेदन' मंत्र दोहराइये।

कुछ समय बाद वज्रोली मुद्रा और मूलबंध खोल दीजिए।

ऊपरी द्वार खोलकर हाथों को नीचे घुटनों पर ले आइए।

बिन्दु से मूलाधार तक उज्जायी प्रश्वास छोड़िए।

मूलाधार मंत्र तीन बार मानसिक रूप से दुहराइये।

अग्र पथ से बिन्दु तक पूरक करते हुए इस क्रिया को दुहराइये।

पाँच आवृत्तियाँ पूरी कीजिये। रेचक के साथ अभ्यास समाप्त कीजिये।

**अभ्यास टिप्पणी –** इस क्रिया के दौरान मेरुदण्ड सीधा रहना चाहिये, नहीं तो बिन्दु के भेदन के संवेदन का अनुभव नहीं हो पायेगा।

यह भी जरूरी है कि वज्रोली मुद्रा का अभ्यास सही तरीके से किया जाए, क्योंकि यह संवेदन के अनुभव को और तीव्र बना देती है। संवेदन एक विद्युत-प्रवाह की तरह है, जो वज्र नाड़ी से मस्तिष्क तक जाता है। अपनी सजगता को संवेदन के उस बिन्दु पर एकाग्र करने का प्रयास कीजिये जहाँ आप बिन्दु के भेदन का अनुभव बिजली के अभिघात की तरह कर रहे हैं।

## 11. शक्ति चालिनी

सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन अथवा पद्मासन में आँखें बन्द कर के बैठिये।

पूरे अभ्यास के दौरान आँखें बन्द रहनी चाहिए।

खेचरी मुद्रा का अभ्यास कीजिये।

पूरी श्वास बाहर निकाल दीजिये और मूलाधार का ख्याल कीजिये।

अपना सिर सामने की ओर झुकाइये।

मानसिक रूप से दुहराइये, 'मूलाधार-मूलाधार-मूलाधार' और तब अग्र पथ से उज्जायी श्वास लेते हुए बिन्दु तक आरोहण कीजिये। बिन्दु पर पहुँचने के साथ सिर ऊपर उठा लीजिये।

अन्तर्कुम्भक लगाकर नाक, कानों, आँखों और होठों को अंगुलियों से बन्द करते हुए षण्मुखी मुद्रा का अभ्यास कीजिये।

मेरुदण्ड से मूलाधार तक चेतना के अवरोहण और अग्र पथ से बिन्दु तक आरोहण के अनवरत चक्र के प्रति सजगता बनाये रखिये। श्वास अन्दर रोके रखिये।

आप अपने अन्दर एक पतले हरे सर्प का, जो सूक्ष्म मार्ग से गुजर रहा है, मानस-दर्शन कर सकते हैं।

इस सर्प की पूँछ बिन्दु में है, इसका शरीर मूलाधार तक नीचे जाते हुए फिर अग्र-पथ से ऊपर की ओर गया है।

इसका सिर भी बिन्दु में है और मुँह में इसकी पूँछ दबी हुई है।

इस सर्प को ध्यान से देखेंगे तो इसे सूक्ष्म मार्ग पर चक्कर लगाते हुए पायेंगे।

यह अपना कोई अलग मार्ग भी बना सकता है।

यह जो कुछ कर रहा हो, इसे सिर्फ देखते जाइये।

जब आप और अधिक श्वास न रोक सकें तब षण्मुखी मुद्रा खोलकर हाथों को घुटनों पर ले आइये और अपनी सजगता बिन्दु पर लाइये।

उज्जायी प्रश्वास छोड़ते हुए मूलाधार तक अवरोहण कीजिये।

मूलाधार पर मानसिक रूप से मूलाधार मंत्र तीन बार दोहराइए, और पुन: अग्र भाग से आरोहण कीजिये।

बिना रुके हुए इस क्रिया को पाँच बार या पाँच श्वास की गिनती तक दुहराइये।

**अभ्यास टिप्पणी –** वज्रोली मुद्रा एवं मूल बंध का अभ्यास षण्मुखी मुद्रा के साथ-साथ किया जा सकता है।

## 12. शाम्भवी

सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन या पद्मासन में बैठिये।

आँखें बन्द करके खेचरी मुद्रा का अभ्यास कीजिये।

एक कमल का मानस-दर्शन कीजिये। इसकी लम्बी पतली नाल नीचे की ओर फैलती चली गयी है।

कमल की जड़ पारदर्शी है अथवा हरे रंग की है।
वह मूलाधार चक्र से फैलती है।
कमल की डंडी आपके मेरुदण्ड में है।
कमल का फूल सहस्रार में है, वह प्रस्फुटित नहीं हुआ है, कली के रूप में है।
कली के नीचे कुछ नई हल्के हरे रंग की कोपलें हैं।
फूल की पँखुड़ियाँ गुलाबी रंग की हैं, जिन पर लाल शिरायें हैं।
कमल के फूल का प्रत्यक्ष दर्शन करने का प्रयास कीजिये।
आप इसका मानस-दर्शन चिदाकाश में करते हैं, परन्तु इसका अनुभव शरीर में होता है।
श्वास छोड़कर अपनी सजगता को मूलाधार में कमल की जड़ में ले जाइये।
उज्जायी प्राणायाम में श्वास लीजिए और अपनी सजगता को मेरुदण्ड में स्थित कमल-नाल पर ले जाइये।
श्वास (पूरक) के अंत में आप कमल-नाल के सिरे पर कमल की कली तक पहुँच जायेंगे।
आपका आरोहण एक कीट की तरह होगा जो किसी पुष्प-नाल के अन्दर से होकर ऊपर चढ़ता जाता है।
श्वास अन्दर रोके हुए अपनी सजगता को सहस्रार पर ले जाइये।
आप कमल के भीतर हैं, लेकिन आप इसे बाहर से भी देख सकते हैं।
यह बहुत धीरे-धीरे खुलेगा।
जब यह खुलेगा तो आप इसके केन्द्र में पीत-पराग-मंडित पुष्प-केसर को देखेंगे।
यह फिर धीरे-धीरे बन्द हो जायेगा और फिर तुरन्त ही खुल जायेगा।
जब कमल का खुलना और बन्द होना रुक जाए और यह बन्द रह जाए, तब धीरे-धीरे नाल से होकर उज्जायी प्रश्वास के साथ मूलाधार में अवरोहण कीजिये।
मूलाधार पर कुछ सैकण्ड ठहरिये और जड़ चारों दिशाओं में फैल रहा है उसका मानस-दर्शन कीजिये।
तब फिर धीरे-धीरे श्वास लेते हुए नाल से होकर आरोहण कीजिए।
आरोहण-अवरोहण की क्रिया ग्यारह आवृत्तियों में करने के बाद इस क्रिया के अभ्यास को समाप्त कीजिये।

## 13. अमृत पान

सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन या पद्मासन में बैठिये।
पूरे अभ्यास के दौरान आँखें बन्द रखिए और खेचरी मुद्रा का अभ्यास कीजिए।
अपनी सजगता को मणिपुर चक्र तक ले आइये जहाँ उष्ण, मृदु रस का भंडार है।
उज्जायी में पूरी तरह श्वास बाहर निकालिये।
उज्जायी में श्वास लीजिये। श्वास की चूषण शक्ति द्वारा मेरुदण्ड के पथ से होते हुए विशुद्धि चक्र तक इस रस को ऊपर खींच लीजिए।
कुछ सैकण्डों तक विशुद्धि पर रुकिये।
मणिपुर से प्राप्त अमृत विशुद्धि की शीतलता के कारण बर्फ की तरह ठंडा हो जायेगा।
तब अमृत पथ से उज्जायी में ललना चक्र तक श्वास छोड़िये। श्वास के साथ शीतल अमृत को ललना तक ले जाइये।
आप जैसे ही ललना पर पहुँचेंगे वैसे ही आपकी श्वास स्वयं बिखर जाएगी।
इस समय आपकी सजगता को तुरन्त सीधे मणिपुर में ले आइए।
दूसरी बार उज्जायी श्वास लेते समय ऊर्ध्वमुखी रस संचार का अभ्यास जारी रखिये। नौ आवृत्तियों में अभ्यास पूरा कीजिए।

## 14. चक्र भेदन

सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन या पद्मासन लगाइए।
पूरे अभ्यास के दौरान आँखें बन्द रखिए।
खेचरी मुद्रा एवं उज्जायी प्राणायाम का अभ्यास कीजिये। श्वास और प्रश्वास के बीच बिना किसी अन्तराल के स्वाभाविक ढंग से श्वास लेते रहिये।
श्वास छोड़ते हुए अपनी सजगता को नीचे ले आइये स्वाधिष्ठान चक्र पर जो मेरुदण्ड के मूल पर स्थित है।
श्वास लीजिये और अपनी सजगता को सर्वप्रथम मूलाधार में ले आइये, तत्पश्चात् अग्र भाग के पथ से धीरे-धीरे ऊपर लाइये।
विशुद्धि तक आने पर श्वास रुकने लगेगी और आप श्वास छोड़ना शुरू कर देंगे। विशुद्धि से बिन्दु तक श्वास छोड़िये और फिर मेरुदण्ड से अवरोहण कर आज्ञा से स्वाधिष्ठान चक्र तक एक आवृत्ति पूरी कीजिये।

इस क्रिया की उनसठ आवृत्तियाँ होनी चाहिये, लेकिन यदि इस संख्या तक पहुँचने के पूर्व ही मन अन्तर्मुखी होने लगे, तो इसे रोक कर दूसरी क्रिया शुरू कर देनी चाहिये।

## 15. सुषुम्ना दर्शन

सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन या पद्मासन में बैठिये।
आँखें बन्द करके सामान्य श्वास लेते रहिये।
इस क्रिया में श्वास और सजगता के बीच कोई सम्बन्ध नहीं है।
अपनी सजगता को मूलाधार में लाइये।
काल्पनिक रूप से पेंसिल लेकर मूलाधार पर एक वर्ग खींचिये।
वर्ग के अन्दर यथासम्भव बड़े से बड़े आकार का एक उलटा समभुज त्रिभुज अंकित कीजिये।
तब वर्ग के चारों कोनों को छूते हुए एक वृत्त बनाइये।
वर्ग की प्रत्येक भुजा के लिए चार पँखुड़ियाँ बनाइये।
अपनी सजगता को स्वाधिष्ठान में ले आइये।
वहाँ एक वृत्त बनाइये, जिसका व्यासार्द्ध मूलाधार पर अंकित वृत्त के व्यासार्द्ध जितना हो। वृत्त के चारों ओर छः पँखुड़ियाँ बनाइये। उसकी परिधि के तल में एक अर्द्धचन्द्र अंकित कीजिये।
अब मणिपुर में आ जाइये।
एक वृत्त खींचिये और इस वृत्त को आवृत्त करता, यथासम्भव बड़े से बड़ा त्रिभुज खींचिये। इसके केन्द्र में आग का गोला अंकित कीजिये।
इस वृत्त के चारों ओर दस पँखुड़ियाँ अंकित कीजिये।
चेतना को अनाहत तक ले जाइये।
वहाँ दो त्रिकोण अंकित कीजिये, एक का सिरा ऊपर की ओर तथा दूसरे का सिरा नीचे की ओर हो। दोनों त्रिकोण एक-दूसरे को काटते हैं तथा आपस में गुँथे हुए हैं।
उन्हें बारह पँखुड़ियों से युक्त एक वृत्त से घेर दीजिये।
तब विशुद्धि पर आइए।
एक वृत्त खींचिये। उस वृत्त के अन्दर एक छोटा वृत्त, अमृत की बून्द की तरह अंकित कीजिये। इस वृत्त के चारों ओर सोलह पँखुड़ियाँ बनाइये।
अब आज्ञा में आइये।

वहाँ पर एक वृत्त अंकित करके उसके अन्दर संस्कृत में एक बहुत बड़ा 'ॐ' लिखिये।

वृत्त के दायें-बायें एक-एक वृहदाकार पँखुड़ी अंकित कीजिए।

बिन्दु पर एक अर्द्धचन्द्र अंकित कीजिए और उसके ऊपर एक छोटा-सा वृत्त बनाइये।

सहस्रार पर पहुँचिये।

वहाँ भी एक वृत्त बनाइए। उस वृत्त में एक बड़े से बड़ा त्रिभुज बनाइये, जिसका सिरा ऊपर की ओर हो।

इस वृत्त के चारों ओर एक हजार पँखुड़ियाँ हैं।

एक झलक में सभी चक्रों को अपने-अपने सही स्थानों में देखने का प्रयास कीजिये।

यदि उन्हें एक साथ देख पाना बहुत कठिन लगे, तो पहले दिन सिर्फ दो चक्र देखिये। अपने इस मानस-दर्शन में प्रतिदिन एक चक्र जोड़ते जाइये, जब तक कि आप सभी चक्रों को एक साथ नहीं देखने लगें।

## 16. प्राण आहुति

सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन या पद्मासन में बैठ जाइये।

आँखें बन्द करके सामान्य ढंग से श्वास लीजिये।

अपने सिर पर एक दिव्य हाथ का स्निग्ध स्पर्श अनुभव कीजिये।

यह हाथ आपके शरीर में दिव्य प्राण भर रहा है। यह प्राण सहस्रार से मेरुदण्ड में होकर नीचे की ओर यात्रा कर रहा है।

आप इसका अनुभव शीत या ताप की लहर, ऊर्जा, विद्युतधारा, चुम्बकीय शक्ति या वायु अथवा द्रव्य के प्रवाह की तरह कर सकते हैं।

इसके प्रवाह से आपको कम्पनों, आघातों, झटकों या गुदगुदी की अनुभूति हो सकती है।

जब प्राण मूलाधार में पहुँच जाएँ, तब तुरंत दूसरी क्रिया का अभ्यास शुरू कर दीजिये, बिना दूसरी बार प्राण की अनुभूति की प्रतीक्षा करते हुए।

## 17. उत्थान

सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन या पद्मासन में बैठ जाइये।

पूरे अभ्यास के दौरान अपनी आँखें बन्द रखिए।

इस क्रिया में भी आपको अपनी श्वास-प्रश्वास की गति स्वाभाविक रखनी है।

अपनी सजगता को मूलाधार चक्र में ले आइये।

इसका स्पष्ट रूप से, सभी बारीकियों के साथ मानस-दर्शन करने का प्रयास कीजिए।

आप एक काला, धूमिल तथा गैसीय पदार्थ से बना हुआ शिवलिंग देखेंगे।

शिवलिंग के तल और शिखर नहीं हैं। एक लाल बाल-सर्प इसे घेरे हुए है।

यह सर्प कुंडली खोलना चाहता है ताकि वह ऊपर सुषुम्ना की ओर बढ़ सके।

आप देखेंगे कि ऐसा करने की चेष्टा में सर्प अपने को सीधा कर रहा है और एक क्रुद्ध फुफ्कार के साथ सुषुम्ना मार्ग से ऊपर उठ रहा है।

शिवलिंग के तल में ही सर्प की पूँछ जमी रहेगी, लेकिन उसका सिर और शरीर ऊपर की ओर उठेंगे और पुन: नीचे आ जाएँगे।

कभी-कभी सर्प समेत शिवलिंग शरीर में अपना स्थान परिवर्तित कर सकता है। इस तरह कभी आप उसे आज्ञा या सहस्रार में भी देख सकते हैं।

सर्प का सिर काफी चौड़ा है, आपके शरीर के बराबर चौड़ा, लेकिन इसका आकार नाग जैसा नहीं है।

कुछ देर बाद आपको अपने शरीर के संकुचन का अनुभव होगा।

इसके बाद आनन्द की स्थिति आएगी।

जब ऐसा हो तब क्रिया को बन्द कर के अगली क्रिया कीजिये।

## 18. स्वरूप दर्शन

सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन या पद्मासन में बैठे रहिए।

आँखें बन्द कर लीजिए।

अपने शरीर के प्रति सजग हो जाइए।

आपका शरीर पूर्णत: स्थिर है और आप इस स्थिरता के प्रति पूर्णत: सजग हैं।

आपको एक चट्टान की तरह पूर्णत: स्थिर होना है।

जब आप पूर्णत: स्थिर हो जाएँ, तब अपने स्वाभाविक श्वास के प्रति भी सजग होइये।

अपने श्वास के अनवरत प्रवाह पर ध्यान दीजिये, परन्तु इसका भी ख्याल रखिये कि आपका शरीर पूर्णत: स्थिर है।
आपका शरीर कड़ा होने लगेगा।
यह जितना ही कड़ा होता जायेगा, आपकी सजगता पूर्णत: आपकी श्वास क्रिया पर केन्द्रित हो जाएगी। शरीर स्वत: अधिकाधिक कड़ा होता जाएगा।
जब आपका शरीर पत्थर की तरह कड़ा हो जाए और आप इसे चाह कर भी न हिला सकें, तब अगली क्रिया का अभ्यास प्रारम्भ कीजिये।

## 19. लिंग संचालन

अपने उसी आसन में बैठे रहिये, जिसमें आप जड़वत् हो गये हैं। आँखें बन्द रखिये।
शरीर के कड़ेपन के कारण आपकी श्वास स्वत: उज्जायी श्वास बन जाएगी और खेचरी मुद्रा लग जाएगी।
अपनी श्वास के प्रति पूर्णत: सजग रहिये।
आप अनुभव करेंगे कि प्रत्येक श्वास (पूरक) के साथ आपका शरीर फैल रहा है।
और प्रत्येक प्रश्वास के साथ आपका शरीर सिकुड़ता है।
यह अजीब बात है, क्योंकि आपका शरीर हिल नहीं रहा है, वह पत्थर की तरह कड़ा है।
वस्तुत: आपका सूक्ष्म शरीर ही फैल और सिकुड़ रहा है।
जितना ही आप इस सिकुड़ने और फैलने की प्रक्रिया पर ध्यान देंगे, यह उभर कर और स्पष्ट होती जाएगी।
कुछ समय बाद आप भौतिक शरीर की चेतना खो देंगे और सीधे केवल सूक्ष्म शरीर को देखेंगे।
फिर भी संकुचन का स्तर बढ़ता और स्पष्ट होता चला जाएगा।
अन्तत: आप एक ऐसी स्थिति पर पहुँच जायेंगे जहाँ संकुचन के साथ आपका सूक्ष्म शरीर एक प्रकाश के बिन्दु में परिवर्तित हो जाएगा।
जब ऐसा होने लगे तब तुरन्त इस क्रिया को बन्द करके अगली क्रिया का अभ्यास प्रारम्भ कीजिये।

## 20. ध्यान

आपने अपने सूक्ष्म शरीर को प्रकाश-बिन्दु के रूप में अनुभव कर लिया है।
उस प्रकाश बिन्दु को देखिये, वह आपको सुनहले अंडे के रूप में दिखाई देगा।
जब आप इस सुनहले अंडे को देखेंगे, तो यह बड़ा होने लगेगा।
सुनहला अंडा प्रकाशमान है और पूरी तीव्रता से चमक रहा है, परन्तु इससे किरणें नहीं फूट रही हैं।
सुनहला अंडा जैसे-जैसे बड़ा होता जायेगा, यह आपके सूक्ष्म और भौतिक शरीर का आकार ग्रहण करता जाएगा। यह आकार भौतिक नहीं है और सूक्ष्म भी नहीं है।
एक दीप्त प्रकाश है।
यह आपका कारण अस्तित्व है।

# विभिन्न धर्मों में मंत्र

सभी धर्मों में जाने-अनजाने मंत्रों का उपयोग होता आया है। आपकी रुचि और जानकारी के लिए कुछ चुने हुए सर्वोत्तम मंत्रों की सूची नीचे दी गई है। किसी विशेष मंत्र का उपयोग करने के लिए किसी को हिन्दू या बौद्ध धर्म का अनुयायी होना आवश्यक नहीं है। एक ईसाई भी इनका उपयोग कर लाभान्वित हो सकता है, केवल एक शर्त है कि मंत्र उसके मन को लिए स्वीकार्य हो।

प्रथम खण्ड के मंत्र वैदिक व तंत्र शास्त्रों से उद्धृत हैं। इनका विभाजन इनके देवी-देवताओं के आधार पर किया गया है। तत्पश्चात् विभिन्न धर्मों से लिए गये मंत्र दिए गये हैं।

## गायत्री मन्त्र

**गायत्री**

ॐ भूर्भुवः सुवः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि
धियो यो नः प्रचोदयात्॥

**गणेश**

- ॐ एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि
  तन्नो दन्तिः प्रचोदयात्
- ॐ तत्कराटाय विद्महे हस्तिमुखाय धीमहि
  तन्नो दन्तिः प्रचोदयात्
- ॐ तत्पुरुषाय विद्महे हस्तिमुखाय धीमहि
  तन्नो दन्तिः प्रचोदयात्

### ब्रह्मा

- ॐ वेदात्मने च विद्महे हिरण्यगर्भाय धीमहि तन्नो ब्रह्मा प्रचोदयात्
- ॐ चतुर्मुखाय विद्महे कमण्डलुधराय धीमहि तन्नो ब्रह्मा प्रचोदयात्

### विष्णु

- ॐ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्
- ॐ नारायणाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्

### नृसिंह

- ॐ वज्रनखाय विद्महे तीक्ष्णदंष्ट्राय धीमहि तन्नो नृसिंहः प्रचोदयात्
- ॐ नृसिंहाय विद्महे वज्रनखाय धीमहि तन्नो सिंहः प्रचोदयात्

### गरुड़

ॐ तत्पुरुषाय विद्महे सुवर्णपक्षाय धीमहि तन्नो गरुडः प्रचोदयात्

### रुद्र/शिव

- ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्
- ॐ तत्पुरुषाय विद्महे सहस्राक्षाय महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्

### नन्दिकेश्वर

ॐ तत्पुषाय विद्महे नन्दिकेश्वराय धीमहि तन्नो वृषभः प्रचोदयात्

### षण्मुख

- ॐ षण्मुखाय विद्महे महासेनाय धीमहि तन्नो स्कन्दः प्रचोदयात्
- ॐ षण्मुखाय विद्महे महासेनाय धीमहि तन्नो षष्ठः प्रचोदयात्

### सूर्य

- ॐ भास्कराय विद्महे महाद्युतिकराय धीमहि तन्नो आदित्यः प्रचोदयात्
- ॐ आदित्याय विद्महे सहस्रकिरणाय धीमहि तन्नो भानुः प्रचोदयात्
- ॐ प्रभाकराय विद्महे दिवाकराय धीमहि तन्नो सूर्यः प्रचोदयात्

### दुर्गा

- ॐ कात्यायन्यै च विद्महे कन्याकुमार्यै च धीमहि तन्नो दुर्गा प्रचोदयात्
- ॐ महाशूलिन्यै च विद्महे महादुर्गायै च धीमहि तन्नो भगवति प्रचोदयात्

### सरस्वती

ॐ ऐं वाग्देव्यै च विद्महे कामराजाय धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात्

### राम

ॐ दशरथात्मजाय विद्महे सीतावल्लभाय धीमहि तन्नो रामः प्रचोदयात्

### हनुमान

ॐ आञ्जनेयाय विद्महे वायुपुत्राय धीमहि तन्नो हनुमान् प्रचोदयात्

### कृष्ण

ॐ देवकीनन्दनाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो कृष्णः प्रचोदयात्

### गोपाल

ॐ गोपालाय विद्महे गोपीजन वल्लभाय धीमहि तन्नो गोपालः प्रचोदयात्

### परशुराम

ॐ जामदग्न्याय विद्महे महावीराय धीमहि तन्नो परशुरामः प्रचोदयात्

### लक्ष्मी

ॐ महादेव्यै च विद्महे विष्णुपत्न्यै च धीमहि तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात्

### शक्ति

ॐ सर्वसम्मोहिन्यै च विद्महे विश्वजनन्यै च धीमहि
तन्नो शक्तिः प्रचोदयात्

### अन्नपूर्णा

ॐ भगवत्यै च विद्महे माहेश्वर्यै च धीमहि तन्नो अन्नपूर्णा प्रचोदयात्

## काली

- ॐ कालिकायै च विद्महे श्मशान वासिन्यै च धीमहि
  तन्नो अघोरा प्रचोदयात्
- ॐ आद्यायै च विद्महे परमेश्वर्यै च धीमहि तन्नो काली: प्रचोदयात्

## दक्षिणामूर्ति

ॐ दक्षिणामूर्तये च विद्महे ध्यानस्थाय च धीमहि तन्नो धीश: प्रचोदयात्

## तन्त्रिका (ब्रह्म)

ॐ परमेश्वराय विद्महे परम तत्त्वाय धीमहि तन्नो ब्रह्म प्रचोदयात्

## गुरु

ॐ गुरुदेवाय विद्महे परब्रह्मणे धीमहि तन्नो गुरु: प्रचोदयात्

## हंस

- ॐ हंसाय विद्महे परमहंसाय धीमहि तन्नो हंस: प्रचोदयात्
- ॐ परमहंसाय विद्महे महत्तत्त्वाय धीमहि तन्नो हंस: प्रचोदयात्

## हयग्रीव

ॐ वागीश्वराय विद्महे हयग्रीवाय धीमहि तन्नो हंस: प्रचोदयात्

## शिवानन्द

ॐ तत्पुरुषाय विद्महे शिवानन्दाय धीमहि तन्नो ब्रह्म प्रचोदयात्

## अजपा

ॐ हंस हंसाय विद्महे सोऽहं हंसाय धीमहि तन्नो हंस: प्रचोदयात्

# उपनिषदों से लिए गये मन्त्र

1. ॐ
2. हरि: ॐ
3. हरि: ॐ तत्सत्
4. अहं ब्रह्मास्मि
5. तत्त्वमसि
6. अयमात्मा ब्रह्म
7. प्रज्ञानं ब्रह्म
8. शिवोऽहं
9. सच्चिदेकं ब्रह्म

## बीज मन्त्र

| मन्त्र | देवी या देवता |
|---|---|
| ॐ | ब्रह्म नाद |
| ह्रौं | शिव |
| दुं | दुर्गा |
| क्रीं | कालिका |
| ह्रीं | महामाया |
| ऐं | महासरस्वती |
| श्रीं | महालक्ष्मी |
| क्लीं | कृष्ण अथवा कामदेव |
| हुं | भैरव |
| गं | गणेश |
| क्ष्रौं | नृसिंह |

## गणेश मन्त्र

गायत्री के लिए गायत्री के खण्ड में देखें।

- ॐ श्री गणेशाय नमः।
- ॐ श्री महागणपतये नमः।
- ॐ श्रीं ह्रीं क्रीं ग्लौं गं गणपतये वर वरदे सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा।
- ह्रीं गं ह्रीं गणपतये स्वाहा।
- ॐ गं ॐ।
- ॐ गं गणपतये नमः।
- ॐ नमो भगवते गजाननाय।
- ॐ वक्रतुण्डाय हुं।

## शिव मन्त्र

*गायत्री के लिए गायत्री के खण्ड में देखें।*

- ॐ नमः शिवाय
- ॐ हरये नमः

- ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
  उर्वारुकमिव बन्धनात् मृत्योर्मुक्षीयमामृतात्॥
- ॐ नमः नीलकण्ठाय
- ह्रौं
- ह्रौं ह्रीं ठः
- रं क्षं मं यं औं ऊं

## वैष्णव मन्त्र

*गायत्री के लिए गायत्री के खण्ड में देखें।*

- ॐ नारायणाय नमः
- ॐ विष्णवे नमः
- ॐ विष्णवे पराज्योत्ये नमः
- ॐ परमात्मने नमः
- ॐ अनन्ताय नमः
- ॐ अच्युताय नमः
- ॐ गोविन्दाय नमः
- ॐ अच्युतानन्त गोविन्दाय नमः
- ॐ क्लीं हृषिकेशाय नमः
- ॐ श्री श्रीधराय नमः
- ॐ श्री मधुसूदनाय नमः
- ॐ दामोदराय नमः
- ॐ नमो नारायणाय
- ॐ श्रीमन् नारायण चरणौ शरणं प्रपद्ये

## श्री राम मन्त्र

*गायत्री के लिए गायत्री के खण्ड में देखें।*

- ॐ श्री राम जय राम जय जय राम
- ॐ श्री रामाय नमः
- ॐ श्री सीतारामचन्द्राभ्यां नमः
- रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे
  रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये नमः

- ॐ श्री रामः शरणं मम्
- ॐ श्री श्री सीतारामः शरणं
- ॐ श्री रामचन्द्र-चरणौ-शरणं प्रपद्ये
- रं रामाय नमः
- हं सो रामाय नमः सोऽहं
- ह्रीं रामाय नमः ह्रीं
- ह्रौं रामाय नमः ह्रौं
- ऐं रामाय नमः
- क्लीं रामाय नमः

## कृष्ण मन्त्र

*गायत्री के लिए गायत्री के खण्ड में देखें।*

- ॐ नमो भगवते वासुदेवाय
- ॐ श्री कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजन वल्लभाय नमः
- ॐ श्री कृष्णाय नमः
- ॐ श्री कृष्णः शरणं मम्
- क्लीं
- कृष्णः
- क्लीं कृष्णायः
- क्लीं कृष्णायः गोविन्दाय क्लीं।

## शक्ति मन्त्र

### काली

- ह्रीं श्रीं क्रीं परमेश्वर्यै स्वाहा
- ह्रीं श्रीं क्रीं परमेश्वरी कालिके ह्रीं श्रीं क्रीं स्वाहा
- ॐ श्री कालिकायै नमः
- ॐ ह्रीं मे स्वाहा (काली हृदय)
- क्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके
  क्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं स्वाहा
- क्रीं ह्रीं श्रीं

### दुर्गा

- ॐ श्री दुर्गायै नम:
- ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नम:

### सरस्वती

- ॐ श्री सरस्वत्यै नम:
- ॐ ह्रीं ऐं ह्रीं ॐ सरस्वत्यै नम:

### महालक्ष्मी

- ह्रीं श्रीं क्रीं महालक्ष्म्यै नम:
- ॐ श्रीं ह्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद
  श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्म्यै नम:

### राधा

- श्री राधायै स्वाहा
- ॐ ह्रीं राधिकायै नम:

### अन्नपूर्णा

ह्रीं नमो भगवती माहेश्वरी अन्नपूर्णे स्वाहा

### इन्द्राक्षी

ॐ श्रीं ह्रीं क्रीं ऐं इन्द्राक्ष्यै नम:

### चामुण्डा

ॐ ऐं ह्रीं क्रीं चामुण्डायै विच्चे

## हनुमान के सिद्ध मन्त्र

निम्नलिखित सिद्ध मन्त्रों का उपयोग शक्ति और सिद्धि के लिए किया जाता है।
*गायत्री के लिए गायत्री के खण्ड में देखें*

- ॐ हनुमते नम:
- ॐ नमो भगवते आञ्जनेयाय महाबलाय स्वाहा

- ॐ हनुमते रुद्रात्मकाय हुं फट्
- ॐ पवन नन्दनाय स्वाहा
- ॐ नमो भगवते आञ्जनेयाय अमुकस्य शृंखला त्रोटय त्रोटय बन्ध मोक्षं कुरु कुरु स्वाहा।
- पूर्वकपिमुखाय पञ्चमुख हनुमते टं टं टं टं टं सकल शत्रु संहारणाय स्वाहा।
- ॐ पश्चिममुखाय गरुडाननाय पञ्चमुख हनुमते मं मं मं मं मं सकल विषहर स्वाहा

## चक्रों के बीज तथा मात्रिका मंत्र

| चक्र | मात्रिका मन्त्र | बीज मन्त्र | तत्त्व |
|---|---|---|---|
| मूलाधार | वं शं षं सं | लं | पृथ्वी |
| स्वाधिष्ठान | बं भं मं यं रं लं | वं | जल |
| मणिपुर | डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं | रं | अग्नि |
| अनाहत | कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं | यं | वायु |
| विशुद्धि | अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं एं ऐं ओं औं अं अः | हं | आकाश |
| आज्ञा | हं क्षं | ॐ | मन |

## विविध मन्त्र

इन मन्त्रों का उपयोग दैनिक जीवन में इच्छाओं की पूर्ति, रोगोपचार, अच्छे स्वास्थ्य की प्राप्ति, बाधाओं को दूर करने इत्यादि के लिए किया जाता है।

### सर्पों से सुरक्षा पाने हेतु

- ॐ नर्मदायै विचारणा
- अनन्तं वासुकिं शेषं पद्मनाभं च कांबलं
  शंखपालं धृतराष्ट्रं तक्षकं कालीयं तथा मुनिराजं आस्तिकं नम:
- ॐ प्ल: सर्पकुलाय स्वाहा अशेहकुल सर्व कुलाय स्वाहा

### सर्प का विष निकालने के लिए

- नाम प्रभाउ जान शिव नीको।
  कालकूट फलु दीन्ह अमि को ॥
- गरुडध्वजानुस्मरणात् विषवीर्यं व्यपोहति

### बिच्छू का विष निकालने के लिए

छप् स्वाहा

### किसी भी बीमारी को दूर करने के लिए

- ॐ ह्रीं हं स:
- ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं इन्द्राक्ष्यै नम:

### ज्वर के उपचार के लिए

- ॐ नमो भगवते रुद्राय नम: क्रोधेश्वराय नम:
  ज्योति पतंगाय नमो नम: सिद्धि रुद्र अजापयति स्वाहा
- ॐ विन्ध्य वानन हुं फट् स्वाहा।
- ॐ नमो भगवते चण्डी चण्डी अमुकस्य ज्वरस्य
  शर प्रज्वलित परशुपाणये परशाय फट्
- ॐ नमो महा उच्छिष्ट योगिनी प्रकीर्ण द्रंष्ट्रा
  खादति थर्वति नश्यति भक्षयति
  ॐ ठ: ठ: ठ: ठ:।

### अच्छे स्वास्थ्य के लिए

- मां भयात् सर्वतो रक्ष श्रीयं वर्धय सर्व।
  शरीरारोग्यं मे देहि देव देव नमोस्तुते॥
- ॐ ऐं ह्रीं श्रीं नमः शरर्धराय
  अस्य मम् सर्व रोग विनाशाय ज्वल ज्वल
  एनं दीर्घायुषं कुरु कुरु स्वाहा।
- अच्युतं च अमृतं चैव जपेदौषधि कर्माणि।
- ॐ नमो परमात्मने परब्रह्म मम् शरीरे
  पाहि पाहि कुरु कुरु स्वाहा।

### धन हेतु

- ॐ लक्ष्मी वं श्री कमलाधारं स्वाहा।
- जिमि सरिता सागर महुं जाहीं।
  जद्यपि ताहि कामना नाहीं॥
- विश्व भरण पोषण कर जोई।
  ताकर नाम भरत अस होई॥
- ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलालये मह्यं प्रसीद प्रसीद प्रसीद स्वाहा।
- ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्म्यै नमः

### बाधा और कठिनाइयों को दूर करने हेतु

- सकल विघ्न व्यापहिं नहिं तेही।
  राम सुकृपा बिलोकहिं जेही॥
- सर्वाबाधाप्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि।
  एवमेव त्वयाकार्यमस्मद्वैरि विनाशनम्॥
- ॐ रां रां रां रां रां रो रो रां कष्टं स्वाहा।
- ॐ नमः शान्ते प्रशान्ते गुं ह्रीं ह्रीं सर्व क्रोध प्रशमनी स्वाहा।
- राम रक्षा स्तोत्र (पूरा अध्याय)

### कुदृष्टि के निवारण के लिए

श्याम गौर सुन्दर दोउ जोरी।
निरखहिं छबि जननी तृण तोरी॥

## शान्ति और वैराग्य हेतु

- दैहिक दैविक भौतिक तापा।
  राम राज नहिं काहू ब्यापा ॥
- भरत चरित करि नेमु तुलसी जे सादर सुनहिं।
  सिया राम पद नेहु अवसि होइ भव रस विरति ॥

## शंका निवारण हेतु

राम कथा सुन्दर करतारी।
संशय बिहग उडावन हारी॥

## विचार शुद्धि के लिए

ताके जुग पद कमल मनावउं।
जासु कृपा निर्मल मति पावउं ॥

## बवासीर के लिए

ॐ छै छुइ छलक छलाई
आहुं आहुं क्लं क्लां क्लीं हुं

## चेचक के लिए

ॐ श्रीं श्रीं श्रुं श्रां श्रौं श्र: ॐ खरस्था दिगम्बरा
विकट नयनां तोयास्थितं भजामि स्वाहा
स्वांगस्थां प्रचण्डरूपां नमाभ्यात्मभिभभूतये

## पाचन संस्थान को प्रदीप्त करने के लिए

अगस्त्यं कुम्भकर्णं च शमिन्च वडवानलं।
भोजनं पचनार्थाय स्मरेदभ्यां च पञ्चकं ॥

## पुत्र प्राप्ति के लिए

- सर्वबाधाविनिर्मुक्तो धनधान्यसुतान्वित:
  मनुष्यो तत्प्रसादेन भविष्यति न संशय:
- ॐ ह्रीं लज्जा जलयं ठ: ठ: ल: ॐ ह्रीं स्वाहा।

## विवाह हेतु

- तब जनक पाइ बसिष्ठ आयसु ब्याह साज सँवारि कै।
  मांडवी श्रुतकीरति उरमिला कुँअरि लईं हँकारि कै॥
- कात्यायनी महामाये महायोगिन्यधीश्वरी।
  नन्द गोपसुतं देवि पतिं मे कुरुते नमः॥

## गर्भाशय में बच्चे की सुरक्षा के लिए

ॐ ठं ठां ठिं ठीं ठुं ठूं ठें ठैं ठों ठौं ठः ठः ॐ

## दीर्घायु के लिए

- ह्रौं ॐ जौं सा ॐ भूर्भुवः स्वाहा ॐ
- ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
  उर्वारुकमिव बन्धनात् मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्॥

## चोरी से सुरक्षा पाने हेतु

ॐ कफल - कफल - कफल

## मुकदमा जीतने के लिए

पवन तनय बल पवन समाना।
बुधि बिबेक बिज्ञान निधाना॥

## सीताजी के दर्शन के लिए

जनकसुता जगजननि जानकी।
अतिसय प्रिय करुणानिधान की॥

## हनुमान को प्रसन्न करने के लिए

सुमिरि पवन सुत पावन नामू।
अपने बस करि राखे रामू ॥

## गहरी नींद हेतु

ॐ अगस्ति ... शायिनः

### ईश्वर के प्रति भक्ति के लिए

भगत कल्पतरु प्रणतहित कृपासिन्धु सुखधाम।
सोइ निज भगति मोहि प्रभु देहुं दया करि राम॥

### ज्ञान प्राप्ति के लिए

छिति जल पावक गगन समीरा।
पञ्च रचित यह अधम सरीरा ॥

### ईश्वर से क्षमा माँगने के लिए

अनुचित बहुत कहेउँ अज्ञाता।
क्षमहु क्षमा मन्दिर दोउ भ्राता ॥

**टिप्पणी**–शान्ति, यश और बल प्राप्ति के लिए सिद्ध प्रार्थना में दिये गये महत्त्वपूर्ण सूक्तों और मन्त्रों को देखें।

## विभिन्न शास्त्र

निम्नलिखित तन्त्र शास्त्रों में उल्लिखित मन्त्र, स्तोत्र और प्रार्थनाएँ सिद्धियाँ प्रदान करने के लिए अत्यधिक शक्तिशाली हैं। यहाँ तक कि आदि शंकराचार्य भी जब काले जादू के प्रभाव में आ गये तो शक्ति की आराधना से ही ठीक हुए। उनकी यह प्रार्थना पैंसठवाँ तन्त्र बनी, जिसे सौन्दर्य लहरी के नाम से जाना जाता है। निम्नलिखित का उपचार मन्त्रों के रूप में भी उपयोग किया जाता है–

- दुर्गा सप्तशति
- आनन्द लहरी
- देवी सूक्त
- अथर्व शीर्ष
- क्षमा याचना
- दुर्गा के बत्तीस नाम
- दस महाविद्याओं के मन्त्र

यहाँ पर वैदिक तथा तान्त्रिक मन्त्रों का खण्ड पूर्ण होता है, निम्नलिखित मन्त्र विभिन्न धर्मों से लिए गये हैं।

## बुद्ध मन्त्र

- बुद्धं शरणं गच्छामि
- धम्मं शरणं गच्छामि
- सन्घं शरणं गच्छामि
- ॐ स्वभावशुद्धा: सर्वधर्मा: स्वभावशुद्धोहं
- ॐ सर्वतथागतात्मकोहं
- ॐ मणिपदमे हुं

## इस्लाम में मन्त्र

- बिस्मिल्लाह हिर-रहमान् निर्-रहिम्
- ला इल्लाहा इल्लल्लाह मुहम्मदुर रसूलुल्लाह
- अल्लाह हु अल्लाह हु (वैखरी जप)
- अल्लाहो हाजिरि, अल्लाहो नाजिरि अल्लाहो शाहिदि, अल्लाहो मई (उपांशु जप)
- कुलिद उल्लाह अविद उर रहमसन् अय्यम मा
  तदऊ फलहुल असमाउल हुसना

## सिख मन्त्र

- सत् नाम
- वाहे गुरु
- सत् श्री अकाल
- एक ॐकार सत् नाम कर्त्ता पूरक निर्भौ निर्वैर
  अकाल मूरत् अजूनी सहभंग गुरु प्रसाद जप
  आदि सच जुगादि सच है भी सच नानक होसि भी सच।



स्वामी सत्यानन्द सरस्वती का जन्म उत्तर प्रदेश के अल्मोड़ा ग्राम (उत्तरांचल) में सन् 1923 की मार्गशीर्ष पूर्णिमा को हुआ। उनमें बाल्यावस्था से ही आध्यात्मिक जीवन के प्रति झुकाव था और विलक्षण प्रतिभाएँ परिलक्षित होती थीं। 18 वर्ष की अवस्था में उन्होंने गुरु की खोज में घर छोड़ दिया। 1943 में उन्हें ऋषिकेश में अपने गुरु स्वामी शिवानन्द के दर्शन हुए। 12 सितम्बर 1947 को गुरु ने उन्हें परमहंस संन्यास में दीक्षित किया। वे 12 वर्ष गुरु की सेवा में रहे और आध्यात्मिक जीवन के हर आयाम में दक्षता प्राप्त की। तत्पश्चात् उन्होंने परिव्राजक संन्यासी के रूप में आठ वर्षों तक सम्पूर्ण भारत, अफगानिस्तान, बर्मा, नेपाल एवं श्रीलंका का भ्रमण किया। इस अवधि का उपयोग उन्होंने यौगिक तकनीकों को प्रतिपादित एवं परिष्कृत करने में किया, ताकि मानवता को कष्टों से त्राण मिल सके।

योग की प्राचीन पद्धति को आधुनिक विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करने की आवश्यकता का अनुभव होने पर उन्होंने 1956 में अन्तर्राष्ट्रीय योग मित्र मण्डल एवं 1963 में बिहार योग विद्यालय की स्थापना की। अगले 20 वर्षों तक विश्व भ्रमण करते हुए उन्होंने योग की पताका विश्व के कोने-कोने में फहरा दी और बिहार योग विद्यालय को योग की एक अग्रगण्य संस्था के रूप में ख्याति दिलायी। उन्होंने योग, तंत्र एवं आध्यात्मिक जीवन पर अस्सी से अधिक ग्रन्थों का प्रणयन किया।

'सत्यानन्द योग' एक ऐसी परम्परा बन गयी, जिसमें शास्त्रीय और अनुभवात्मक ज्ञान तथा आधुनिक दृष्टिकोण का सुन्दर समन्वय है। ग्राम्य-विकास की भावना से 1984 में उन्होंने दातव्य संस्था 'शिवानन्द मठ' की एवं योग पर वैज्ञानिक शोध की दृष्टि से 'योग शोध संस्थान' की स्थापना की। सन् 1988 में उपलब्धियों के शिखर पर पहुँचकर उन्होंने सबकुछ त्याग दिया और क्षेत्र संन्यास लेकर परमहंस संन्यासी की जीवन पद्धति अपना ली। सन् 1989 में उन्हें रिखिया आने का दैवी आदेश हुआ, यहाँ उन्होंने एकान्तवास करते हुए उच्च वैदिक साधनाएँ कीं। सन् 1991 में अपने पड़ोसियों को सुविधाएँ उपलब्ध कराने का आदेश मिलने पर उन्होंने आश्रम को उस क्षेत्र के अभावग्रस्त ग्रामीणों की सहायता करने की अनुमति दी। सन् 1995 में उन्होंने वैश्विक सुख, शान्ति एवं समृद्धि का संकल्प लेकर बारह वर्षीय राजसूय यज्ञ आरम्भ किया और सन् 2007 में 'सेवा, प्रेम और दान' को अपनी मुख्य गतिविधि बनाने का आदेश देकर रिखियापीठ की स्थापना की घोषणा की।

स्वामी सत्यानन्द 5 दिसम्बर 2009 की मध्यरात्रि में अपने शिष्यों की उपस्थिति में महासमाधि में लीन हो गये।




SATYANANDAYOGA
BIHARYOGA

'ध्यान तन्त्र के आलोक में' ध्यान के प्रारम्भिक अभ्यासियों के लिए एक स्पष्ट एवं बोधगम्य पुस्तक है। इसका उद्देश्य है अभ्यासी के समक्ष संभावनाओं के द्वार खोलना, आवश्यक तैयारी की जानकारी देना और साथ-ही ध्यान का अनुभव प्राप्त करने के लिए व्यावहारिक विधियों से अवगत करना। प्रत्याहार के आधारभूत अभ्यासों, जैसे, अन्तर्मौन तथा ध्यान की अन्य विधियों, जैसे, योग निद्रा, अजपाजप, त्राटक, क्रियाओं, मंत्र जप के विभिन्न अभ्यासों की रूपरेखा प्रस्तुत करते हुए, इस पुस्तक में ध्यान के उच्च अभ्यासियों के लिए आवश्यक बुनियाद भी रखी गई है। साथ-ही स्वामी सत्यानन्द सरस्वती की शिक्षण प्रक्रिया को यथावत् प्रस्तुत किया गया है।

"सैद्धान्तिक विवेचन एवं अभ्यास के बीच सहज संतुलन रखते हुए, इस अनुपम पुस्तक में उपनिषदों, तंत्रों एवं पूर्व में विकसित योग की अनेक पद्धतियों में प्रतिपादित ध्यान के सिद्धान्तों का वर्णन किया गया है।"

'द हिन्दू'




[bar code here]

ISBN : 978-81-85787-63-3